विन्ध्य-क्षेत्र का सांस्कृतिक वैभव

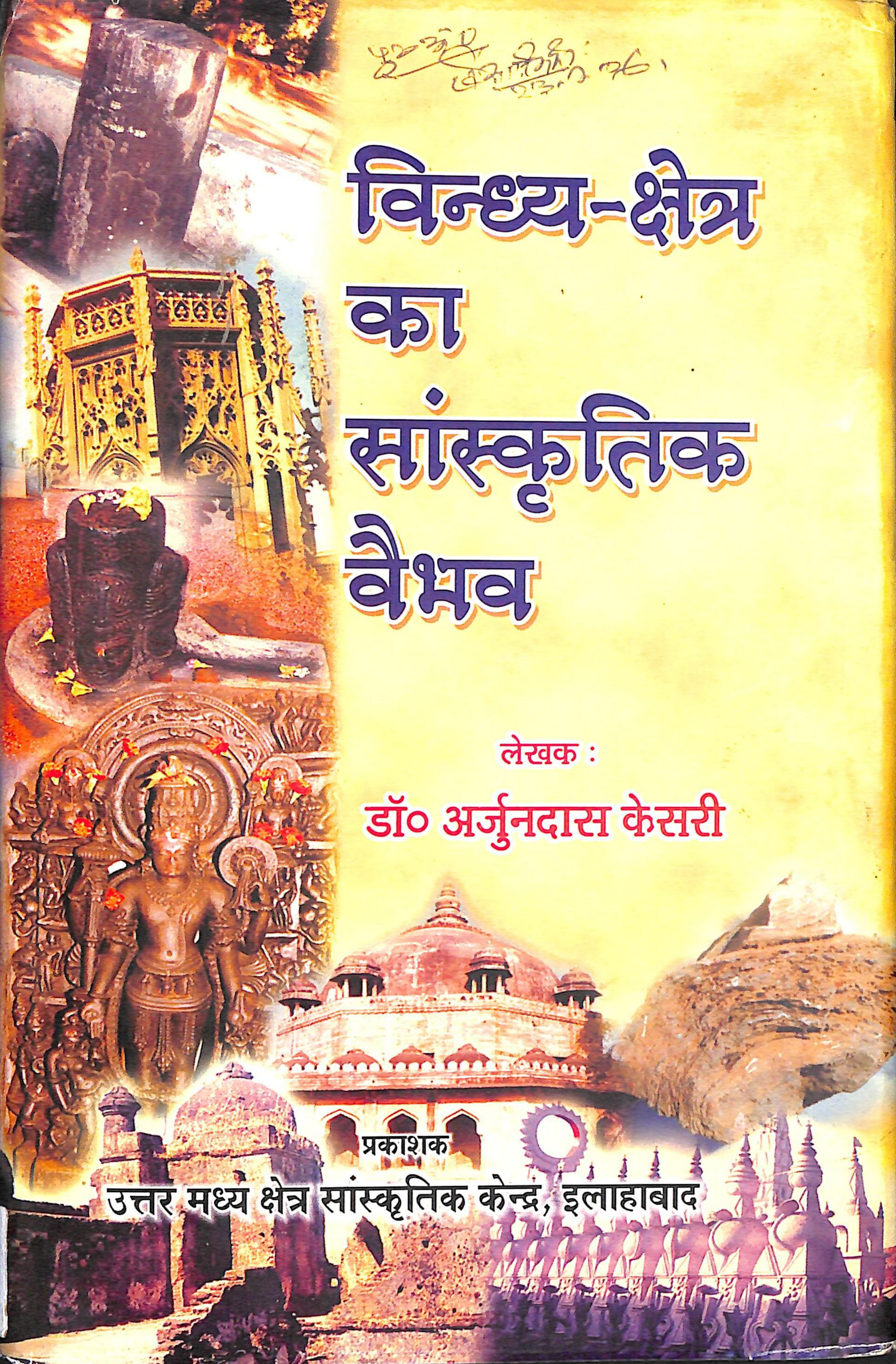

लेखक :

डॉ० अर्जुनदास केसरी

प्रकाशक
उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

विन्ध्य-क्षेत्र का सांस्कृतिक वैभव

(पलामू-रोहतास, मिर्जापुर-सोनभद्र, सरगुजा-सीधी
जनपदों का सांस्कृतिक सर्वेक्षण)

सर्वेक्षक एवं लेखक
डॉक्टर अर्जुनदास केसरी
(राष्ट्रीय पुरस्कार एवं लोकभूषण सम्मान से सम्मानित)

प्रकाशक
उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र
14-सी0एस0पी0 सिंह मार्ग, इलाहाबाद

विन्ध्य–क्षेत्र का सांस्कृतिक वैभव

प्रथम संस्करण : 500 प्रतियाँ

कॉपी राइट © : उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : सितम्बर, 2004 ई0

मूल्य : 500.00/– (पाँच सौ रुपये मात्र)

प्रकाशक : : निदेशक, उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र
14, सी0एस0पी0 सिंह मार्ग, इलाहाबाद
फोन–(0532) 2623720, 2623698, 2624475
फैक्स–(0532) 2623720

कम्प्यूटराइज़्ड एवं मुद्रक : **दि इलाहाबाद ब्लाक वर्क्स प्रा0 लि0**
255, चक, जीरो रोड, इलाहाबाद
दूरभाष : 2400243

VINDHYA-KSHETRA KA SANSKRITIK VAIBHAVA
BY
Dr. ARJUNDAS KESARI
N.C.Z.C.C., 14 C.S.P. SINGH MARG, ALLAHABAD
PRICE : 500/-

परिचय तथा पुरातत्व

- जनपदों का सामान्य परिचय
- मूर्ति, मन्दिर तथा तीर्थ–स्थल
- प्रागैतिहासिक कालीन कला और संस्कृति
- गढ़, दुर्ग, किला, महल तथा कोर्ट
- अभिलेख–शिलालेख, प्रस्तरलेख तथा भित्तिलेख
- बालुकाश्म, जीवाश्म तथा शैल–समूह आदि

प्राक्कथन

प्राचीनकाल से लेकर आज तक सभ्यता के जो बहुआयामी रूप प्राप्त हुए हैं, उनसे लगता है कि मनुष्य केवल विधाता की श्रेष्ठतम् कृति ही नहीं, बल्कि सृजन की कसौटी भी है। आदिमयुग से विकास–यात्रा में चलते–चलते हम आज अणु–परमाणु के युग में पहुँच चुके हैं। यह लम्बी यात्रा इस बात का प्रतीक है कि हमने अपने को बराबर बदला है। अगर कुछ नहीं बदला है तो वह है हमारा शील और समर्पण, त्याग और बलिदान, जिसके बल पर हम आज भी नक्षत्रों की भाँति आकाश में चमकते दिखायी देते हैं। ईसा पूर्व से लेकर अब जब हम 21वीं सदी में प्रवेश कर गये हैं, तब भी हमारी मान्यताएँ, परम्पराएँ, रूढ़ियाँ बराबर गंगा की धारा की तरह प्रवहमान होकर भी पवित्र हैं। जीवन के प्रत्येक कोने से अगर देखा जाय तो हमने सभ्यता–संस्कृति में परिवर्तन भले ही कर लिया हो, लेकिन विकासमान संस्कृति यही है और वह शाश्वत् रहेगी।

प्रयाग और वाराणसी दो महातीर्थों के बीच स्थित सोनभद्र–मिर्जापुर अंचल विन्ध्याचल धाम के रूप में पूरे देश में प्रतिष्ठित है। मिर्जापुर से ही पठारों का लम्बा सिलसिला शुरू हो जाता है, जो एक तरफ छत्तीसगढ़ प्रान्त के सरगुजा जनपद की सीमा तथा दूसरी तरफ बिहार के नगर ऊंटारी एवं मध्य प्रदेश के सीमा पर स्थित विंढमगंज तक चलता ही रहता है। यह पूरा परिक्षेत्र आर्यों–अनार्यों का संघर्ष–क्षेत्र रहा है। इनके आपसी संघर्ष से एक तीसरी मिली–जुली संस्कृति का उदय–अस्त हुआ, जिससे पूरा

उत्तरी–भारत प्रभावित है। इस पूरे क्षेत्र को हम 'आदिवासी क्षेत्र' कह सकते हैं। इस क्षेत्र को गंगा, सोन, कर्मनाशा, बेलन, कनहर, रेंड आदि पौराणिक नदियों ने प्रभावित किया है। अब इनके तटों पर शक्तिनगर, रेनुकूट, विन्ध्यनगर जैसे स्थानों पर नयी औद्योगिक संस्कृतियों का उदय हो रहा है। अतः बदलते परिवेश में इस क्षेत्र का और भी महत्व बढ़ जाता है। यहाँ पश्चिमी क्षेत्र में जहाँ अवधी बोली जाती है, वहीं दक्षिणी–पूर्वी क्षेत्रों में भोजपुरी तथा दक्षिणी क्षेत्रों में बघेली भी बोली जाती है। आदिवासियों में केवल धांगर (उरॉव) जाति को छोड़कर जितनी भी अन्य जातियाँ हैं, उन सबकी भाषा बघेली है। यहाँ के रीति–रिवाजों, संस्कारों, परम्पराओं, मान्यताओं, रूढ़ियों; राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक जीवन एवं कला के संदर्भों को लेते हुए यह पुस्तक तैयार की गयी है।

इस पुस्तक का प्रकाशन केन्द्र के अभिलेखीकरण योजना के अन्तर्गत किया जा रहा है। यह कृति आप के हाथों सौंपते हुए आज हमें अत्यन्त हर्ष और रोमांच का अनुभव हो रहा है। रोमांच इसलिए कि बीहड़ों के सर्वेक्षण का कार्य वास्तव में दुरूह, साहसिक और कष्टसाध्य होता है, और यह क्षेत्र तो मात्र बीहड़ ही नहीं, अपितु, वन, पर्वत, नदी–नालों, झरनों, खोह–कन्दराओं से घिरा होने के कारण साधु-महात्माओं, ऋषियों, वनवासियों, गिरिजनों, आदिवासियों, वन्यजीवों का सदा से निवासस्थल भी रहा है।

इस कृति में उत्तर–प्रदेश, छत्तीसगढ़ एवं बिहार तीन प्रदेशों के क्रमशः छह जनपदों—मिर्जापुर, सोनभद्र, सीधी, सरगुजा, रोहतास एवं पलामू की त्रिकोणीय पुरातात्विक, नृतत्वशास्त्रीय, समाजशास्त्रीय–संस्कृतियों का सम्पूर्ण अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। यह पुस्तक इस क्षेत्र की जीवाष्मीय पुरैतिहासिक अंधकारयुगीन संस्कृतियों से लेकर अद्यावधि विकासशील औद्योगिक

संस्कृतियों का प्रामाणिक 'इन्साइक्लोपीडिया' है, जिसे सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ0 अर्जुनदास केसरी ने अपने वर्षों के अथक श्रम–साधना, लगन और अभिरुचि से पूरा किया है। यह कृति प्रबुद्ध पाठकों, शोधार्थियों, विद्वानों, कलाकारों सबके लिए उपयोगी होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। साहित्य, संगीत एवं कला के जिज्ञासुओं को किञ्चित् लाभ पहुँचाने में यह पुस्तक सफल हुई, तो केन्द्र अपने प्रयास को सफल मानेगा।

B. Shanker

भगवान शंकर

आई.ए.एस.

निदेशक

उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र

इलाहाबाद

अपनी बात

संस्कृति जीवनधारा है, जिसके अन्तर्गत समाज की अन्यान्य गतिविधियां—आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक सतत् गतिमान एवं प्रवहमान रहती हैं। संस्कृति व्यष्टि और समष्टि में समन्वय स्थापित करने का काम करती है। वह हमारी दृष्टि को व्यापक, विराट् बनाती है। संस्कृति, अंग्रेजी के 'कल्चर' का अनुवाद है और 'कल्चर' शब्द 'कल्ट', 'कल्टीवेशन' से बना है। डॉ0 काशीनाथ सिंह के अनुसार यह 'एग्रीकल्चर' शब्द से भी जुड़ा है। यानी खेती और उपज से जुड़ी मेहनत से सम्बद्ध है–कल्चर या संस्कृति। जांता के साथ जांते के गीत, बुवाई के साथ बुवाई के गीत, रोपनी के साथ रोपनी के गीत तथा तीज–त्यौहार के गीत भी इसी से जुड़े हैं। संस्कृति के अन्तर्गत सारे क्रियाकलाप, आचार–विचार रहन–सहन, खानपान, रीति–रिवाज, साहित्य–संगीत, कला, संस्कार, मेला, पर्व, उत्सव आदि आ जाते हैं।

लोक–संस्कृति का एक पक्ष 'लोकवार्ता' है, जिसके अन्तर्गत लोक–कथाओं, मिथकों, कहावतों, मुहावरों, लोकगीतों, लोकनाट्यों एवं लोकगाथाओं आदि को शामिल किया जा सकता है। लोक–संस्कृति का दूसरा पक्ष लोक–व्यवहारों का है, जो साहित्य और कला से परे—लोक–विश्वासों, लोक–प्रथाओं, अन्धविश्वासों, रीतियों, कुरीतियों, क्रियाकलापों, कर्मकाण्डों, लोकोत्सवों, परिपाटियों, लोकप्रचलनों, खेलों, पशु–पक्षियों की प्रतियोगिताओं आदि से संबंधित है। इसका तीसरा पक्ष लोककलाओं और कलात्मक लोकयान से है, जिसके अन्तर्गत लोकवार्ताओं सहित लोक–चित्रकला, लोक–शिल्प या दस्तकारी, लोक–वेशभूषा, साज–श्रृंगार एवं अलंकरण आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। लोक–संस्कृति का चौथा पक्ष है—'लोक–विज्ञान' एवं प्रौद्योगिकी

का, जिसमें लोकोपचार लोक–प्रचलित औषधियां, लोक–नुस्खे, भोजन, जलपान, कृषि–रूढ़ियां, लोक–विश्वास, जादू–टोने, टोटके आदि आ जाते हैं।

कुछ विद्वानों का विचार है कि लोक–संस्कृति और शिष्ट–संस्कृति अलग–अलग दो धाराएं हैं, किन्तु वास्तव में संस्कृति अखण्ड होती है। उसे विभक्त किया ही नहीं जा सकता। यदि ऋग्वेद शिष्ट संस्कृति का परिचायक है, तो अथर्ववेद उसका पूरक होकर उसकी संस्कृति का[1]। अथर्ववेद के विचारों का धरातल समन्वित जीवन है, तो ऋग्वेद का विशिष्ट जीवन[2]।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है, बल्कि नगरों और गांवों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं हैं। ये लोग नगर में परिष्कृत रुचि–सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वालों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों को समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं, उनको उत्पन्न करते हैं...[3]। इसी हेतु दैनिक उपयोग में लायी जाने वाली गृहस्थ जीवन की तमाम वस्तुओं को भी सांस्कृतिक उपकरण के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

पारिवारिक वृद्धि तथा रीति के प्रतीक सौभाग्य के सूचक ये ही विविधांग हैं, जो इस जन्म को ही नहीं; अपितु जन्म–जन्मांतर तक को सार्थक करते हैं। इन अंगों में मेहदी, माडल, थापे, सांझी, गोदने, जमीन के माड़नें आदि प्रमुख हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि लोकानुरंजन और लोकांङ्कन के इन विविध रूपों ने हमारे जीवन को विशिष्ट संस्कारों में ढाला है।

लोकसंस्कृति का सबसे महत्वपूर्ण पहलू आदिवासी संस्कृति है।

1. लोक–संस्कृति से जनवादी संस्कृति की ओर, रमेश कुन्तल मेघ के निबन्ध से।
2. बलदेव उपाध्याय : समाज, वर्ष 4 अंक 3, पृष्ठ–446
3. जनपद : वर्ष 1, वर्ष 1, पृष्ठ–65

इसलिए आदिवासियों के भौगोलिक वातावरण में रोजमर्रा के जीवन में इस्तेमाल की जाने वाली उनके ही द्वारा निर्मित वस्तुओं, उनके विश्वासों और मूल्यों, रीति–रिवाजों, उनके द्वारा स्थापित संस्थाओं और उनके द्वारा किए जाने वाले विविध प्रकार के मनोरंजनों, उनसे उद्भूत जीवन की अन्यान्य विसंगतियों, लिंगीय संबंधों, परस्पर स्नेह–सौहार्द्र की भावनाओं का अपना अलग महत्व है। इस सर्वेक्षण आख्या में उनको भी नकारा नहीं गया है। जनजातीय जीवन और उसके परिवेश में देखी जाने वाली कलात्मक अभिव्यक्तियों, सौन्दर्यात्मक चेष्टाओं और अनुष्ठानात्मक क्रियाकलापों, उनके द्वारा निर्मित कलाकृतियों का भी बड़ा महत्व है, जिन्हें यथास्थान संदर्भित किया गया है।

इतना ही नहीं, व्यक्ति की प्रवृत्तियों, मनःस्थितियों, चिन्ता–धाराओं, प्रेरक पुरस्कारों, सामूहिक संसाधनों, श्रम–योजनाओं और प्रकृति के उद्दीपनों से भी हमें सतत् प्रेरणा मिलती रही है। झरनों की ध्वनियाँ, नदी–तटों की स्वर–लहरियां, पशु–पक्षियों की गतिविधियाँ भी लोक–कलाकार को सतत् प्रेरणा देती रही हैं। इसलिए मानव की कला अभिव्यक्तियों में नाव चलाने, चक्की पीसने, हांका करने, उगाही करने, काटने, नोचने, कृषि–कर्म से संबंधित विविध चेष्टाओं में लगे रहने, खाली समय में एक स्थान पर बैठकर विचार–विमर्श करने, चौपाल के लिए तैयार होने आदि का चित्रण भी कला का प्रतिपाद्य रहा है। अतः प्रस्तुत् कृति में जातीय संस्कृति को तो महत्व दिया गया है, किन्तु इन सब को एक ही सूत्र में बांधकर अध्ययन को सुगम और व्यापक बनाने के लिए और बहुपक्षीय जानकारी के लिए भी उन पर अलग से विचार किया गया है।

लोक–संस्कृति में मिलावट तेजी से हो रही है और होगी भी। जैसे–जैसे समाज गतिशील होगा, समाज में शिक्षा का प्रचार–प्रसार बढ़ेगा, व्यापारिक और तकनीकी विकास होगा, उद्योग–धंधे स्थापित होंगे, वैसे ही वैसे लोक–संस्कृति में भी सम्मिश्रण होगा; इसे कोई रोक नहीं सकता। जहां समाज में कर्मवाद, सम्प्रदायवाद, जातिवाद, नक्सलवाद आदि दुष्प्रवृत्तियों का बोलबाला है, वहां अखण्ड मानवता की कल्पना और विश्वजनीय जैसे

उत्तम विचारों की परिकल्पना तभी साकार सिद्ध हो सकती है, जब विश्व-संस्कृति का एक मंच बने और विश्व की तमाम संस्कृतियां समन्वयशील हो जायें। उनका भी वैश्वीकरण हो जाये। कहना न होगा कि भारतीय संस्कृति में समन्वय के अनेक गुण हैं। यही कारण है कि कलाकार कभी भी एक-दूसरे का विरोधी नहीं होता, वह प्रतियोगी भले हो। मेरा सुझाव है कि जीवाश्मों पुरावशेषों, कलाकृतियों की सुरक्षा के लिए प्रत्येक जनपद में संग्रहालय बनाये जाने चाहिए।

यह कृति पुरातत्व, नृतत्वशास्त्र, समाजशास्त्र तीनों की त्रिवेणी संस्कृति है। हमें विश्वास है कि सुधीजनों, संस्थाओं, पुस्तकालयों द्वारा इसका सर्वत्र समादर होगा। इसमें उत्तर प्रदेश, छतीसगढ़, बिहार, मध्यप्रदेश के मिर्जापुर-सोनभद्र, सीधी-सरगुजा, रोहतास-पलामू जनपदों का अध्ययन किया गया है जो मुख्य रूप से जनजातीय परिक्षेत्र है और इस क्षेत्र पर अभी तक इस तरह का कार्य नहीं हुआ था। उसे पूरा करते हुए आज हमें जिस आनन्द, आह्लाद की अनुभूति हो रही है, वह शब्दों की सीमा से परे वर्णनातीत है। आशा है सुधीजन, विद्वान्, पाठक, इस कृति के पात्र, संदर्भ से जुड़े व्यक्ति, संस्थान सभी इसका अध्ययन करके, अपना सार्थक सुझाव देकर हमें उपकृत करेंगे।

इस कार्य के सम्पन्न होने के पीछे एक घटनाक्रम जुड़ा हुआ है। सन् 1986 में 'अपना उत्सव' दिल्ली में आयोजित हुआ था। उसके साथ सात सांस्कृतिक केन्द्रों का विभाजन तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी की व्यापक संकल्पना के आधार पर पूरे देश ही नहीं, अपितु विश्व को एक सांस्कृतिक सूत्र में पिरोने का प्रयत्न प्रारंभ हुआ था। उसी क्रम में इलाहाबाद केन्द्र के एक आयोजन में मुझे एक आदिवासी दल के साथ सम्मिलित होने का अवसर मिला। उसी समय केन्द्र के तत्कालीन निदेशक श्री एच0एन0 श्रीवास्तव ने साग्रह मुझे इस कार्य के योग्य समझा था। इस कार्य को निर्विघ्न सम्पन्न कराने में सुश्री नीरू नंदा, श्री जे0पी0 राय, अशोक बाजपेयी (सभी आई0ए0एस0) तथा श्री राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय ने जो भूमिका निभायी है, इसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं। साथ ही मेरी पूरी यात्रा में सहयात्री का कार्य

किया है श्री अनिल कुमार पाठक ने, मैं उनके प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ। किन्हीं कारणों से इसके प्रकाशन में विलम्ब हो गया। समय आने पर ही वृक्षों में फल लगते हैं। संयोग से श्री भगवान शंकर (आई0ए0एस0) केन्द्र में निदेशक होकर आ गये। ये सोनभद्र जनपद में जिलाधिकारी थे। मेरे कार्यों से अवगत भी थे। मैंने उनसे इसके प्रकाशन का अनुरोध किया। उन्होंने इसे देखा और इसका प्रकाशन आवश्यक समझकर स्वीकृति दे दी। केन्द्र के अधिकारियों के प्रयास से इस कृति का प्रकाशन सम्भव हुआ, एतदर्थ मैं उन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

लोकवार्ता शोध संस्थान,
राबर्ट्सगंज, सोनभद्र।
पिन–231216
दूरभाष : (05444) 222625

अर्जुनदास केसरी
सचिव

अनुक्रम

पलामू (19–48)

नगरीय सभ्यता, वन्यसभ्यता (19), स्थापत्य कला, वन–सम्पदा (20), पशु–पक्षी, पलामू के वन्य–जन्तु (21), पलामू व्याघ्र–योजना (22), बेतला का राष्ट्रीय उद्यान, उद्योग–धन्धे (23), खनिज–पदार्थ, कृषि एवं औद्योगिक संस्कृति की मान्य परंपराएँ : जमीन और कर की स्थिति, उपज (24), अकाल–दुकाल, सामाजिक और पारिवारिक जीवन, खानपान–पहनावा (25), पलामू के स्थानों का सांस्कृतिक परिचय (26), अलीनगर, ओदालमुन पहाड़ (27), उग्रतारा देवी का मंदिर, कजरी, केचकी (28), केतार, गढ़वा (29), गुलगुलपत, गोदरमना, गढ़देवी (30), पंचमंदिर, विलासी शाह का स्वर्णकार मंदिर, शिवमंदिर, मोरगनवां (31), चंदवा चैनपुर, छेछारी, छेछारी नगर (32), जपला, डाल्टनगंज (33), डाल्टनगंज का शिवमंदिर, सिरकटवा राजा का स्थान (34), सूर्य–मंदिर, दसशीष महादेव, ठाकुरवाणी (35), बड़ामंदिर (36), दुर्जाग, सींगरा, नगर भगौती मंदिर (37), उग्रतारा, अन्य अवशेष (38), पांकी, भूत–प्रेत, नेतरहाट (39), परासपानी, पलामू (40), पशुवन और महुवन, बकोरिया, मझियांव (41), मुहम्मदगंज, महाराजगंज, हरिहरगंज (42), महुआडांड़, मनातू, मायापुर (43), रंका (44), सतवनवां, रमुना, रामलला मंदिर (45), लातेहार, लेसलीगंज, लादी, विश्रामपुर (46), शाहपुर, देवगन, सोनपुर, हुसैनाबाद (47), हैदरगढ़ (48)।

मिर्जापुर–सोनभद्र (49–85)

नामकरण (49), सोनभद्र : स्थिति तथा सीमा–विस्तार, इतिहास (50), शैलाश्रय, प्राकृतिक बनावट (51), पहाड़, मिट्टी, नदियाँ तथा नाले–झरने (52), परती जमीन तथा जंगल, खनिज–पदार्थ (53), जमीन की स्थिति, निवासी (54), भाषा–बोली (55), साहित्य, आस्था एवं विश्वास के पर्व एवं स्थल; पितृ–विसर्जन (56), नवरात्र–व्रत, धनुषयज्ञ (57), सोखाड़ (58), स्थानों का सांस्कृतिक परिचय : अकोढ़ी, अगोरी, अधेसर (59),

अहरौरा, कछवा, कठनई घाट, कुसहा, कोटारेनाथ, कोन, कोराई–घाट, घोरावल, गड़बड़ा मेला (60–65), गोनवरा, घोड़े की टाप, चिल (बारा) (66–67), चोपन, छानवेक्षेत्र, छोटा मिर्जापुर, टांडाफाल, डीभर (68–69), दुद्धी, पश्चिमवाहिनी गंगा (70), बरैनी, बरौंधा, बेचूवीर, मिर्जापुर (71), मिर्जापुर नगर के अन्य मन्दिर, मूर्तियां तथा तीर्थ : तारकेश्वरनाथ (73), लक्ष्मीनारायण मंदिर, बावनघाट, दक्ष प्रजापति की यज्ञ–भूमि (74), भित्तिचित्र : ब्रिटिशयुग (75), ओझला का पुल (76), लेखनियाँ, विजयगढ़ (77), जसौली, विजयपुर (78), विंध्याचल, विंध्याचल की त्रिकोण–यात्रा : मंदिर एवं तीर्थ (79), अन्नपूर्णा देवी, काली खोह, भैरवनाथ (81), गेरुआतालाब, मोतिया तालाब, सीताकुण्ड, अष्टभुजी देवी (82), सप्तसागर, भद्रकाली, भैरवकुण्ड, श्रीचक्र, रामेश्वरनाथ (83), रामगया, तारादेवी, खरहटी महारानी, लालभद्र की बावली तथा अन्य स्थल (84), सिद्धनाथ की दरी (85)।

रोहतास (86–105)

नामकरण, सहसराम, पर्वत–वन (86–87), नदियाँ : सोननदी, कर्मनाशा, दुर्गावती नदी, कुदरा तथा काव, नाले–झरने : धुआंकुण्ड, तेलहर कुण्ड, ततराही जल–प्रपात, मार्जर कुण्ड (88–89), कृषि–मिट्टी, सिंचाई (90), खनिज : गंधक, बाक्साइड, चूनापत्थर, नीथोग्राफ के पत्थर, कल–कारखाने: रेशम–उद्योग (91), सूती–कपड़ा–उद्योग, ईंट उद्योग, चावल–मिल–उद्योग, तेल–उद्योग, साबुन–उद्योग, कापी, स्याही (92), रंग, अगरबत्ती, मोमबत्ती, आतिशबाजी, ठोंगा, मशाला, मौरी–राखी, बर्तन, भाषा–बोली (93–95), साहित्य, शिक्षा (96), पर्वोत्सव : हिन्दुओं के पर्व, मुस्लिम पर्व, ईसाई–धर्म, सिख–पंथ (97–99), आस्था के दर्शनीय स्थल तथा मेले–ठेले : गुप्ताधाम (99), घिनहूब्रह्म, चन्द्रेश्वरी (100), चौरसिया, तिलौथू, इन्द्रपुरी (101), तुतलाभवानी, सिरिया भवानी, नौहट्टा (102), भभुआ, विक्रमगंज (103), बरखण्डीनाथ बाबा, बरवारी देवी, महावीर मन्दिर, मदुरना, महादेव खोह (104), श्रवणदाग, शेरगढ़ (105)।

सरगुजा (105–124)

प्रागैतिहासिक युग (105), रामायण काल, महाभारत काल (106),

जैन और बौद्ध काल, मध्य साम्राज्य काल (107), राजपूत काल (108), प्रतिहारकाल, मुस्लिम काल, मराठा-काल, ब्रिटिश-युग, सरगुजा राज्य, किसान-उराँव-बगावत, चाँद भखार के राजवंश, झिलमिली चौहानवंश (109-112), सांस्कृतिक महत्व के स्थल : अमृतधारा, कन्दरी, कुद्देरगढ़ (112), कुसुमी, कैलाशगुफा, हरयाटोला, चांददेवी, छतौड़ा, जनकपुर, टांगीनाथ, रमदा चुटकी, तमोल पहाड़, तातापानी, देवगढ़, पटना, प्रतापपुर (113-118), मेलेठेले : (118) बैकुण्ठपुर, भैयाथान, पुरानाधाम, मनेन्द्रगढ़, राजमहल (119-120), जटाशंकर, सरौली (121), सिद्धबाबा का मन्दिर, महामाया मन्दिर, विश्रामपुर, शंकरगढ़ तहसील, सूरजपुर, सूरजधारा, सोनहट, संजय नेशनल गार्डेन (122-124)।

सीधी (124-151)

स्थिति (124), भू-रचना, कैमूर-श्रेणी, सोनघाटी, बड़वास और मझौली का पठार, देवसर की पहाड़ियां, सिंगरौली का मैदान (125-126), जलवायु, वनस्पति तथा पशु-धन, खनिज-पदार्थ (127), सिंचाई तथा विद्युत-सुविधा, कृषि-उपज, उद्योग-धन्धे, परिवहन, रेलमार्ग, व्यापार, निवासी (128-129), भाषा-बोली, सीधी जिले का सांस्कृतिक इतिहास : प्राचीनकाल, हयहय, चेदि या कल्चुरि, मौर्यवंश, हर्षवर्द्धन, चन्देल, वन्य-जातियां, बघेल, चौहान-खण्ड (130-133), मनोरंजन और खेलकूद : पिटाव, चुर्रा, पटुकी, कबड्डी, तीतर-बटेर, मुर्गे की लड़ाई (133-134), कला एवं शिल्प : कपड़ा बुनाई का काम, कपड़ा छापने का काम, लोहारी का काम, चमड़े का काम (134-136), कृषक और कृषि, वन (136), राजाओं के ऐतिहासिक चिह्न, वस्त्राभूषण (137-139), सोन और इसकी सहायक नदियाँ : सोनकथा (140), केवई, तिपान, कुनुक, जोहिला, कैमूरी महानदी, बनास (141), गोपद, रेंण, घाघर, कनहर, पण्डानदी, कोयल (142-143), नाले-झरनें : रेंण के सहायक नदी-नाले, कनहर के सहायक नदी नाले, सहदो तथा इसके सहायक नदी नाले (143-144), संकेतात्मक भाषा, जातीय पंचायतें (144), प्रमुख-स्थलों की स्थिति एवं महत्व : ककरशीहा, कठौली, कस्बिन का मेला, कुसुमी, कंचड़, घरमरा, चंद्रेही, चंद्रेह (145-148), चचाई, चोरहट, उमरिया, देवसर तहसील, मड़वास, माड़ा या मुड़ी, योगीपहाड़ी, शारदा देवी, कालीदायी, माड़रिदेवी, नीलकण्ठ (148-151)।

सर्वेक्षित क्षेत्र की मूर्तिकला : मन्दिर तथा तीर्थस्थल मिर्जापुर–सोनभद्र (152–193)

अमिला भवानी, आंही–चौबान की मूर्तियां (152), ओइनी, कंतित, कन्हरा (153–155), कोरियांव, कुड़ारी, खलियारी, खोराडीह (155–157), गोठानी के मन्दिर और मूर्तियाँ, गोधना की मूर्तियाँ, कोट (157–160), गोरारी, गौरीशंकर, चंडिका देवी, ज्वालामुखी देवी (161–162), नकुण्डी देवी, नलराजा, पकरहट, पंचमुखी महादेव (163–165), बदेवरानाथ, बरवटा, वनसत्ती देवी, बरैला (165–167), बिसरेखी, भुइली, मऊ (167–170), मधुपुर, मझवां, मड़रा (170–173), महांव (173–175), महुरेश्वर (175), मिर्जापुर (176–178), मूड़ीसेमर बाबा (179), रघुनाथपुर के विष्णु (180), राकी, रामगढ़, विजयपुर (180–184), शतद्वारी (184), शिवशंकरी धाम, शिवद्वार–शतद्वारी (185), शिवल्लागांव, शीतला मन्दिर (187), शिवपुर (188), शेरवां (190), सरइया, सारनाथ (191–193)।

रोहतास (193–206)

उमापुर (193), चन्द्रेश्वरी, जमुआंव, ताराचण्डी भवानी (194–195), देवमारकण्डेय (195), रोहतास नगर, बारहदरी (197–198), बद्रीनारायण का मन्दिर (199), भलुनी भवानी (199–200), भभुआ के पंचमुखी शिव, मुण्डेश्वरी माता–मन्दिर (200–203), शंकरी (203), हरसूब्रह्म (204), हरसूब्रह्म का किला (206)।

सरगुजा (207–229)

डीपाडीह (207–211), देवगढ़ (211–213), पवनगढ़, प्रतापपुर के मन्दिर, तालाब, गढ़ी, कोर्ट (213–216), महेशपुर (216–218), राजपुर, रामगढ़ के मार्ग में (218–220), विश्व की प्राचीनतम नाट्यशाला, सीताबोंगिरा (220–223), रामगढ़ (223), लक्ष्मणगढ़, रामानुजगंज, शिवपुर (225), सीतामढ़ी (227), हरचौका, घाघरा की मढ़ियां (228)।

सीधी (229–245)

चमरोहा (229), डीपाडोल, दोरज की हनुमान मूर्ति (230–231), पौड़ी, बढ़ौरानाथ, बरौंधा, महुआर, मझौली (231–233), माड़ागुफा (233), रावणमाड़ा, भूताली, जलजलिया भवानी (234–239), राजगढ़, लउवादेवी

(239-241), शिकारगंज, सन्यासी बाबा, बढ़ौली (241-242), करौंधिया शिवलिंग, कलेक्टरेट में मूर्तियों का संग्रह (243), हरचौका (244), टीला (245)।

प्रागैतिहासिक कालीन कला और संस्कृति (246-268)

प्रागैतिहासिक संस्कृति का विकास-काल (246), प्रागैतिहासिक कालीन मिर्जापुर-सोनभद्र (248), पंचमुखी, चनाइनमान (248-251), बेलनघाटी सम्भाग, मुखादरी, लेखनियां और (अहरौरा-सम्भाग), छातुग्राम, भल्दरिया, महड़रिया, सामदेवी (251-255), राजपुर सम्भाग, कण्डाकोट, लेखनियां, सुगापांख, झरियानाला, कुप्पिहवा, कइरी दुवरा (255-259), सीताकुण्ड, विजयगढ़ सम्भाग, धधरौल, रमना पहाड़, कउवाखोह, हथबनवां, लुरियानी, मगरदहा, गोहमनवां, मतहवा, हिरना-हिरनी, घोड़मांगर, अन्य (259-263), चुनार सम्भाग, मिर्जापुर और आस-पास (263), राजापुर, चिरहुली, रमडांड, दुद्धी सम्भाग, कोहबरवा घाट के शैलचित्र, पुरा उपकरण (263-265), गुहाचित्रों में व्यक्त सांस्कृतिक मूल्य (266), काल-निर्धारण (267)।

गढ़, किले, कोर्ट और दुर्ग (268-296)

दुर्गों का वंर्गीकरण (269), अगोरी दुर्ग (269), अम्बिकापुर के राजा की गढ़ी, अहरौरा का दुर्ग (271-272), गढ़लादी, चैनपुर का राजमहल, चुनार गढ़ (273-275), तमोलगढ़ का किला, नारायणपुर का किला, पलामू किला (275-279), बर्दीगढ़, महाराजा गुलाब सिंह की गढ़ी, मारहोर का किला (279-281), रोहतासगढ़ (281), शेरशाह का किला, सलीमशाह का मकबरा, रोहिलों का किला (281-285), विजयगढ़ दुर्ग (286), विश्रामपुर का किला, शाहपुर का किला (287), शेरगढ़ (288), शेरशाह का रौज़ा (289), सक्तेशगढ़ (291), सोनपुरा का किला, सिंगरौली, सोढ़रीगढ़, कंतित का किला (293-295), हसन सूरशाह का रौज़ा (295)।

अभिलेख, शिलालेख, प्रस्तरलेख तथा भित्तिलेख सिक्के, जीवाश्म, टेराकोटा (297-310)

अगोरी दुर्ग का प्रस्तरलेख (298), अहरौरा का अभिलेख (298), गोठानी मंदिर के शिलालेख (300), तिलाथू, तुतराही, दरगाह, देवा का

शिलालेख, रोहतास के अभिलेख, शशांक धौला, प्रतापधौला का शिलालेख, राजा प्रताप का अभिलेख, फुलवारी घाट का अभिलेख (301-304), रोहतास किले के उत्तरी दरवाजे का अभिलेख, कठौतिया द्वार का अभिलेख, सहसाराम का लघु शिलालेख, अभिलेख (304), सीताबोंगिरा (306), जोगीमारगुफा (307), सिक्के (308), सोनघाटी के ग्लैकोनाइटी बालुकाश्म शैल-समूह (308), टेराकोटा (310)।

परिशिष्ट-1 सन्दर्भ-साहित्य 311

परिशिष्ट-2 पारिभाषिक शब्दावली 313

परिशिष्ट-3 छाया चित्रावली 1-47

संकेत-सूची

अध्या०	अध्याय
अ०प्र०	अप्रकाशित
आ०स०रि०	आर्क्योलाजिकल सर्वे रिपोर्ट
ई०	ईसवी सन्
उदा०	उदाहरण
का०हि०वि०वि०	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
ख०	खण्ड
दे०	देखिए
ना०प्र०स०	नागरी प्रचारिणी सभा
पृ०	पृष्ठ
प्र०सं०	प्रथम संस्करण
भा०	भाग
वि०सं० (वि०)	विक्रम सम्वत्
सं०	सम्पादक
हि०	हिजरी

— ● —

पलामू

पलामू में आरम्भ से ही द्रविड़ भाषा परिवार की आदिम जातियां निवास करती रही हैं, किन्तु कुछ जातियां जैसे–मुण्डा, आग्नेय भाषा परिवार की हैं। यहां महात्मा गौतमबुद्ध और महाप्रभु चैतन्य के आने और उनके द्वारा धर्म–प्रचार के प्रमाण प्राप्त होते हैं।

नगरीय सभ्यता : यदि नगरीय सभ्यता का विकास द्रविणों के द्वारा हुआ मान लिया जाय तो आरंभिक नगरीय–सभ्यता के अवशेष सिन्धुघाटी की खुदाई से प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार पलामू की सभ्यता भी समकालीन कही जा सकती है, किन्तु इसके पूर्व भी यहां की गुफाओं में प्राप्त प्रागैतिहासिक कालीन पुरावशेषों, प्रस्तर–लिपियों, शिलालेखों से इस बात की पुष्टि हो जाती है कि यह स्थान मानव की आदिम सभ्यता का केन्द्र रहा है। महावीर वर्मा के अनुसार "पलामू जिले में नगर–सभ्यता का विकास ताम्रयुग से प्रारम्भिक काल (ईसा पूर्व 2000) से आरम्भ हुआ है। विकास की यह अवस्था असुरों के बहुत बाद तक थी। यह भारत के विकास का आरंभिक काल था। असुर जाति लौह–उद्योग में निपुण थी। भारत में जिस समय अनेक स्थानों में लोग लोहे का उपयोग करना नहीं जानते थे, उसी समय पलामू में लोहे की अनेक भट्ठियां थीं।[1]"

वन्य सभ्यता : यहां की मद्र जाति कृषिकार्य में निपुण थी। मारह तथा उरांव जातियां युद्ध–कौशल में निपुण थीं। स्थापत्य कला के क्षेत्र में यहां की जनजातियों ने शीर्ष महत्व प्राप्त किया था। पलामू किले के निर्माण, किले के ऊपरी छोर पर बनाए गए घुड़दौड़ के स्थान से यह प्रमाणित हो जाता है कि यहां की वन्य–जातियां स्थापत्य कला के क्षेत्र में भी अपनी प्रतिद्वन्द्विता नहीं रखती थीं। किले के अंदर कुएं का निर्माण, जलाशय का निर्माण, किले के एक छोर से दूसरे छोर तक जाने के लिए गमनागमन के साधनों से भी इस

1. कोयल के किनारे–किनारे, पृ0–72

तथ्य की पुष्टि हो जाती है।

स्थापत्य-कला : पलामू में कई ऐसे स्थल हैं, जहां स्थापत्य के प्रभूत प्रमाण प्राप्त होते हैं। पांकी थाने के चन्द्रपुर गांव में एक साधु ने खुदाई करके एक पक्के भवन के होने का रहस्योद्घाटन किया था। इसकी छतों में लोहे की कई कड़ियां लगी हुई हैं। इसी प्रकार पाटन थाने के टुलही ग्राम में मन्दरसा नामक स्थान पर एक पुराने किले का भग्नावशेष प्राप्त हुआ है। इसकी दीवारों तथा प्राप्त शिलालेखों से ऐसा लगता है कि इसका निर्माण मद्रों ने अपने शासनकाल में कराया था। इस स्थान पर एक बौद्ध स्तूप भी प्राप्त हुआ है। इसी थाने कें जगहांसी ग्राम में एक गोल और एक चौकोर कुंआ मिला है। इसी के समीप एक संकरी गुफा थी, उसके भीतर विशाल आंगन थे। प्रत्येक आंगन में लगभग 300 आदमियों के बैठने की जगह थी। उसके भीतर से मन्दरसा किले तक जाने का मार्ग बना था। पाकी थाने के ही कक़रीगढ़ में वउलिया नामक स्थान पर प्राप्त एक बावली, उसके समीप तराशे हुए पत्थर की भट्ठी आदि से भी इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है।

वन-सम्पदा : पलामू जिला घने वनों के लिए प्रसिद्ध है। इन वनों पर आधारित कई लघु उद्योग जैसे लकड़ी, चिरौंजी, कत्था, लाह, बीड़ी, गोंद, रूई, मधु आदि स्थापित किये जा सकते हैं। वृक्षों के अतिरिक्त बगई आदि कई प्रकार की घासें, कंदमूल, फल और जड़ी-बूटियां यत्र-तत्र-सर्वत्र पायी जाती हैं।

पलामू जिले में पाए जाने वाले वृक्षों के नाम हैं—साल, आसन, करम, सागोन, गुरी, सीधा, करजली, केकर, महुआ, पलास, खैर, गमहार, बीया, चिलबिल, संधान, सेमर, मेहा, बरोहन, बेल, केदल, धौंरा, सलई, कयौंझी, केंद, नरहुल, पीपल, वट, कुसुम, बेलसई, ठीला, शीशम, सखुआ, गलगल, मोंजन, बकाइन, आम, यूकेलिप्टस आदि। इनमें शीशम, सखुआ, सागवान, आसन, करम, केकर, धौंरा आदि लकड़ियां मजबूत होती हैं। ये प्रायः मकान बनाने के काम में आती हैं। धौंरा की लकड़ी से टांगा, कुदाल आदि का बेंट बनाया जाता है। सगुआन, बीया, गम्हार आदि की

लकड़ियों से मेज, कुर्सी आदि वस्तुएं बनायी जाती हैं। सेमल, सलई, यूकेलिप्टस आदि कागज बनाने के काम में आते हैं। इन वृक्षों पर आधारित कई उद्योग-धंधे भी चलते हैं जिनमें से मुख्य हैं—कत्था, चपड़ा, चिरौंजी, टसर, बीड़ी, लकड़ी के उद्योग, खिलौना तथा बांस की डलिया आदि।

पशु-पक्षी : पलामू जिले में हिंसक जानवरों में बाघ, चीता, भालू, लकड़बग्घा, हुंणार, कोइया, सिआर, वन-बिलाव और शाकाहारी जानवरों में भैंस, सामर, चीतल, हिरन, बारहसिंहा आदि पाये जाते हैं। यहां के घने जंगलों में बाघ और लातेहार के जंगल में हाथी-झुंड भी पाये जाते थे। पलामू के जंगलों में बाघ का आखेट करने के लिये ब्रिटिश काल में ही बड़े-बड़े अधिकारी आते रहे हैं। इन जंगलों में मोर बहुतायत से पाये जाते हैं और वनमुर्गी, तीतर, पेड़ुकी, बगेरी, पनडुब्बी, चकवा, चकवी, बत्तख, नीलकंठ और बक आदि चिड़ियां भी पायी जाती हैं।

पलामू के वन्य-जन्तु : पलामू के वनों में शाकाहारी तथा मांसाहारी जानवरों की अधिकता है, जिनमें से मुख्य हैं—मांसाहारी जानवरों में व्याघ्र (राष्ट्रीय पशु), चीता, भालू, हड़हा, लकड़ा, हुंड़ार, कोइया, शृंगाल, वनबिलार आदि। शाकाहारी जानवरों में हाथी, साम्भर, नीलगाय, बन्दर (काले, लाल मुंहवाले), हरिण (चिन्रा), खरगोश आदि मुख्य हैं।

शिकार में उपयोग होने वाली निम्नांकित चिड़ियां पायी जाती हैं—हारिल, परेवा, कोयटा, तीतर, मयूर (राष्ट्रीय पक्षी), जंगली मुर्गा, काला तीतर, असियल, गोरया तीतर, लावा, तडला, घगुर, भटेर, गुदरी, चाहा, बगुला, बत्तख आदि। डी0एच0ई0 सन्दर ने 140 से भी अधिक चिड़ियों की किस्मों की सूची तैयार की है। कोयल के तटों पर या बांधों पर ये चिड़ियाँ बहुतायत से पायी जाती हैं।

डी0एच0ई0 सन्दर ने कोयल तथा उसकी सहायक नदियों तथा बांधों में पायी जाने वाली मछलियों का उल्लेख इस प्रकार किया है—1. रोहू, 2. नयी, 3. वारसर, 4. वरार, 5. डंकाजर, 6. टेंगरा, 7. मोपल, 8. बोनसा, 9. रिहवा, 10. गोदी, 11. बकरा, 12. चिपूआ, 13. बोधरा, 14. चेठी,

15. गरी, 16. गरई, 17. बामी, 18. झींगा, 19. आंवा, 20. हिल्सा, 21. लेघर, 22. बीजर, 23. कुसुआं, 24. बल्ला, 25. गरुआ, 26. नकटा, 27. पुन्ती, 28. झांकर, 29. धवई, 30. लेरी, 31. पपन्ता, 32. जनसार, 33. सिन्हाव, 34. लुनियर, 35. सेरनी, 36. पतासी, 38. बतासी, 39. चेचवा, 40. पोन्ती, 41. थनहा, 42. लंघा, 43. गोयरा, 44. कनेर, 45. कर्नर, 46. डोरी, 47. धोगरा। कोयल के निकट फरबिस बांध, सन्दर बांध नगरपालिका तालाब आदि मछली पालने के लिए प्रसिद्ध हैं। डी०एच०ई० सन्दर ने यहां के जंगलों में पाए जाने वाले सर्पों की निम्नांकित सूची तैयार की है—1. बहीरा, 2. जारो, 3. फनीक (काला कोबरा), 4. गेंहुवन (भूरा कोबरा), 5. करैत, 6. कत्करर, 7. खेरी बखार, 8. सुगवा (हरा वृक्ष पर पाये जाने वाला)। 9. धामिन, 10. डोंडवा, 11. हरहोरा (घास में पाया जाने वाला), 12. पोटारी, 13. बोरा या भैंस बौंरा, 14. चीताबरवा। इसके अतिरिक्त बिच्छू, खप्पर, बिच्छा, कनगोजर, गोह, घड़ियाल आदि पाए जाते हैं।[1]

पलामू–व्याघ्र–योजना : व्याघ्र विश्व–प्रसिद्ध वन्य जीव ही नहीं भारत का राष्ट्रीय पशु भी है। भारत के अतिरिक्त व्याघ्र रूस, चीन, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, जावा, सुमात्रा, पश्चिम वर्मा और मलेशिया में भी पाये जाते हैं। 1972 की गणना के अनुसार भारत में इनकी संख्या 40,000 थी। जहां तक पलामू का संबंध है इस जिले में एक गणना के अनुसार इनकी संख्या 41 थी। इनके स्वतंत्र विचरण, पोषण, रख–रखाव तथा सुरक्षा के लिए बेतला के जंगलों, भारत सरकार और बर्ड वाइल्ड फंड द्वारा प्रदत्त आर्थिक सहायता से कई योजनाएं कार्यान्वित की गयी हैं। 1977 में की गयी गणना के अनुसार कुछ विशेष वन्य–पशुओं की संख्या सम्पूर्ण व्याघ्र–क्षेत्र में इस प्रकार की गयी है। चीतल–20,500, वराह–19,500, सांभर–900, कोटरा–800, गवर–550, लकड़ा–35, भालू–300, नीलगाय–120, तेन्दुआ–65, कोइया–60, हाथी–37, बाघ–32

1. पलामू का ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक अध्ययन : कोयल के किनारे–किनारे पृ०–67–68

बेतला राष्ट्रीय उद्यान में पर्यटकों की सुविधा के लिए टूरिस्ट लाज, टूरिस्ट कॉटेज, जनता विश्रामागार आदि का निर्माण किया गया है। पार्क में घूमने के लिए स्टार्क लाइट तथा जीप की व्यवस्था सूचना विभाग द्वारा की गयी है।

बेतला का राष्ट्रीय उद्यान : पलामू में बेतला का राष्ट्रीय उद्यान प्रसिद्ध है। इसे देखने के लिए दूर-दूर से दर्शनार्थी आते रहते हैं। यहां जानवर स्वतंत्र विचरण करते हैं, जिन्हें देखने-दिखाने के लिए वाहन तथा हाथी की सुविधाएं उपलब्ध हैं। ठहरने के लिए निरीक्षण भवन हैं, होटल हैं। इस उद्यान की लंबाई 25X25 किमी0 है। इसमें प्रायः सभी जानवर तथा पक्षी देखे जाते हैं। स्थान-स्थान पर झरनें तथा नाले हैं, जिनके कारण दृश्य और मनोरम हो गया है। यहां कमल दह नामक स्थान पर मंच बनाया गया है जहां से जानवरों को पानी पर देखा जाता है। यहां जानवरों में भाई-चारा, आपसी प्रेम-भाव देखा जाता है। वे आक्रामक नहीं हैं। यहां के हाथी बड़े समझदार, वफादार हैं, जिनसे संबंधित अनेक घटनाएं बतायी जाती हैं। एक बार एक व्याघ्र ने एक हाथी को मार डाला, जिसके लिए वन के सभी हाथियों ने एकत्र होकर शोक मनाया, प्रस्ताव पारित करके शव पर फूल-माला चढ़ाया। एक बार एक हाथी कार से टकरा गया जिसके चलते सभी हाथियों ने पहुंच कर तमाम खड़ी कारों में से उसी कार को क्षतिग्रस्त कर दिया जिससे उनका साथी टकराया था।

उद्योग-धंधे : पहाड़ी और मैदानी दोनों का मिला-जुला भाग होने के कारण यह जनपद कृषि के अतिरिक्त अन्य उद्योगों का भी केन्द्र बनता जा रहा है। जपला में सीमेंट का बहुत बड़ा कारखाना वर्षों से चल रहा है। विगत तीन-चार वर्षों में चूने के पत्थर का विशाल भंडार प्राप्त हुआ है। इससे बड़े-बड़े उद्योगों की सम्भावनाएं भी बलवती हुई हैं। हिन्दुस्तान स्टील उद्योग प्रारम्भ हुआ है। राजहरा के निकट कोयले की कई खाने हैं जिनसे पर्याप्त कोयला निकाला जाता है। इस उद्योग में हजारों व्यक्तियों को काम दिया गया है। पलामू चमड़ा और लाह-उद्योग के लिए देश भर में प्रसिद्ध है। बीड़ी के

पत्ते का व्यापार भी राष्ट्रव्यापी हो चुका है। लकड़ियां और बांस दूर–दूर तक निर्यात किये जाते हैं।

यहां वन पर आधारित महुआ से संबंधित उद्योग–धंधों का विकास भी तेजी से हुआ। यहां से महुआ का तेल तथा कत्था का निर्यात होता है। गुरमी की कचरी जो एक प्रकार की लता से प्राप्त होती है, बिहार के अन्य भागों में बोयी जाती है। यह गुणकारी भोज्य है। कुटीर उद्योगों में सनई और पटुआ की रस्सियां, टाट, पट्टी और अन्य घरेलू वस्तुयें यहां के आदिवासी अपने घरों में बनाते हैं।

खनिज पदार्थ : पलामू जिला खनिजों के मामले में भी किसी से पीछे नहीं है। कोयला, लोहा, मैगनीज, अभ्रक, तांबा, संगमरमर, चूने के पत्थर, सीमेंट आदि के लिए यह जनपद धनी माना जाता है।

कृषि एवं औद्योगिक संस्कृति की मान्य परम्पराएं :

जम्मीन और कर की स्थिति : 1892–93 ई0 के पूर्व पलामू परगना लोहरदगा जिले के अंतर्गत था। पलामू जिले में एक ही अनुमंडल डाल्टनगंज था। इस अनुमंडन की स्थापना 1862 ई0 में हुई। 1894–95ई0 से 1896–97 ई0 तक श्री डी0एच0ई0 सन्दर द्वारा सर्वे सेटिलमेंट आपरेशन किया गया। तब यह जिला बिहार, बंगाल, उड़ीसा प्रान्त में था। भूमि सुधार ऐक्ट 1950, 26 जनवरी, 1955 से लागू हुआ। तब से सभी रियासतें या जागीरदारी प्रथा समाप्त कर दी गयी। ब्रिटिश सरकार द्वारा स्वायत्तता लिये जाने के फलस्वरूप 1938 ई0 में जब कांग्रेस सरकार बनी तो लगान में भारी कमी कर दी गयी। सर्वेयर जनरल के अनुसार पलामू जिले का कुल क्षेत्रफल 3135540 एकड़ है। इस विभाग की रिपोर्ट 1951 के अनुसार इसमें 1875089 एकड़ वन क्षेत्र है। सांख्यिकी विभाग पलामू के रिपोर्टानुसार 1977–78 में 1303798–90 एकड़ वन–क्षेत्र था।

उपज : रंगा, भंडरियाल, गारु, महुआ–डांड़, बालूमाथ को सम्मिलित करते हुए नगरऊंटारी, मझिगांव और पीको आदि क्षेत्रों में धान की फसल

होती है। यहां दलहन, तिलहन की सभी फसलें होती हैं। मकई, महुआ, उड़द आदि भदई तथा गेहूं, जौ, चना, मसूर, खेसारी, रहर आदि रबी की फसलें भी यहां होती हैं।

अकाल–दुकाल : पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण पलामू जिला अकाल, बाढ़, सूखा से प्रभावित होता रहता है। यहां हर दूसरे या तीसरे साल सूखा पड़ता था। यह दूसरे या तीसरे साल बाढ़ की चपेट में आ जाता है। यहां का 1967–68 और फिर 1973 का अकाल इतना भयंकर था कि न जाने कितनों की जानें भूख के कारण चली गयीं। लोगों को सरई, कंदा, गेंठा, चकवढ़, कनवढ़, डिठोर, पियार, बेर तथा जंगल के पेड़ों के पत्ते तक खाने को नहीं मिले। बाढ़ या अकाल की चपेट में आते ही गांव के लोग अपने घरों को छोड़कर पार्श्ववर्ती जिलों अथवा पर्वतों में अपनी जीविका के लिए निकल पड़ते हैं।

सामाजिक और पारिवारिक जीवन : मुख्य रूप से यहां आदिवासी जातियां निवास करती हैं, किन्तु बाहर से कुछ व्यवसायी वर्ग के लोग– हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, दिल्ली आदि स्थानों से आए हुए हैं। अतः यहां का सामाजिक जीवन अब धीरे–धीरे व्यक्ति–संस्कृति वाला हो गया है। यही कारण है कि भाषा और बोली में भी काफी सम्मिश्रण हुआ है। यातायात के साधनों के विकास के फलस्वरूप लोगों का जीवन–स्तर क्रमशः ऊंचा हो रहा है। तब भी लोग साधारण सूती और सेंथेटिक के कपड़े ही अधिक पहनते हैं। अधिकतर लोग कच्चे मकान में रहते हैं, जिनमें काष्ठोपकरण नहीं होते। मेलों और साप्ताहिक बाजारों में दैनिक उपयोग की वस्तुएं बिक्री के लिए जाती हैं जिन्हें वहां के लोग खरीद कर अपनी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। समय–समय पर भजन, कीर्तन, पूजा–पाठ, जतरा, नृत्य, संगीत का आयोजन भी किया जाता है। शहरी क्षेत्रों में सिनेमा, दूरदर्शन, रेडियो आदि की सुविधाएं मुहैया हो गयी हैं।

खानपान–पहनावा : यहां पहले लोगों को निकृष्ट कोटि के अन्य ही मुहैया हो पाते थे, किन्तु ऊब मध्यम श्रेणी के लोग चावल, तेल, घी,

दूध, सब्जी, अचार, चटनी आदि खाते हैं। नाश्ते के रूप में सत्तू और लिट्टी-बाटी की अधिकता देखी जाती है। इसकी वहां अनेक दुकाने हैं।

यहां के पुरुष धोती, कुर्ता, गंजी, अंडरवियर, तथा औरतें साड़ी आदि पहनती हैं। गांव और जंगल के लोग महुआ और सरई, पियार, तेंदू, बेर, करवन, मकोय आदि फल-फूल तथा अन्य कई प्रकार के कंदमूल खाकर जीवन-यापन करते हैं। वे ईधन के रूप में गाय के गोबर को उपली और जंगल की लकड़ी अधिक जलाते हैं। बिजली के अभाव में मिट्टी का तेल सर्वत्र जलाया जाता है। जहां-तहां तीसी का तेल अथवा महुआ का तेल भी जलाकर काम चला लिया जाता है। कोयला-खदानों में काम करने वाले लोग पत्थर के कोयले से भोजन बनाते हैं और लकड़ी जला कर अपने घर को प्रकाशित करते हैं। प्रकाश की समुचित व्यवस्था न होने के कारण ज्यादातर लोग रात में 8,9 बजे तक सो जाते हैं।

धूम्रपान और मदिरा-पान यहां का आदिवासी अधिक करता है। खाने के लिए भोजन भले न मिले, लेकिन छोटे-छोटे बच्चे और स्त्रियां भी बीड़ी, सिगरेट पीती और मदिरा का सेवन करती हैं। सुविधानुसार ये मदिरा स्वयं बना भी लेते हैं। वैसे शहरी क्षेत्र के लोग चाय, काफी आदि भी पीते हैं।

इसके अतिरिक्त नये औद्योगिक प्रतिष्ठानों में भी प्रायः रविवार को बाजारें लगती हैं। जैसे-जैसे लोगों की आवश्यकता बढ़ती है और स्थान का विकास होता है, वैसे-वैसे बाजारें भी लगती जाती हैं। हां, इन बाजारों में खुलेआम वनवासियों-आदिवासियों का शोषण होता है। ये लोग मोल-भाव करने में असमर्थ होते और उधार सामान क्रय करते हैं। उधार देनेवाला साहूकार के वे एक प्रकार से बंधुआ ग्राहक हो जाते हैं।

पलामू के स्थानों का सांस्कृतिक परिचय :

पलामू जिला प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत मनोरम तथा नदी, नालों, झरनों के कारण अत्यंत सुहावना रहा है। रंग-बिरंगे फूलों, मादक गंध-युक्त हवाओं, नदियों के कल-कल निनादों, पक्षियों के कलरव एवं पशुओं की

आवाजों से यहां का यह पूरा का पूरा क्षेत्र हर्षित, उल्लिसित, पुष्पित, पल्लवित एवं प्रफुल्लित रहा है। यहां के अनेक ऐसे स्थल हैं जहां आरम्भ से ही संत महात्माओं का आगमन भी होता रहा है। यह भूमि देवताओं के लिए भी प्रिय रही है। यही कारण है कि यहां के अनेक स्थल सांस्कृतिक तीर्थ बन गए हैं। यहां के प्राकृतिक सौंदर्य के बारे में देश के अतिरिक्त विदेशी विद्वानों ने अनेकशः लिखा है। अतः इन स्थानों का सांस्कृतिक परिचय यहां अप्रासंगिक न होगा।

अलीनगर : जनपद की उत्तरी–पूर्वी सीमा पर हुसैनाबाद से लगभग 8 किमी0 पूरब अलीनगर नाम का एक गांव स्थित है। इस गांव में एक छोटा सा किला बना हुआ है, जिसे 'रोहिला किले' के नाम से जाना जाता है। इस किले का संबंध मुसाफी खां या मुसफ्फर खान के नाम से जुड़ा हुआ है। यह कौन व्यक्ति था इस संबंध में जानकारी प्राप्त नहीं होती। गांव के उत्तरी–पूर्वी किनारे पर यह किला एक छोटी सी पहाड़ी पर बना हुआ है। इसका आकार आयताकार है और सभी किनारों पर वर्गाकार कमरे बने हुए हैं। दीवारें 55 फिट 8 इंच X 45 फिट 10 इंच के आकार की भीतर से तथा 65 फिट 8 इंच बाहर से बनी हुई हैं। सभी दीवारों में तीरंदाजी के लिए सीढ़ियां बनी हैं। एक किनारे पर न्यायालय और कूप बने हुए हैं। किले की दीवारें पत्थर, ईंट और कंक्रीट से बनी हुई हैं। किला अब क्रमशः नष्ट होता जा रहा है। किन्तु पुरातात्विक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। इसे देखने के लिए यदा–कदा दूर–दराज से पुरातत्ववेत्ता तथा अन्य लोग आते रहते हैं। 'पलामू गजेटियर' के अनुसार 1951 में 155 एकड़ में बसे इस गांव में कुल 69 घर थे और उसकी कुल जनसंख्या 393 थी, किन्तु अब जनसंख्या वृद्धि के हिसाब से यहां की आबादी में भी वृद्धि हुई है।

ओदालमुन पहाड़ : लातेहार तहसील में मुख्यालय से लगभग 20 किमी0 दक्षिण ओदालमुन पहाड़ की पुरानी गुफा है। कहते हैं इस गुफा में दूध ढहराया जाता था। अर्थात् गुफा के एक सिरे से यहां के लोग दूध ढारते और ऐसा समझते हैं कि यह दूध गुफा के भीतर स्थापित उनके देवी–देवता को

प्राप्त होता है। इस गुफा में इतना दूध ढाला जाता कि वह लगभग 3 किमी0 दूर जाकर निकलता था। यह गुफा बिल्कुल अंधेरी है जिसमें जाने के लिए अत्यंत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। लेकिन लोगों का विश्वास है कि दूध ढालने का फल उन्हें मिलता है।

लातेहार से लगभग 11 किमी0 उत्तर रानी पहाड़ है। इस पहाड़ पर स्थित एक शिलाखण्ड के ऊपर चील, आदमी, घोड़ा, हाथी आदि की आकृतियां बनी हुई हैं। ये आकृतियां मानव–निर्मित हैं और माड़ा की गुफाओं में बनी आकृतियों की शैली की अनुकृति प्रतीत होती हैं।

उग्रतारा देवी का मंदिर : डाल्टनगंज से लगभग 90 किमी0 दूर तथा चंदवा से 10 किमी0 दूर जंगल के मध्य में उग्रतारा देवी का मंदिर स्थित है। कहते हैं इस मंदिर का निर्माण अहिल्याबाई ने कराया था, जो मराठों के विजय का प्रतीक था। लेकिन इस बात का कोई ऐतिहासिक प्रमाण प्राप्त नहीं है।

कजरी : कजरी नामक स्थान कोयल और अमानत नदी के तट पर मंदरसा नामक किले के समीप स्थित है। लोगों का कहना है कि मुण्डों द्वारा निर्मित यह किला 1857 ई0 में विद्रोहियों का गढ़ था। कजरी में रेलवे स्टेशन भी है और इसके निकट कोयले के चूर्ण प्राप्त होते हैं। हवा के साथ कोयले के चूर्ण उड़ते हैं जिसके कारण आसपास की भूमि कोयले की तरह काली हो जाती है। इसी कारण इसका नाम कजरी पड़ा है।

केचकी : केचकी नाम का एक ग्राम है जो पहले एक नगर के रूप में बसा हुआ था। बेतला का राष्ट्रीय उद्यान इसी के निकट बना हुआ है। इसके पास ही पलामू का प्रसिद्ध किला और कमलदह नामक सुन्दर सरोवर है। इस सरोवर में गोह तथा घड़ियाल देखे जा सकते हैं। कमलदह के निकट ही 'डोम' किले का अवशेष देखा जा सकता है। उसके खण्डहर से ऐसा लगता है कि यह डोम किला अपने संमय में काफी सुन्दर था। अपनी समृद्धि–काल में डोम या चंडाल राजाओं ने यहां आकर किले का निर्माण कराया था। केचकी नामकरण 'महाभारत' में आए कीचक का अपभ्रंश

बताया जाता है। महावीर वर्मा के अनुसार कीचक ने ही इस नगर को अपने नाम से बसाया था जो बाद में केचकी हो गया। डोम किले के निकट एक पहाड़ी है, उस पहाड़ी पर देवी के एक मंदिर का खण्डहर विद्यमान है। यहां तालाब, कुछ मूर्तियां, गुफाएं, खण्डहर आदि देखे जा सकते हैं।

केतार : केतार एक गांव का नाम है, जिसमें एक पुराना मंदिर निर्मित है जहां रामनवमी के अवसर पर मेला का आयोजन किया जाता है। यह मेला लगभग एक महीने तक रहता है। मंदिर में दुर्गा की एक पुरानी प्रतिमा स्थापित है जिसके बारे में कहा जाता है कि यह प्रतिमा मैंसहट घाट की एक घाटी से 1850 में प्राप्त की गयी थी। एक महीने तक यहां चहल-पहल रहती है और नित्य नृत्य, भजन, कीर्तन के कार्यक्रम चलते रहते हैं। इस अवसर पर आदिवासी कलाकार दल बनाकर आते और नृत्य, संगीत द्वारा बड़ा आंकर्षण प्रस्तुत करते हैं।

गढ़वां–गढ़वां नगर डाडू और सरस्वती नदी के मध्य भाग में अवस्थित तो है ही, कोयल नदी से भी इसकी दूरी 10 किमी0 से अधिक नहीं है। डाल्टनगंज के बाद सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से दूसरा महत्वपूर्ण स्थल गढ़वां ही है। गढ़वां एक ओर सरगुजा और दूसरी ओर मिर्जापुर और काशी से व्यापारिक संदर्भों से जुड़ा हुआ था तथा घोड़ा और बैलों द्वारा यहां के वन से उपजाई वस्तुएं—जैसे लासा, लाह, कत्था, बीड़ी-पत्ता, चिरौंजी, शहद, गोलोचन, रेशम आदि बड़े शहरों में जाती थीं और वहां से दैनिक उपयोग की वस्तुएं लायी जाती थीं।

यहां पुराने मंदिर तथा अन्य ऐतिहासिक स्थल हैं जिनका उल्लेख अलग से किया गया है। नाग पंचमी के अवसर पर महाबीरी झण्डे का विशाल जुलूस यहां पारंपरिक रूप से निकाला जाता है।

1951 के सेंसस रिपोर्ट के अनुसार गढ़वा सबसे पुराना कस्बा है जिसकी आबादी 1951 में 9,467 थी। यहां भैया साहब के परिवार के लोग गढ़ बना कर रहते थे। सोनपुरवां नामक गांव में फाल्गुन तेरह को शिवदुरहा मेला प्रति वर्ष लगता है। यहां शिव जी का एक छोटा सा मंदिर भी

निर्मित हैं। दोपवा नामक ग्राम में काली जी का एक पुराना मंदिर बना है, जहां दूर–दराज के लोग पूजा के लिए आते रहते हैं। यहां भी नागपंचमी के दिन एक मेले का आयोजन किया जाता है। इस दिन इस स्थान पर महाबीरी झंडे लगाने के लिए लोग नाचते हुए एकत्र होते हैं। सन् 1960 के आसपास यहां लगने वाली बाजार से 12 हजार रुपये प्रति वर्ष की आय के लिए ठेका दिया जाता था। यहां वृहस्पतिवार को मेले का आयोजन किया जाता है।

गुलगुलपत : गुलगुलपत नामक पहाड़ी पलामू में भंडरिया से लगभग 25 किमी0 दूर 3819 फिट की ऊंचाई पर स्थित है। बिहार में यह ऊंचाई में दूसरे स्थान पर है। इसके निकट से होकर कोयल तता कनहर नदियां प्रवाहित होती हैं। यही वह स्थान है, जहां कनहर नदी बिहार और मध्य प्रदेश की सीमा बताती है। यह स्थान हिताषु जल प्रपात, कोरवा जनजातियों और शिकारगाह के लिए प्रसिद्ध है।

गोदरमना : यह कनहर नदी के किनारे स्थित है और यहां प्रति रविवार को साप्ताहिक बाजारें लगती हैं, जिसमें छेंड़, बकरी, पशुओं तथा अनाज, फूल, जड़ी–बूटियां, दैनिक उपयोग की वस्तुएं क्रय–विक्रय के लिए आती हैं। यहां से रंका जाने के लिए पक्की सड़क बनी है जो लगभग 25 किमी0 लम्बी है। यहां खली, घी, गुड़ तथा अन्य वनौषधियां, कत्था आदि वस्तुएं पैदा होती हैं, जिन्हें मध्य प्रदेश और गढ़वां रोड से दूर के बाजारों में बिक्री के लिए भेज दिया जाता है।

गढ़देवी : गढ़वा नामकरण गढ़ और गढ़देवी के नाम पर हुआ बताया जाता है। रेलवे स्टेशन से 2 किमी0 दूर गढ़वा की गढ़देवी की स्थापना की गयी है। गढ़वा और उसके आसपास की जनता बड़ी श्रद्धा भक्ति से देवी की आराधना–पूजा करती है। ऐसा समझा जाता है कि इस देवी की प्रथम स्थापना गढ़ के मंदिर के अंदर वहां के प्रभावशाली राजा द्वारा की गयी थी। बताया जाता है कि यह देवी जमींदारों की अधिष्ठात्री कुलदेवी के रूप में थीं। इस देवी को दशहरा के अवसर पर भैंसों की बलि चढ़ाई जाती थी, और बड़े जोश–खरोश के साथ जुलूस निकाले जाते थे। देवी को प्रसन्न करने के लिए

भक्तगण बकरों की बलि भी चढ़ाते थे। इस समय मंदिर एक ट्रस्ट के अधीन है। यह मंदिर वर्तमान गढ़वा नगर के बीच अवस्थित है। मंदिर में प्रतिष्ठापित देवी की मूर्ति स्वर्ण-निर्मित है। वहां के पुजारी के अनुसार यह देवी इक्कीस देवियों में से एक है। लगभग तीन मीटर लम्बा 3 मी0 चौड़ा मंदिर का निर्माण हुआ प्रतीत होता है।

पंच मंदिर : गढ़वा में लगभग 1900 के आसपास एक मंदिर का निर्माण किया गया था, जिसे पंच मंदिर के नाम से जाना जाता था। यहां पांच मंदिर हैं, जिसमें एक बीच का मंदिर सबसे बड़ा है। इसमें शिवलिंग स्थापित है। इस मंदिर का निर्माण दुःखी नामक कलाकार ने किया था। कहते हैं इनको कोई लड़का था, जिसे किसी कारणबस सेशन ट्रायल हो गया, इन्होंने मुक्त होने पर मंदिर-निर्माण की मनौती मानी थी जिसे पूरा किया।

विलासी शाह का स्वर्णकार मंदिर : विलासी साहु ने लगभग 1900 के आसपास एक मंदिर का निर्माण कराकर उसमें शिवलिंग और भगवान शिव की पंचमुखी प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी।

शिव-मंदिर : लगभग एक सौ वर्ष पूर्व अग्रहरि राम द्वारा एक शिव-मंदिर का निर्माण कराया गया था जिसमें शिव और हनुमान की प्रतिमायें प्रतिष्ठित हैं। इसके बारे में एक दिलचस्प किम्बदन्ती प्रचलित है जो इस प्रकार से वर्णित है। कुछ ही वर्ष पूर्व जगन्नाथ पुरी के प्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर के पुजारी जी यहां आये थे। जगन्नाथ जी ने उन्हें स्वप्न दिया कि गढ़वा नामक नगर में उरांव जाति का एक श्रद्धालु भक्त है। वहां जाकर उससे मेरे लिए एक वस्त्र लाओ। मैं उसी को धारण करूंगा। ऐसा स्वप्न होने के उपरांत ही पुजारीजी का यहां आगमन हुआ। यहां आकर उन्होंने उस भक्त विशेष का दर्शन किया, जिसे कोई जानता तक न था। वह भगवान का नाम लेता था और सदा सच बोलता था। पुजारी जी ने उससे मजदूरी कराकर पांच रुपये दिये और कहा कि इसी रुपये में एक वस्त्र भगवान को चढ़ाने के लिये ला कर दो। वह खरीद लाया और पुजारी उक्त वस्त्र को लेकर जगन्नाथजी चला गया।

मोरगनवां : मोरगनवां नाम की एक गुफा है, जो उसी गांव में

भवनाथपुर के पास स्थित है। यहां एक पुराना शिव-मंदिर है। शिवरात्रि के दिन यहां मेला लगता है। लोगों का कहना है कि इस गुफा में पहले साधु-महात्मा रहकर तपस्या किया करते थे।

चंदवा : पलामू जनपद का चंदवा नामक स्थान लातेहार क्षेत्र में ही पड़ता है। यह स्थान डाल्टनगंज से 90 किमी० पूरब है। इस क्षेत्र में संगमरमर के समान सफेद रंग के पहाड़ देखे जाते हैं। इसलिए यहां मुजेक का काम होता है। इसी प्रकार एक विशेष प्रकार का पत्थर भी यहां प्राप्त होता है जिससे एल्यूमिनियम निकाला जाता है। यहां का पत्थर रेनूकूट या अन्य कई स्थानों को भेजा जाता है। यहां एक छोटी सी बाजार और एक रेलवे स्टेशन है जहां से चुनार जंक्शन और दूसरी ओर रांची से कहीं भी जाया जा सकता है।

चैनपुर : चैनपुर डाल्टनगंज जिले का सबसे बड़ा गांव है, जहां बहुत पहले से रविवार के दिन बाजार लगता है। यह गांव दरी, कोसे, कार्पेट्स और ब्रास अटेंसिल्स के लिए मशहूर है। यहां एक भग्नावशेष किला है जिसका निर्माण यहां के ठाकुरों द्वारा कराया गया था। यहां के राजा अपने को चन्द्रवंशी राजपूत कहते हैं। इनका कहना है कि इनके पूर्वज राजा दुःशासन सिंह दिल्ली से लगभग 450 किमी० दक्षिण-पूरब किसी स्थान से यहां आए थे।

छेछारी : वर्तमान महुआ डांड़ प्रखण्ड का छेछारी इलाका सरगुजा की सीमा से लगा हुआ है। इसका क्षेत्रफल 22 वर्ग किमी० है। यहां भैयासाहब नामक राजवंशियों का अधिकार था। भैयासाहब गहरवाल क्षत्रिय थे। पलामू किले पर राजा भागवत राय का अधिकार था। वह इतना शक्तिशाली था कि रक्सेल मानसिंह को सरगुजा की सीमा पर उसने रोक रखा था।

छेछारी नगर : तेतर घाट से लगभग 6 किमी० दक्षिण गुटाम घाघ नामक एक स्थान है। यहां पहले एक नगरी थी। यहीं सरगुजा से आने वाले आक्रमणकारी मराठों से चेरों और रक्सेलों के बीच संघर्ष हुआ था। यहीं चेरो, बुन्देलों कोरवा और अंग्रेजों के बीच भी लड़ाइयां लड़ी गयीं थीं।

1857 ई0 के विद्रोह में छेछारी के भैया कुमार शाही विद्रोह के प्रमुख संचालकों में से एक थे। उन्होंने अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिये थे। अंत में वे पकड़े भी गए थे। पुराने कागजों को देखने से पता चलता है कि अनेक नीलाम्बर शाही, पिताम्बर शाही, रत्नशाही, नारायण शाव, शिवचरण माझी आदि के साथ वे फांसी के दख्ते पर चढ़ा दिए गए थे। जो भी हो छेछारी नामक यह स्थल आंदोलनों और लड़ाइयों की लीलाभूमि होने के कारण इतिहास प्रसिद्ध हो गयी है।

जपला : जपला एक बहुत ही पुराने स्थान का नाम है, जो जिले के उत्तरी भाग में सोन के पास स्थिति है। यहां स्थानीय तालुकेदार खरवार जाति के सम्पन्नजन निवास करते थे। 12वीं, 13वीं शताब्दी ए0डी0 में उनका यहां आधिपत्य था। जपला में आज भी पुराने खण्डहर और अवशेष यत्र–तत्र देखे जा सकते हैं। यह परगना 1871 में गया जिले से पलामू में सम्मिलित करते हुए अलग किया गया था।

डाल्टनगंज : पलामू जिले का मुख्यालय डाल्टेनगंज सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 1861 ई0 में इस नगर को छोटा नागपुर के आयुक्त कर्नल डाल्टेन ने बसाया था। इसके पूर्व इस भाग को बिजरा के नाम से जाना जाता था। इसका नाम कालांतर में बजारीबाद फिर मेंदनी राय के नाम पर मेदनीबाद पड़ गया था। कहावत है—

''राजा मेदनियां घर–घर बाजी मलहनियां।''

18वीं शताब्दी में यह स्थान नील, रूई, टसर, तेलहन, दलहन, लाह, कत्था की लकड़ी आदि के व्यापार का केन्द्र रहा है। अंग्रेजों के समय में यहां से लकड़ी, बांस, साबे घास, गोंद, तेंदू पत्ता, ग्रेनाइट, डोलोमाइट, अल्यूमिनियम, फायर कलेह, लोहा, चूना, कोयला लाह इत्यादि वस्तुएं पर्याप्त मात्रा में निर्यात होती थीं।

यह नगर वन्य वस्तुओं के लिए प्रसिद्ध है। यहां लाह की फैक्टरियां बनी हुई हैं। यहां बुधवार को एक बड़ा बाजार लगता है, जिसमें दूर–दराज

के व्यक्ति एकत्र होकर दैनिक उपयोग की वस्तुएं खरीदते-बेंचते हैं। इस बाजार में बकरे और बकरियां भी बिक्री के लिए आती हैं। एक आंकड़े के अनुसार यहाँ से लगभग 10 बैगन बांस प्रति दिन के हिसाब से डालमियां नगर के कारखाने में भेजा जाता था। इसी प्रकार प्रति माह 50 बैगन बांस टीटागढ़ और कान किनारा, पेपर मिल्स को भी भेजा जाता था। प्रति दिन एक बैगन टिम्बर भभुआ और दिल्ली जाया करता था। पित्त-प्रास कोयलों की खानों में भेजा जाता है। 50 बैगन चूने का पत्थर प्रति माह के हिसाब से वालीगंज (कलकत्ता) भेजा जाता था। इसी प्रकार लगभग 500 बैगन लौह पत्थर, खिदिरपुर, गोख विदेश भेजने के लिए भेजा जाता था। 20 बैगन प्रति माह के हिसाब से बीड़ी पत्ती भेजी जाती थी। यहां नमक और मिट्टी के तेल का भी बड़ा व्यापार होता है। यहाँ सर्किट हाउस, डाक बंगला, धर्मशाला, जैन मंदिर, रोमन कैथेलिक, मिशन आदि की ओर से भवनों का निर्माण किया गया है। इस क्षेत्र में ईसाई, मिशनिरियां आरंभ से ही सक्रिय रही हैं।

डाल्टनगंज का शिव-मंदिर : शाहपुर से कोयल नदी पार करने के बाद डाल्टनगंज जाया जाता है। यहां सबसे पुराना एक शिव-मंदिर है। एक उल्लेख के अनुसार इस मंदिर का निर्माण सन् 1865 में गया जिला के औरंगाबाद अंचल के महथू ग्राम के निवासी पं0 राम प्रताप चौबे ने कराया था। यह मंदिर गुम्बजाकार है। कोयल की बाढ़ की चपेट में आ जाने के कारण इस मंदिर का एक अंश गिरकर धराशायी हो गया है। फिर भी चौबे जी के चतुर्थ पुत्र इंद्रनाथ जी के प्रयास से अब इस स्थान को दर्शनीय बनाया गया है। इस मंदिर में शिव जी की प्रतिमा प्रतिष्ठित है और वसंत पंचमी, शिवरात्रि के अवसर पर बड़े मेले का आयोजन होता है। इस मंदिर में समीपस्थ एक अन्य मंदिर बनवा कर श्री मुरलीधर शर्राफ ने लक्ष्मी नारायण की प्रतिमा स्थापित कर दी है। श्री राजाराम गुप्त ने अब यहां अपने पिता श्री कन्हाई साव के नाम से सिंह-वाहिनी दुर्गा जी की भी स्थापना कर दी है। दुर्गोत्सव के अवसर पर यहां एक बड़ा समारोह किया जाता है।

सिरकटवा राजा का स्थान : सन् 1857 ई0 की गदर में पलामू के

विद्रोहियों का दमन हुआ था। कहते हैं इस विद्रोह में 6 हजार कोरवाओं के सिर काटे गये थे जिसका अधिकांश उत्तरदायित्व वहां के तत्कालीन राजा जय प्रकाश नारायण का था। वे अंग्रेजों से मिले हुए थे। इस नृशंश, भयानक और रोमांचक घटना के कारण उक्त राजा को आज भी लोग सिरकटवा राजा के नाम से संबोधित करते हैं। यह भी कहा जाता है कि इस कुकृत्य के कारण देव राजा के वंशजों का अंत हो गया, किन्तु वहां आज भी राजा का एक विशाल महल देखा जा सकता है।

सूर्यमंदिर : दाहू और सरस्वती इन दो नदियों के संगम पर सूर्य देव का एक मंदिर निर्मित है, जो लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व बना होगा। इस मंदिर में सूर्य देव की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। इस मंदिर के समीप दो अन्य मंदिर भी निर्मित हैं। मंदिर के आस-पास का वातावरण काफी सुहावना है। मंदिर के सामने काष्ठ-निर्मित एक रथ टूटा पड़ा देखा गया, जिसके संबंध में पूछताछ के बाद ज्ञात हुआ कि श्रावण नाग पंचमी, रामनवमी और महावीर जयंती के अवसर पर यहां रथयात्रा का जुलूस निकाला जाता है, जो काली मंदिर तक जाकर समाप्त हो जाता है। इस अवसर पर पूजा-पाठ प्रवचन, हवन, कीर्तन, खेल-तमाशे और नाच गाने का आयोजन नागरिकों द्वारा बड़ी श्रद्धाभाव से किया जाता है।

दसशीष महादेव : एक किंबदंती के अनुसार किसी समय रावण हिमालय से एक शिवलिंग उखाड़कर लंका की ओर ले जा रहा था। मार्ग में उसे लघुशंका लग गयी, जिसके कारण उस शिवलिंग को छाड़न पर ही रख दिया, जबकि शिवजी का उसे यह निर्देश प्राप्त हो चुका था कि हिमालय छोड़ने के पश्चात् शिवलिंग कहीं रखा नहीं जाएगा और जहां रख दिया जायेगा वहीं रह जाएगा। चूंकि वह शिवलिंग रावण द्वारा वहीं रख दिया गया था, इसी कारण शर्त के अनुसार उसे हटाया नहीं जा सका। फलतः कालांतर में वह स्थान भक्तों की साधना का केन्द्र बन गया। जपला के निकट सोन नदी के मध्य में एक ऊंचे स्थान पर दसशीष महादेव स्थापित होकर पूजे जाते हैं।

ठाकुरवाणी : पलामू ज़िला का निर्माण सन् 1892 में डाल्टनगंज में

जिला मुख्यालय बना कर किया गया था। सन् 1895 में अयोध्या के हनुमान गढ़ी के स्वर्गीय वैरागी नागा बाबा जगरनाथ दास अपने अखाड़े के 200 नागाओं के साथ चेनपुर जाते समय डाल्टनगंज का अत्यंत मनोरम स्थान देखकर विमुग्ध हो गये थे। उन्होंने नागाओं को तो वापस कर दिया किंतु स्वयं यहां एक राम-मंदिर की स्थापना की और वहीं रहने लगे। बाबाजी ने कोयल नदी के तट पर शिव-मंदिर के पीछे करमगाछ की छाया में अपनी छतरी लगा दी और श्री ठाकुर जी को उसी छतरी के नीचे पसरा कर उनकी पूजा करने लगे। उनकी उस श्रद्धा-भक्ति को देखकर वहां तमाम लोगों का आना-जाना आरंभ हो गया। किंतु कालांतर में कोयल की भीषण बाढ़ के कारण वह स्थान भी बाढ़ की चपेट में आ गया और सब कुछ नष्ट हो गया। तब बाबाजी ने ठाकुर वाणी नामक स्थान पर जाकर, जो अत्यंत सूनसान था, एक विशाल वटवृक्ष की छाया में अपनी कुटी बना ली और वहीं भजन-कीर्तन करने लगे। यहां आज भी रेड़मा स्थित राघोदासजी के मंदिर में रथयात्रा निकाली जाती है। बाबा भीष्मदास ने वहां श्रीराम-जानकी का एक पक्का मंदिर तथा हनुमानजी का भी एक अन्य मंदिर बनवाया। पक्का कुआं, बगीचा बनवाकर उसे आश्रम के रूप में बदल दिया। अब यह एक ट्रस्ट के अधीन है।

बड़ा मंदिर : नगर के मध्य सरस्वती नदी के समीप राधा-कृष्ण का एक विशाल मन्दिर निर्मित है जिसे बड़ा मंदिर के नाम से, उसकी विशालता के कारण ही जाना जाता है। इस मंदिर में राधा-कृष्ण, बलराम, ग्वाल-बाल के अतिरिक्त दो बुद्ध प्रतिमायें भी प्रतिष्ठापित हैं। मंदिर ऊंचा होने के साथ कलात्मक है। कहते हैं मंदिर की दिवारें भीतर से खोखली हैं।

यह मंदिर ईंटों एवं पत्थरों से बना है जो लगभग दो सौ वर्ष पूर्व का प्रतीत होता है। यह गुम्बदनुमा है, और इसकी छत लकड़ी के कलात्मक काठ के ऊपर पटिया रचकर बनाई गयी है। इस मंदिर में प्रवेश करते समय बायीं ओर हनुमानजी की एक विशाल मूर्ति प्रतिष्ठित है। यह मूर्ति जिस मंदिर में प्रतिष्ठित है, उसे छोटा मंदिर के नाम से जाना जाता है। बड़ा मंदिर में भी

हनुमान जी की एक दूसरी प्रतिमा प्रतिष्ठित है जो 3 फिट 6 इंच लंबी और 1 फिट 3 इंच चौड़ी है। बड़े मंदिर की लंबाई 9 फिट और चौड़ाई 9 इंच की है और ऊंचाई लगभग 35 फिट है। मंदिर के बरामदे में छत के ऊपर एक शिलालेख है, जिसमें मंदिर के निर्माण का समय सम्बत् 1844 लिखा है। मंदिर के दरवाजे के चौखट पर नक्कासी की गयी है।

दुर्जाग : दुर्जाग एक गांव का नाम है जहां मिनार की तरह गांधी नामक पहाड़ खड़ा है। यहां दुर्जाग देवता की स्थापना की गयी है जिसकी पूजा विशेष रूप से यहां के आदिवासी करते हैं। पहाड़ की ऊंचाई मंदिर तथा देवस्थान होने के कारण इस स्थान को महत्व प्राप्त है।

सींगरा : सींगरा डाल्टनगंज से लगभग 5 किमी0 उत्तर की ओर के मार्ग पर स्थित है जहां एक मंदिर में पुराना शिवलिंग स्थापित है। यह विशाल शिवलिंग ऊपर के भाग को छोड़कर जमीन के अंदर भी काफी नीचे तक गड़ा हुआ है। कुछ लोग इसे कनिष्क के समय का मानते हैं।

नगर भगौती मंदिर : चंदवा से 10 किमी0 पूरब नगर भगौती का मंदिर है। पलामू में नगर नाम के दो स्थान हैं और दोनों महत्वपूर्ण हैं। एक को नगरउंटारी के नाम से जाना जाता है, जिसमें राधा-कृष्ण की स्वर्णिम मूर्ति प्रतिष्ठित है और दूसरे को केवल नगर के नाम से जाना जाता है जहां नगर भगौती की स्थापना की गयी है।

यहां देवी की मूर्ति का कोई आकार नहीं है, बल्कि अंगूठे के आकार का एक प्रस्तर खण्ड है, उसी की पूजा देवी के रूप में की जाती है। यहां एक मंदिर लगभग 200 वर्ष पूर्व का बनाया गया है जिसमें महालक्ष्मी की प्रतिमा भी प्रतिष्ठित है। इस संबंध में एक क़िम्बदन्ती है कि राजा लाल पीताम्बरनाथ शाही एक बार युद्ध के लिए जा रहे थे। वे लातेहार के तालाब में स्नान करने लगे। तालाब में खड़ा होकर सूर्य को अर्घ चढ़ा ही रहे थे कि उनके दोनों हाथों की हथेली में दो मूर्तियां साकार हो उठीं। राजा साहब ने सोचा यह तो पत्थर है अतः उसे नदी में फेंक दिया। दूसरी बार अर्घ देते समय भी उनके हाथ में वे ही मूर्तियां आयीं फिर दूसरी बार भी उन्होंने पानी में डाल दिया और जब

तीसरी बार अर्घ देने लगे तब भी देवियां उनकी हथेली में आयीं। इस बार वे विस्मय से भर उठे और पूछा...कौन हो तुम?

"...मैं उग्रतारा देवी हूं और मेरे साथ लक्ष्मी जी हैं। हमें टोढ़ी राज्य में स्थापित करो। पक्का मकान हमारे लिए और कच्चा मकान अपने लिए बनवाओ।" कहते हैं राजा साहब ने ऐसा ही किया। उस स्थान पर अब एक मंदिर और एक बड़ा टीला है। मंदिर में देवी की वही छोटी प्रतिमा और लक्ष्मी जी प्रतिष्ठित हैं किंतु टीला काफी लंबा–चौड़ा है। इसे जब खोदा जाता है तो बड़ी आकार की ईटें निकल आती हैं। ऐसा लगता है कि यहां किसी बड़े मंदिर का निर्माण कभी किया गया होगा। लोगों का कहना है कि राजा ने यहीं अपने लिए किले का निर्माण कराया था। यह कहा जाता है कि यहां यह किला इतना बड़ा था कि उसमें अष्टघातु के 7 फाटक लगे हुए थे। किले का कुल क्षेत्रफल 6 एकड़ में फैला हुआ था। यह भी कहा जाता है कि राजा साहब किसी युद्ध में मारे गये और उनकी 7 रानियां तालाब में कूदकर शहीद हो गयीं।

उग्रतारा : नगर मंदिर में उग्रतारा की जो प्रतिमा प्रतिष्ठित है, उसका आकार 22X15 सेमी0, महालक्ष्मी का आकार 18X12 सेमी0, शीतला का 7 सेमी0, शैरो का 25X22 सेमी0 है। यहां एक शालिग्राम की मूर्ति भी प्रतिष्ठित है। मंदिर का निर्माण 1664 ई0 में किया गया था। मंदिर में लगी ईंटें लंबी–चौड़ी हैं और उन्हें हाथ से पीटकर पकाया गया है। मंदिर की दीवार 1.2 मी0 चौड़ी है। मंदिर भीतर से 1.5X1.04 मीटर के आकार का है। बाहर से यह मंदिर 3.55X4.75 मीटर लंबा चौड़ा है। मंदिर सुरखी और चूना के मशाले से बनाया गया है। सामने बलि–स्थान बना है। वहां की जमीन रक्त से तर–बतर हुई रहती है। प्रायः 8 बजे से एक बजे तक यहां लोग फूल चढ़ाने आते हैं। कहा जाता है कि 11 फूल यहां चढ़ाये जाते हैं। देवी को चढ़ाया हुआ फूल यदि नीचे गिर जाता है, तो भक्त की मनोकामना पूरी होती है, अन्यथा नहीं।

अन्य अवशेष : यहां मिट्टी के पके हुए मटके मिल जाते हैं जिन पर

उर्दू या फारसी में कुछ लिखा होता है। खुदाई में बड़ी ईंटें निकलती हैं। वहां जमीन के अंदर से निकाल कर रखी हुई एक ओखली देखी गयी जो 40X30 सेमी० के आकार की है। इसी प्रकार तोप का अग्र भाग तथा लोहे के टुकड़े भी मिल जाते हैं। मंदिर के बाहर तोप का एक टुकड़ा रखा भी है।

पांकी : यहां राजपूत, ब्राह्मण, कुम्हार, बढ़ई, चेरो, खरवार, भुइयां, दुसाध, डोम, बैगा, डोरिहार नोनियां आदि जातियां निवास करती हैं। इनका अपना रहन–सहन, तौर–तरीका और आचार–विचार है। डोरिहार, सिन्दूर बेचने का काम करते हैं। गंवहेर, बिरम्हीं, तेलियामसान, दुर्गा, काली, बरम, करम गोसाई, बघउत आदि देवी–देवताओं की पूजा इस क्षेत्र में विभिन्न जाति–वर्गों द्वारा समारोहपूर्वक सानुष्ठान की जाती है। करमा, जीवित पुत्रिका, झूमर आदि नृत्य की विधाएं यहां प्रचलित हैं और मादल बजा कर नृत्य किया जाता है। इस क्षेत्र में घसिया जाति के लोग मादल बनाने का काम मुख्य रूप से करते हैं।

भूत–प्रेत : यहां टोनहिन, डाइन, डोकारिन की बड़ी मान्यता है। यहां के लोग मिर्चा, नमक से ओझाई करके टोनहिन का टोना और भूत भगाते हैं। बैगा मंत्र पढ़कर देवास (देवता) खेलाता है। उसके प्रभाव से टोनहिन बोलती है और अपना टोना उतारने के लिए विवश हो जाती है। ऐसा होने पर बैगा चढ़ावे में मुर्गा लेता है। सूप चावल रखकर उंगली से इधर–उधर करते हुए बैगा भूत बुलाता है अथवा थाली में पानी रखकर थाली के चारों ओर धूपबत्ती, फूल का लोटा, थाली में उलट कर रखा जाता है। कहते हैं इस क्रिया से प्रेत–बाधा समाप्त हो जाती है। लगता है यह सब अंधविश्वास का परिणाम है। यहां नदी के किनारे बघउत का वास है और इस क्षेत्र का सबसे ऊंचा पहाड़ कारी, माटी है। शुक्रवार के दिन यहां साप्ताहिक बाजार लगता है। पांकी से डाल्टनगंज 45 किमी० दूर है।

नेतरहाट : यह एक टापू है जो लगभग 6 किमी० लम्बा और 5 किमी० चौड़ा दूर तक फैला हुआ है। यह जनपद के दक्षिणी छोर पर समुद्र की सतह से 3,800 फिट की ऊंचाई पर स्थिति होने के कारण वर्ष भर

सुहावना लगता है। यह छोटा नागपुर का सबसे ऊंचा पठार है। यहां आए दिन दूर-दराज के लोग तफरी के लिए आते रहते हैं। यहां का वातावरण प्रायः वर्ष पर्यप्त ठंडा रहता है। बिहार का यही सबसे अधिक शीतल स्थल है। शाल वनों के कारण यह स्थान और भी मनोरम हो गया है। यहां जाने के लिए रांची और डाल्टनगंज दोनों स्थानों से बस की सुविधाएं हैं। इस स्थान के आस-पास अनेक जनजातीय परिवार निवास करते हैं।

यह कभी शिकारियों के लिए शिकारगाह भी था। यहां जंगल के जानवर पानी पीने के लिए आते थे। यह स्थान समुद्रतल से 3696 फिट ऊंचा है। पर्यटकों के लिए यह स्थान आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। यहां के सूर्योदय और सूर्यास्त का दृश्य देखने योग्य होता है। इसके अतिरिक्त इसके समीप ही जमारापत और मानेपत नामक दो कोठार क्रमशः 3,400 फिट और 4,000 फिट ऊंचे हैं। तेतरहाट से उत्तर की ओर बूढ़ा पहाड़ 3,000 फिट ऊंचा है जिसका उल्लेख किया जा चुका है।

परास पानी : नगर से लगभग 24 किमी0 दक्षिण परासपानी नाम का एक स्थान है, जो कनहर नदी के किनारे बसा है। यहां बहुत ही सुन्दर झरना नदी में ही झरता है जिसे 'बूखल दरी' के नाम से भी जाना जाता है। वर्षा के दिनों में यहां का दृश्य और भी मनोरम हो जाता है। यहीं एक दूसरा झरना 'घाघरा फाल' के नाम से ऊंटारी गांव के पास बहता है। पहाड़ी के निचले भाग से पानी एकाएक बाहर आता है और क्रमशः निम्नोन्मुख होकर आगे निकल जाता है।

पलामू : डाल्टनगंज से लगभग 30 किमी0 दक्षिण पूरब की ओर औरंगा नदी के तट पर पलामू नाम का एक स्थान है। जिले का अत्यंत मनोरम स्थल होने के कारण इतिहासकारों और पुरातत्वविदों ने इस स्थान का नाम पलामू रख दिया है। कहते हैं यहां झुण्ड के झुण्ड कौए उड़ा करते हैं। आरंभ में यहां चेरो जनजाति के प्रधान निवास करते थे और उन्होंने दो बड़े किलों का निर्माण कराया था जिस पर बाद में मुगलों ने अपना आधिपत्य जमा लिया। यह स्थान शेर, चीतों के शिकार के लिए भी मशहूर था। यहाँ

भग्नावशेष किले के आसपास आज भी जंगली जानवर दिखलाई पड़ते हैं। इस किले की मजबूती का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि इसकी बाहरी दीवारें लगभग 5 फिट चौड़ी हैं। इन दोनों किलों को नया पुराना किले के नाम से भी जाना जाता है। नये किले में नागपुरी दरवाजा लगा है। कहते हैं मेदनीराय ने इसे नागपुर से मंगाया था। अब यह दरवाजा नष्टप्राय है। इसी स्थान के नाम पर जिले का नाम पलामू पड़ गया है।

पशुवन और महुवन : पलामू में स्थान–स्थान पर पलाश और महुआ के बड़े–बड़े वन हुआ करते थे। पलाश के वनों से लाह और महुआ के वनों से महुआ का फल, डोरी (तेल के लिए) एकत्र की जाती थी। हरिहरगंज से उत्तर की ओर एक विशाल पलाश–वन था जिससे लाह के अतिरिक्त चाय भी निकाली जाती थी। कहते हैं इस वन से उस जमाने में 5 हजार रुपए वार्षिक की आय होती थी जिसे अखेरी ले लेते थे। अब यह जंगल लगभग कट चुका है। पलाश–वन की ही तरह हरिहरगंज से करीब 6 किमी० दूर एक विशाल महुआ–वन में महुआ के हजारों पेड़ थे जिससे लाखों रुपए की आय हुआ करती थी। उस जमाने में यहां के गरीब निवासी महुआ और डोरी से अपनी जीविका चलाते थे। किन्तु अब वह पूरा वन सरकार के अधीन है और नष्ट होता जा रहा है। महुआ का तेल साबुन बनाने के काम आता है। इस वन को पुनः सरसब्ज करके यहां साबुन का बड़ा उद्योग स्थापित किया जा सकता है। कहते हैं इस घने वन में शेर, चीते, भालू आदि जंगली जानवर निवास करते थे।

बकोरिया : बिहार की महत्वपूर्ण नदियों में औरंगा नदी का अनेक दृष्टि से शीर्ष महत्व है। इस नदी पर आदर्श बांध का निर्माण किया जा रहा है। यह स्थान पहाड़ के ऊपर काफी ऊंचाई पर है और डाल्टनगंज से लगभग 60 किमी० दूर है।

मझियांव : मझियांव नामक नगर कोयल के पश्चिमी तट पर स्थित है। 1957 ई० के विद्रोह में भोजपुर तथा मिर्जापुर से आने वाले सैनिकों का यहीं पड़ाव था। इसी कारण यह स्थान प्रसिद्ध हो गया है।

मुहम्मदगंज : गढ़वा अनुमंडल के एक ग्राम का नाम मुहम्मदगंज है जो गढ़वा रोड जंक्शन से लगभग 40 किमी0 उत्तर पश्चिम की ओर एक पहाड़ी के निकट स्थित है। पहाड़ी को काट कर सुरंग बना दी गयी है। इस पहाड़ी के ऊपर कई बड़े-बड़े चूल्हे हैं जिसके बारे में कहा जाता है कि पाण्डवों के अज्ञातवाश के समय महाबली भी यहीं भोजन बनाते थे। इसी कारण इस स्थान को कुछ लोग 'भीम-चूल्हा' के नाम से भी जानते हैं। मकर संक्रान्ति के अवसर पर यहां एक मेला लगता है। इसके समीप ही कोयल के पश्चिमी तट पर शिवपुरी नामक एक स्थान है जिसके बारे में किम्बदन्ती है कि कैलाश पर्वत पर घोर तपस्या करने से पूर्व शिव जी पार्वती के संग यहीं विचरण करने गए थे। शिव के विचरण करने के कारण ही इस स्थान का नाम शिवपुरी पड़ गया। इस स्थान को भस्मासुर के नाम से भी जाना जाता है।

महाराजगंज : हरिहरगंज-डाल्टनगंज के उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर महाराजगंज नामक एक स्थान है जो गया जिले में पड़ता है। यहां पुराने समय से बाजार लगती आ रही है। यहां चारों कोनों पर चार देवियों, शिव-पार्वती, गणेश-नरसिंह, राम-लक्ष्मण-जानकी आदि देवी-देवताओं की स्थापना की गयी है। गढ़ के सामने बगीचा, पक्के कुएं आदि भी बनवाए गये हैं।

महाराजगंज में पहले के जायसवाल व्यवसायियों द्वारा जो आम का बगीचा लगाया गया था, उनमें एक सुन्दर मंदिर भी है जो अब नष्टप्राय है। यहां एक तालाब और एक पुराना गढ़वट को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह अपनी भव्यता के लिए कभी काफी मशहूर रहे होंगे। महाराजगंज का नाम अब पुरानी बाजार हो गया है। मंदिर की ही भांति गढ़ का भी अधिकांश भाग धराशायी हो गया है। महराजगंज में पुराने समय का एक संस्कृत टोल भी प्राप्त है। कहते हैं उस टोल में पहले छात्र संस्कृत का अध्ययन करके बड़े विद्वान् निकलते थे। यहां एक गवर्नमेंट मिडिल वर्नाकूलन स्कूल भी स्थापित किया गया था जिसे बाद में पलामू जिला बोर्ड ने ले लिया था। अब यहां एक इंग्लिश स्कूल हो गया है।

महुआडांड़ : महुआडांड़ डाल्टनगंज से लगभग 100 किमी0 दक्षिण छेछारी घाटी में बसा हुआ है। यह स्थान तीन ओर से पहाड़ों से घिरा है और एक ओर से नदी प्रवाहित होती है। इस स्थान को सुगाबांध भी कहते हैं। इस संबंध में कहा जाता है कि बहुत पहले यहां एक झील थी जहां तोते बहुत रहते थे। पहाड़ियां इतनी ऊंची थीं कि तोतों के लिए पहाड़ी पार करके कहीं दूर जाना कठिन था। अतः वे पहाड़ियों में ही घोंसले बनाकर रहने लगे और धीरे–धीरे उन्होंने अपनी चोंच से उसे इतना खोद डाले कि पहाड़ी के अंदर सुराखें बन गयीं। फलस्वरूप झील का पानी सुराखों से होकर बाहर निकलने लगा। जब झील का पानी समाप्त हो गया तो वहां के निवासियों ने अपने रहने के लिए स्थान बना लिये।

इस झरने का पानी 450 फिट से भी अधिक ऊंचाई से नीचे गिरता है। यह बिहार राज्य का सबसे बड़ा और कभी न सूखने वाला झरना है। नेतार हाट व्यापारिक केन्द्र है।

मनातू : यह स्थान डाल्टनगंज से लगभग 60 किमी0 दक्षिण–पूरब की ओर स्थित है। यह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि यहां बाबू प्रयाग जीतसिंह, मनातू के मवार साहेब का गढ़ निर्मित है। यहां गोरलाट की एक पहाड़ी की चोटी दांत की तरह एक से दो मील तक गांव के पश्चिमी सीमा में काफी दूर तक दिखलाई पड़ती है। पहाड़ी का यह दृश्य प्राकृतिक दृश्य से अत्यंत मनोरम है। इसी के समीप टांगाछतर नाम की सबसे ऊंची चोटी भी कई किमी0 दूर तक दिखलाई पड़ती है। यहां बुधवार को बड़ी बाजार लगती है। मनातू के आसपास घने जंगल हैं।

मायापुर : यहां मायापुर नाम की एक पहाड़ी है जिसके ऊपर पुराने नगर के अवशेष प्राप्त हुए हैं। मायापुर अरार घाट होकर जाया जाता है। एक किम्बदन्ती के अनुसार नारद का मोह भंग करने के लिए विष्णु भगवान ने स्वयं इस माया नगरी की रचना की थी।

वास्तव में यह स्थान प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत मनोरम है। इसके ऐतिहासिक होने का साक्ष्य प्रायः प्राप्त होता है। 1857 के प्रमुख भोक्ता द्रोही

नीलाम्बर, पीताम्बर शाही का मोर्चा इसी माया पहड़ी पर बना था। स्वतंत्रता आंदोलन के समय भी यह स्थान स्वतंत्रता सेनानियों के लिए प्रिय था। यहां लड़ाइयां हुई थीं और न जाने कितने सैलानी वीर गति को प्राप्त हुए थे।

रंका : गढ़वा अनुमंडल के अंतर्गत रंका पलामू से 12 किमी0 दूर एक स्थान है जो सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार अजमेर प्रान्त में राजपूतों की 'चामरगोर' नाम की एक शाखा थी, जो 5 परत की जनेऊ धारण करती थी। ये अपने को गर्ग गोत्र का बताते थे। कालांतर में इनकी एक शाखा दिल्ली के दक्षिण पश्चिम की ओर गयी। इनमें कई वीर और प्रतापी राजा भी हुए जिनमें दुस्सासन सिंह का नाम मुख्य है। कहते हैं बाद में ये अकबर बादशाह की सेना में भर्ती हो गए थे। अकबर के नेतृत्व में इन्होंने कई लड़ाइयां भी लड़ी थीं, जिससे प्रसन्न होकर अकबर महान् ने इन्हें बिहार के सासाराम और कीरातपरगनों में 700 मौजे का जागीरदार बना कर रोहतास क्षेत्र पर शासन करने का भार सौंप दिया था। इतना ही नहीं सम्राट अकबर ने मिर्जापुर के जंगली इलाके–पत्थरगढ़, चुनारगढ़, सक्सेसगढ़ अदलपुरा और बगहा क्षेत्र को भी इन्हें सौंप दिया था। रंका में कीरत सिंह अपना निवास बना कर अपने कर्मकरों एवं परिवार के साथ रहने लगे थे। उसके बाद उनके पौत्र शिवनाथ सिंह रंका के अधिकारी बने। फिर शिवनाथ सिंह की मृत्यु के बाद शिवप्रसाद सिंह गद्दी के अधिकारी हुए।

एक उल्लेख के अनुसार गोविन्द सिंह ने तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्डमिन्टों को एक नौ कुंटल बाघ का शिकार करवाया था। भारत में पहली बार इतने बड़े शिकार करने के उपलक्ष्य में उक्त अधिकारी ने उन्हें राजा की उपाधि से सम्मानित किया था।

यहां श्री गोवर्धन प्रसाद सिंह की गढ़ी (महल) है। राजसी वैभव का प्रतीक यह महल लगभग 150 वर्ष पुराना है। यह महल लगभग 150X150 मीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है। इनमें बैठका, कक्ष, राज निवास, तथा तीन मंदिर भी बने हैं। मंदिर में राज खानदान की कुलदेवी की प्रतिमा स्थापित है।

यहां जगन्नाथ जी की रथ-यात्रा बड़े धूमधाम से निकाली जाती है। इस अवसर पर आदिवासियों द्वारा देवीनृत्य प्रस्तुत किया जाता है। बाना, मुगदल, ज्वार के साथ जुलूस निकाला जाता है जिसमें सभी सम्मिलित होते हैं।

सतवरवा : यह स्थान डाल्टनगंज-रांची मार्ग पर डाल्टनगंज से लगभग 28 किमी० दूर स्थित है। यहां पुराने भग्नावशेष प्राप्त हैं। यहां के किले में लगे हुए अनेक प्रकार के दरवाजे अत्यंत महत्वपूर्ण और नक्कासीदार हैं।

रमुना : डाल्टनगंज से नगर उंटारी जाते समय बीच में रमुना नामक एक स्थान पड़ता है। रमुना एक पहाड़ी का नाम है, किन्तु धान की फसल के लिए उपजाऊ क्षेत्र है। यहां रविवार को बाजार लगता है। यहां दो-तीन मंदिर हैं, जिनमें छोटी-बड़ी, नयी-पुरानी मूर्तियां स्थापित हैं। पास ही में रेलवे स्टेशन है। यहां के लोग आज भी चकरी की दली दाल, जांत का पीसा आंटा और ढेंकी का कूटा चावल खाते हैं। यहां के एक गांव में लकड़ी की बनी ओखली देखने को मिली जो लगभग 30 सेमी० ऊंची और 50 सेमी० व्यास में थी।

रामलला मंदिर : गढ़देवी की ही भांति यहां रेलवे स्टेशन के समीप रामलला का एक प्रसिद्ध मंदिर निर्मित है, जिसमें भगवान श्रीराम की मूर्ति प्रतिष्ठित है। ऐसा समझा जाता है कि श्री रामलला की प्राण-प्रतिष्ठा बहुत पहले किसी राजा या जमींदार द्वारा की गयी थी। श्री रामलला की मूर्ति अष्टधातु की है। कला की दृष्टि से यह मूर्ति छोटी होती हुई, अत्यंत सुंदर है। इसकी ऊंचाई लगभग 15 इंच है और बताया जाता है कि इसका वजन लगभग 36 किग्रा० है। मंदिर की पूजा सुरक्षा एवं प्रबन्ध के लिए बाबू कालीचरण सिंह ने तीन चार एकड़ भूमि प्रदान की है।

श्री रामलला के सिर पर कामदार मुकुट सुशोभित है। उनके दाहिने हाथ में लड्डू है और बायां हाथ घुटने पर रखा है। श्री रामलला के दाहिनी ओर हनुमान जी की प्रस्तर की बनी एक मूर्ति प्रतिष्ठित है जिसकी ऊंचाई डेढ़ फिट है। मंदिर से बाहर बायीं ओर हनुमानजी की एक अन्य सुन्दर कलात्मक

प्रस्तर प्रतिमा एक मंदिर में प्रतिष्ठित है जो 36 इंच x 18 इंच है। इस मूर्ति की स्थापना बाहर के शिलालेख के अनुसार सम्वत् 2032 में शालिग्राम द्वारा की गयी थी। इस मूर्ति के ठीक सामने दूसरी ओर लक्ष्मी, गणेश की संगमरमर की छोटी प्रतिमायें प्रतिष्ठित हैं। बीच में एक अर्घे में शिवलिंग स्थापित है और पार्श्व में नन्दी की एक छोटी किन्तु कलात्मक प्रतिमा प्रतिष्ठित है।

लातेहार : लातेहार अब एक चर्चित स्थान हो गया है, जो डाल्टनगंज रांची–मार्ग पर लगभग 60 किमी0 दूर स्थित है। 1951 में इसकी आबादी मात्र 2089 थी, किंतु अब एक बड़े कस्बे के रूप में इसका विकास हो गया है। लातेहार की बाजार अनाज की बिक्री के लिए प्रसिद्ध है। यहां से आने–जाने के लिए रेल और बस की सुविधाएं प्राप्त हैं।

लेसलीगंज : यह स्थान डाल्टनगंज मनातू मार्ग पर डाल्टनगंज से लगभग 15 किमी0 दक्षिण स्थित है। गजेटियर के अनुसार इस गांव को रामगढ़ के कलेक्टर माथ्यूलेसली ने बसाया था। यहां एक बहुत ही सुन्दर तालाब, माल विभाग द्वारा बनाया गया था, जिसके ऊपर बना एक पक्का घाट अपना अलग महत्व रखता है। यहां सप्ताह में 3 दिन स्थानीय बाजारें लगती हैं, जिनमें स्थानीय दैनिक उपयोग की वस्तुएं भारी मात्रा में बिकने के लिए आती हैं और तालाब के तट पर माघ महीने में एक बड़ा मेला लगता है।

लादी : लादी डाल्टनगंज पुलिस स्टेशन से लगभग 6 किमी0 दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित है, जो अब एक छोटे से कस्बे के रूप में बदल गया है। यहां कुंअर अम्बिका प्रसाद सिंह द्वारा एक गढ़ का निर्माण कराया गया था। इस गढ़ को देखने से ऐसा लगता है कि यहां कोई तालुकेदार रहता था जो इस क्षेत्र में काफी प्रभावशाली था।

विश्रामपुर : विश्रामपुर गढ़वा से 16 किमी0 उत्तर–पूरब की ओर और गढ़वा रोड स्टेशन से लगभग 8 किमी0 दूर स्थित है। यहां रविवार को साप्ताहिक बाजार लगती है।

'पलामू गजेटियर' के अनुसार वाड़ुआर परिवार के परपत राय इस परिवार के प्रथम पुरुष थे, जिन्होंने यहां अपना राज्य स्थापित किया था। इसका समय 1750 के आसपास बताया जाता है। यहां कलबुलिया और झरतिया नामक स्थानों पर शिवरात्रि के अवसर पर एक बड़ा मेला लगता है।

शाहपुर : कोयल नदी के पश्चिमी तट पर शाहपुर नाम का एक गांव है। यहां पलामू के राजा भोपाल राय द्वारा 18वीं शताब्दी के अंत में एक महल का निर्माण कराया गया था। महल अब नष्ट होता जा रहा है, किंतु यह इतनी ऊंचाई पर है कि यहां से डाल्टनगंज का दृश्य देखते बनता है। यह महल पुरातत्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

देवगन : जनपद के उत्तरी-पूर्वी भाग में स्थित देवगन नाम का गांव बहुत पुराना बसा है। यहां एक पुराने किले का अवशेष प्राप्त है, जिसके बारे में कहा जाता है कि इसका निर्माण चेरो राजाओं द्वारा बहुत पहले कराया गया था। दन्तिकथाओं के अनुसार इस गांव में 52 गलियां तथा 53 बाजारें लगती थीं। 1951 के सेंसस रिपोर्ट के अनुसार यह गांव 411 एकड़ में बसा था। इस गांव से यत्र-तत्र पत्थर के पुराने कलात्मक टुकड़े, मूर्तियां, ईंटें तथा अन्य वस्तुएं प्राप्त हुई हैं।

सोनपुरा : कोयल जंक्शन से लगभग 6 किमी0 दूर सोन के तट पर दक्षिण की ओर सोनपुरा नामक गांव स्थिति है। यहां एक गढ़ का निर्माण किया गया था, जो अब नष्टप्राय है। यह गांव अक्सर सोन नदी की बाढ़ की चपेट में आ जाता है। गजेटियर के अनुसार इस गढ़ के मालिक बाबू विश्वम्भरनाथ शाही थे।

हुसैनाबाद : हुसैनाबाद नामक कस्बा जनपद के उत्तरी-पूर्वी छोर पर सोन के तट पर और रोहतास किले के दूसरी ओर स्थित है। इस कस्बे का नामकरण 18 वीं शताब्दी में नबाब हिदायत अली खान उत्तरी बिहार के डिप्टी गवर्नर द्वारा किया गया था तथा लेखक, सायर उल मुतखालिन के द्वारा इसे बसाया गया था। यहां अब एक बड़ा सीमेंट का उद्योग स्थापित है। यहां सप्ताह में दो दिन बाजारें लगती हैं-रविवार और वृहस्पतिवार को।

हैदरगढ़ : 'पलामू गजेटियर' में उल्लेख है कि इस गांव को 18 वीं शताब्दी में नबाब हिदायत अली खान के पुत्र शैय्यद नवी अली खान ने खोज निकाला था। अब यहां चिकित्सालय बंगला आदि का निर्माण हो गया है और प्रत्येक मंगलवार को बाजार लगती है। यहां एक पुस्तकालय, पोस्ट आफिस, स्कूल भी खोल दिए गए हैं। पलामू गजेटियर के अनुसार (पृष्ठ सं0 496) सन् 1951 के सैंसस में इसे जिले का एक बड़ा गांव बताया गया है, जिसका क्षेत्रफल 1433 एकड़, घरों की संख्या 672, कुल आबादी 4,399 थी। इस गांव का विकास भी दिनों–दिन होता जा रहा है।

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि पलामू जनपद सांस्कृतिक दृष्टि से काफी समृद्ध रहा है। जंगल, पहाड़, नालों, झरनों और खोह–कंदराओं से घिरे होने के कारण आरंभ से ही यह जनजातीय संस्कृति का केंद्र भी रहा है। इसके सांस्कृतिक उन्नयन के लिए यहां के मनीषियों द्वारा समय–समय पर अनेक कार्य किए गए हैं जिसकी परंपरा अद्यावधि वर्तमान है। डाल्टनगंज में 10 अक्टूबर 1920 ई0 को स्वर्गीय देवकी प्रसाद सिन्हा द्वारा आयोजित एक समारोह के माध्यम से देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद द्वारा बिहार स्टूडेंट्स कांफ्रेंस की स्थापना की गयी थी और बड़े समारोहपूर्वक अधिवेशन सम्पन्न हुआ था। इसमें उड़ीसा के देशबंधु और पटना के बैरिस्टर मजरून हक आदि पधारे थे।

— ● —

मिर्जापुर-सोनभद्र

तब मिर्जापुर के अंतर्गत सोनभद्र भी था। 04 मार्च 1989 की घोषणा के अनुसार दक्षिणी क्षेत्र को अलग करके सोनभद्र नाम का एक अलग जनपद बना दिया गया। लेकिन मुख्यालय का स्थायी निर्णय न होने तथा अन्य आंकड़ों आदि के अलग न होने के कारण मिर्जापुर में ही सोनभद्र को सम्मिलित करते हुए इसे एक महाजनपद के रूप में अध्ययन का विषय बनाया गया। वैसे सोनभद्र में सोनांचल का सम्पूर्ण क्षेत्र है तो गंगा-जरगो के सम्पूर्ण क्षेत्र में मिर्जापुर है। मिर्जापुर में फिलहाल सदर मड़िहान और चुनार तहसीलें हैं तो सोनभद्र में आदिवासी-बहुल औद्योगिक क्षेत्र की राबर्ट्सगंज, दुद्धी, घोरावल तहसीलें।

नामकरण : मिर्जापुर के नामकरण के संबंध में विविध धारणायें हैं। एक शिलालेख के अनुसार इसका आरंभिक पौराणिक नाम 'गिरिजापुर' था।[1] इस नामकरण के प्रमाण में एक कथा भी जोड़ी जाती है जिसके अनुसार पार्वती जी ने शिव की भक्ति प्राप्त करने तथा उन्हें अपना पति बनाने के लिए घनघोर तप किया था, यहां तक कि अपना बिल्व-सदृश स्तन भी काट कर चढ़ा दिया था, तब शिवजी ने प्रसन्न होकर उन्हें अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार किया था और कहा था कि आज से जो भी भक्त बेल या बेलपत्र चढ़ा कर मेरी पूजा करेगा, वह सहज में ही मेरी भक्ति प्राप्त कर सकेगा। कालांतर में गिरजापुर का नाम बिगड़ कर मिरजापुर हो गया। 'गि' का 'मि' हो जाना सरल स्वाभाविक भी प्रतीत होता है।

मुगलकाल में उसका रूप पुनः विकृत हुआ और मिरजापुर बिगड़ कर 'मिर्जापुर' हो गया। कहते हैं मिर्जा साहब नाम का कोई प्रशासक भी हो चुका है। हिन्दी के प्रभाव ग्रहण के कारण 'मिर्जापुर' का 'मिर्ज़ापुर' हो गया। 'ज' के नीचे की बिन्दी हिन्दीकरण के कारण सुविधा के लिए हटा दी गयी।

1. दे0 खोज रिपोर्ट 311 पृ0-621, 1923, 24 ना0प्र0स0 काशी शिलालेख।

बीसवीं शताब्दी के मध्य में यहां साहित्यकार सीताराम द्विवेदी 'समन्वयी' ने खींचतान कर मिर्जापुर से 'मीरजापुर' कर दिया और इसका अर्थ मीर=समुद्र, जा=पैदा होने वाली, यानी मीरजापुर='लक्ष्मी का नगर' कर दिया और तर्क यह दिया कि यहां लक्ष्मी जी गोड़ जोड़कर बैठी हुई थीं।[1] इसके समीप का भाग विन्ध्याचल तथा कंतित धार्मिक तथा पौराणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थे। हां, यह व्यापारिक महत्व का स्थान अवश्य था और यहां से नाव द्वारा विदेशों तक व्यापार होता था। जनपद का लगभग आधा पश्चिमी-दक्षिणी भाग इलाहाबाद में और पूरवी-दक्षिणी भाग वाराणसी का अंग था।[2]

सोनभद्र : सोनभद्र नामकरण महानद शोण के नाम पर किया गया है। यह शोण मध्य प्रदेश के सीधी जनपद से आकर, अमरकण्टक की पहाड़ी से निकल कर सोनभद्र के कुछ भागों को अभिसिंचित करती हुई बिहार में पटना से आगे सोनपुर में जाकर गंगाजी में मिल गयी है। सोन का पौराणिक महत्व है।

स्थिति तथा सीमा-विस्तार : मिर्जापुर, सोनभद्र जनपद 23^{0} 52 और 25^{0} 32 अक्षांस उत्तरी तथा 82.07 और 83^{0}.33 पूरबी देशांतर के मध्य अवस्थित है। इनके उत्तर में वाराणसी, जौनपुर पूरब में बिहार के शाहाबाद, पलामू जिले दक्षिण में म0प्र0 का सरगुजा, दक्षिण पश्चिम में म0प्र0 का सीधी जनपद अवस्थित है।

इतिहास : सोनभद्र में सलखन के समीप काष्ठ जीवाश्म पाये गये हैं जिनका समय 110 करोड़ वर्ष पुराना आंका गया है। ये जीवाश्म अब प्रस्तर के रूप में कटे हुए वृक्ष की शकल में दीखते हैं। कहा जाता है कि तब समुद्री धाराएँ यहाँ बहती थीं। कालान्तर में रासायनिक प्रक्रिया से वृक्षों ने पत्थर का रूप धारण कर लिया। इसे सुरक्षित करके पर्यटन का केन्द्र बनाया जा सकता है।

गंगा-सोन-बेलनघाटी की संस्कृति के अध्ययन से पता चलता है कि

---

1. रेल तथा कचरियों के पुराने अभिलेखों में आज भी 'गिरजापुर' ही मिलता है।
2. दे0 खोज रिपोर्ट (ना0प्र0स0 काशी) 1923-25, पृ0-62

इस जनपद की संस्कृति प्रागैतिहासिक कालीन है। इन नदियों की घाटियों में तत्कालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। डॉ0 हंसमुखधी0 सांकलिया के अनुसार बेलनधारी की संस्कृति लगभग सवा लाख वर्ष पुरानी है। इन घाटियों से तत्कालीन प्रस्तर तथा अस्थि–अवशेष तथा औजार भी मिले हैं जो नवपाषाणकालीन हैं। इनसे सिद्ध है कि प्रागैतिहासिक युग का मानव इन गुफाओं में निवास करता था। इन गुफाओं में तत्कालीन मानवों की कुछ कब्रें, अस्थि–अवशेष, जली हुयी राख भी मिली है। मिर्जापुर नगर के समीप कोलोनेल, रिवेट, कारनाक तथा काकवर्न महोदय को इसके प्रमाण प्राप्त हुए थे। उन्हें एक कब्र 1.80 मीटर गहरी 3.50 मी0 व्यास की मिली थी जिसमें युवक के 1.80 मी0 लम्बी अस्थि–पंजर पत्थर चट्टान पर उत्तर से दक्षिण को लिटाई हुई मिली थी, उसके सिरहाने मिट्टी का चिकना पात्र भी रखा मिला। उसी के साथ कुल्हाड़ी तथा औजार भी मिले थे।

शैलाश्रय : मिर्जापुर सोनभद्र जनपद में पचास के लगभग गुफाएं मिली हैं जिनमें शिकार, नृत्य संगीत, कला, यात्रा, युद्ध, कृषि–उद्योग, गोचारण आदि से संबंधित सहस्राधिक चित्र प्राप्त हुए हैं जिनसे ऐसा प्रतीत होता है कि आदिम मानव जंगल पहाड़ में रहते हुए कलाओं में निपुण था। सुन्दर से सुन्दर चित्र उसने इन गुफाओं में गेरू, लाल, पीले, काले, सफेद रंग के बनाये हैं, उसे रंगों का बोध था। वह इन चित्रों के लिए बांस की टहनियों को कूंच कर उससे ब्रश का काम लेता था। ये चित्र 5000 से 30000 वर्ष पूर्व तक के हैं।[1]

प्राकृतिक बनावट : जनपद की प्राकृतिक बनावट को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(1) उत्तर का गंगातटीय मैदानी भाग, (2) विन्ध्याचल का दक्षिणी कैमूर रेंज का पठारी भाग, (3) सोनपार का जंगली भाग। नदियों, नालों, झरनों, पहाड़ों तथा वनों के कारण पूरा जनपद प्राकृतक दृष्टि से आरंभ से ही अनोखा रहा है। यही कारण है कि खनिजों के रूप में इसकी मिट्टी के नीचे

1. दे0 गुहाचित्रों का प्रकरण।

अपार सम्पत्ति भरी पड़ी है और उसमें बनी गुफाएँ साधु-संतों के लिए साधना हेतु उपयोगी सिद्ध होती रही हैं।

पहाड़ : गंगाघाटी के क्षेत्र को छोड़कर जनपद का अधिकांश पहाड़ों से घिरा है। विन्ध्य क्षेत्र, कैमूरघाटी, सोनघाटी, सोनपार की रेणु, कनहर की घाटी तथा सिंगरौली का सीमावर्ती पहाड़ी भाग इसके पांच खण्ड हैं। विन्ध्य के ऊपरी भाग में बलुआ पत्थर पाया जाता है तो, विजयगढ़ और बड़हर परगना के क्षेत्रों में भी सफेद रंग का बलुवा पत्थर पाया जाता है। किन्तु सोनपार के कैमूर रेंज वाले अनेक भागों में काले रंग का चिकना चूना वाला पत्थर बहुलता से पाया जाता है। इस भाग में डोनामाइट, लाल पत्थर, हरा, पीला पत्थर तथा परतदार चट्टानें भी पायी जाती हैं। दुद्धी के कुछ इलाकों में काले रंग का चमकीला लौह युक्त पत्थर तथा लाल-सफेद रंग के पारदर्शी नगस्टोन, संगमरमर के पत्थर भी पाये जाते हैं। रेणघाटी के आसपास काले रंग का कोयला पत्थर सर्वत्र भरा पड़ा है। उसी प्रकार राबर्ट्सगंज तथा राबर्ट्सगंज मिर्जापुर के मध्यवर्ती गड़िहान-राजगढ़ के इलाकों में मोरंग भी पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। इसकी ऊंचाई 360 से 390 मीटर तक है लेकिन उपरौंध के समीप का, पश्चिमी भाग लगभग 250 मीटर ऊंचा है। मीरजापुर रेलवे स्टेशन की ऊंचाई लगभग 88 मीटर है।

मिट्टी : जनपद में कई प्रकार की मिट्टी पायी जाती है, गंगाघाटी के आसपास की मिट्टी दोमट, मटियार और बलुई है। जनपद के शेष पठारी भागों की मिट्टी लाल रंग की बलुई 'लेटेराइट' है। जनपद के मध्य भाग, राबर्ट्सगंज तथा पूरबी उत्तरी भाग की जमीन दोमट है किंतु नीचे पत्थर होने के कारण शुष्क और कम उपजाऊ है। अहरौरा से उत्तर भुइली के आसपास की जमीन भी काफी उपजाऊ तथा नम है। जहां की मिट्टी काली या करैल है, वहां रवी-खरीफ की फसलें उगाई जाती हैं।

नदियां तथा नाले-झरनें : गंगा और सोन महाजनपद की दो बड़ी नदियां हैं जो क्रमशः उत्तरी और मध्य भाग से प्रवाहित होती हैं। इसके अलावा बेलन, कर्मनाशा, रिहन्द, रेण, कनहर, जरगो, बिजुल आदि नदियां

भी जनपद को अनेक प्रकार से प्रभावित करती हैं। कैमूर के दक्षिण में घाघर का एक बड़ा नाला है। गंगा का सहायक नाला ओझला है। विंढमगंज, खजुरी, टांडा आदि नाले भी जनपद की शोभा बढ़ाते तथा पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बने रहते हैं। घोरावल का मुखा झरना, अहरौरा का औझिया, लेखनियां झरनें, सतत प्रवाहित रहते हैं। रेंण को बांधकर पिपरी में पंत सागर का निर्माण किया गया है जिससे जल-विद्युत तो पैदा की ही जाती है, उसके किनारे-किनारे अनपरा, शक्तिनगर, विन्ध्यनगर बीजपुर आदि तापीय विद्युत गृह भी बनाये गये या बनाये जा रहे हैं।

परती जमीन तथा जंगल : जंगल, पहाड़, नदी, नालों, झरनों से आच्छादित एवं घिरा होने के कारण जनपद का बहुत बड़ा हिस्सा परती रह जाता है। कछवा, छनवर, चुनार, भुइली, विजयगढ़, जसौली बड़हर में धान तथा रवी की फसलें उगायी जाती हैं, क्योंकि यहां जंगल, पहाड़ कम हैं, किन्तु दुद्धी, राजगढ़, घोरावल, अगोरी, नगवां का अधिकतर भाग वनों और पहाड़ों से घिरा है।

पहले यहां के जंगल बहुत घने थे और उनमें इमारती लकड़ियां तथा जंगली जानवर बहुतायत से पाये जाते थे, किन्तु बीसवीं सदी के मध्य में ये जंगल तेजी से काट डाले गये। जंगल काटने के ठीके दिये जाने लगे जिसके कारण ज्यादातर जंगल तहस-नहस हो गये और उनके साथ वन्य-संस्कृति भी नष्ट हो गयी। उद्योग-धंधों की स्थापना के कारण जंगल नष्ट होते गये और प्रदूषण की गंभीर समस्या उत्पन्न होती गयी।

खनिज पदार्थ : मिर्जापुर जनपद खनिज पदार्थों से भरा पड़ा है। यहाँ मकान बनाने के लिए पत्थर से लेकर चूना पत्थर, फैल्सपार, माइका, इपीडो मारबेल, करन्डम, आइरन, आइरन स्पेल्टिंग, कोयला, हेमाटाइट, सल्फेट बिल्डिंग स्टोन, अल्युमिनियम, सीमेंट, सोडा, नगस्टोन, यहां तक कि यूरेनियम सोना जैसी कीमती धातुओं तक का पता चला है। अल्युमिनियम का बिड़ला फैक्ट्री रेणुकूट में पर्याप्त उत्पादन हो रहा है। कनोरिया केमिकल्स से केमिकल्स के उत्पादन किए जा रहे हैं। कोयले की दसियों खदानें कार्यरत हैं

और सोनभद्र के दक्षिणी हिस्से का अधिकांश कोयले के प्रभूत भंडार से भरा पड़ा है। गिट्टी बनाने के लिए शताधिक क्रसर चल रहे हैं। सैकड़ों ट्रक बालू प्रतिदिन बाहर जाता है।

जमीन की स्थिति : सोनपार की जमीन का बड़ा झगड़ा है। वहां की अधिकतर जमीन वर्ग 4 की है जिस पर ज्यादातर जनजातियों का कब्जा दर्ज है, किन्तु वे मौके पर खेती नहीं करते, उस पर 'हावी' होते हैं काश्तकार। माफियाओं का प्रभाव दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

जनपद का क्षेत्रफल 12.72 लाख हेक्टेयर है जिसका लगभग दो तिहाई भाग जंगल पहाड़ से घिरा है। 1971 के आंकड़े के अनुसार 1971 में जनपद की आबादी 15.41 लाख थी। जनसंख्या का घनत्व 137 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी0 था। भूमिधरी और सिरधरी की भूमि सहित कुल खेती योग्य भूमि 21,61,650 एकड़ है। खेती योग्य ग्राम समाज की कुल भूमि का क्षेत्रफल 8594646 एकड़ है। ग्रामसभा की 8148967 एकड़ भूमि 59,740 व्यक्तियों में आवंटित है, जब कि 2276.79 एकड़ भूमि का आवंटन बाकी है। इस कार्य को सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त एक समिति कर रही थी।

निवासी : यहां की पहली जनगणना 1848 में हुई थी जिसके अनुसार यहां की कुल आबादी 8,31,388 थी जो क्रमशः बढ़ती गयी। 1872 में यहां कुल 4,104 कस्बे और गांव थे, दस वर्ष बाद इनकी संख्या 4355 हो गयी। मिर्जापुर गजेटियर के अनुसार ज्यादातर मूल निवासी सोनपार यानी सोन के दक्षिण में रहते थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उद्योग–धंधों में वृद्धि के फलस्वरूप यहां दूसरे प्रदेशों—दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, राजस्थान के अतिरिक्त रूस और अमेरिका के कुशल इंजीनियर भी आये। यहां निवास करने वाली जातियों में हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई सभी हैं। हिन्दुओं में ब्राह्मण, चमार, अहीर, कुरमी, राजपूत, बनियां, अग्रवाल, जायसवाल, केसरवानी, रोनियार, अग्रहरी तथा अन्य जातियों में केवट, कोरी, तेली, लोहार, कहार, नाई, धोबी, डोम,

पासी, कायस्थ आदि मुख्य हैं। जनजातियों में खरवार, मझवार, बियार, बिन्द, गोंड, धरकार, धांगर, पनिका, भुरतिया, अगरिया, पहाड़ी कोरवा, पठारी, घसिया, परहिया, बरगाही आदि मुख्य हैं। इनमें से ज्यादातर लोग निजी पेशा वाले हैं और उसी से अपनी जीविका चलाते हैं। जनरल कनिंघम के अनुसार यह क्षेत्र भी जेजाक मुक्ति साम्राज्य की सीमा के अन्दर था जिसके विषय में केशवचन्द्र मिश्र का विचार है कि आर्यावर्त का यह भाग निःसन्देह घने वनों से आच्छांदित होने के कारण शताब्दियों तक आर्यों के प्रभाव तथा आधिपत्य से मुक्त रहा। कृष्णावर्त की इन जातियों में कोल, शवर और मुण्डा के अलावा आस्ट्रेलियन मुण्डा, संताल और द्रविड़ जातियां भी हैं। उन्होंने विन्ध्य की उपत्यकाओं में अपने आवास बनाये; इनमें से कुछ जातियां मध्य प्रदेश से भी आयीं।

भाषा–बोली : इस समय मिर्जापुरियों की भाषा तमाम भाषाओं की मेलजोल खिचड़ी हो गयी है। स्वतंत्रता पूर्व यहां उर्दू का प्रभाव अधिक था। मदरसों और पाठशालाओं में उर्दू की ही शिक्षा दी जाती थी, हिन्दी नगण्य थी, यत्र–तत्र अंग्रेजी थी; किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों की अपनी भाषा मिर्जापुर नगर के पश्चिम की अवधी, दक्षिण पूरब राबर्ट्सगंज, अहरौरा, चुनार तक की पश्चिमी भोजपुरी थी, किन्तु सोनपार दुद्धी तथा आसपास की भाषा पश्चिमी हिन्दी की शाखा के रूप में बघेली बहुल है। कुछ जनजातियां मुण्डा वर्ग की कोरवारी बोली बोलती हैं। बिहार प्रभाव क्षेत्रों की बोली पश्चिमी बिहारी है। गजेटियर के अनुसार 1911 में 62.8 प्रतिशत व्यक्ति बिहारी बोलते थे। यहां की जानजातियों की अपनी अलग–अलग बोलियां हैं। धांगरों, मुसहरों की बोली सबसे भिन्न है। ग्रियर्सन द्वारा किये गये भाषा सर्वेक्षण के अनुसार यहां पश्चिमी भोजपुरी बोलने वालों की संख्या 8,10,000, गंगा के उत्तरी भाग में अवधी बोलने वालों की संख्या 2,53,000 सोनपार की बघेली बोलने वालों की 49,500, हिन्दुस्तानी बोलने वालों की संख्या 49,500, कोरवारी बोलने वालों की संख्या 33 तथा अन्य भाषाएं बोलने वालों की संख्या 473 थी, किन्तु यह आंकड़ा अब बदल गया है। अब यहां बहुत सारी भाषाएं बोली जाती हैं जिनके पुनः सर्वेक्षण की आवश्यकता है।

साहित्य : जनपद का साहित्य सम्पन्न है। यहां से अनेक पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें मुख्य हैं—खिचरी समाचार, आनंद कादम्बिनी, लीगल मेमरेन्डम, काव्यानल निधि, पोएट आदि। फिलहाल दो पत्र नियमित निकल रहे हैं जनता, ग्रामवासी। सोनभद्र से लोकवार्ता शोध–पत्रिका का प्रकाशन (डॉ0 अर्जुनदास केसरी द्वारा संपादित) 23 वर्षों से हो रहा है। समय–समय पर पत्र–पत्रिकाओं के विशेषांक प्रकाशित होते रहते हैं। जनपद का नाम, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' निराला, बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' डॉ0 काशी प्रसाद जायसवाल आदि, गण्यमान रचनाकारों से जुड़ा है।

यहां लोक–साहित्य का अपार भण्डार भरा पड़ा है। कजली, करमा, बिरहा, लोरिकी, सोहर, लचारी, गारी तथा अन्य अनेक प्रकार के लोकगीतों, लोककथाओं, लोकगाथाओं, लोकनाट्यों का वृहत् संग्रह किया जा सकता है। यहां की जनजातियों में करमा, कोलदहकी, नटुआ, डोमकच, झूमर, अगरही आदि नृत्य प्रचलित हैं जिनका विवरण इस पुस्तक में अलग से दिया गया है।

आस्था और विश्वास के पर्व एवं स्थल

पितृ–विसर्जन : पितृ पक्ष के अंतिम दिन को पितृ विसर्जन का दिन कहा जाता है। इस दिन पितरों के नाम पर पिण्डदान किया जाता है। हमारे यहां पितरों को गया (बिहार) पहुंचाने की परंपरा है। पिण्डदान कर्ता बाल बनवा कर एक साधारण धोती पहन कर हाथ में लोटा, लोटे में जल, लोहा, अक्षत आदि ले कर गया के लिए प्रस्थान करता है। वह चावल, आंटा, तिल आदि के सम्मिश्रण से अथवा खोवा के लगभग 25–25 ग्राम के 8 या 12 पिण्ड तैयार करता है। अपने सिर का बाल पुनः मुड़वाता है और स्नान करके किसी ब्राह्मण के मंत्रोच्चार के साथ पिण्डदान करता और फिर उसे गंगाजी की धारा में प्रवाहित कर देता है। मिर्जापुर जनपद में विन्ध्याचल से 3 किमी0 पश्चिम शिवपुर नामक एक स्थान है, वहां से 1 किमी0 उत्तर की दूरी से गंगा जी प्रवाहित होती हैं। यहां भी प्रति वर्ष लगभग 10 हजार व्यक्ति पिण्डदान

करने आते हैं। लोगों का ऐसा मानना है कि भगवान श्रीराम ने अपने पिता श्री दशरथ की मृत्यु का समाचार सुनकर यहीं तर्पणक्रिया किया था। यहां के बाद ही वे गया की ओर प्रस्थान किए थे।

यहां तारादुर्गा का एक प्राचीन मंदिर है जिसमें तारादेवी की लगभग 1 मीटर x 50 सेमी0 काले पत्थर की प्रतिमा स्थापित है। यहां एक विशाल शिवलिंग है जिसका आकार 1.45 डाइमीटर है एवं ऊंचाई 47 सेमी0 है। अर्घा 151 सेमी0 लंबा है। यहीं पर एक अन्य शिव–मन्दिर, वहां के पुजारी के अनुसार लगभग 400 वर्ष पूर्व का रीवां नरेश द्वारा बनवाया गया है। वह पूरा का पूरा पत्थर का ही है। यह मन्दिर 9 मीटर लम्बा 9 मीटर चौड़ा और लगभग 25 मीटर ऊंचा है। बाहरी चौतरे की चौड़ाई चारों ओर ढाई मीटर है। बाहरी दिवार 17 सेमी0 चौड़ी है। भीतरी बरामदा चारों ओर से 180 सेमी0 चौड़ा है। मन्दिर में 4 द्वार बने हैं किन्तु 3 बंद रहते हैं। दरवाजों पर काले चौखटों की पच्चीकारी दर्शनीय है। इनमें जो मूर्तियां खुदी हुई हैं वे अधिकतर तांत्रिक हैं। मंदिर के उत्तरी प्रवेश–द्वार के सामने एक विशाल नन्दी की स्थापना की गयी है जिसका आकार 160 x 132 x 52 सेमी0 है। इसका पत्थर हल्के गुलाबी रंग का है। मंदिर की भीतरी दीवार 85 सेमी0 मोटी है। यहां भूत–प्रेत की मान्यता को मानने वाले लोग भी आते हैं।

नवरात्र व्रत : पितृपक्ष को अशुद्ध पक्ष और क्वार के दूसरे पक्ष को शुद्धपक्ष या देवपक्ष भी कहा जाता है। इस पक्ष में देश के कोने–कोने में शक्ति–पूजा की जाती है। शक्ति के दो प्रतीक हैं, दुर्गा और श्रीराम। बहुत से लोग 9 दिन का (प्रथमा से नौमी तक) उपवास करते हैं। यानी 9 दिन तक अन्न ग्रहण नहीं करते। केवल जल, दूध, फल, आलू, कण्डा आदि का ही सेवन करते हैं। वे नमक तक नहीं खाते एवं 9 दिन तक 'राम चरित मानस' का नवाह्न पाठ करते हैं। शक्ति–साधक 'दुर्गा–सप्तशती' का नियमित पाठ करते हैं। वे दिन, प्रतिदिन रोरी, रक्षा, दसांग, धूपबत्ती आदि से देवी की पूजा करते हैं। विन्ध्याचल को शक्तिपीठ की मान्यता प्राप्त है।

धनुषयज्ञ : जसौली में ओइनी का धनुषयज्ञ प्रसिद्ध है। जो अगहन में

शुक्लपक्ष चौथ को समारोह के साथ सम्पन्न होता है। इस अवसर पर रामायण पाठ नाटक नौटंकी, नृत्य, संगीत का बृहद आयोजन किया जाता है। वैनी के अलावा, रामगढ़, तरावां, मुठेर में भी धनुषयज्ञ के आयोजन किये जाते हैं जिनमें प्रायः स्थानीय कलाकर ही भाग लेते हैं।

सोखाड़ : ओझा, बैगा और शोखा ये तीन तरह के वे लोग होते हैं, जो ओझाई–देवाई, भूता–प्रेता, झाड़–फूंक का काम करते हैं। ओझाओं का दरबार लगता है तो, शोखाओं का सोखाड़। दरबार में भूत–प्रेत की प्रधानता होती है तो सोखाड़ में भूत–प्रेत के अतिरिक्त ब्रह्म की मान्यता भी होती है। ओझा बलि का प्रसाद पाकर सन्तुष्ट होता है तो शोखा पूजनोपचार के माध्यम से प्राप्त हुए मिष्ठान, वस्त्र, आभूषण तथा अन्य वस्तुओं से। किसी कारण से जब किसी तपोनिष्ठ ब्राह्मण की मृत्यु हो जाती है और किसी अन्य या उसी जाति का व्यक्ति उसकी मृत्यु का कारण होता है तो वह व्यक्ति मरणोपरान्त ब्रह्म बनकर पुस्त-दर-पुस्त पूजा लेता है। ब्रह्म–पूजा में जहां ब्राह्मणों का अधिक विश्वास है, वहीं ओझाओं द्वारा की गयी भूत–प्रेत की पूजा में आदिम अथवा अन्य जातियों का। ओझा ओझाई करके अपने ईष्टदेव को बुलाता है और प्रश्नकर्ता के प्रश्नों का उत्तर देकर सन्तुष्ट करता है। वह बाधा दूर करने के उपाय भी सुझाता है, किन्तु शोखा अपने स्थान पर चुपचाप बैठकर अपने ईष्टदेव की आराधना करता है और प्रश्नकर्ता की विपत्तियों का निवारण अपनी ब्रह्म वाणी से करता है। किसी सधवा स्त्री को बाल–बच्चे नहीं होते तो समझा जाता है कि उसके मूल में कोई-न-कोई प्रेतांशिक अथवा ब्रह्मांशिक बाधा है।

मिर्जापुर जनपद में बेलहरा नामक स्थान पर सोखाड़ लगता है। इसी प्रकार सोनभद्र जिले में बेठगांव, हरिहरपुर, केकराही आदि स्थानों में भी सोखाड़ लगता है। इन स्थानों पर सोखाड़ के समय हजारों की संख्या में विशेष रूप से स्त्रियां सम्मिलित होती हैं। ये स्त्रियां वहां पहुंचते ही बाल विखेरकर अर्द्ध नग्नावस्था में होकर स्वयं हबुआने लगती हैं तो ऐसा समझा जाता है कि निश्चित रूप से इनको प्रेत अथवा ब्रह्म द्वारा प्रताड़ित किया गया

है। ओझा और सोखा इसके निवारण का उपाय बताते हैं। एक बार में सुधार न हुआ तो कइयों बार इन महिलाओं को उनके दरबार में जाना पड़ता है। इन स्थानों पर बंगाल, बिहार और मध्य प्रदेश तक के लोग आते देखे गए हैं। मिर्जापुर और सोनभद्र के अतिरिक्त सर्वेक्षित क्षेत्र के अन्य जनपदों में भी ओझा, सोखा का प्रभाव देखा गया है।

स्थानों का सांस्कृतिक परिचयः

अकोढ़ी : छियानबे तहसील का अकोढ़ी टप्पा (क्षेत्र) सांस्कृतिक दृष्टि से तो महत्वपूर्ण है ही, कृषि, उद्योग की दृष्टि से भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। यह स्थान मिर्जापुर से 15 किमी0 पश्चिम स्थित है, जहां जाने के लिए पक्की सड़क बनी हुई है। यहां हिंदुओं और मुसलमानों की मिली–जुली बस्ती है। इस स्थान पर कुछ पुराने मंदिर प्राप्त हुए हैं, जिनमें देवी–देवताओं की कई दुर्लभ कलात्मक मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

अगोरी : अगोरी राबर्ट्सगंज तहसील का एक महत्वपूर्ण परगना है जो 24° उत्तरी और 82° 58 पूर्वी पर स्थित है। यह रिहन्द और सोन दो प्रमुख नदियों पर अवस्थित है, जो मिर्जापुर से 124 किमी0 दक्षिण और जिला मुख्यालय से 24 किमी0 दक्षिण की ओर स्थित है। 'मिर्जापुर गजेटियर' तथा किम्बदन्तियों के आधार पर इस बात का प्रभाव मिलता है कि यह स्थान कभी बनारस शहर जैसा था। सोन के तट पर, गोठानी नामक स्थान पर, शोमनाथ नाम का एक बड़ा शहर बसा हुआ था। वहां आज भी 10–12 की संख्या में पुराने मंदिर, टीले, नदी के किनारे बिखरे पड़े मिट्टी के पात्रों के टुकड़े, पुरानी ईंटें, 100 से अधिक पुरानी मूर्तियां देखी जाती हैं। इस स्थान से लगभग 3 किमी0 पश्चिम अगोरी का विशाल दुर्ग है, जो सोन नदी के तट पर एक पहाड़ी पर निर्मित है। दुर्ग के भग्नावशेष भी यह बताते हैं कि यह स्थान कभी काफी समृद्ध रहा होगा। (किले का विस्तृत वर्णन अलग से किया गया है)।

अधेसर : अदवा से दक्षिण पहाड़ के किनारे अधेसर नामक एक

पहाड़ है जिसे कुछ लोग अधेसर किला के नाम से भी जानते हैं। मार्ग में केहुंजुआ नदी को पार करने के बाद ओरा, पिपरा, सिलहटा आदि कुछ गांव पड़ते हैं। अधेसर मनिगढ़ा गांव के समीप पहाड़ी का निचला भाग है जहां सरकारी–गैरसरकारी बस द्वारा अनगढ़ मार्ग से पहुंचा जा सकता है।

लोगों से बातचीत के बाद ज्ञात हुआ कि इस क्षेत्र में कोई अघोरपंथी निवास करता था और उन अघोरियों ने ही पहाड़ी के ऊपर एक किले का निर्माण करना चाहा था। किन्तु वह किन्हीं कारणों से अधूरा ही रह गया। यहाँ गढ़े, अनगढ़े पत्थर, देवी की मूर्तियां, यदा–कदा मिल जाती हैं। फिलहाल कठिनाई से चढ़ी जाने वाली इस पहाड़ी के ऊपर एक बावली है; वहीं भगवती की एक पुरानी मूर्ति थी जो अब देखी नहीं जाती। पहाड़ी के ऊपर गढ़े हुए पत्थर, बावली, गुफाएं, शिलालेख (अब प्राप्त नहीं) प्रागैतिहासिककालीन गुहाचित्र (नष्टप्राय) आदि का प्राप्त होना इस बात का प्रमाण है कि यह ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अवश्य रहा होगा।

अहरौरा : अहरौरा चुनार तहसील का एक महत्वपूर्ण टप्पा है, जो 25° उत्तरी और 28° पूरब पर स्थित है। यह मिर्जापुर से 48 किमी0, चुनार से दक्षिणी–पूर्वी छोर पर है जहां जाने के लिए नरायनपुर, अथवा, इमिलियां चट्टी से पक्का मार्ग बना हुआ है। यह अहरौरा रोड रेलवे स्टेशन से लगभग 25 किमी0 दक्षिण स्थित है। यह क्षेत्र भी सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण रहा है। अब यहां एक बन्धे का निर्माण हो गया है, जिसमें 25–30 की संख्या में नाले, झरनें बहकर समाहित हो जाते हैं। गरई नदी, कलकतिया नाला, लेखनियां नाला का पानी बहकर बन्धे में एकत्र होता है जिससे इस पूरे क्षेत्र की सिंचाई होती है।

अहरौरा के व्यापारी नमक, गुड़, तम्बाकू, मखाना, कपड़े आदि वस्तुएं बैलों पर लादकर मध्य–प्रदेश और बिहार के सीमावर्ती जनपदों तक बिक्री के लिए ले जाते थे और उन्हीं बैलों पर लादकर वहां के वनों में प्राप्त होने वाली वस्तुओं–जैसे कत्था, आंवला, हर्रा, बहेरा, चिरौंजी, मधु, शेर–चीते आदि जानवरों की खालें, गोंद, महुआ तथा कुछ दलहन और तिलहन,

तिल, मकई और मक्का आदि वस्तुएं क्रय करके ले लाते थे। अहरौरा में जिन स्थानों पर इन वस्तुओं की बिक्री की जाती थी उसे 'गोला' कहा जाता था। कभी यहां 'सहुवाइन का गोला' बड़ा मशहूर था। यहां व्यापारियों के रहने के लिए धर्मशालाएं, चिकित्सालय और शराएं भी बनायी गयी थीं जिनके अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं। अहरौरा में लकड़ी की बनी खूंटी और खिलौने का बड़ा व्यापार था। यहां हाथ से सिल्क (टसर) के बारीक कपड़े काफी दूर तक भेजे जाते थे। एक किम्बदन्ती के अनुसार वे कपड़े इतने बारीक होते थे कि पूरा थान एक अंगूठी के अंदर से निकाल लिया जाता था। अहरौरा में एक विशाल तालाब बना है, जिसके तट पर एक पुराना कलात्मक मंदिर निर्मित है। वर्तमान अहरौरा बाजार के अंदर चार–पांच ऐसे पुराने मंदिर बने हुए हैं जिनमें कलात्मक प्रस्तर–मूर्तियां, तत्कालीन संस्कृति का जीता–जागता प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

प्रस्तर–स्तम्भ : अहरौरा से लगभग 2 किमी० दक्षिण की ओर बेलखरा ग्राम में एक प्रस्तर–स्तम्भ प्राप्त है जो 11 फीट 5" लंबा और 15" के डायमीटर में बनाया गया है। उस पर शिलालेख अंकित है जिसमें से एक पढ़ा नहीं जाता, दूसरे के बारे में जनरल कनिंघम ने अपना विवरण प्रस्तुत किया है। (कनिंघम ए०आर०वा० 11 पृ० 128) उसमें सम्वत् 1253 या 1196 ए०डी० अंकित है।

कन्नौज के राजा लखनदेवा का नामोल्लेख भी इस संदर्भ में किया गया है। यह समय मु० बख्तियार खिलझी का था, जिसके अधीन भागवत और भुइली नामक स्थान थे। लेकिन अन्य विवरणों से ऐसा प्रतीत नहीं होता कि इस क्षेत्र पर मुस्लिम राजाओं का अधिकार था। अहरौरा के समीप 'मगन दीवाना' नाम का एक स्थान ऊंची पहाड़ी पर अहरौरा से उत्तर की ओर बना है, जिसको देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह दुर्ग कभी वहां के आदिवासियों का था।

अहरौरा क्षेत्र में लेखनियां, महड़रिया, भंडारी देवी तथा कुछ अन्य स्थानों पर प्रागैतिहासिक कालीन चित्र भी पाए जाते हैं जिनका उल्लेख इस

पुस्तक में अलग से किया गया है। सक्तेशगढ़ में एक पुराना दुर्ग एक नाले के तट पर बना हुआ है। उसके पास हनुमान जी की एक पुरानी मूर्ति बनी है। सक्तेशगढ़ में पत्थर का काम बड़े पैमाने पर होता है।

कछवां : मिर्जापुर सदर तहसील का कछवां गंगा के पास काशी की सीमा पर 25^{0} 12 देशान्तर उत्तरी और 82^{0} 47 देशान्तर पूर्वी भाग पर अवस्थित है। यहां कछवां 'इण्डिगो' कन्फर्म का मुख्यालय था जिसे बाद में लन्दन मिशनरी सोसाइटी को हस्तान्तरित कर दिया गया। यहाँ उस समय के कुछ पुराने महल और एक किला भी पाया जाता है।

कश्यप ऋषि के आश्रम के रूप में ज्ञात कछवां मिर्जापुर जनपद में गंगा पार का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यह गंगा के तराई का मैदानी भाग है जहां की जमीन काफी उपजाऊ है। इस क्षेत्र में ब्राह्मण, ठाकुर, बिन्द, केंवट, तेली, कुम्हार, धोबी, अहीर, गोंड़ (भूजा), गंड़ेरिया, चमार, पासी, धरिकार, खटिक, भर और लोहार आदि जातियां निवास करती हैं। गंगा का तटवर्ती भाग होने के कारण पौराणिक काल से ही इस स्थान का सांस्कृतिक महत्व रहा है। मध्यकाल में यहां अनेक मंदिरों का निर्माण किया गया। यत्र–तत्र बौद्ध संस्कृति के अवशेष भी प्राप्त होते हैं। सारनाथ के निकट होने के कारण बौद्धों के आने–जाने का क्रम यहां भी जारी था। कछवां से भटोली घाट मात्र 3 किमी0 दूर पड़ता है जहां से गंगा पार करके पश्चिम की ओर मिर्जापुर–वाराणसी पूरब की ओर चुनार और अहरौरा तक आसानी से जाया जा सकता है। ऐसा लगता है कि बौद्धकाल में सारनाथ, कछवां, चुनार, अहरौरा एक दूसरे से सांस्कृतिक दृष्टि से जुड़े हुए स्थान थे। क्योंकि चुनार में मृगदाव होने के प्रमाण प्राप्त होते हैं और अहरौरा में अशोक स्तम्भ है ही। इस क्षेत्र से मृण्मय मूर्तियां और गोलियां भी लोगों को प्राप्त हुई थीं।

कछवां से पश्चिम बरैनी घाट की ओर से कुछ पूरब केवटवीर का स्थान है। इसी प्रकार अगियावीर नाम का एक स्थान भी है। यहां भरों का किला था। नागशिव, भारशिव नाम से ख्यात राजवंशियों के भग्नावशेष, टीले, मन्दिर आज भी यत्र–तत्र प्राप्त होते हैं।

महत्व के ऐसे अनेक स्थापत्य गंगा के तट पर अवस्थित होने के कारण निरन्तर कटाव के फलस्वरूप गंगा में ही धराशायी होकर विनष्ट हो गए हैं। इस क्षेत्र के प्रतिष्ठित विद्वान डॉ0 रामजी उपाध्याय ने बताया कि सारनाथ, ओंही, गोथना आदि गांवों में प्राप्त मन्दिर, मूर्तियां और स्थापत्य टीले आदि यहां के सांस्कृतिक धरोहर हैं जिनके व्यापक सर्वेक्षण, अध्ययन एवं शोध की आवश्यकता है। उन्होंने क्षेत्र में विखरी पड़ी तमाम कलाकृतियों को किसी एक स्थान पर सुरक्षित करने की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने सरसोइयां, आहीं, सारनाथ, सरावां आदि स्थानों के टीलों की खुदाई करने पर भी बल दिया।

कठनई घाट : गंगा के दक्षिणी तट पर कठनई घाट नामक एक स्थान है जिसका नामकरण कठनई नदी के आधार पर हुआ है। हमारे नाविक ने बताया कि मध्यकाल में आल्हा–उदल नैनागढ़ की लड़ाई के लिए जाते समय यहीं रुके थे। कठनई नदी इतनी तेज आयी हुई थी और इसकी धारा इतनी तीक्ष्ण थी कि आल्हा-ऊदल अपने सैनिक–सिपाही के साथ उसे पार नहीं कर सके। एक कहावत है—

''सड़ी कठनई नौ दिन आड़ी त नैनागढ़ के कवन हवाल।''

यानी इस नदी के मार्गावरोध के कारण आल्हा–ऊदल को नौ दिन यहां रुकना पड़ा था। कहते हैं उन्होंने अपने पीने के लिए इसके तट पर एक पक्का कूप का निर्माण कराया था। इस कूप में लोहे की 4 सीकड़ें लगी हैं। यह नदी मर्फा पहाड़ से निकलकर गंगा में मिली है। इसकी कुल लम्बाई मात्र 6 किमी0 है, किन्तु इसके तट पर कई पुराने अवशेष इस बात के प्रतीक हैं कि यह स्थान शताब्दियों पूर्व से ही महत्व का रहा है। कठनई गांव में गंगा–तट पर पश्चिम की ओर एक पुराने मंदिर का निर्माण हुआ है, जिसमें भगवान शिव, हनुमान और दुर्गा जी की कलात्मक मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

कुसहा : इस क्षेत्र में मिर्जापुर–प्रयाग मुख्य मार्ग से दक्षिण कुसहा एक पुराना गांव है। यहां जोगीसिंह की एक कोठी लगभग दो सौ वर्ष पुरानी निर्मित है। एक किंबदन्ती के अनुसार यहां कोठी और विजयपुर राजा का महल एक साथ बनना आरम्भ हुआ था। यह तय पाया गया था कि दोनों एक साथ बनें

और जो बनकर पहले तैयार होगा उसके ऊपर एक दीपक जलाया जाएगा। राजा का महल बनकर तैयार हुआ और उसके ऊपर जब दीपक जला दिया गया तो इस कोठी के शिल्पकार हतास होकर बैठ गये। तभी से यह अपूर्ण–बिना पलस्टर के पड़ा हुआ है। इसी के साथ यह कहावत भी प्रचलित हो गयी कि राजा और देव (ईश्वर) का मुकाबला नहीं किया जा सकता।

कोटारेनाथ : यह स्थान दरामलगंज से कुछ दूरी पर स्थिति है, जहां पूष त्रयोदशी को मेला लगता है। इस मेले में आंख के रोगी विशेष रूप से आते हैं। लोगों का ऐसा विश्वास है कि यहां आकर मनौती मानने से जिस किसी की आंख खराब हो गयी होती है, पुनः ठीक हो जाती है और तब लोग यहां आकर देवी माता के नाले का जल अपनी आंखों में लगाते हैं। देवी के ऊपर चढ़ाए हुए जल का पानी, जो नाले के रूप से बहकर बाहर आता है, को लगाने से आंख की गयी हुई रोशनी पुनः वापस आ जाती है। इसी कारण भक्तगण यहां आकर आंख ठीक हो जाने पर प्रायः चांदी की आंख बनवा कर देवी को चढ़ाते हैं।

कोन : अगोरी–राबर्ट्सगंज के अंतर्गत कोन नामक टप्पा कनहर नदी से पूर्वी भाग में 24° से 26 देशान्तर उत्तरी और 83° से 21 देशांतर पूर्वी भाग में स्थित है। यहां बैगा मुसलमान और आदिवासी विशेष रूप से निवास करते हैं। यहां एक तालाब, एक बड़ा मंदिर है तथा 5 की संख्या में अन्य शिव–मंदिर निर्मित हैं। यहां रविवार के दिन साप्ताहिक बाजार लगती है जिसमें मध्य–प्रदेश और बिहार तक के व्यापारी सामान क्रय–विक्रय के लिए आते हैं। यहां आदिवासियों के देवी–देवता भी स्थापित हैं जहाँ समय–समय पर पूजा–पाठ और ओझाई–देवाई की व्यवस्था वहां के विशेष रूप से बैगाओं द्वारा की जाती है।

कोराई घाट : राबर्ट्सगंज से लगभग 10 किमी० दक्षिण कोराई घाट नामक स्थान पिकनिक मनाने वालों के लिए आकर्षण का केन्द्र है। यहां वर्षा के दिनों में राबर्ट्सगंज तथा आस–पास के लोग पहुंचते रहते हैं। वर्षा होते ही यहां की पहाड़ी से तमाम नाले बहने लगते हैं जिनका पानी मारकुण्डी पहाड़ी

से नीचे गुर्मा और चुर्क तक अनेक झरनें बनाता है। कैमूर–घाटी का दृश्य यहां से अत्यंत सुहावना लगता है। विजयगढ़ से लेकर तोड़वा पहाड़ तक सैकड़ों जल–प्रपात देखने को मिल सकते हैं। यहीं से खोड़वा पहाड़ बैठे हुए सिंह के आकार का दिखलाई पड़ता है जिसके ऊपर से शताधिक झरनें प्रवाहित होकर सोन की घाटी में विलीन हो जाते हैं।

घोरावल : राबर्ट्सगंज तहसील का घोरावल कस्बा 24°/15 देशान्तर उत्तरी और 82°/48 देशान्तर पूर्वी भाग में स्थित है। यह स्थान राबर्ट्सगंज से 30 किमी0 पश्चिम मिर्जापुर जिले से लगभग 60 किमी0 दक्षिण–पश्चिम स्थित है। यहां जाने के लिए मिर्जापुर और राबर्ट्सगंज से पक्की सड़क बनी हुई है। घोरावल बेलन नदी के तट पर लगभग 3 किमी0 दूर स्थित है। यहां रविवार और बुधवार को परंपरागत रूप से बाजारें लगती है। घोरावल से लगभग 10 किमी0 पश्चिम बेलन एक सुन्दर प्रपात बनाती है जो घाटी के रूप में परिणत हो जाती है। यहां का प्राकृतिक दृश्य इतना सुहावना है कि काशी, प्रयाग, राबर्ट्सगंज आदि स्थानों के लोग पर्यटन के लिए आते ही रहते हैं। इस प्रपात के निचले भाग में लगभग 1 किमी0 पश्चिम एक गुफा प्राप्त हुई है, जिसमें प्रागैतिहासिक कालीन चित्र बने हैं।

गड़बड़ा मेला : मिर्जापुर जनपद में गड़बड़ा मेला विन्ध्याचल के बाद दूसरा महत्वपूर्ण मेला है। अगहन में प्रथम, द्वितीय, तृतीय सोमवार को लगने वाले इस मेले में भारी भीड़ एकत्र होती है। यह स्थल मिर्जापुर से लगभग 60 किमी0 दूर है। यहां जाने के लिए परिवहन निगम की बसें चलती हैं। यहां लाई और ढूंढा, लकड़ी के बने बेलना, चौका, मूसर आदि वस्तुएं बहुलता से बिक्रय के लिए आती हैं। मेले में बहुत–सी औरतें पुत्र की कामना से आती हैं। इस मेले में आए हुए एक किशोर गीत की कुछ पंक्तियां इस प्रकार दुहरा रहा था।

''बाबू पढ़े जाला पटना और हबड़ा मेल में, गयी जवानी खेल में ना।''

इस मेले में मनोरंजन के अनेक साधन जुटते हैं जिनमें मुख्य हैं— कठपुतली का नाच, जादू का खेल, चिड़िया घर, नटुआ का नाच लवंडों का नाच आदि।

यहां स्थान-स्थान से तांत्रिक भी आते हैं और स्फटिक लाल पत्थर, मुदरी, गुगुल लहसुनियां, काला सफेद पत्थर आदि का व्यापार करते हैं। इस मेले में लोहे के वर्तन जैसे कलछुल, पवनी, तवनी, चाकू, कजरौटा, गगरा तथा मिट्टी के पात्रों में घड़ा, सुराही, हंडी, पुरवा आदि; बांस की बनी डलिया, सूपा, भौकी, बेना आदि वस्तुएं दूर-दूर से बिकने के लिए आती हैं। यह मेला अगहन में प्रथम सोमवार को देहात के मेले के रूप में देहाती वस्तुओं के क्रय-बिक्रय के लिए मशहूर है तो दूसरे सोमवार का मेला शहरी लोगों के लिए शहरी वस्तुओं के क्रय-बिक्रय के लिए। उसी प्रकार तीसरे सोमवार का मेला भी गांव-देहात के लोगों के लिए देहाती वस्तुओं के क्रय-बिक्रय के लिए लगता है। इस अंतिम सोमवार को अधिक भीड़ एकत्र होती है, क्योंकि यह मेले का अंतिम दौर होता है, जिसमें वस्तुएं प्रायः सस्ती मिल जाती है।

यह मेला गड़बड़ा नामक गांव में लगता है जहां देवी की लगभग एक फिट ऊंची मूर्ति एक मंदिर में स्थापित है। ऐसा माना जाता है कि मइहर, गड़बड़ा और विन्ध्याचल की तीनों देवियां आपस में 3 बहनें हैं।

गोनवरा : यहां गोनवरा नामक एक गांव है जिसमें हनुमानजी की एक विकराल प्रतिमा 1.50 x .65 मी0 की स्थापित है। हनुमानजी के बाएं पांव के नीचे कोई राक्षस दबा पड़ा हुआ है। उनका दाहिना हाथ सिर के ऊपर, बायां हाथ सीने पर है। लम्बी पूंछ पीछे से होकर सिर के पास तक पहुंचती है। यह मूर्ति पुरानी है। यहां सावन में मेला लगता है जिसमें कुश्ती लड़ने वाले पहलवान अखाड़े में लड़ने के लिए जाते हैं। यहां विजय दशमी पर नौ दिन तक रामलीला होती है। इस क्षेत्र में बिहसड़ा की रामलीला मशहूर है। रामलीला में सम्मिलित होने वाले पात्र अधिकतर स्थानीय होते हैं किन्तु सुविधानुसार परशुराम, हनुमान, राम आदि का पाठ करने के लिए बाहर से भी पात्रों को आमंत्रित किया जाता है। गौरीशंकर, कटरा, रढ़यीपुर आदि स्थानों पर कुश्ती के दंगल आयोजित किए जाते हैं।

घोड़े की टाप : लालगंज से विजयपुर की दूरी 15 किमी0 है। अधिकतर मार्ग पहाड़ी तथा जंगली है जहां पहले डाकुओं का गढ़ था। इस घने

वन को कुशियरा का वन कहते हैं। यहां मुख्य मार्ग से पूरब की ओर लगभग 25 मीटर दूर एक छोटा सा ईंटों का कमरा बना हुआ है, जिसके चारों ओर चौतरा है। पत्थर के चौकठों का बना इसका प्रवेश द्वारा 1.31x 90 सेमी0 के आकार का है। इस कमरे का आकार 3.76 x 3.80 x 1.90 मी0 है। समीप में लगभग 30 सेमी0 ऊंचे एक पत्थर पर रेखांकन किया हुआ है।

चिल : (बारा) मिर्जापुर नगर से पश्चिम की ओर गंगा पार स्थित एक टप्पा का नाम चिल है जो गोपीगंज और जौनपुर मार्ग पर स्थिति है। यहां एक पुरानी मस्जिद और एक शराय बनी है तथा हिन्दुओं, मुसलमानों की मिली-जुली बस्तियां हैं। ये सभी लोग खेती-बारी करके या कालीन का काम करके अपना जीविकोपार्जन करते हैं। नगर के पास गंगा-तट पर जो पुराने मंदिर, भग्नावशेष, किले और कुछ कलात्मक मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, उनसे भी इस बात की पुष्टि हो जाती है कि गंगा-तट पर बड़ी बाजार लगती थी और उसमें दूर-दराज के व्यापारी क्रय-बिक्रय के लिए एकत्र होते थे। उन व्यापारियों और तीर्थयात्रियों द्वारा ये मंदिर धर्मशालाएं और आवास के लिए भवनों का निर्माण किया गया होगा। दुर्ग के दरवाजे के सामने लाल दरवाजे निर्मित थे। दुर्ग से नगर के चौक तक आने-जाने के लिए मार्ग बने हुए थे। पुरानी सराय के पास एक कुंआ का अवशेष प्राप्त हुआ है जो तत्कालीन है। यहां कुछ मस्जिदों का निर्माण हुआ है, जो स्थापत्य कला की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। नगर के मध्य गंगेश्वरनाथ का मंदिर है, जिसमें शिव प्रतिमा प्रतिष्ठित है। स्वास्थ्य-लाभ के लिए यहां बंगाल से यात्री आते हैं और महीने-दो-महीने रहकर स्वास्थ्य लाभ करते हैं। नगर में और भी कुछ मंदिर देखे गये जो काफी पुराने हैं और जिनमें दुर्लभ कलात्मक प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हैं।

जहां तक ऐतिहासिक साक्ष्य का सवाल है, चुनार इस दृष्टि से भी काफी महत्वपूर्ण है। इसका प्राचीन नाम चरणाद्रि है। एक किंबदन्ती के अनुसार द्वापर युग में किसी महासन्त ने (बावन) हिमालय से यहां अपने पांव रखा था जिसके कारण यह स्थान पवित्र हो गया। उनका यह पांव एक पहाड़ी पर पड़ा था, जिसका निशान यहां आज भी देखा जाता है। बाद में राजा भर्तृहरि ने यहां

आकर समाधि ली थी और 'वैराग्य शतक' की रचना भी की थी। राजर्षि भतृहरि की खड़ाऊं यहां रखी गयी है। विक्रमादित्य ने अपने भाई भतृहरि की स्मृति में एक विशेष कक्ष का निर्माण कराया था जहां उन्होंने समाधि ली थी। यहां आज भी नाथ–सम्प्रदाय के साधु–महात्मा आते रहते हैं।

चोपन : राबर्ट्सगंज तहसील का अगोरी परगना अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इस पूरे क्षेत्र का मुख्य स्थान चोपन है जो सोन के तट पर 24° 31 देशान्तर दक्षिणी और 83° 2 देशान्तर पूर्वी पर स्थित है। राबर्ट्सगंज से इसकी दूरी 24 किमी0 है। अब मिर्जापुर से पक्की सड़क राबर्ट्सगंज, चोपन, डाला, हाथी नाला, रेणुकूट, अनपरा होते हुए शक्तिनगर और सिंगरौली तक चली जाती है। मिर्जापुर से चुनार होते हुए रेल लाइन भी इन स्थानों को पार करती हुई सिंगरौली और शक्तिनगर तक चली जाती है।

चोपन चारों ओर से कैमूर की ऊंची पहाड़ियों से और कई नालों, झरनों से घिरा है। इसके समीप ही खोड़वा पहाड़ का सर्वोच्च शिखर है, जिसके ऊपर मंगलेश्वरनाथ का पुराना मंदिर एवं शिलालेख है। इस पहाड़ के दोनों छोर पर दक्षिण की ओर केरवाघाट की गुफाओं में प्रागैतिहासिक कालीन चित्र बने हुए हैं जिनका उल्लेख अलग से इस पुस्तक में किया गया है। इस पूरे क्षेत्र में ब्राह्मणों, वैश्यों और कुछ ठाकुरों के अतिरिक्त मुख्य रूप से कोल, खरवार, बैगा, बैसवार आदि जनजातियां निवास करती हैं, जिनकी अपनी सांस्कृतिक पहचान है।

छानबे क्षेत्र : मिर्जापुर से इलाहाबाद को जाने वाली सड़क के उत्तरी भाग को छानबे क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। गंगा का तटवर्ती होने के कारण उत्तरी भाग काफी उपजाऊ और मैदानी है। तब भी गंगा का तटवर्ती होने के कारण सांस्कृतिक दृष्टि से इस भाग को सम्पन्न कहा जा सकता है। कर्णावती नदी माणा नामक स्थान से निकल कर अकोढ़ी बिरोही के मध्य से होती हुई गंगा में विलीन हो जाती है। नेवढ़िया में पुराने मन्दिरों और मूर्तियों के अवशेष प्राप्त होते हैं। कटरा में हनुमान जी की मूर्ति स्थापित है। बिहसड़ा में इस क्षेत्र की पुरानी बाजार है तथा यहां शनि और बुधवार को बाजारें लगती हैं तथा

आम और महुआ के बगीचे गांव–गांव दिखलाई पड़ते हैं। घर के सामने नीम का वृक्ष लगाने की परम्परा सर्वत्र देखी गयी। इस टप्पा का मुख्य क्षेत्र अकोढ़ी था जहां एक बड़ा कस्बा बसा हुआ था। 'मिर्जापुर गजेटियर' के अनुसार इसमें कुल 4408 परिवार निवास करते थे। इस क्षेत्र के सर्वेक्षण के उपरांत कई भग्नावशेष देखने को मिले जिससे उक्त मत की पुष्टि भी हो जाती है। इस क्षेत्र में कई बड़े मेले आज भी लगते हैं जहां दूर–दूर के लोग देवी–देवताओं के दर्शन एवं गंगा–स्थान के लिए उपस्थित होते हैं। अकबर के समय में भी छियानबे कन्तित से पृथक नहीं था।

छोटा मिर्जापुर : चुनार तहसील में भुइली परगने के अंतर्गत छोटा मिर्जापुर नामक एक स्थान है, जो अब बनारस से मिर्जापुर की सीमा को अलग करता है। ये 25°/14 देशांतर उत्तरी और 83°/4 देशान्तर पूर्वी पर स्थित है और लगभग 46 किमी0 मिर्जापुर से पूरब और 15 किमी0 चुनार के उत्तरी पूर्वी सीमा पर स्थित है। यहां पहले रामलीला का आयोजन किया जाता था और मेलों–ठेलों का भी। यहां कुछ पुराने मंदिर और मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, जो गहरवालों के समय की हैं। वैसे यह क्षेत्र कृषि प्रधान है।

टांडाफाल : मिर्जापुर से लगभग 20 किमी0 दक्षिण टांडाफाल नामक स्थान पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। यहां भी एक नाले का पानी सैकड़ों फीट नीचे गिर कर सुन्दर प्रपात बनाता है। मिर्जापुर नगर के लोग यहां स्थान एवं पर्यटन के लिए आते रहते हैं। अब यहां एक मंदिर एवं धर्मशाले का भी निर्माण करा दिया गया है।

डीभर : मिर्जापुर तहसील का उपरौंध टप्पा डीभर के नाम से ज्ञात है, जो 24°/42 देशान्तर उत्तरी और 82°/18 देशान्तर पूर्वी पर स्थित है और हलिया से 14 किमी0 दक्षिण की ओर रीवां मार्ग पर पड़ता है। यह भी कैमूर पहाड़ी के पांव तले होने के कारण प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत मनोरम और स्वास्थ्य–लाभ की दृष्टि से उत्तम है। यह आरंभ में बंजारों का निवास–स्थान था। वहां एक छोटा पुराना मंदिर उपलब्ध है जिसमें 22 पंक्तियों का शिलालेख अंकित है। एक उल्लेख के अनुसार संवत् 1881 के आसपास यहां नायक

मानमोर नामक बंजारा व्यापारी रहता था जिसका व्यापार-क्षेत्र मध्य प्रदेश के रीवां जिले तक था। उसने वहां एक तालाब भी बनाया था। जो 430 फिट लंबा, 352 फिट चौड़ा है।

दुद्धी : दुद्धी सोण नदी के दक्षिण का औद्योगिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से जनपद का सबसे महत्वपूर्ण भाग है, जो 24°/15 देशान्तर पूर्वी भाग में स्थित है। यहां कनहर नदी प्रवाहित होती है। मिर्जापुर मुख्यालय से यह स्थान लगभग 70 किमी0 दक्षिण-पूरब की ओर अवस्थित है। यहां जाने के लिए रेल और सड़क दोनों सुविधाएं उपलब्ध हैं। यह पूरा क्षेत्र जंगल, पहाड़, नदी, नालों, झरनों से घिरा है और हिन्दुओं, मुसलमानों के अतिरिक्त आदिवासी क्षेत्र है। गरीबी के कारण यहां ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार भी खूब हुआ। यहां एक बहुत ही सुन्दर शराय बनी हुयी है और पुराने कुछ कुएं मिले हैं। वृहस्पतिवार को साप्ताहिक मेला लगता है जिमें जानवरों और वन से उत्पन्न होने वाली वस्तुएं जैसे—शहद, चिरौंजी, लकड़ी आदि तथा फल एवं कंदमूल फल आदि बिक्री के लिए जंगल में रहने वाले जनजातियों द्वारा लाये जाते हैं। यहां सन् 1862-63 में रेवरेन्द्र डा0 माथुर के द्वारा मिशन की स्थापना की गयी थी। मि0 जाम्स ने सन् 1863 में यहां अपना निवास बनाया था। उनका देहान्त 1870 में हो गया जिसकी स्मृति में एक चर्च का निर्माण किया गया। वहां कब्र का एक पत्थर उनकी स्मृति में लगाया गया है जिस पर शिलालेख अंकित है।[1] सन् 1870 में यहां एक दूसरा चर्च भी स्थापित किया गया जो स्थापत्य का एक नमूना है। यह पूरा क्षेत्र लगभग 45 किमी0 दूर तक फैला हुआ है। दुद्धी को कभी तौफिर सिंगरौली, पूर्वी सिंगरौली या बिच्छीपार के नाम से भी जाना जाता था।[2]

पश्चिमवाहिनी गंगा—मिर्जापुर-प्रयाग मुख्य मार्ग के पश्चिम से श्रीनिवास धाम मिश्रपुर नामक शाखा मार्ग पर हरगढ़ नामक एक स्थान है। यहां गंगा जी पश्चिम वाहिनी होकर प्रवाहित होती हैं। सम्पूर्ण गंगा-प्रवाह-क्षेत्र में

---

1. मिर्जापुर गजेटियर, पृ0-322
2. वही, पृ0-322

यही एक स्थान है जहां गंगा पश्चिम होकर बहती हैं। गंगा जी का दृश्य मनोरम हो गया है। यहां दूर–दराज के लोग आकर गंगा स्नान करते हैं तथा श्रद्धालु श्रद्धापूर्वक गंगा जी की पूजा धूप, दीप, नैवेद्य, पियरी चढ़ाकर करते हैं। इस क्षेत्र में सर्वत्र कजरी, विरहा, बेलवरिया आदि गीत गांव–गांव गाये जाते हैं। बेलवरिया का तो यह एक प्रमुख क्षेत्र ही है। गैपुरा, गोड़र, खम्हरिया, रैपुरी, निबी–गहरवार, नौगांव, नटनी, पुरौठी, बभनी, निखरा, भइरपुर, परवा, पतरैला, दमुआन, पाठकवरी, भरईपुर, बबुरां आदि इस क्षेत्र के गांवों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, यादव, बिन्द, हरिजन, पासी, धरकार, खटिक, अग्रहरी, कोइरी, लोहार, कुर्मी, तेली, मल्लाह आदि जातियां निवास करती हैं।

बरैनी : यह स्थान मिर्ज़ापुर नगर से लगभग 14 किमी0 उत्तर–पूरब की ओर मिर्जापुर–बनारस सड़क मार्ग पर स्थित है। यहां पत्थर के बने कई पुराने मंदिर और सती चौरा बने हैं।

बरौंधा : बरौंधा मिर्जापुर जनपद का दक्षिणी–पश्चिमी छोर है। इसके समीप बेलन नदी प्रवाहित होती है और उस पर पुल का निर्माण किया गया है। बरौंधा से अदवा 13 किमी0, दरामलगंज 6 किमी0, लालगंज 6 किमी0 दूर पड़ता है। इनमें से कुछ जातियां डोह, गंवहेर, वनसत्ती, शिव, भगवती, शीतला आदि देवी–देवताओं की पूजा करती हैं। डोंगी की भवानी की पूजा माटी की चौरी बनाकर यहां के लोग अपने घर में करते हैं। यहां बेलन–घाटी का पाट काफी चौड़ा हो गया है जिसके कारण प्राकृतिक दृश्य सुहावना लगता है। इसे बघेली प्रभावी भोजपुरी क्षेत्र कहा जा सकता है।

बेचूबीर : अहरौरा से लगभग 12 किमी0 दूर पश्चिम की ओर बेचूबीर नाम का एक स्थान है जहां दीपावली के बाद एकादशी (कार्तिक शुक्ल पक्ष) के दिन बड़ा मेला लगता है। यह खासकर औरतों का मेला होता है जिसमें ओझाई–देवाई, भूत–प्रेत की परंपरा प्रचलित है। ऐसी मान्यता है कि लगातार पांच वर्ष तक वहां पहुंचने से प्रेत–बाधा से मुक्ति मिल जाती है।

मिर्ज़ापुर

मिर्ज़ापुर गंगा के दक्षिणी छोर पर 25^0 9 देशान्तर उत्तरी और 42^0 35

देशान्तर पूर्वी भाग में स्थित है जो ऐतिहासिक, सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टियों से काफी महत्वपूर्ण है। यह दो महातीर्थों इलाहाबाद और बनारस के बीच अवस्थित है। काशी और प्रयाग में रहने वाले संत महात्मा यहीं आकर यहां की खोह-कन्दराओं में साधना-रत हो जाया करते थे। मिर्जापुर लाह, कत्था, वर्तन, बीड़ी पत्ता कालीन तथा अन्य परम्परागत उद्योग-धंधों के लिए भी आरंभ से ही मशहूर रहा है। यहां से कलकत्ता तक और इधर दिल्ली तक नाव द्वारा व्यापार होता था। यहां से दक्षिण की ओर रीवां और सरगुजा के लिए वन-मार्ग बना हुआ था। अतः मध्य प्रदेश और बिहार के इलाकों में भी मिर्जापुर का घनिष्ठ व्यापारिक संबंध हो गया था। बैल और बैलगाड़ी, घोड़ा, ऊंट, खच्चर द्वारा वस्तुएं लायी और ले जायी जाती थीं। चूंकि व्यापारियों के आने-जाने का सिलसिला बना हुआ था, इस कारण स्थान-स्थान पर शराएं, धर्मशालाएं, कुएं, मंदिर आदि बनवाये गये थे।

कान्तित और विन्ध्याचल मिर्जापुर के दो महत्वपूर्ण स्थल हैं जिनका समय पौराणिक काल से जोड़ा जाता है। कन्तित पहले कान्तिपुर के नाम से जाना जाता था। विन्ध्याचल मां विन्ध्यवासिनी के धाम के कारण मशहूर हुआ। कन्तित में 150 मन्दिरों के होने की बात कही जा चुकी है। इसी प्रकार तरकापुर मुहल्ले में गंगा-तट पर 108 शिव-मंदिरों के प्रमाण मिलते हैं जिनमें से कुछ अभी भी वर्तमान हैं और बहुत गंगा की धारा में तट पर अवस्थित होने के कारण विलीन हो चुके हैं। मिर्जापुर के पूर्वी भाग फतहां से लेकर विन्ध्याचल, शिवपुर तक हजारों मंदिरों और दस सहस्त्र से भी अधिक मूर्तियों के अवशेष प्राप्त होते हैं। नारघाट के विशाल कलात्मक मंदिर, पक्का घाट और घण्टाघर का अद्भुत स्थापत्य, मिशन पुस्तकालय, मेंव पुस्तकालय का भवन, पक्की सराय, कच्ची सराय के स्थापत्य प्रसिद्ध हैं। एक सहस्त्र पूर्व से ही यहां जड़ी मूर्तियां अनेक दृष्टियों से काफी महत्वपूर्ण रही हैं। अनेक स्थानों पर शिलालेख और चित्र इसके महत्व को और पुष्ट करते हैं। यहां कुछ पुरानी मस्जिदें और कब्रें—चेतगंज, इमामबाड़ा, आदि स्थानों पर प्राप्त हैं। नारघाट और विन्ध्याचल जाते समय महन्त शिवाला मुहल्ले की दीवारों पर लाल रंग-रेखा द्वारा जो कलाकृतियां बनायी गयी हैं वे अपने आप में कला की बड़ी महत्वपूर्ण

उपलब्धियां हैं। यहाँ मिशनरी सोसाइटी द्वारा भी कई भवनों का निर्माण कराया गया है, जिसके स्थापत्य काफी महत्वपूर्ण है।

मिर्जापुर नगर के अन्य मंदिर, मूर्तियां तथा तीर्थ :

मिर्जापुर आरंभ से ही शिव और शक्ति–साधना का केन्द्र रहा है। यह व्यापारिक केन्द्र भी रहा है। यही कारण है कि यहां समय–समय पर अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया गया और उनमें भव्य मूर्तियों की स्थापना की गयी। मिर्जापुर नगर से विन्ध्याचल तक सहस्राधिक मंदिर देखे जा सकते हैं जिनमें से कुछ प्रमुख मंदिरों और उनमें स्थापित मूर्तियों का उल्लेख करना समीचीन है।

तारकेश्वर नाथ : नगर में अस्पताल के समीप गंगा–तट पर तारकेश्वर नाथ का प्रसिद्ध मंदिर है। तरकासुर एक राक्षस था जिसका बध स्वामी कार्तिकिय ने किया था। वह बज्रांग का पुत्र था। ब्रह्मा ने उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर उसे अजेय होने का वरदान दे दिया था और यह भी कहा था कि उसकी मृत्यु 7 दिन के बालक द्वारा ही होगी। अतः तरकासुर का बध एक टेढ़ी खीर थी। कामदेव तथा अन्य देवी–देवताओं ने शिव जी से प्रार्थना की कि आप पार्वती जी से विवाह कर लें जिससे ऐसा पुत्र पैदा हो जो तरकासुर का बध कर सके। शिवजी ने गुस्से में होकर अपना तीसरा नेत्र खोल दिया जिससे कामदेव भस्म हो गये। तब अन्य देवताओं ने मिल कर पुनः प्रार्थना की और देवताओं का कष्ट दूर करने के लिए पार्वती जी के साथ विवाह करने का अनुरोध किया। अंत में शिवजी को पार्वती जी के साथ विवाह करना पड़ा, जिससे कार्तिकिय का जन्म हुआ, और कार्तिकिय ने ही तरकासुर का बध किया। कहते हैं यह पौराणिक आख्यान इसी स्थान से संबद्ध है। अर्थात् तरकासुर का बध और स्वामी कार्तिकिय का जन्म भी यहीं हुआ था।

विष्णु भगवान ने तारकेश्वर नाथ का दर्शन करके, तारकेश्वर के पश्चिम एक सरोवर खोद कर उसमें शंकर भगवान की स्थापना की थी जो अब गंगा की धारा में विलीन हो चुका है। तरकासुर भी शिव का भक्त था। उसने ही यहां तारकेश्वर नाथ की स्थापना की थी। इस मंदिर के सामने दक्षिण की ओर

तारक–कुण्ड पाया जाता है जो अब गंगा जी में विलीन हो चुका है। महालक्ष्मी जी अपने पति विष्णु भगवान से तारकेश्वर नाथ का महात्म्य सुनकर यहां तपस्या करने गयी थीं। दस हजार वर्ष तक घोर तपस्या के बाद भी जब शिव जी प्रसन्न नहीं हुए तब तारकेश्वर के उत्तर एक कुण्ड खोदवाया जो बाद में लक्ष्मीकुण्ड के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

लक्ष्मी-नारायण मंदिर : मिर्जापुर नगर के मुजफ्फरपुर मुहल्ले में लक्ष्मी–नारायण जी का एक उत्कृष्ट मंदिर निर्मित है जो कारीगरी एवं स्थापत्य कला के लिए मशहूर है। कहते हैं इसके कुछ विशिष्ट अंश जार्ज, पंचम के अवलोकनार्थ इलाहाबाद की एक प्रदर्शनी में ले जाये गये थे। एक उल्लेख के अनुसार घण्टाघर के प्रमुख मिस्त्री विश्वेश्वर ने ही इसे बनाया था। इसका निर्माण कराने वाले सत्यनारायण प्रसाद शिवनारायण लाल थे। इसकी पत्थर पर की गयी पच्चीकारी अपने आप में बेजोड़ है। (नगरपालिका के 105 वर्ष : पृष्ठ 24)।

बावन घाट : मीरजापुर–विन्ध्याचल मार्ग पर ओझला पुल के समीप बावन घाट की बावली के नाम से अभिशप्त यह स्थान काफी महत्व का माना जाता है। यहां की एक बावली में चारों ओर से नीचे उतरने और नीचे से ऊपर चढ़ने के लिए बावन सीढ़ियां पत्थर की बनी हुयी हैं। कहते हैं इसे दानव रइया ने बनवाया था जिसके पवित्र जल का पान यात्रीगण करते थे और उनके उपयोग के लिए याचना करने पर पात्र भी निकल आते थे। इस बावली के अंदर तथा ऊपर बाहर की ओर कुछ मूर्तियां देखी गयीं। लगता है यहीं कहीं कोई मंदिर भी रहा होगा। वैसे मंदिर के अवशेष, सिक्के, पात्रों के टुकड़े यत्र–तत्र मिल जाते हैं। श्रावण शुक्ल पक्ष की पंचमी को स्त्रियां स्नान करके दान–पुण्य करने यहां आती हैं। इससे पूरब की ओर नागेश्वरनाथ की मूर्ति नागवंशियों द्वारा स्थापित की गयी बतायी जाती हैं। वैसे यहाँ बावन भगवान का भी मंदिर है।

दक्ष प्रजापति की यज्ञ–भूमि : विन्ध्याचल से आगे छनवर नाम का टप्पा है। यहां दक्ष प्रजापति का यज्ञ हुआ बताया जाता है। कहते हैं उस यज्ञ

में शिव जी को आमंत्रित नहीं किया गया था। पार्वती के नैहर में यज्ञ हो और शिवजी को आमंत्रित न किया जाय, यह बात पार्वती जी को अच्छी नहीं लगी। पार्वती जी वहां यज्ञ देखने गयीं तो उनका वहां अपमान किया गया जिससे दुःखी होकर वह यज्ञ में कूद पड़ीं। पार्वती के इस आत्मदाह का पता जब शंकर जी को लगा तो वे भी क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने यहां आकर यज्ञ–विध्वंस किया तथा सती का शव लेकर कैलास की ओर चल पड़े। तब विष्णु जी ने सती–मोह–भंग का उपाय सोचा, और सुदर्शन चक्र से शव को खत्म कर दिया। जहां–जहां शव के शरीर के अंग गिरे, शक्तिपीठ बन गया। उसी में एक विन्ध्याचल भी है। विन्ध्याचल प्राचीन पंपापुर नगर का एक महत्वपूर्ण भाग था और यहां एक बड़ा शहर बसा हुआ था।[1] इस शहर को भरों ने बसाया था और यह कई किमी0 तक फैला हुआ था। यहां कुल 150 विशाल मंदिर थे तथा भरों का किला था जो नष्ट होकर गंगा की धारा के साथ प्रवाहित हो गया। वैसे यहां अब भी पचासों मंदिर हैं तथा गंगा–तटवर्ती क्षेत्रों में पात्रों के टुकड़े, सिक्के, मूर्तियाँ, कलात्मक पत्थर आदि तथा धातुओं के पुराने टुकड़े मिल जाते हैं।[2]

भित्तिचित्र : ब्रिटिश युग–ब्रिटिश काल में भित्तिचित्रों की कला में काफी बदलाव देखा जाता है। आंग्लों के कठोर शासन से त्रस्त जनता चित्रों के माध्यम से अपने भावों और विचारों को अभिव्यक्ति देने के लिए अंग्रेजों में भी भय व्याप्त करने के ख्याल से प्रायः पक्के मकानों की दीवारों, मंदिरों की भीतरी दीवारों अथवा किलों–गढ़ों की दीवारों पर विशेष प्रकार के चित्र बनाती या किसी विशिष्ट कलाकार द्वारा बनवाती थी। इसमें थोड़े जागरूक और प्रबुद्ध लोग विशेष दिलचस्पी लेते थे। यानी इस समय तक लोगों के दिल–दिमाग में अंग्रेजों को खदेड़ देने का भाव कुलबुलाने लगा था। ऐसे चित्रों को स्वतंत्रता आन्दोलन की पहली कड़ी के रूप में स्वीकारा जा सकता है। उन दिनों अंग्रेजों के खिलाफ कुछ बोलना खतरे से खाली नहीं था, अतः आक्रोश की अभिव्यक्ति

1. मिर्जापुर गजेटियर, पृ0–293
2. इन पंक्तियों के लेखक को भी सर्वेक्षण के दौरान भग्नावशेष प्राप्त हुए थे।
—लेखक

इन चित्रों के माध्यम से ही की जाती थी।

ये चित्र अब नष्टप्राय है, क्योंकि ये अधिकतर दीवारों पर बने थे और दीवार का प्लास्टर जब खत्म हो गया तो उनके साथ ये चित्र भी नष्ट हो गए। चूना या रंग से पोत दिए जाने के कारण भी ये चित्र नष्ट हो गए। फिर भी मीरजापुर नगर में नारघाट के पास पश्चिम की ओर एक पुराने मकान के बाहरी भाग पर ऐसे चित्र बने दिखलायी पड़े थे, इसी प्रकार रुक्खड़ घाट में मीरजापुर से विन्ध्याचल जाते समय महन्तशिवाला की दीवार पर ये चित्र देखे गये थे। पहली दीवार 12x6 मीटर तथा दूसरी महन्त शिवाला की दीवार 7x4 मीटर आकार की है। इसी प्रकार सीधी जिले के मडवांस तहसील में रामगढ़ के तालाब पर बने एक मंदिर की भीतरी दीवार पर, सरगुजा जिले के प्रतापपुर तहसील मुख्यालय के तालाब पर बने मंदिर की भीतरी दीवार पर और पलामूगढ़ की दीवार पर भी ये चित्र बने मिले थे।

चित्र–विवरण : इन चित्रों में अधिकतर युद्ध का चित्रण है। महन्त शिवाला और नारघाट में हाथी–घोड़ा से या पैदल चलते हुए आगे बढ़ते, कभी पीछे हटते युद्ध–रत योद्धाओं को वीर–वेश में दिखाया गया है। वे युद्ध के वस्त्र, कवच, कुर्ता, मिर्जई, चूड़ीदार पाजामा, कमर में पेटी आदि पहने, सिर पर पगड़ी बांधे हुए हैं। उनके हाथों में तलवार, माला, बरछी, गड़ासा, बन्दूक आदि शस्त्र हैं। मरते, मारते, काटते, पड़ते हाथियों को चिग्घाड़ते, उन्मस्त होकर आगे बढ़ते, घोड़ों को भी हिनहिनाते हुए कुलांचे भरते दिखाया गया है। बनाये गये चित्रों का रंग गाढ़ा लाल, कत्थई या रक्तवर्ण है। यह रंग चमकीला पक्का और स्थायी दिखता है। चित्र भी सुन्दर सुडौल हैं। इन चित्रों का समय 400 से 200 वर्ष पूर्व तक का माना जा सकता है। हाथी–घोड़े पर सवार योद्धाओं के चित्र पुराने हैं, किन्तु बन्दूक से युद्ध करते हुए योद्धाओं के चित्र बाद के हैं। इन चित्रों की सुरक्षा जरूरी है।

ओझला का पुल : ओझला को 'पुण्यजला' भी कहते हैं। यहीं ओझला का गंगा से संगम होता है। ओझला के निर्माण की कला अपने आप में नई चीज है। यह पूरा निर्माण पत्थर का है। पुल के अन्दर कई छोटी–छोटी

कोठियां, बनी हैं जिन्हें चोरघर कहते हैं। यानी ये कोठियां एक–दूसरे से जुड़ी हुयी इस कदर बनी हैं कि एक से दूसरे में, दूसरे से तीसरे में, तीसरे से चौथे, इस प्रकार कई कक्षों में जाया जा सकता है। इसमें जाकर कोई छिप जाय तो दूसरा खोजने में पसीने से तरबतर हो जायेगा। यह पुल बहुत मजबूत, सुन्दर, कलात्मक तथा नक्कासीदार बना है। कहते हैं, इसका निर्माण रुई के बेच की एक दिन की आमदनी से कराया गया था।

लेखनियां : शैलाश्रयों के अध्ययन के क्रम में लेखनियां का उल्लेख किया जा चुका है। यह स्थान वाराणसी से अहरौरा होते हुए राबर्ट्सगंज के मार्ग पर अहरौरा से 9 किमी0 दक्षिण स्थिति है। यहां पहाड़ से एक नाला बहकर आता और बन्धे में समाहित हो जाता है। इस नाले पर कई झरनें हैं। लेखनियां पुल के पास प्रपात में स्नान करने के लिए दूर–दराज के लोग आते रहते हैं। यही नाला पश्चिम ऊपर की ओर लगभग 2 किमी0 दूर एक ओर झरना बनाता है, जहां सैकड़ों फीट ऊंचे पहाड़ से पानी गिरता है और एक अजीब दृश्य उपस्थित करता है। यहां तीन ओर से पर्वत–श्रेणियां काफी ऊंचाई पर स्थित हैं। तीनों ओर से पानी जब नीचे गिरता है तो दृश्य अत्यंत सुहावना हो जाता है। यह एक अत्यंत एकान्त और निर्जन स्थान पर है। यहां भी प्रागैतिहासिक कालीन चार चित्रित गुफाएं प्राप्त हुई हैं।[1]

विजयगढ़ : राबर्ट्सगंज तहसील के एक प्रमुख परगने का नाम विजयगढ़ है, जो 24^0 33 देशान्तर उत्तर ओर 83^0 11 देशान्तर पूरब मिर्जापुर से लगभग 90 किमी0 की दूरी पर स्थित है। यह राबर्ट्सगंज से 18 किमी0 पूरब है। यहां के एक ऊंची पहाड़ी पर, जिसकी ऊंचाई 1869 फिट है, बना हुआ है। यह स्थान प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध और सम्पन्न है। इस विशाल दुर्ग के कारण ही इस परगने का नाम विजयगढ़ पड़ा है। घाघर नदी के ऊपर बने हुए एक पुराने पुल से होकर यहां जाना पड़ता है। एक उल्लेख के अनुसार इस पुल का निर्माण बलवन्त सिंह द्वारा सम्वत् 1829 या 1772 ए.डी. में कराया गया था। इस पुल में 11 आर्चेज (ताखें) बनाए गए

1. दे0 गुहाचित्रों का विवरण, अलग से दिया गया है।

हैं। इसके निर्माण का उद्देश्य यह था कि दुश्मन आसानी से दुर्ग पर आक्रमण न कर सके। यहां से होकर दुर्ग तक जाने के लिए जंगली रास्ते बने हुए हैं। (किले का विस्तृत वर्णन अलग से किया गया है।)

जसौली : विजयगढ़ के ही अंतर्गत जसौली का एक बड़ा टप्पा है जो कर्मनाशा नदी के कारण विजयगढ़ से अलग होकर दो भागों में विभक्त हो गया है। जसौली से पूरब बिहार का शाहाबाद जिला प्रारम्भ हो जाता है। इस पूरे क्षेत्र का कभी भी प्रामाणिक सर्वेक्षण नहीं किया गया। विजयगढ़ के भवानी गांव के पास बभनवल नामक गांव से बेलन नदी निकलती है, जो बड़हर परगने से मिल जाती है। बेलन नदी के कारण उसके आसपास का इलाका अत्यंत उपजाऊ हो गया है। घाघर यहां की एक अन्य नदी है, जो पहाड़ों से निकलकर मैदानी भागों को सरसब्ज करती है।

डकन के सेटलमेंट के समय यहां पृथ्वीपति नाम के राजा थे। किन्तु बनारस के राजा महीप नारायण सिंह ने पूरे परगने पर अपनी जमींदारी का दावा कर दिया जिसे 37 वर्ष पूर्व उनके पूर्वज बलवंत सिंह और राजा दलजीत सिंह द्वारा पट्टे के रूप में प्रदान किया गया था। लेकिन यह दावा डंकन नामक अधिकारी द्वारा नामंजूर कर दिया गया। सन् 1844–45 में राबर्ट्स महोदय को झगड़े के निपटारे के लिए नियुक्त किया गया। उनके निर्णयानुसार इस पूरे भू–भाग को चौधरी, खरवार, चेरो, राजपूत आदि में वितरित कर दिया गया और उसके लिए 20 मन चावल, 5 सेर चिरौंजी और एक बकरा, एक चारपाई, एक पलंग और एक हल आदि कर के रूप में दिया जाना अनिवार्य कर दिया गया।

विजयपुर : छियानबे क्षेत्र का विजयपुर नामक टप्पा जो मिर्जापुर तहसील के अंतर्गत है, 25° 8 देशान्तर उत्तरी और 82° 24 देशान्तर पूर्वी पर मिर्जापुर से लगभग 24 किमी0 पश्चिम–दक्षिण और पूरब की ओर स्थित है। यह एक महत्वपूर्ण टप्पा है। यद्यपि यह इलाका पहाड़ी और वनों से घिरा है। तब भी पुराने मंदिरों, भग्नावशेषों और टीलों के कारण सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इन पुराने मंदिरों में शिलालेख, विष्णु–प्रतिमाएं तथा देवी-मूर्तियां

प्रतिष्ठित हैं जो कला की दृष्टि से अद्भुत हैं। यह कन्तित के राजा का आवास था।

विन्ध्याचल : मिर्जापुर की सही पहचान विन्ध्याचल के ही कारण है, क्योंकि विन्ध्याचल शक्तिपीठ के रूप में जाना जाता है जहां देश के कोने–कोने से तीर्थयात्री विन्ध्यवासिनी के दर्शनों के लिए आया करते हैं। यह स्थान मिर्जापुर से 11 किमी0 पश्चिम, उत्तर में गंगा और दक्षिण में पहाड़ों के बीच अवस्थित है। यहां से इलाहाबाद और फिर मिर्जापुर दक्षिणांचल जाने के लिए पक्की सड़क, मुख्य रेलमार्ग बना हुआ है। यह स्थान 25^0 : 10 देशान्तर उत्तरी और 82^0 : 31 देशान्तर पूर्वी पर अवस्थित है। विन्ध्याचल धाम से आधा किमी0 उत्तर की ओर गंगा का देवी–घाट बना हुआ है जो पहले एक किले के रूप में था। अब इसकी दीवारें गिर कर गंगा जी में समाहित हो गयी हैं। यह पूरा घाट 80 सीढ़ियों का बना हुआ था इस समय कुछ सीढ़ियां नष्ट हो चुकी हैं। यहां से देवी–धाम तक आने के लिए एक सकरी गली बनायी गयी है, जिसके दोनों ओर कई विशाल पुराने मंदिर निर्मित हैं और उनमें देवी–देवताओं की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। देवी–धाम और घाट से पूरब लगभग दो किमी0 दूर से आरंभ होकर ओझला पुल तक कई भग्नावशेष प्राप्त हुए हैं। सर्वेक्षण से ऐसा प्रतीत होता है कि विन्ध्याचल से मिर्जापुर नगर पर्यन्त सताधिक मंदिर, सहस्त्राधिक दुर्लभ मूर्तियां, पुराने भग्नावशेष आदि रहे होंगे। वहां कच्ची ईंटों के दुर्ग होने के प्रमाण भी यत्र–तत्र मिलते हैं जिसके बारे में किम्बदंती है कि यहां दानव रइया का विशाल किला था। तट के सारे निर्माण गंगा की बाढ़ के कारण नष्ट हो चुके हैं, अथवा क्रमशः नष्ट होते जा रहे हैं। यहां कन्तित शरीफ है, जहां उर्स का बड़ा मेला लगता है। 'मिर्जापुर गजेटियर' के अनुसार यह स्थान पौराणिक कालीन है, जहां पम्पापुर नाम का एक बड़ा शहर बसाया गया था। भरों के इस अधिकृत नगर में कुल 150 मंदिर थे जिन्हें औरंगजेब ने नष्ट कर दिया।

विन्ध्याचल की त्रिकोण यात्रा : मंदिर एवं तीर्थ : त्रिकोण यात्रा जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो जाता है तीन कोणों पर स्थित तीन स्थानों की यात्रा

है। इन तीन कोणों पर तीन शक्तियों की स्थापना की गयी है। पूरब में महालक्ष्मी, दक्षिण में महाकाली तथा पश्चिम में महासरस्वती विराजमान हैं। त्रिकोण यात्रा में कुल तीन कोस या लगभग दस किलोमीटर की यात्रा पूरी करनी पड़ती है जिसके अंतर्गत छोटे बड़े सैकड़ों स्थान, मंदिर, खोह, बावलियां तथा तीर्थ आ जाते हैं। त्रिकोण यात्रा कहां से प्रारम्भ की जाय, इस विषय में लोगों का भिन्न–भिन्न मत है। किन्तु अधिकतर तीर्थयात्री मां विन्ध्यवासिनी का दर्शन करके यात्रा प्रारम्भ करते हैं। मां का दर्शन करने के उपरान्त वे पुलिस थाना के पास श्री बटुक भैरव तथा उसके बाद बस स्टैंड के समीप त्रिकोनियां महावीर का दर्शन करना उचित समझते हैं। इसके बाद ही बटुक भैरव तथा चौकठे के महावीर जी आदि का दर्शन करते हैं। मां विन्ध्यवासिनी के मंदिर के उत्तर और पश्चिम की ओर कई विशाल मूर्तियां स्थापित हैं, जिनका दर्शन तीर्थयात्री मां विन्ध्यवासिनी के दर्शन के बाद ही करते हैं। यहां लोग काजल का टीका दीवार पर लगाते हैं। मुख्य मंदिर की परिक्रमा करके वहीं पर स्थित महाकाली, दुर्गाजी, भैरवनाथ, पंचमुखी महादेव, सरस्वती, हनुमान तथा खड़ेश्वर महादेव के दर्शन करते हैं। मंदिर के पिछले आंगन में महाकाली का खप्पड़ है, जहां यदा–कदा बलि चढ़ायी जाती है। मुख्य मंदिर के पीछे निर्मित मंदिर में जो कलाकारी की गयी है वह भी देखने योग्य है। वहां जोगनियों की मूर्तियां, परियों की मूर्तियां, सैकड़ों की संख्या में पंक्तिबद्ध बनी हैं। विन्ध्य महादेव तथा उसके दक्षिण में हनुमान जी की मूर्तियों में अद्भुत मोहकता है।

मिर्जापुर में नारायण घाट या नारघाट या नारायण सर है। नारायण सर के पश्चिम में लक्ष्मी कुण्ड है। इसके पश्चात् ब्रह्मकुण्ड है, जहां ब्रह्मा जी ने तपस्या करके विष्णु जी को प्रसन्न किया था और उनके वरदान से चराचर जगत् को उत्पन्न करने की शक्ति उत्पन्न की थी। यहां एक सप्तर्षि कुण्ड है, जिसके बारे में कहा जाता है कि एक बार सप्तर्षियों ने ब्रह्मा जी के पास जाकर निवेदन किया कि वे उन्हें तपस्या के योग्य कोई स्थान बतावें। तब ब्रह्मा जी ने इसी विन्ध्य–क्षेत्र की ओर संकेत किया था, जहां सप्तर्षियों ने तपस्या की थी। इसलिए इस स्थान को सप्तर्षि कुण्ड के नाम से जाना जाता है। इस सप्तर्षि कुण्ड के समीप धर्मकुण्ड है। यहां धर्मेश्वर नामक शिवलिंग स्थापित है। इस

कुण्ड में स्नान करने और धर्मेश्वर भगवान के दर्शन करने से चारों पदार्थों की प्राप्ति होती है। इसके बाद गोकर्ण कुण्ड पड़ता है जहां गोकर्णेश्वर के दर्शन से बाल–हत्या, ब्रह्महत्या, गोहत्या और स्त्री–हत्या आदि पापों से मुक्ति मिलती है। विन्ध्यवासिनी जी के पूर्व गोकर्ण-कुण्ड से पश्चिम मत्स्येन्द्र गोरख, बालनाथ शालगोप्य, चिपिट, वारपरी, भैरव, अघोर नाथ, मनभक्त और महानाथ आदि के नौ योगेश्वरों ने अपने–अपने नाम का कुण्ड बना कर तपस्या की थी। वहां नागकुण्ड है, जहां दान–व्रत करने से कोटि राजसूय और अश्वमेघ यज्ञ का फल होता है।

अन्नपूर्णा देवी : विन्ध्याचली देवी का दर्शन करने के उपरान्त यात्री क्रमशः अन्नपूर्णा देवी, बटुक भैरव और चौखटे के महावीर का दर्शन करते हैं। इसके उपरांत मिर्जापुर नगर में स्थित पक्की सराय से लगभग एक किमी0 पश्चिम–दक्षिण म्युनीसिपल बोर्ड के चुंगी चौकी के पास बरखड़ी महादेव का दर्शन करते हैं, फिर रेलवे लाइन पार करके बघवा महावीर का दर्शन करने जाते हैं। यहां से लगभग डेढ़ किलोमीटर की यात्रा पूरी करने के उपरान्त बाबा करणगिरि की बावली तथा समाधि का दर्शन करते हुए बाहर ही बाहर महाकाली का दर्शन करने निकल जाते हैं। यहां एक बावली और छोटा सा मंदिर है जिसमें भगवान श्रीराम के चरण–चिह्न हैं। इस स्थान से लगभग 500 मीटर पश्चिम धतूरा बाबा की गुफा है। यहां भी एक शिलाखण्ड के नीचे हनुमान की विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठित है जहां धतूर का फल–फूल चढ़ाया जाता है। यहां से कालीखोह जाने का मार्ग बना है, जिसके दोनों ओर प्रकृति का अक्षय भण्डार है।

कालीखोह : कालीखोह त्रिकोण यात्रा के अंतर्गत एक प्रमुख स्थल है जहां त्रिकाल भैरव, चामुंडा, भद्रकाली, शिवलिंग, सूर्यदेव, वटुक भैरव, गणेश, विष्णु, लक्ष्मी, हनुमान आदि देवी–देवताओं की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। काली की मूर्ति चतुर्मुखी है। उनकी दो भुजाओं में खड्ग, तीसरे में मुंड तथा चौथे हाथ में खप्पड़ है।

भैरवनाथ : काली खोह से 50 कदम पर भैरवनाथ का मंदिर है, जिसे

भूतनाथ का मंदिर के नाम से भी पुकारते हैं। इन्हें 9 नाथों में एक नाथ बताया जाता है। भूत–प्रेत की शंका होने पर उसके निवारणार्थ लोग यहां आते रहते हैं।

गेरुआ तालाब : इस स्थान से जब आप पश्चिम की ओर बढ़ेंगे, तो लगभग एक किमी0 दूर गेरुआ तालाब मिलेगा जहां कृष्ण और हनुमानजी का मंदिर तथा कुछ अन्य देवी–देवताओं की मूर्तियां हैं। पत्थर की बनी इन मूर्तियों की कला भी दर्शनीय है। तालाब पत्थर का बना है।

मोतिया तालाब : गेरुआ तालाब से मोतिया तालाब लगभग 2 किमी0 पश्चिम पड़ता है। जब किसी को कुत्ता काट लेता है तो वह उस तालाब में स्नान करके ठीक हो जाता है। इस मंदिर के किनारे शिवजी का एक प्राचीन मंदिर है, जिसमें शिवलिंग प्रतिष्ठित है। शिवलिंग के सामने प्रस्तर के बने मंदिर का श्रृंगार कला की दृष्टि से अत्यंत सुन्दर है। पूरब की ओर एक दूसरा हनुमानजी का मंदिर है। हनुमान की यह मूर्ति बड़ी डरावनी है। हनुमान के एक हाथ में पर्वत और दूसरे हाथ में गदा है। इस मंदिर में हनुमान की तीन अन्य मूर्तियां भी हैं। राम–लक्ष्मण को कंधे पर लिए हुए हनुमान को दिखाया गया है। इस मंदिर के बारे में एक किम्बदन्ती है कि इसके गुम्बद में हीरे की कनी जड़ी हुई है जिसके कारण रात में मंदिर के अंदर प्रकाश भर जाता है।

सीताकुण्ड : मोतिया तालाब से सीताकुण्ड जाने का रास्ता बना हुआ है। त्रिकोण यात्रा के अंतर्गत सीताकुण्ड प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत मनोरम स्थल है। यहां कुण्ड के पास एक मंदिर है। मंदिर के पास एक विशाल शिलाखण्ड है जिसके नीचे से एक इंच मोटी जल की धारा सतत् प्रवाहित होती रहती है। यहां का जल सुस्वादु है और क्षय जैसे रोगों में लाभप्रद बताया जाता है। इस जल–स्रोत के समीप पद–चिह्न निर्मित हैं, जिसे लोग माता जानकी का चरणचिह्न बताते हैं।

अष्टभुजी देवी : सीताकुण्ड से लगभग एक किलोमीटर पूरब अष्टभुजी देवी का मंदिर है। जहां श्रावण मास के शुक्ल पक्ष में बड़ा मेला लगता है। मूर्ति दो बड़ी चट्टानों के मध्य में स्थिति है जहां अंधेरा छाया रहता है। देवी

की मूर्ति के पास एक दीपक जलता रहता है। इस देवी के बारे में किम्बदन्ती है कि कंश ने देवकी के पुत्र श्रीकृष्ण को मारने के ख्याल से कृष्ण सहित वसुदेव और देवकी को कैद में बंद कर रखा था। वहीं देवकी के गर्भ से कृष्ण का जन्म हुआ। देवी–प्रेरणा से कैद–खाने का द्वार खुला और नवजात शिशु को यशोदा के पास ले जाया गया और मां यशोदा के गर्भ से पैदा हुई बालिका को जेलखाने में लाकर रख दिया गया। कंश ने इस बालिका को कृष्ण के प्रतिरूप मानकर आकाश में उछालते हुए एक शिलाखण्ड पर पटक दिया था। कहते हैं कि वही बालिका अष्टभुजी के रूप में इस स्थान पर आकर अवस्थित हो गयी।

सप्तसागर : यहां एक गणेशजी का मंदिर है, जिसे लोग उल्टे पहाड़ के नाम से भी पुकारते हैं। इस स्थान की खुदाई शासन द्वारा वर्जित है।

भद्रकाली : अष्टभुजी के पास ही भद्रकालीजी की गुफा है जिसके अंदर झुक कर जाना पड़ता है। यहां खड़े होने की भी जगह नहीं है। इस गुफा में हनुमान, शिव, राम तथा अन्य देवी–देवताओं की मूर्तियां तथा भगवान श्रीराम के चरण–चिह्न देखे जाते हैं।

भैरवकुण्ड : इस मंदिर से थोड़ी दूर पर पूरब की ओर भैरवकुण्ड का स्थान है। जहां एक शिव–मंदिर निर्मित है। सिंह पर सवार भैरव की 8 गुफाएं हैं। बगल में हनुमान जी हैं। पास ही में कुछ अन्य देवी–देवताओं की मूर्तियां हैं।

श्रीचक्र : भैरवनाथ के पास पहले एक श्रीचक्र था जिसके विषय में लोगों का कहना है कि टेकारी (बिहार में स्थित) के महाराजा ले गये थे। वे तंत्रशास्त्र के ज्ञाता थे। विन्ध्याचल तंत्र साधना का भी केन्द्र रहा है।

रामेश्वरनाथ : विन्ध्यवासिनी देवी के मंदिर के पीछे लगभग 2 किमी0 दूर रामेश्वर नाथ का एक विशाल मंदिर एक टीले पर स्थित है जिसके अंदर एक विशाल शिवलिंग स्थापित है। 'विन्ध्य महात्म्य' के अनुसार भगवान श्रीराम ने अपने हाथों इस शिवलिंग की स्थापना की थी। रामेश्वरनाथ का मंदिर

बहुत पुराना बताया जाता है। यहां पालि भाषा में एक शिलालेख भी मिला था।

रामगया : रामगया घाट विन्ध्यवासिनी देवी के मंदिर से पश्चिम रामेश्वरनाथ के मंदिर से पूरब गंगा के पावन तट पर बना है। गंगा जी के मध्य में एक छोटी सी पहाड़ी है जिसके ऊपर महाराजा रामचन्द्र एवं महारानी सीताजी के चरण-चिह्न अंकित हैं।

तारादेवी : राम गया के ही पास तारा देवी का मंदिर है। कहते हैं मिर्जापुर के किसी चीफ जस्टिस ने इस मंदिर का निर्माण कराया था। देवी की मूर्ति बहुत जागरूक तथा भव्य है। इसकी ऊंचाई 3 फिट है। त्रिकोण यात्रा के अंतर्गत अन्य मूर्तियों की अपेक्षा यह मूर्ति अधिक सुंदर है।

खरहटी महारानी : शिव मंदिर से दक्षिण सड़क के किनारे माता आनंदमयी का आश्रम है। इस आश्रम के पास षष्ठी महारानी की एक प्राचीन मूर्ति स्थापित है जिसे खरहटी देवी के नाम से जाना जाता है। यहां ललही छठ के अवसर पर औरतों का बड़ा मेला लगता है।

लालभद्र की बावली तथा अन्य स्थल : लालभद्र की बावली विन्ध्याचल से लगभग 5 किमी0 दक्षिण-पश्चिम के कोण पर स्थिति है। यहां एक बावली तथा चितवाखोह नाम का नाला है। इसी प्रकार बिरोही गांव के समीप एक चबूतरे पर वीरभद्र की मूर्ति स्थापित की गयी है जिसके पास से कर्णावती नदी बहती है। विन्ध्याचल से लगभग बारह किलोमीटर दक्षिण तथा पश्चिम के बीच में विजयपुर नामक स्थान कन्तित नरेश की राजधानी के नाम से जाना जाता है। यहां शीतला देवी का मंदिर, श्री राजा बाबा की बावली, भुइया खोह नामक स्थल दर्शनीय हैं।

त्रिकोण-यात्रा के अंतर्गत संकट मोचन तथा लोहदी महावीर का नाम भी लिया जाता है। संकट-मोचन का मंदिर जो नगर में कचहरी मार्ग पर स्थित है लोहदी नामक नगर से दक्षिण पड़ता है जिसके बारे में किम्बदन्ती है कि हनुमान जी अनेक बार प्रकट होकर अपने भक्तों को दर्शन दे चुके हैं। यहां सावन द्वादसी को बड़ा मेला लगता है और कजली दंगल आयोजित होता है।

विन्ध्याचल और मिर्जापुर में और भी शताधिक मंदिर हैं, जिनमें सहस्राधिक मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। विन्ध्य की महिमा वर्णनातीत है। विन्ध्याचल की छाया में न जाने कितनी संस्कृतियां फूली–फली हैं। विन्ध्याचल के बारे में कहा जाता है कि यह पर्वत अत्यंत विशाल था और वह दिन–प्रतिदिन ऊंचा ही होता जाता था। वह इतना ऊंचा था कि पर्वत की किरणें उसके पृष्ठ भाग तक पहुंच ही नहीं पाती थीं जिसके फलस्वरूप सूर्य भगवान ने महात्मा अगस्त्य से प्रार्थना की कि आप कोई उपाय करें जिससे मेरी प्रतिष्ठा गिरने न पाए। तब अगस्त्य ने विन्ध्याचल को आदेश दिया कि मैं अन्यत्र जा रहा हूं और जब तक वापस न आऊं तब तक प्रणाम की मुद्रा में तुम झुके रहना। तभी से विन्ध्याचल झुका हुआ है। इसकी गोद में ऐसी न जाने कितनी स्मृतियां अवशेष हैं।

सिद्धनाथ की दरी : यह स्थान चुनार–चुर्क रेलवे लाइन पर सक्तेशगढ़ तथा सरसोंग्राम स्टेशन के मध्य एक पहाड़ी पर स्थित है। इस स्थान पर पहले शेर, भालू, चीते निवास करते थे, किन्तु अब यह पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गया है। वर्षा के दिनों में झरने के कारण यहां का दृश्य काफी सुहावना हो जाता है।

बाबा सिद्धनाथ का यहां आगमन हुआ था। ये नाथ सम्प्रदाय के थे। ये काशी में रहते थे, बाद में तपस्या करने के निमित्त यहां आये। यहां कोई मंदिर नहीं है, बल्कि एक विशाल चट्टान है, जिसके नीचे उनके चरण चिह्न अंकित हैं। दो चट्टानों के बीच उनकी चरण–पादुका है। इस दरी के नीचे हनुमान जी की एक विशाल मूर्ति है, जिनके बारे में कहा जाता है कि ये यहीं से प्रकट हुए थे।

इस मंदिर के ही पास एक सुरंग भी पायी गयी है जिसके अंदर कोई प्रवेश नहीं करता। लोगों का कहना है कि इस सुरंग का संबंध चुनार दुर्ग से है। इस मंदिर के ही पास महाराज विजयपुर का एक किला अब ध्वंसावशेष रूप में प्राप्त था। किले के बारे में सविस्तार अलग से लिखा गया है। अब यहां संत श्री अड़गड़ानंद ने अपना आश्रम किले में बना लिया है।

रोहतास

नामकरण : सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व के नाम पर इस जिले का नाम रोहतास हुआ। रोहितास का नाम इतिहास–प्रसिद्ध है। राजा मान्धाता राजा दशरथ के पूर्वज थे। हरिश्चंद्र मान्धाता के पुत्र थे और रेहिताश्व हरिश्चन्द्र के पुत्र थे। रोहिताश्व को राजा हरिश्चंद्र ने किसी कारण वनवास दे दिया था। अपने पराक्रम, वीरता और साहस से रोहिताश्व रोहतक के राजा बन बैठे। उन्होंने कैमूर की ऊंची पहाड़ी पर एक दुर्ग का निर्माण कराया, जिसे आज भी रोहितासगढ़ के नाम से जाना जाता है। रोहिताश्व के राज्य को ही रोहतक कहा जाता है। बाद में रोहतासगढ़ की ऐतिहासिकता को ध्यान में रखते हुए इस जिले का नाम रोहतास रखा गया।

सहसराम : प्राचीनकाल में यहां पराक्रमी राजा सहस्राबाहु की राजधानी थी। इस पराक्रमी की एक सहस्र बाहुएं थीं। इसी कारण इसका नाम सहस्रबाहु पड़ा था। सहसराम को सहस्रार्जुनपुरी भी कहा जाता है। राजा सहस्रबाहु का विवाह गांधिपुर (गाजीपुर) के राजा गाधि की दूसरी पुत्री शान्ता से हुआ था। राजा गाधि की प्रथम पुत्री का नाम रेणुका था जिसका विवाह महर्षि जमदग्नि से हुआ था। महर्षि जमदग्नि ने अपने जमदग्नि आश्रम (गाजीपुर–जमानियां) में रुद्रयज्ञ का आयोजन किया था, जिसमें सहस्रबाहु का भी आगमन हुआ था। यज्ञ की समाप्ति के बाद सहस्रबाहु ने महर्षि आश्रम की कामधेनु की मांग की। वह कामधेनु जमदग्नि ऋषि की परम प्यारी गाय थी जिसे देने से उन्होंने इन्कार कर दिया। इस बात पर कहासुनी के उपरान्त युद्ध की नौबत आ गयी। घमासान युद्ध में सहस्रबाहु द्वारा महर्षि जमदग्नि मारे गये और सहस्रार्जुन उक्त कामधेनु को लेकर अपनी राजधानी लौट आए।

महर्षि जमदग्नि के चार पुत्र-रत्न थे जिनमें चौथे पुत्र परशुराम बड़े वीर और प्रतापी थे। उन्होंने सहस्रार्जुन द्वारा अपने पिता की की गयी हत्या का बदला चुकाने के लिए सहस्रपुर पर आक्रमण कर दिया। इस घमासान युद्ध में परशुराम ने सहस्रबाहु की 998 बाहुएं काट डालीं। तब परशुराम की मौसी शान्ता ने परशुराम को समझाया और सहस्रबाहु की दो बाहुएं छोड़ देने के लिए

कहा। अंततः एक ऐसी स्थिति आई कि सहस्त्रार्जुन और परशुराम के बीच संधि हो गयी। इसी सन्धि के आधार पर सहस्त्रपुर का नाम सहस्त्रार्जुन के नाम का 'सहस्त्र' और परशुराम के नाम का 'राम' मिलाकर 'सहस्त्रराम' रख दिया गया जो कालान्तर में परिवर्तित होते-होते सासाराम कहा जाने लगा। महात्मा अगस्त्य मुनि का आश्रम यहीं कहीं था तथा महाकवि वाणभट्ट ने सोणनदी के समीप कहीं अपनी कुटी बनायी थी।

(1) **पर्वत :** रोहतास जिले का लगभग आधा क्षेत्र पहाड़ी है। इस जिले के दक्षिण में कैमूर की ऊंची पहाड़ी फैली हुई है जो विन्ध्य पर्वत से जुड़ी है। रोहतास के समीप कैमूर पहाड़ी की ऊंचाई लगभग 450 मीटर है। इन पर्वतीय क्षेत्रों में यातायात के साधनों का अभाव है। छिटफुट गांव बसे हैं जो नक्शलवादियों की चपेट में हैं।

(2) **वन :** रोहतास जिले के कैमूर पहाड़ी पर लगभग 35% भू-भाग पर वन है। इस वनांचल में बड़ी-बड़ी घासें, बांस, साल, अमलतास, महुआ, करम, गम्मर, आंवला, सलई, कत्था, पियार, तेन्दू, चिरौंजी, बेंत, हर्रा, बहेरा आदि के पेड़ हैं। तेंदू की पत्ती से बीड़ी बनायी जाती है। घास से कागज और रस्सी बनायी जाती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ, जड़ी-बूटी एवं जलावन के लिए लकड़ियां भी प्राप्त होती हैं। कैमूर पर्वत पर बिहार सरकार का सुरक्षित वन क्षेत्र 799 एकड़ 83 डिस्मल तक फैला हुआ है।

रोहतास के जंगलों में मुख्यतया चीता, नीलगाय, हिरण, भालू, बन्दर, सुअर आदि पशु पाए जाते हैं। पक्षियों में बटेर, बुलबुल, मैना, तोता, मोर आदि अधिक पाए जाते हैं। यहां कौआ, तोता, मोर, ग्रेविल, चेष्टनट डिलाइट, नुधैच, जगिल देगुलर, कामन बेगुलर, रफोस वेलिट, कामन आइरा, हरकवा, गोल्ड फ्रान्टेड ग्रीन, बुलबुल, जर्डन्स, क्लोरोप्सिस, रेड वेन्टेड, सिपाही, बुलबुल, काली समा (इण्डियन रावेन) घायल, (मेक्खी रावेन) समा, दूधराज, फेन्टेल, फ्लाइ केयर, ग्रे स्त्राइक, दुड स्त्राइक, उप वैक्ड स्त्राइक, वेहेडेडस्त्राइक, स्माल मिनिवेट ब्लैक हेडेड, कुक्कू स्त्रा लार्ज, कुक्कु स्त्राइक, एसी स्वालोस्त्राइक, ब्लैक रांगो (किंग ग्राउ) ड्रान्गो, दी भीमराज, टेलरवर्ड, स्ट्रीक्ड, फैंसियल,

वार्वोलर, इण्डियन रेन वार्वोलर, पिलक, ब्लैक हेडेड ओरिबोल, पावी, (ग्रे हेडेड मैना) ब्राह्मिनी (ब्लैक हेडेड मैना) कामन मैना बैंक मैना, अबलक (पाइड मैना), पहाड़ी मैना, वाया (कामन वीशर बर्ड) स्टेडेड वीशर बर्ड, सर्वो वाया (ब्लैक थी वीशर बर्ड)। सैण्ड ग्राउस, पी फोल, रेड जंगिल फोल, जगिल वुड कोयल, वुस्टार्ड कोयल, व्हाइट क्रेस्टेड वाटरहेन, इण्डियन मूर हेन, पर्पिल मूल हेन, कूट जकाना, पेन्टेड रनाइप, स्टीन कर्लिव, इण्डियन कोर्सर, रीवर टर्न, रेड, वेटिल्ड, लैप विंग, रिंग प्लोवर, यलो वैटिल्ड लैप, विंग, एवोसेट, कार्मोरिन्ट स्नेकबर्ड, इविस (ब्लैक एण्ड व्हाइट बोथ) स्टार्क, ग्रे हिरन लिकिल इग्रेड, कैटिल इग्रेट, पाण्ड हिरन, नाइट हिरन (अघेरुआ), पनडुब्बी (लिरिलक्रेव) काम डक काटन, लेजर हेस्टलिंग टील।

नदियां

रोहतास जिले में निम्नलिखित प्रमुख नदियां हैं—

(1) सोननदी : सोण मध्य प्रदेश के वन प्रदेश, अमर कंटक की पहाड़ियों से निकलकर उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले को लांघती हुई बिहार की सीमा में प्रवेश करता है। इसका पाट काफी चौड़ा है और वर्षा के दिनों में यह भयानक रूप धारण कर लेता है। डिहरी डालमियां नगर के दो पाटों की चौड़ाई लगभग 1000 मीटर है। इस नदी पर हिन्दुस्तान का विशाल सड़क पुल एवं रेलवे पुल बनाया गया है जिसे नेहरू सेतु कहते हैं। इन्द्रपुरी नामक स्थान पर शोण पर एक विशाल बांध बनाया गया है जिससे 2,27,000 एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। सोण का बालू भवन-निर्माण के लिए सर्वोत्तम समझा जाता है। इस पौराणिक नद की महिमा 'अग्निपुराण' में वर्णित है।

(2) कर्मनाशा : यह नदी मिर्जापुर में कैमूर घाटी से निकलकर रोहतास जिले के पश्चिमी भाग में बहती है। इस नदी पर जगदहवा बांध का निर्माण हुआ है जिससे नहरें निकालकर 26,000 एकड़ भूमि की सिंचाई की जाएगी। यही नदी बिहार और उत्तर प्रदेश, यानी रोहतास और मिर्जापुर जिले की सीमा निर्धारित करती है।

(3) दुर्गावती नदी : दुर्गावती रोहतास की तीसरी प्रमुख नदी है, जो कर्मनाशा में जा मिलती है। यह कैमूर पहाड़ी के गुप्ताधाम के समीप सीताकुण्ड से निकलती है। यह नदी भी सिंचाई के काम आती है।

(4) कुदरा तथा काव : इन दोनों नदियों का उद्गम स्थल कैमूर की पहाड़ियां हैं। इनकी दो शाखाएं हैं जिनमें से एक को कुदरा तथा दूसरे को काव कहते हैं। इन नदियों का जल भी सिंचाई के काम आता है।

नाले–झरनें : जिले का अधिकांश पहाड़ी होने के कारण यहां अगणित नाले, झरनें पर्यटकों का मन मोह लेते हैं। वर्षा के दिनों में झरनों का दृश्य सुहावना हो जाता है। नगर तथा आस–पास के लोग पिकनिक का आनन्द लेने के लिए इन स्थानों पर जाते हैं। रोहतास जिले के कुछ प्रमुख झरनें निम्नलिखित हैं—

(1) मार्जरकुण्ड : यह सासाराम से 5 किलोमीटर दूर कैमूर पहाड़ी पर स्थित है और रोहतास जिले का अत्यंत मनमोहक और आकर्षक झरना है। ऊंची पहाड़ियों से पानी जब नीचे गिरता है तो पूरे वातावरण को मुखरित कर देता है। इसका जल काफी सुस्वादु और स्वास्थ्यवर्द्धक बताया जाता है।

(2) धुआंकुण्ड : मार्जरकुण्ड का पानी बहकर धुआंकुण्ड में पहुंचता है। यह लगभग 200 मीटर की ऊंचाई से गिरता है। इस कुण्ड की गहराई अथाह बतायी जाती है। इसमें वर्ष–पर्यन्त जल भरा रहता है। यहां भी नगर तथा आस–पास के पर्यटकों का आना–जाना लगभग वर्ष भर लगा रहता है। यहां का दृश्य बहुत ही मनोरम है।

(3) तेलहर कुण्ड : यह जलप्रपात भभुआ के पास कैमूर की पहाड़ी पर स्थित है। इसका पानी भी लगभग 150 मीटर की ऊंचाई से नीचे गिरता है और एक कुण्ड बना लेता है।

(4) ततराही जल प्रपात : तिलोथू से 7 किलोमीटर पश्चिम तूतला भवानी नामक धार्मिक स्थान पर यह जलप्रपात प्राकृतिक रूप से बना हुआ है। इसका दृश्य वर्षा के दिनों में और भी मनोरम हो जाता है। इसके अतिरिक्त

सीताकुण्ड, हनुमान धारा, बूढ़न, भूतहा पहाड़ी के झरनें भी जनपद की शोभा में वृद्धि करते हैं।

कृषि

जहां तक कृषि का संबंध है, यह पहाड़ी और मैदानी दोनों भागों में होती है किन्तु मैदानी भागों की जमीन अधिक उपजाऊ है। रोहतास जिले में 9.2 लाख एकड़ भूमि कृषि–योग्य है। इस जिले के 70% व्यक्ति कृषि पर अवलम्बित है। यहां अच्छी खेती होती है। जिले में तीन तरह की मिट्टी पायी जाती है।

(1) **काली मिट्टी :** धान के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध होती है।

(2) **दोमट मिट्टी :** जिसमें धान और चैती की फसलें उगायी जाती हैं।

(3) **बलुई और पथरीली मिट्टी :** जो डिहरी प्रखण्ड के पश्चिमी क्षेत्रों में पायी जाती है और जिसमें दहलन, तिलहन की फसलें अधिक उगायी जाती हैं। यहां फल और सब्जी की फसलें भी अधिक उगाई जाती हैं। धान की उपज के लिए सासाराम अनुमंडल प्रसिद्ध है। इसीलिए यहां के लोग चावल के अधिक प्रेमी हैं। विक्रमगंज अनुमंडल में नहरों का जाल बिछा होने के कारण 85,465 हेक्टेयर क्षेत्र में धान तथा 63,130 हेक्टेयर क्षेत्र में गेहूं की खेती की जाती है। इस अनुमंडल में 20,322 हेक्टेयर जमीन में दलहन और 5,658 हेक्टेयर जमीन में तैलहन की खेती की जाती है।

सिंचाई : सोन नदी से नहरें निकाली गयी हैं जिनसे सासाराम, भभुआ और विक्रमगंज अनुमंडल के अधिकांश भू–भाग सींचे जाते हैं। सोन के अलावा कर्मनाशा नदी के जल से भी सिंचाई होती है। इस नदी पर जगदहवा बांध बना कर भभुआ अनुमंडल के चैनपुर, चांद और दुर्गावती प्रखण्ड के 26,000 लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जाती है।

खनिज

रोहतास जिला खनिज उत्पादन की दृष्टि से अभी काफी पिछड़ा हुआ है। यही कारण है कि यहां बड़े–बड़े उद्योग–धंधे स्थापित नहीं हो सके हैं। उद्योग–धंधों की स्थापना न होने के कारण यहां आज भी गरीबी गोड़ तोड़ कर बैठी है। रोहतास जिले में निम्नलिखित खनिज पाए जाते हैं।

(1) गंधक : रोहतास प्रखण्ड के अमझोल नामक ग्राम के समीप कैमूर की पहाड़ियों में गंधक की खान मिली है। इस पहाड़ी में पत्थरों के अंदर लगभग 60 किलोमीटर दूरी तक गंधक वर्तमान है।

(2) बाक्साइड : अधोरा ग्राम के समीप कैमूर की पहाड़ी में वाक्साइड का पता चला है जहां खोद बीन जारी है।

(3) चूना–पत्थर : रोहतास और कल्याणपुर वंजारी के समीप कैमूर की पहाड़ियों पर प्रचुर मात्रा में चूना पत्थर पाया जाता है। इस पत्थर से सीमेंट और चूना तैयार किया जाता है। इनसे सम्बन्धित कुछ नये उद्योग स्थापित किये जा रहे हैं।

(4) नीथोग्राफ के पत्थर : रोहतास गढ़ के सपीप कैमूर की घाटी पर नीथोग्राफ पत्थर पाए जाते हैं। इस जिले में और भी खनिजों के मिलने की संभावना बनी हुई है।

कल–कारखानें

रोहतास कल–कारखानों की दृष्टि से भी अभी काफी पिछड़ा हुआ है। उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के सीमावर्ती जिलों में जहां कई महत्वपूर्ण राष्ट्रीय स्तर के उद्योग स्थापित किए गए हैं, वहीं इस क्षेत्र में कुछ छोटे उद्योग भी स्थापित हो सके हैं।

रेशम–उद्योग : अधौरा अंचल में रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। वैसे तो कैमूर पहाड़ी के अधिकतर भागों में सीधी, सरगुजा, मिर्जापुर, पलामू आदि में

भी रेशम उद्योग चलते हैं। रोहतास के भभुआ अनुमंडन के सरौंदा ग्राम में यह उद्योग विशेष रूप से विकसित हुआ है। रेशम के कीड़े वनों में पेड़ों पर पाले जाते हैं जिनमें अधिकतर आदिवासी जातियां काम करती हैं।

सूती कपड़ा उद्योग : सासाराम, करंवदिया और हाटा में पत्थर उद्योग विकसित हैं। वहां पत्थर से मिट्टी तैयार की जाती है और पटिया, शील, लोढ़ा आदि भी तैयार किए जाते हैं। यहां से अन्य स्थानों को भी पत्थर निर्यात किए जाते हैं।

ईंट–उद्योग : रोहतास के कई इलाकों में ईंट–उद्योग विकसित हैं। जैसे सासाराम जमुहार, करनियां, मझौली, रामपुर, विक्रमगंज, कोचस, परसथुआ, सकरी, दुर्गावती, वेरकप, हनियार आदि। यहां लगभग 40-50 की संख्या में ईंट की भट्टियां कार्यरत हैं जिनमें अधिकतर छोटे तबके के लोग काम करके अपनी जीविका चलाते हैं।

चावल मिल उद्योग : नोख, नटवार, विक्रमगंज, दिनारा, सासाराम, कोचस आदि क्षेत्रों में चावल की अनेक मिलें स्थापित हैं। इन मिलों में गावों की मंडियों से किसान धान ले आते हैं, जहां चावल तैयार किया जाता है। इसके अतिरिक्त धनकुटी उद्योग भी जिले के अमुक स्थानों पर विकसित हैं।

तेल–उद्योग : सहसराम, भभुआ, चेनारी, कुदरा आदि में सरसों, तीसी के तेल उद्योग विकसित हैं। सरकार की ओर से भी उद्योगों को आर्थिक संरक्षण प्राप्त है।

साबुन–उद्योग : सासाराम, डिहरी, आदि क्षेत्रों में बीड़ी उद्योग बड़े उद्योग के रूप में विकसित है। यह भी वह उद्योग है, जिसे करके घर बैठे स्त्री–पुरुष अपनी आय बढ़ा लेते हैं।

कापी : सासाराम और डिहरी में कागज से अभ्यास पुस्तिकाएं, रजिस्टर और फाइलें बनायी जाती हैं जिसे शहरी क्षेत्रों में बिक्री के लिए भेज दिया जाता है।

स्याही : सासाराम, डिहरी, भभुआ, नोख, विक्रमगंज आदि क्षेत्रों में

लिखने की स्याही के छोटे-बड़े उद्योग काफी संख्या में विकसित हुए हैं।

रंग : सासाराम, चेनारी, डिहरी, कदरा, भभुआ, नासरीगंज, नोख, विक्रमगंज आदि क्षेत्रों में कपड़े तथा पैर रंगने के रंग, आल्ता, नाखून पालिश आदि उद्योग स्थापित हो रहे हैं।

अगरबत्ती : सहसराम में अगरबत्ती उद्योग का काफी विकास हुआ है। यहां कीं बनी अगरबत्ती काफी अच्छी मानी जाती है और राज्य के अन्य क्षेत्रों में बिक्री के लिए भेजी जाती है।

मोमबत्ती : सहसराम में यह उद्योग स्थापित है।

आतिशबाजी : सासाराम, तिलौथू, अकबरपुर और रोहतास आदि क्षेत्रों में पड़ाका, ातिशबाजी बनाने के उद्योग विकसित हो रहे हैं।

ठोंगा : जिले के प्रायः हर क्षेत्र में रद्दी कागज के बने ठोंगे का उद्योग विकसित हो रहा है। अब प्लास्टिक के थैले के उद्योग भी विकसित होने लगे हैं।

मशाला : सासाराम में खाने वाले मशाले को चक्कियों में पीसकर पैकेटों में बंद करके बिक्री करने का काम तेजी से पनप रहा है।

मौरी-राखी : शादी व्याह के अवसर पर मौरी राखी की खपत बढ़ जाती है। इसकी खपत स्थानीय होते हुए काफी अच्छी हो जाती है। अतः शादी व्याह के अवसर पर घरों की स्त्रियां मौर बना कर बाजारों में बिक्री के लिए भेज देती हैं। इस प्रकार रक्षाबन्धन के अवसर पर रक्षा आदि बनाने का काम भी सासाराम में विकसित हो रहा है।

वर्तन : सासाराम के जानी बाजार में हर तरह के वर्तनों को बनाने एवं पालिश करने का उद्योग विकसित है। यहां टीन के बक्से भी बनाये जाते हैं।

भाषा-बोली

रोहतास जिला सोन, गंगा के प्रभाव क्षेत्र में स्थित एक ऐसा जनपद है,

जो देश की सबसे लम्बे सड़क–यात्रा–पथ (ग्रैण्ड टैंक रोड) पर बसा हुआ है। इसका संबंध जहां एक ओर कलकत्ता से रहा, वहीं दूसरी ओर दिल्ली और कानपुर से भी रहा है। अतः यहां की भाषा भी तमाम भाषाओं की मेलजोल खिचड़ी हो गयी है। यहां जैन, बौद्ध, सिख, ईसाई और मुसलमान धर्मों के धर्मानुयायियों के आने–जाने, उपदेश, प्रवचन करने, मठों, मन्दिरों तथा अन्य धार्मिक प्रतिष्ठानों की स्थापना के फलस्वरूप अनेक भाषाओं और बोलियों को प्रतिष्ठा पाने, पनपने का अवसर भी प्राप्त होता रहा है। तब भी सबको मिलाकर भोजपुरी यहां की सर्वप्रिय भाषा बन गयी है, जो सर्वथा हिन्दी के मेल में है।

सन् 1951 के गजेटियर में सम्पूर्ण शाहाबाद में बोली जाने वाली भाषाओं का विवरण निम्नलिखित है जो आज भी तुलनात्मक अध्ययन के लिए विशेष उपयोगी प्रतीत होता है।

भाषा	बोलने वाले	पुरुष	स्त्री	व्यक्तियों की संख्या
जनपद की कुल जनसंख्या	26,88,440	13,58,443	13,29,997	
आर्य भाषाएं				
हिन्दी	26,82,367	13,54,861	13,27,506	
बंगला	2,610	1,531	1,079	
उड़िया	130	75	55	
पंजाबी	1,110	692	418	
मारवाड़ी	485	284	201	
गुजराती	4	4	0	
दूसरे प्रकार की आर्य भाषाएं :				
मुण्डा भाषा				
सन्थाली	184	106	78	
द्रविण भाषाएं				

ओरेअन	1,018	532	486
तेलगू	91	34	37
तमिल	28	17	9
विदेश से भारत तक	10	6	4
एशियाई भाषाएं			
चीनी	10	6	4
यूरोपीय भाषाएं :			
अंग्रेजी	168	97	71

साहित्य

रोहतास जिला साहित्य–साधना की दृष्टि से भी कम महत्वपूर्ण नहीं रहा। कहते हैं यहीं वैदिक ऋचाओं की रचना की गयी थी। रोहतास, लोपाद्रुमा, वाणभट्ट्, जायसी, बाबा जयराम दास, वैदेही देवी, दरिया साहब, राजराजेश्वरी प्यारे, राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह, भवानी दयाल, सन्यासी, जनाब हसन, जान खान, जनाब अलीम खान, शेरअली, प्रो0 काश्यप, कुंजबिहारी कुंजन, डॉ0 नन्दकिशोर तिवारी, प्रो0 बद्री तिवारी, सन्त शिवाराज की महाराज आदि लेखकों और कवियों के कारण रोहतास की धरती पवित्र हो गयी है।

यहां के ग्रामीण अंचलों में जन–कवियों की भरमार है। लोरिकी, विरहा, कजली, करमा, शोभा नयका, विजयमल तता अन्य संस्कार गीत यहां के नर–नारियों द्वारा गाए जाते हैं। विभिन्न अवसरों पर साहित्यिक आयोजन होते रहते हैं।

शिक्षा

शिक्षा के क्षेत्र में बिहार आरंभ से ही अग्रणी रहा है। पौराणिक काल में यहां गुरुकुलों की स्थापना की गयी थी। बाल्मीकि रामायण के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि बाल्मीकि ऋषि का श्रद्धाश्रम कैमूर की पर्वत शृंखलाओं में ही था। वनवासी श्रीराम की शिक्षा–भूमि रोहतास की धरती रही है। बौद्धकाल में रोहतास का शैक्षिक विकास तेजी से हुआ। उस समय यह बौद्धशिक्षा का मुख्य केन्द्र था। बौद्धधर्म के प्रचार–प्रसार के लिए यहां प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए थे। मध्यकाल में सहसराम अरबी, फारसी शिक्षा के लिए मशहूर था। यहां खानकाह के मदर्से की स्थापना सन् 1770 में खेखं, कबीर, दरवेश द्वारा की गयी थी। इन मदर्सों में अरबी, फारसी की शिक्षा प्राप्त करने के लिए दूर–दराज के लोग आते थे। इन मदर्सों में आज भी बाहर से छात्र शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते हैं। आधुनिक काल में अंग्रेजी शासन में अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार–प्रसार बढ़ा। रोहतास में सन् 1875 में प्रथम उच्च विद्यालय सहसराम में ही स्थापित हुआ। इसके बाद सूर्यपुरा, तिलौथू और भभुआ में भी अंग्रेजी शिक्षा के लिए डिग्री स्तर के विद्यालयों की स्थापना की गयी।

पर्वोत्सव

भारत अगणित पर्वों और उत्सवों का देश है। यहां स्थान–स्थान पर स्थानीय मान्यताओं के आधार पर स्थानीय जातियों, जनजातियों द्वारा स्थानीय देवी–देवताओं की पूजा–परंपरा प्रचलित है। आदिवासी बहुल क्षेत्रों में तो यह बताना कठिन हो जाता है कि उनके देवता किस पहाड़ में या किस वृक्ष में नहीं हैं।

हिन्दुओं के पर्व–होली, दशहरा, दीपावली, गोपाष्टमी, छठ, सरस्वती पूजा, रामनवमी, रक्षाबन्धन, विश्वकर्मा पूजा, गुरुनानक जयन्ती, गुरु गोविन्दसिंह जयंती, तुलसी–जयन्ती आदि हिन्दुओं तथा सिखों के प्रमुख पर्व हैं। इन अवसरों पर यहां के लोग मन्दिरों, गुरुद्वारों या अन्य धार्मिक स्थलों पर एकत्र होकर बड़ी रुचि–सम्पन्नता के साथ मिल–जुल कर उत्सव मनाते हैं। जिले में सत्यनारायण व्रत कथा सुनने की परंपरा पुरानी है। इसी प्रकार विभिन्न अवसरों पर यज्ञ, महायज्ञ, हवन आदि के आयोजन भी किए जाते हैं। दुर्गा–पूजा, सरस्वती–पूजा, गोपाष्टमी, विश्वकर्मा–पूजा आदि त्यौहारों पर मिट्टी के प्रतीक बना कर इनकी पूजा की जाती है।

मुस्लिम–पर्व : रोहतास जिले में मुसलमानों की संख्या कम नहीं है। अतः जनपद के विभिन्न भागों में मुस्लिम पर्व भी बड़े उत्साह से मनाये जाते हैं। मुहर्रम, ईद, बकरीद, शबेबरात, चेहल्लुम आदि मुसलमानों के प्रमुख पर्व हैं। मुहर्रम आदि के अवसर पर यहां मुहल्ले–मुहल्ले ताजिया बनाया जाता है उनका विशाल जुलूस निकलता है जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिख आदि सभी धर्मों के लोग सम्मिलित होते हैं। सासाराम का बना हुआ ताजिया पूरे देश में प्रसिद्ध है।

ईसाई धर्म : क्रिसमस, बड़ादिन और एक जनवरी ईसाई बन्धुओं के प्रमुख पर्व हैं। इन अवसरों पर उनका साप्ताहिक कार्यक्रम चलता है।

सिख–पंथ : पटना के मार्ग में होने के कारण सासाराम (रोहतास) जनपद सिखधर्म का केन्द्र रहा है। यहां सिखों के नवें गुरु तेगबहादुर सिंह का

आगमन सन् 1666 में हुआ था। उनके साथ उनकी धर्मपत्नी माता गुजरीदेवी भी थीं। उस समय दसवें गुरु गोविंद सिंह का आविर्भाव भी उनके गर्भ में हो चुका था। यहां कृष्ण गोशाला के पीछे गुरुजी का बाण रखा हुआ है। यहीं चाचा फाग्गुमल का गुरुद्वारा है, जहां गुरु तेगबहादुर सिंह द्वारा लगाया हुआ अत्यंत मीठे फलों वाला बेर का पेड़ आज भी वर्तमान है जिसका फल कभी सड़ता नहीं और दूर-देशों तक प्रसाद के रूप में जाता है।

इतना ही नहीं प्रथम गुरु नानकदेव जी भी यहां आये थे और उन्होंने एक गुरुद्वारे की नींव रखी थी, जिसे अब 'पुरानी संघत' के नाम से जाना जाता है। यहां महंत राजादास पर्णकुटी लगाकर रहते थे जिनकी तपस्या की चर्चा सुनकर तत्कालीन गद्दीनसीन खामखाह वहां पहुंचे थे। महंत जी ने चमत्कारिक ढंग से लंगड़ा आम पैदा करके उन्हें खाने को दिया था, जिससे प्रसन्न होकर खानखाह ने 52 बीघा जमीन और तीन गांव राजादास उदासीन को दिए थे।

सं0 1631 में कार्तिक शुक्ल नौमी को गुरुदित्ता जी का आगमन भी यहां हुआ था और उन्होंने शिव-मंदिर बनवा कर उसमें शिवजी की स्थापना की थी। गुरु तेग बहादुर सिंह जी अपने बड़े भाई गुरुदित्ता जी का दर्शन करने जब सं0 1660 में यहां आये और जब उन्हें बड़े भाई के दर्शन नहीं हुए तो वहीं स्वयं तपस्यारत हो गये। इक्कीस दिन की घनघोर तपस्या के बाद गुरु दित्ता जी का प्राकट्य हुआ। उन्होंने सनातन हिन्दू-धर्म की रक्षा के लिए उन्हें अपना आशीर्वाद दिया था और कहते हैं गुरु जी ने जिस सूखे मौलिश्री वृक्ष के नीचे अपना घोड़ा बांधा था, वरदान पाने के बाद उनके हाथ के स्पर्श से दूर हो गया था। हिन्दू-धर्म की रक्षा करते हुए गुरु जी यहीं सं0 1705 में ब्रह्मलीन हो गये थे। तब से महंत गुरु नारायण दास, बाबा ईश्वरदास, बाबा सूर्यदास, महंत हरिहर दास, लालबाबा, वसरिया जी महाराज, महंत रामचन्द्र दास, महात्मा भैरवनाथ आदि संतों की साधना का केन्द्र यह स्थान बना रहा। यहां आज भी गुरुदित्ता जी की समाधि, मौलिश्री वृक्ष, शिव मंदिर विद्यमान हैं और लोगों के लिए आस्था के स्थल बने हुए हैं।

यहां महंत रामचन्द्र दास द्वारा लिखा हुआ गुरुग्रंथ साहब की पाण्डुलिपि

भी आस्था का माध्यम बनी हुई है। उसमें लिखा है कि उसे गोंद की करमा, एक लाजवर्त, एक रत्ती सोना, विजेशाल का पानी, तांबे का भाण्ड, नीम की लकड़ी को काजल में घिस कर बनायी गयी स्याही से लिखा गया है। उसका आकार 16x12 इंच है।

आस्था के दर्शनीय स्थल तथा मेलेठेले

गुप्ताधाम : जिला मुख्यालय सासाराम से कुदरा, 25 किमी0 दूर सासाराम से वाराणसी मार्ग पर पड़ता है। वहां से चेनारी 15 किमी0 पक्की रोड से जाना पड़ता है। इसी स्थान से गुप्ताधाम की पहाड़ी शुरू हो जाती है। यहाँ पहाड़ की जड़ तक मोटर साइकिल, जीप आदि से पहुंचा जा सकता है। इसके बाद चढ़ाई शुरू होती है। इसी पहाड़ी में ऊपर जाने पर गुप्ताधाम की गुफा पड़ती है। यह गुफा भी लगभग डेढ़ किमी0 लम्बी है जिसके भीतर से होकर निर्धारित स्थान पर जाना पड़ता है। यह गुफा इतनी टेढ़ी और नीची–ऊंची है कि कभी झुक पर, कभी मुड़ कर, कभी दाहिने, कभी बाएं होकर क्रमशः ऊपर की ओर जाना पड़ता है। इस पहाड़ी को एक नदी चारों ओर से घेरे हुई है। अतः यात्रियों को इस नदी को भी 10 बार पार करना पड़ता है। एक ही नदी बार–बार सामने आती है, उसी प्रकार वह पहाड़ी भी बार–बार सामने आ जाती है। इस गुफा के अंदर शुद्ध हवा का प्रवेश भी नहीं हो पाता जिसके कारण यात्रियों के दम घुटने लगते हैं और कभी–कभी तो अप्रिय घटनाएं भी हो जाती हैं।

गुप्ता महादेव का मंदिर कैमूर पहाड़ी के गुप्तेश्वर गुफा के अन्दर निर्मित है। गुप्तेश्वर धाम में पहुंचने के लिए दो गुफाएं बनी हुई हैं। मुख्य गुफा में जाने के लिए एक छोटा सा प्रवेश–द्वार बना हुआ है। पहली गुफा अंधेरे के कारण आने–जाने में सुगम नहीं है और प्रायः पावों के फिसलने का भय बना रहता है। दूसरी गुफा के ऊपरी भाग में कई छिद्र बने हुए हैं, जिनमें एक छिद्र से पानी की धारा अविरल रूप से प्रवाहित होती रहती है। पानी की इसी धारा से भगवान शिव जी सदा स्नान करते रहते हैं। निरन्तर जल–प्रवाह के कारण प्रस्तर–खण्ड में शिवजी जैसी प्रतिमा प्राकृतिक रूप से बन गयी है। वसन्त

पंचमी और शिवरात्रि के अवसर पर यहां बड़ा मेला आयोजित किया जाता है जिसमें हजारों व्यक्ति सम्मिलित होते हैं। यह स्थान सासाराम मुख्यालय से लगभग 15 किमी0 दूर है। यहां ताराचण्डी का एक प्रसिद्ध मंदिर है, जहां नगर तथा आस–पास के भक्तगण पूजा के लिए आते रहते हैं। इस मन्दिर के समीप बौद्ध–काल का एक अभिलेख भी प्राप्त है।

घिनहू ब्रह्म : विक्रमगंज तहसील के नरवार नामक स्थान पर घिनहू ब्रह्म बाबा की समाधि है, जहां एक बड़ा मेला चैत में दशहरा के अवसर पर तथा सावनी नौमी के समय लगता है। इस मेले की विशेषता यह है कि इसमें अधिकतर महिलाएं ही मनौती करके पुत्र–कामना से या भूत–प्रेत की बाधा के निवारणार्थ जाती हैं। वहां पहुंचते, हरसू ब्रह्म की तरह पुजारी जी की सहायता से ब्रह्म के दरबार में सवाल रखा जाता है। झाड़फूंक करके मनौती मानी जाती है। दूसरे दिन दरबार में पुनः उपस्थित होकर पूजा की जाती है। वह औरत ही सब कुछ कबूल करती है कि भूत कहां से आया, क्यों आया? कैसे मानेगा? आदि। वहाँ चढ़ावा चढ़ाया जाता है। यहां मेला के अवसर पर काफी धन अनाज आदि एकत्र हो जाता है।

चन्देश्वरी : यहां मदुरना नामक गांव में चन्देश्वरी देवी की लगभग 60 सेमी0 ऊंची पत्थर की प्राचीन सुन्दर मूर्ति स्थापित है जिसके बारे में कहा जाता है कि चंद नामक राक्षस को इस देवी ने अपने षड्ग से मारा था। कुछ लोगों का ख्याल है कि वह कोई राक्षस नहीं, बल्कि शालिवाहन के साथ उसका भयंकर युद्ध हुआ था। उस युद्ध में राजा पर देवी की विशेष कृपा के फलस्वरूप वह शालिवाहन द्वारा मारा गया था। इस मारे जाने की खुशी में, चूंकि देवी की विशेष कृपा थी, इसलिए महाराज शालिवाहन ने इस मूर्ति की स्थापनां की थी।

इस क्षेत्र के बारे में किसी की कभी कलम नहीं उठी। लोगों का ऐसा कहना है कि चूंकि शालिवाहन ने हरसू जी पर प्रहार किया था और यह प्रहार किसी लक्ष्मीपति द्वारा सरस्वती–पुत्र पर किया गया था, इसलिए जब शालिवाहन ने यज्ञ का आयोजन किया तो वहां के बुद्धिजीवियों ने उसमें सम्मिलित न होने

का सामूहिक निर्णय लिया था। फलस्वरूप राजा शालिवाहन ने सवा लाख ब्राह्मणेतर जातियों को ब्राह्मण बना कर अपना यज्ञ किया था। इन बनाए गए सवा लाख ब्राह्मणों में हर जाति के प्रतिनिधि थे। शालिवाहन का समय सं0 1300 बताया जाता है।

चौरसिया : रोहतास में रामगढ़ नाम का एक स्थान है जिसे चौरसिया के नाम से भी जाना जाता है। यहीं 84 बीघे का एक टप्पा 'वैरन लैण्ड' के रूप में विद्यमान है। इस पूरे टप्पे पर कभी किसी का कब्जा नहीं हुआ और न हो सकता है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि इस पूरी जमीन पर कब्जा-दखल करने वाले का अनिष्ट अवश्यम्भावी है। यह पूरा भू–भाग खाली पड़ा है जिसमें 84 ब्रह्मपिण्डों की स्थापना की गयी है। ये सभी पूजा लेते हैं। इस पूरे टप्पे में ठाकुरों की कुल 84 बस्तियां भी हैं। चैत रामनवमी के अवसर पर यहां एक बहुत बड़ा मेला लगता है, जिसमें 84 गांव के लोग तो सम्मिलित होते ही हैं, दूर–दराज के भक्तगण भी आते हैं और झण्डा लेकर वृहत् जलूस निकाल कर अपनी श्रद्धाभक्ति का परिचय देते हैं। यहां देवी की एक प्रतिमा भी प्रतिष्ठित है, जिसकी पूजा सभी 84 गांवों के निवासी झण्डे के साथ करते हैं। वे मनौती मान कर चढ़ावा भी चढ़ाते हैं। देवी की यह प्रतिमा महुआर नामक गांव में स्थापित है।

तिलौथू : डालमियांनगर से लगभग 25 किमी0 दक्षिण तिलौथू नामक एक स्थान है। यहां लगभग एक सौ वर्ष पुराना एक शिवालय बना है, जिसमें राम–लक्ष्मण–जानकी और हनुमान की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। यहां कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर पालतू जानवरों का एक माह का बड़ा मेला लगता है। मेले में इन पशुओं को नहला, धुला कर कई तरह से सजा कर लाया जाता है। यहां डोम, चमार, कोइरी, राजपूत, ब्राह्मण, लाला, लोहार, बनियां, मुसलमान आदि जातियां निवास करती हैं।

इन्द्रपुरी : इन्द्रपुरी ऐसे स्थान पर है जहां सोन नदी के पानी को रोकने के लिए एक विशाल बांध बनाया गया है जिसके कारण यहां का प्राकृतिक दृश्य अत्यंत सुहावना हो गया है। यहां कंक्रीट और लोहे का विशाल पुल बना

है। यहां से जहां तक दृष्टि जाती है प्रायः पानी और पहाड़ ही दिखलाई पड़ते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण यह स्थान सासाराम का मुख्य पिकनिक स्पाट बन गया है। बांध के पानी से नहरें निकाली गयी हैं जिससे सासाराम का अधिकांश हरा–भरा और सरसब्ज रहता है। यह पुल 4616 मीटर लम्बा है। जलाशय का स्तर 355 आयंल, बाढ़ स्तर 363.90 आयंल जलाशय की औसत गहराई 49 मीटर है। फाटक 60 x 14.5 मीटर आकार के 60 हैं।

तुतला भवानी : तुतला भवानी को भी ताराचण्डी का एक बहिन बताया जाता है। तुतला भवानी का मंदिर सासाराम से 32 किमी0 दक्षिण तिलौथू ग्गम से 8 किमी0 पश्चिम तुतराही जल–प्रपात के निकट स्थित है। चैत्र रामनवमी के अवसर पर यहां नवरात्र का बड़ा मेला लगता है। देवी के धाम में आकर लोग इलायची दाना, नारियल, चुनरी, मिठाई, पुष्पमाला आदि चढ़ाते हैं। यदा–कदा बलि चढ़ाने की प्रथा भी प्रचलित है।

सिरिया भवानी : सिरिया भवानी का मंदिर भी रोहतास में ही है जहां सावन में मेला लगता है। वहां पूजा–पाठ का आयोजन किया जाता है तथा बलि की प्रथा भी प्रचलित है। दशहरा के अवसर पर भी यहां मेला लगता है। देवी की प्रस्तर–मूर्ति एक फीट ऊंची है।

नौहट्टा : नौहट्टा रोहतासगढ़ से लगभग 15 किमी0 दूर नौहट्टा प्रखण्ड के अन्तर्गत बांदू ग्राम में पड़ता है। सासाराम से डेहसो, तिलौथू, रोहतासगढ़, अकबरपुर, बौलिया पहुंचने के बाद पूरब की ओर नौहट्टा नामक एक स्थान सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह सासाराम से लगभग 70 किमी0 दक्षिण स्थित है जहां हर वर्ष की पहली जनवरी को पिकनिक मनाने वाले इतने लोग एकत्र हो जाते हैं कि एक मेले का रूप धारण कर लेता है। यहां सोन, सरस्वती और कोयल नदियों का संगम होता है। कहते हैं यहां महर्षि विश्वामित्र ने यज्ञानुष्ठान किया था। नदी के मध्य एक चौतरा सा प्राकृतिक दृश्य बन गया है। यहीं से एक अस्पष्ट शिलालेख भी प्राप्त है।

यह भी कहा जाता है कि रावण ने स्वयं यहां आकर शिवलिंग की स्थापना की थी। यह शिवलिंग लगभग 22 सेमी0 ऊंचा है। शिवरात्रि के

अवसर पर भी यहां एक बड़ा मेला लगता है। रावण द्वारा स्थापित शिवलिंग को दशशीषानाथ के नाम से भी जाना जाता है।

इस स्थान का बान्द नाम भी निरर्थक नहीं है। कहते हैं शिव जी का सेनापति बन्दा था बन्धु ने अपनी सेना के साथ यहीं से सोण नद को पार किया था। उसी के नाम पर इस स्थान का नाम बन्धु घाट पड़ा जो बाद में बिगड़ कर बान्दो घाट हो गया।

भभुआ : भभुआ रोहतास जिले के दूसरे अनुमंडल का नाम है। भभुआ रोड (मोहनियां) रेलवे स्टेशन है जो जी.टी. रोड से जुड़ा हुआ है। भभुआ पहुंचने के लिए यहीं से दक्षिण की ओर एक सड़क जाती है। स्टेशन से भभुआ की दूरी 13 किलोमीटर है।

भभुआ से लगभग 11 किलोमीटर उत्तर–पश्चिम रामगढ़ ग्राम में प्राचीनकाल का माता मण्डेश्वरी का विशाल मंदिर है और भभुआ से लगभग 14 किलोमीटर पश्चिम चैनपुर ग्राम में राजा शालिवाहन के समय की हरसूब्रह्म की समाधि है।

विक्रमगंज : विक्रमगंज रोहतास जिले के तीसरे अनुमंडल का नाम है, जो सासाराम–आरा मार्ग पर एक बढ़िया बाजार के रूप में स्थित है। यह आरा से 57 किलोमीटर दक्षिण की ओर स्थित है।

इस क्षेत्र को कारुस क्षेत्र के नाम से भी जाना जाता है जिसका महत्व वैदिक कालीन है। इस अनुमंडल में पहले चेरो और खरवार जाति के लोगों का राज्य था। ये जनजातियां आज भी अपने को राजा रोहिताश्व का वंशज मानती हैं। मध्यकाल में उज्जैन से परमाल जाति के लोगों का यहां आगमन हुआ था। परमालों ने चेरो और खरवारों को युद्ध में पराजित कर भोजपुर नाम का गांव बसाया और उज्जैनियां सल्तनत की स्थापना की। ये भी अपने को राजा भोज का ही वंशज मानते थे। पराजित होने के उपरांत चेरो और खरवारों ने जंगलों और पहाड़ों पर जाकर शरण ली। ऐतिहासिक साक्ष्य के अनुसार लगभग 20 यशस्वी राजाओं ने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की है, जिनमें धारा और उज्जैन के राजा भी एक हैं। भोजवंशियों ने भोजपुर बताकर अपने पूर्वजों की

स्मृति में नवरत्न महल बनवाये जिनके अवशेष आज भी यहां विद्यमान हैं। लोगों का कहना है कि किसी सामन्त ने अपने पूर्वजों की स्मृति में विक्रमगंज नाम रखा होगा।

लोगों का कहना है कि महानद शोण की धारा पहले यहीं से होकर जाती थी, जिसके तट पर प्रवास–काल में भगवान श्रीराम का आगमन भी जानकी और लक्ष्मण के संग यहां हुआ था। यहां आज भी तमाम मंदिरों, मूर्तियों के प्राचीन अवशेष प्राप्त होते हैं। यहां शादी–ब्याह या अन्य अवसरों पर पंचबलि की प्रथा प्रचलित है जिसके अन्तर्गत कबूतर, मुर्गा, सूअर, खसी और सूअर के बच्चे की बलि चढ़ायी जाती है।

बरखण्डीनाथ बाबा : भलुनी–बरडीहा गांव के बीच भलुनी से एक किमी0 पश्चिम बरखण्डी नाथ बाबा का धाम है। यहां एक शिवलिंग और पास में पुराना पोखरा है।

बरवारी देवी : हरसूब्रह्म से लगभग 10 किमी0 दक्षिण एक पहाड़ी की तलहटी में बरवारी देवी का एक मंदिर है। यहां नवरात्र के अवसर पर एक बड़ा मेला लगता है। यहां रोगी, दुःखी, पीड़ित आते हैं। ऐसा विश्वास है कि मनौती मानने से भक्तों की मनोकामनाएं पूरी हो जाती हैं।

महावीर मन्दिर : सासाराम नगर में खनिजों के महाबीर स्वामी का एक पुराना मंदिर है। इस महाबीर को जगता महावीर के नाम से जाना जाता है। प्रत्येक मंगलवार को यहां भारी संख्या में भक्तगण उपस्थित होते और अपनी मनौती पूरी करते हैं।

मदुरना : चैनपुर से लगभग 5 किमी0 पश्चिम-दक्षिण की ओर एक स्थान मदुरना है। यहां एक पुरानी कब्र है जहां वर्ष में एक बार मेला लगता है। कहते हैं यह कब्र किसी फकीर की है, जो यहां रहते थे।

महादेव खोह : रोहतासगढ़ दुर्ग से लगभग 5 किमी0 दूर बौलियाग्राम के समीप भगवान शिव का एक प्राचीन मंदिर है। खोह में स्थित होने के कारण उसका नाम महादेव खोह पड़ गया है। यहां शिवरात्रि और बसंत पंचमी के

अवसर पर मेला लगता है, जिसमें मनोरंजन के विविध आयोजन किये जाते हैं।

श्रवण दाग : भभुआ तहसील के अंतर्गत अधौरा पहाड़ के समीप श्रवण दाग नाम का एक स्थान है, जहां एक अत्यंत सुन्दर कुण्ड बना हुआ है। कुण्ड में जल सतत् प्रवहमान रहता है और यह इतना सुस्वादु, आरोग्यवर्धक बताया जाता है कि दूर–दराज के लोग यहां आकर उसका पान करते हैं और यहीं लिट्टी-बाटी लगाकर पिकनिक का आनन्द लेते हैं।

कहते हैं यहां कभी पितृ–भक्त श्रवण कुमार का आगमन हुआ था। वे अपने माता–पिता को कांवर पर बिठाकर यहां आए थे। उनके माता-पिता को जब प्यास लगी तो श्रवण कुमार ने इसी कुण्ड का पवित्र जल उन्हें पिलाया था। इनके माता-पिता ने उनके पितृ-भक्ति की यहीं परीक्षा भी ली थी।

शेरगढ़ : यह स्थान गुप्ताधाम के ही समीप स्थित है। असका नामकरण भी शेरशाह के नाम पर शेरगढ़ पड़ा बताया जाता है। शेरशाह का आगमन यहां कभी हुआ था। धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के कारण उसने यहां एक गढ़ का निर्माण करवाया था ताकि गुप्ताधाम आने वाले तीर्थयात्रियों को आवासीय सुविधा प्राप्त हो सके। यहां एक शेर मंदिर भी है जो भगवानपुर से लगभग डेढ़ किमी0 पूरब स्थित है। यहां भगवान शिव का एक लिंग प्रतिष्ठित है जिसे यहां के लोग हर्ष कालीन बताते हैं।

सरगुजा

सरगुजा का इतिहास अत्यंत पुराना तथा गौरवशाली है। दसवीं शताब्दी में सरगुजा के इस पूरे टप्पे को डांडोर कहते थे। इसे बाद में झारखण्ड कहा जाने लगा। यह जंगलों–पहाड़ों से घिरा होने के कारण आदिम संस्कृति का केन्द्र रहा है।

प्रागैतिहासिक युग : सरगुजा का इतिहास बहुत कुछ अंधकारयुगीन है। यहां प्रागैतिहासिक कालीन संस्कृति के अवशेष गुफाओं में प्राप्त हैं। इन गुफाओं में जंगली जानवरों, पक्षियों, नर–नारियों, नृत्य–संगीत की चेष्टाओं, देवाराधना, यात्रा, गोचारण आदि से सम्बन्धित चित्र बने हैं।

रामायण–काल : सरगुजा को श्रीराम की कर्मभूमि माना जाता है। यहां अनेक ऐसे स्थल हैं, जो भगवान श्रीराम के जीवन–चरित्र से जुड़े हुए हैं। ऐसा माना जाता है कि भगवान श्रीराम वनवास के समय दण्डकारण्य में आए थे। यहां उन्होंने अपने क्रियाकलापों द्वारा दण्डकारण्य को अभयारण्य बना दिया था। यहां रामगिरि, सीता–बंगरा लक्ष्मण-बंगरा, वशिष्ठ गुरु आदि नाम के कई स्थान हैं जिनके आधार पर इतिहासकारों का अनुमान है कि श्रीराम प्रयाग से चलकर इसी रामगिरि, जिसे चित्रकूट कहते हैं, पर आ कर ठहरे थे।[1]

यह भी कहा जाता है कि इसी समय नर्वदा नदी के उत्तरी अंचल में सहस्त्रार्जुन महिष्मंडल का राजा राज्य करता था और उसकी राजधानी महिष्मती थी। सहस्त्रार्जुन चंद्रवंशी राजा था और उसने एक बार रावण को अपने घर में बांध रखा था जिससे हय–हय वंशियों की उत्पत्ति हुई। एक समय सरगुजा हय–हय वंशियों के अधीन था। यह भी कहा जाता है कि सहस्त्रार्जुन आखेट के लिए जमदग्नि ऋषि के आश्रम में आया था। उसने कामधेनु को प्राप्त करने की कामना की थी और न मिलने पर युद्ध छेड़ दिया था। अंत में जमदग्नि ऋषि को मार कर उनकी गाएं भी ले गया था। इस रण में महर्षि जमदग्नि की पत्नी रेणुका के विलाप के फलस्वरूप परशुराम ने घोर तपस्या की थी। इन्हीं देवी–देवता के नाम पर यहां प्रवाहित एक नदी का नाम रेणुका पड़ा है, जो उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद में जाकर चोपन के पास सोण नदी में विलीप हो जाती है।

महाभारत काल : सरगुजा में महाभारत के अवशेष प्राप्त होते हैं। कहते हैं, सरगुजा महाभारत काल (युग) में चेदि राज्य का अंग था। इस स्थान का संबंध शिशुपाल से जोड़ते हुए कहा जाता है कि वह विदर्भ के शासक भीष्म की कन्या रुक्मिणी के साथ अपना विवाह रचाना चाहता था। किन्तु श्रीकृष्ण के हस्तक्षेप के फलस्वरूप संभव न हो सका। इसी संदर्भ में श्रीकृष्ण और शिशुपाल में युद्ध भी हुआ। शिशुपाल उस युद्ध में मारा गया। डॉ0 हीरालाल का विचार है कि चेदि के एक भाग का नाम कुछ काल तक जेजाक मुक्ति या

1. सरगुजा का एक अध्ययन : समर बहादुर सिंह, पृ0–12

जझौती रहा, फिर बुन्देलखण्ड के नाम से प्रख्यात् हो गया। इस जनपद में कौरव और पाण्डव नाम की दो जनजातियां हैं। अज्ञातवास के समय पाण्डवों को खोजते हुए कौरवों का यहीं आगमन हुआ था।

जैन और बौद्ध-काल : प्राचीन काल का इतिहास ईसा पूर्व से शुरू होकर हर्षवर्द्धन की मृत्यु के साथ 647ई0 में समाप्त हो जाता है। इसी बीच जैन और बौद्ध धर्म का आविर्भाव हुआ। कहते हैं जैनधर्म के आदि प्रवर्तक वैशाली के राजकुमार वर्धमान थे जिनका जन्म ईसा पूर्व 540 के लगभग हुआ था। सरगुजा के रामगिरि पर्वत पर जो कलाकृतियां प्राप्त हुई हैं, उन्हें तत्कालीन माना जाता है। इस तथ्य की पुष्टि डा0 हीरालाल ने भी की है।[1]

जोगी मारा गुफा के भित्ति-चित्रों को कुछ विद्वानों ने दूसरी शदी ईसा पूर्व का ठहराया है। इस गुफा के पास सीताबोंगा गुफा है, जिसके बारे में किम्बदन्ती है कि यह कभी प्रेक्षागृह थी। इस गुफा में तीसरी शताब्दी ईसापूर्व के कुछ चित्र बने हुए हैं। इन चित्रों को जैन–धर्म से संबंधित माना जाता है।

मगध-साम्राज्य-काल : युद्ध-काल में मगध साम्राज्य की स्थापना एक महत्वपूर्ण घटना है। उस समय मगध में बिंबसार का शासन था। (ईसा पूर्व 543 से 491 तक) सरगुजा उस समय साम्राज्य का एक अंग था। अशोक का शासन 4 बड़े शूबों में विभक्त था जिसका सरगुजा भी एक अंग था। सरगुजा में रामगढ़ पर्वत के सीताबोंगरा गुफा में पालि अक्षरों में एक शिलालेख भी प्राप्त हुआ है, जिसे अशोक कालीन बताया जाता है।

इसी प्राकर मौर्यवंश के अंतिम राजा वृहद्रथ को मार कर ब्राह्मण सेनापति पुष्यमित्र ने भी दक्षिण में नर्वदा नदी तक अपने राज्य का विस्तार किया था। जैन राजा खारवेल से पराजित होकर पुष्यमित्र मथुरा की ओर भाग चला। सरगुजा में खारवेलों के कई प्राचीन धरोहर एवं अवशेष प्राप्त होते हैं जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि यह भू–भाग जैन राजा के अधीन था। इसके प्रमाण स्वरूप रामगढ़ के जोगीमारा के गुफा के भित्तिचित्रों को संदर्भित किया

---

1. मध्य प्रदेश का इतिहास (ना0प्र0स0काशी द्वारा सं0 1696 में प्रकाशित, पृ0–13

जाता है। शुंगकाल में यहां कला की काफी उन्नति हुई। चट्टानों को काट कर गुफाएं बनायी गयीं और उनकी दीवारों पर कलात्मक चित्र भी बनाए गए। इस काल के कला के नमूनें अजन्ता तथा सरगुजा राज्य में जोगीमारा की गुफाओं में पाए जाते हैं। 72 वर्ष ईसा पूर्व वासुदेव काण्व के गद्दी पर आसीन होने का साक्ष्य इतिहास में मिलता है। वह पाटलिपुत्र का शासक था। इस वंश का अंत सातवाहन द्वारा किया गया और यह सरगुजा इसके अधीन हो गया।

चौथी शताब्दी के आरम्भ में गुप्तवंश का उदय हुआ, जिसका पहला शासक चन्द्रगुप्त था। उसका पुत्र समुद्रगुप्त इतना पराक्रमी था कि उसने दिग्विजय की पताका फहरा दी। सरगुजा उस समय महाकौशल के अंतर्गत था जिसके शासक महेन्द्र थे। पराक्रमी समुद्रगुप्त ने राजा महेन्द्र को पराजित कर दिया। 375 ई0 के आस–पास समुद्रगुप्त ने राजा महेन्द्र को पराजित कर दिया। 375 ई0 के ही आस–पास समुद्रगुप्त का अंत होने के साथ उसका वीर बेटा चन्द्रगुप्त द्वितीय गद्दी पर बैठा। चूंकि उसके पिता कला और विद्या के प्रेमी थे इसलिए उसने अपने राज्य में कला और विद्या की प्रगति के लिए उन्मुक्त वातावरण तैयार किया। कालिदास जैसे महाकवि इस राजा के दरबार के शोभा थे। कहते हैं महाकवि कालिदास सरगुजा के इस वन्य प्रदेश से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने 'मेघदूतम्' जैसे काव्य की रचना कर डाली। कहते हैं, 'मेघदूतम्' का यक्ष सरगुजा के रामगिरि पर्वत पर रखा गया था। 'मेघदूतम्' में जो वर्णन उपलब्ध है, उसे रामगिरि से उज्जैन तक के प्रकृति चित्रण का प्रमाण माना जाता है।

राजपूतकाल : कला और संस्कृति की दृष्टि से राजपूतों का समय काफी समृद्ध माना जाता है। 650 से 1200 ई0 तक के इस युग में अनेक राजाओं ने अपने आश्रित कवियों को भी सर्वोच्च सम्मान दिया। 'उत्तररामचरितम्' के रचयिता महाकवि भवभूति यशोवर्मन के दरबार के रत्न थे। कुछ विद्वानों का मत है कि इस महाकाव्य की रचना भी भवभूति ने सरगुजा के रामगिरि नामक स्थान पर यशोवर्मन के समय में ही की थी। इस नाटक को अभिनीति करने के लिए काशी के श्रेष्ठ कलाकारों को आमंत्रित किया गया था। पालि भाषा में खुदे शिलालेख के अनुसार काशी के कलाकार देवीदीन ने यहां नाटक में भाग लिया

था। उनके साथ सुतनुका देवी दासी ने भी अभिनय प्रस्तुत किया था। कहते हैं सुतनुका की कला पर मुग्ध होकर देवीदीन ने उसके साथ विवाह का प्रस्ताव रख दिया था, किन्तु उसके द्वारा जब वह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया गया तो दुःखी होकर उस कलाकार ने उस नाट्यगृह में दो लकीरें खींच दीं ताकि उन लकीरों के माध्यम से वे अमर रहें।[1]

प्रतिहार काल : चंदेल वंश के अंतिम राजा परमाल के दरबार में आल्हा–ऊदल जैसे महान पराक्रमी योद्धा रहते थे। परमाल को पृथ्वीराज चौहान ने पराजित किया। देहली के कल्चुरि (चेदि अथवा हयहय) का राज्य महाकौशल में फैला हुआ था। त्रिपुरा उनकी राजधानी थी और उनका सबसे शक्तिशाली राजा गांगेयदेव विक्रमादित्य था। उसी के समकालीन मालवा के परमाल राजा भोज प्रथम प्रसिद्ध था। उसके समय,में ज्योतिष और साहित्य को पर्याप्त प्रोत्साहन मिला। गांगेयदेव ने उस पर आक्रमण किया पर पराजित हो गया। अंततः एक कहावत ही प्रसिद्ध हो गयी। **'कहां राजा भोज कहां गंगुआ तेली'।**

प्राचीनकाल के राजाओं में गांगेयदेव का नाम प्रमुख है। गांगेयदेव वीर तो था ही, उसने नेपाल और तिरहुत तक अपना प्रभाव जमा लिया। उस समय सरगुजा कल्चुरि के अधीन था। गांगेयदेव की मृत्यु के उपरांत उसका पुत्र कर्णदेव एक विद्वान् और साहित्यकार के रूप में चर्चित हुआ। वह उदार और कलाप्रेमी भी था। अपने समय में उसने काशी और अमरकंटक में कुछ मन्दिरों का निर्माण करवाया था। सरगुजा का देवगढ़ स्थित गौरीशंकर मन्दिर और बावली तथा डीपाडीह का शिव–मंदिर कल्चुरि–युग का ही बताया जाता है।

इस वंश में आगे चल कर कार्तिक राज तुम्मार्ण का लड़का कमलराज और उसका लड़का रत्नदेव हुआ जिसने रत्नपुर को अपनी राजधानी बनायी। उसका नाती जाजलयदेव प्रथम बड़ा प्रतापी हुआ। उसने रत्नपुर के आसपास के राज्यों को जीत कर एक राजधानी बना ली और अमरकंटक से लेकर गोदावरी तक और बरार से लेकर उड़ीसा तक अपना राज्य–विस्तार कर लिया।

1. भारत की चित्रकला (ना0प्र0स0 काशी से प्रकाशित (1996) पृ0–11–12

उसके दाहिना हाथ थे जगपाल देव जो बड़हर (मिर्जापुर जनपद का एक परगना) का रहने वाला था। इस जाति का राजमाल था। राजिम शिलालेख के अनुसार जगपाल पहले भाट्ट विलास (बघेलखण्ड) डांडोर सरगुजा (22 डांडोर एमिस) में जमींदारियां थी और श्रेरमा (पेंडरा जमींदारी) को सर कर लिया।

मुस्लिम-काल (1193 से 1760 तक) : राजपूत-काल के अवसान के साथ ही मुस्लिम-काल का उदय हुआ। सम्राट् अकबर (1556 से 1605ई0) के समय में भी कला-कौशल को पर्याप्त प्रोत्साहन मिला। इसी युग में सरगुजा जनपद मुस्लिम शासन के अंतर्गत आया। अपने शासन की सुविधा के ख्याल से अकबर ने अपने राज्य को कुल 15 शूबों में विभाजित किया था जिसमें सरगुजा इलाहाबाद शूबा के अंतर्गत था। उसी समय हिन्दुओं में मतभेद उठ खड़ा हुआ। परिणामतः स्थान-स्थान से शासन के प्रति विद्रोह की ज्वाला फूटने लगी। शिवाजी के नेतृत्व में मराठों ने खुलकर उनका विरोध किया। मराठा सैनिकों ने लूटपाट की भी कई घटनाएं कीं। सरगुजा भी मराठों द्वारा लूटा गया।

मराठा-युग : मराठा-युग का उदय 17वीं शताब्दी से शुरू होता है। शाहजी भोंसला बीजापुर के राजा के जनरल थे। उनके पुत्र शिवाजी ने मराठों का राज्य स्थापित किया और स्वयं दक्षिण भारत के राजा बन बैठे। उन्होंने अपने पराक्रम से 1680 तक राज्य किया। सन् 1741 में भास्कर पंत ने देवगढ़ राज्य का इलाका चांदा छत्तीसगढ़ रत्नपुर को बिना किसी लड़ाई के सर कर लिया। रत्नपुर के साथ ही साथ सरगुजा का किला भी रघु जी भोंसला के शासन के अंतर्गत आ गया। रघु जी इतने पराक्रमी थे कि उनके राज्य का विस्तार पूरब में बंगाल की खाड़ी, पश्चिम में अजंता की पहाड़ी उत्तर में नर्मदा और दक्षिण में गोदावरी नदी तक हो गया था।

ब्रिटिश–युग : (1773 से 1843 तक) सन् 1817 में जब नागपुर के भोंसले राजा ने सरगुजा राज्य अंग्रेजों को सौंपा तो उस समय भारत में लार्ड हेस्टिंग गवर्नर जनरल था। उस समय सरगुजा जिले में 3 देशी

रियायतें थीं। सरगुजा, कोरिया और चांगभखार। उस समय सरगुजा में महाराजा बलभद्र सिंह राज्य करते थे।

सरगुजा-राज्य : सरगुजा राज्य की उत्पत्ति सन् 194 ई0 से बतायी जाती है। इतिहासकारों का कहना है कि उस समय सरगुजा में द्रविण जातियां निवास करती थीं जिनमें से मुख्य हैं खैरवार, कंवर, गौड़, कोरवा, लोराकु, किसान, मुंडा आदि। इन लोगों का खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार, तौर-तरीका और शासन-प्रबंध, शिक्षा-दीक्षा के अभाव में पिछड़ा हुआ था।

किसान, उरांव-वगावत : साम्हरी तहसील में कई गांवों में किसान और उरांव जातियों की घनी बस्ती है। सन् 1915 ई0 में ताना भगत आंदोलन इस क्षेत्र में चला जिसके अनुसार यहां के लोगों को शराब का सेवन न करने के लिए निर्देशित किया गया। ये जातियां सफेद रंग के बकरे की पूजा करती थीं। गांव के लोग किसी सार्वजनिक स्थान पर एकत्र होकर ताना गीत गाते तथा हिन्दू देवी–देवताओं को संदर्भित करते हुए उनके प्रति भक्ति के गीत गाते हुए नृत्य करते थे। उनके हाथ में एक लम्बा बरछा होता था, जिससे वे भूत–प्रेत तथा अन्य बीमारी आदि का निवारण करते थे। इन राजवंशियों ने अपने-अपने स्थान की समृद्धि के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य भी किए—जैसे मन्दिरों का निर्माण, तालाबों का निर्माण। कोर्ट, कचहरियां और स्कूल बनवाना, अपने आवास के लिए गढ़ों का निर्माण आदि।

लाल विन्देश्वरीप्रसाद सिंह ने प्रतापपुर को एक सुन्दर नगर बनाया और वहां तालाब, राजमहल राज मंदिर सड़कें और इमारतें आदि बनवा कर जनहित में अनेक कार्य किया। प्रतापपुर एक राजधानी थी। जहां से रांची एवं दिल्ली को सड़कें जाती हैं।

चांगभखार के राजवंश : चांगभखार कोरिया स्टेट के जमींदारों का इलाका था। यह इलाका सन् 1819 ई0 में ब्रिटिश सरकार के अधीन हुआ जिसे सन् 1948 ई0 में एक अलग राज्य मान कर वहां शासन करने वालों को 'भैया' की पद्वी देकर सम्मानित किया गया। तब से इस राज्य के पांच राजा हुए। भैया मान सिंह, भैया जगजीत सिंह, भैया बलभद्र सिंह, भैया

महावीर सिंह और भैया कृष्णप्रताप सिंह जू देव।

झिलमिली चौहान-वंश : चौहान वंश-श्रेष्ठ भैया दल थम्मन शाह मैनपुरी राजा के भाई थे। सरगुजा महाराज से झिलमिली इलाके को पार कर इन्होंने वहां अपना गढ़ तैयार कर लिया था। उनके छोटे भाई धीरेन शाह कोरिया के राजा हुए। भैया दलथम्मन शाह के वंश में 14 भैया हुए जिनके नाम भैया शम्भूशाह, भैया शंकरशाह, भैया छत्रशाह, भैया अमरशाह, भैया किन्नरशाह, भैया भीष्मशाह, भैया हरिहरशाह, भैया दीपनाथ, भैया फतेनारायण सिंह, भैया गोपाल सिंह, भैया शिवप्रसाद सिंह हैं। भैया फते नारायण सिंह की माता भी श्रीमती प्राणकुंवर बड़ी शती–साध्वी थीं।

सांस्कृतिक महत्व के स्थल

अमृतधारा : हसदो नदी के तट पर जंगल–पहाड़ के.बीच अमृतधारा नाम का एक गांव है। इस गांव में स्टेट की जमीन पर एक शिव-मंदिर है जिसमें शिव की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यहां एक झरना है और काले रंग का छोटा शिवलिंग भी बहुत पहले का स्थापित किया गया था। शिवरात्रि के अवसर पर आयोजित मेले में बैकुण्ठपुर से ही नहीं, अपितु और भी स्थानों के लोग यहां आते हैं। यह स्थान बैकुण्ठपुर से 20 किमी0, नागपुर से 61 किमी0 दूर है।

कन्दरी : कुसुमी में कनहर के तट पर कन्दरी नामक एक स्थान है जो चांदो के पास स्थित है। यहां पंचदेव मन्दिर है जिसमें कलात्मक मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। प्रतीत होता है कि विगत वर्षों में इन पुराने मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया गया था।

कुद्दरगढ़ : सूरजपुर तहसील का कुद्दरगढ़ सांस्कृतिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण ग्राम है, जिसे मनौती–धाम के नाम से विशेषित किया जाता है। यह स्थान प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत मनोरम है और एक ऊंची पहाड़ी पर स्थित है। धाम तक पहुंचने के लिए सकरे रास्ते से गुजरना होता था। देवी की यह मूर्ति पत्थर की एक चट्टान पर बनी हुई है। सकरा स्थान होने के कारण कुछ ही दर्शनार्थी वहां पहुंच पाते हैं। यहां एक झरने का नाम 'कपिल धारा' है जो

लगभग 8 मी0 की ऊंचाई से नीचे गिर कर सुरम्य झरना का रूप धारण कर लेती है। झरने का जल सुस्वादु, पौष्टिक और आरोग्यकारक बताया जाता है। यहां चैत्र रामनवमी कें अवसर पर एक बहुत बड़ा मेला लगता है।

कुद्दरगढ़ देवीधाम के पास किले का ध्वंशावशेष दिखलाई पड़ता है जिसके बारे में लोगों का कहना है कि इसका निर्माण राजा बालन्द ने अपने समय में कराया था। इस राजा के संबंध में एक महत्वपूर्ण बात यह बतायी जाती है कि यह कुंआ खोदकर या खुदवा कर ही पानी पीता था। बालन्द शाह कला-प्रेमी शासक थे जिसका परिचय ध्वंशावशेष किलों में प्राप्त मूर्तियों से मिल जाता है। वहाँ खण्डहर के अवशेष तथा दीवारों में यत्र-तत्र देवी-देवताओं की कलात्मक प्रतिमाएं निर्मित हैं। कुद्दरगढ़ स्थान भैयाथान से लगभग 20 किमी0 दूर है और सरगुजा के ऐतिहासिक स्थलों में से एक है।

कुसुमी : सरगुजा जनपद की गलफुला नदी के समीप कुसुमी एक तहसील है, जो पहाड़ की काफी ऊंचाई पर बनी है। यहीं एक स्थान सामरी के नाम से भी जाना जाता है जो कुसुमी से भी अधिक ऊंचाई पर स्थित है। यहां गर्मी में भी ठण्ड पड़ती है। यहाँ एक कच्चा तालाब और उसके तट पर एक मंदिर है। यह स्थान राजपुर से 57 किमी0 दूर है तथा समुद्र की सतह से 18000 मीटर ऊंचा है। कहते हैं, एक सर्वेक्षण में यहां तेल का भंडार भी मिला है।

कैलाशं गुफा : अम्बिकापुर से बतौली-सीतापुर मार्ग पर एक पहाड़ी स्थान है, जिसे कैलाशगुफा के नाम से जाना जाता है। गुफा के अन्दर शंकर भगवान की प्रतिमा स्थापित है। यहां पहुंचने के लिए गुफा के अन्दर लगभग 30 मीटर तक अंदर ही अंदर झुक कर जाना पड़ता है। गुफा के ही अंदर एक छोटा सा मंदिर और उसमें शिवलिंग है और एक झरना सतत प्रवाहित होता रहता है। इस स्थान से लगभग 3 किमी0 पूरब राजपुर नामक स्थान पर घाघिया झरना के समीप मेला लगता है। झरना का पानी काफी ऊंचाई से गिरकर प्रपात बनाता है।

हरया टोला : शंकरगढ़ से 3 किमी0 दूर उत्तर की ओर हरया टोले में

एक मेला शिवरात्रि के अवसर पर लगता है। यहां 20 सेमी0 ऊंचा काले पत्थर का एक शिवलिंग स्थापित है। इसे 'कोठी पत्थर' भी कहते हैं और कहा जाता है कि यहां पत्थर की कोई कोठी बनी थी जो खण्डहर के रूप में बदल गयी। यहां सूर्यदेव की एक मूर्ति है तथा ऊपर धनुषवाण बने हुए हैं। कुछ लोगों का कहना है कि राम–रावण–युद्ध यहीं हुआ था।

यहां के निवासियों में अहीर मुख्य है। ये लोग लोरिकी सोहराई नाचते हैं। दीवाली के दूसरे दिन अपने पालतू पशुओं को खेल खिलाते हैं और इस निमित्त सुअर–सामर के चमड़े में भूसा भरकर उसे पशुओं के समक्ष दिखाकर उन्हें भड़काते और भैंसों को लड़ाते हैं। इस दिन वे रात भर गायन का आयोजन करते हैं।

चांददेवी : इस पूरे क्षेत्र को इसी देवी के नाम से 'चांद–भखार' कहकर पुकारा जाता है। चांद देवी का स्थान जनकपुर मुख्यालय से 7 किमी0 पूरब कोटाडोल-भगवानपुर ग्राम के समीप स्थित है। कहते हैं इस देवी की स्थापना यहां के राजा ने अपने कुल–देवी के रूप में की थी। एक सज्जन के अनुसार चांददेवी की स्थापना सन् 1000 ई0 में की गयी थी। मंदिर में चांद देवी की मूर्ति एक जिह्वा की तरह मात्र 14x13 सेमी0 के आकार की स्थापित है। चांददेवी के सामने स्थापित करके उसके पीछे एक शिला खड़ी कर दी गयी है, जिससे मूर्ति का एक आकार बन गया है। यह शिला-खण्ड 73x22 सेमी0 के आकार का है। यहां चैत रामनवमी को मेला लगता है। देवी को त्रिशूल या बाना चढ़ाया जाता है। मनौती पूरी हो जाने पर भक्त देवी की विधिवत पूजा करता है। कहते हैं देवी की यह प्रतिमा समीपस्थ एक पहाड़ी से लाकर यहां स्थापित की गयी है। वास्तव में यहां के राजा का दुर्ग भी उस पहाड़ी पर था जहां आज भी खण्डहरों के अवशेष प्राप्त होते हैं।

14 जनवरी को मकर संक्रान्ति के अवसर पर यहां मेला लगता है। यहाँ पात्र के टुकड़े, चूड़ियों के टुकड़े, सिक्के और कोयले की जली हुई राख भी मिलती है। इस स्थान को 'चुटकी भंवरपुर' के नाम से भी जाना जाता है।

एक किम्बदन्ती के अनुसार इस खण्डहर के भीतर इतनी सम्पत्ति छिपी

हुई है कि यदि उसे निकाल लिया जाये तो ढाई दिन तक सारे संसार के लोगों को भोजन दिया जा सकता है। इस पहाड़ की ऊंचाई एक आलेख के अनुसार 909 मीटर है। इस ऊंचाई पर पहुंचने के बाद हवा इतनी तेज चलती है कि उसमें सांस लेना भी कठिन हो जाता है।

छतौड़ा : छतौड़ा एक गांव का नाम है, जो जनकपुर से 45 किमी0 दूर कोटाडोल मार्ग के कमर्जी मार्ग पर एक मैदान में बसा हुआ है। यहां हनुमानजी की एक आदमकद विशाल मूर्ति स्थापित है। सीतामढ़ी की ही तरह पहाड़ी को खोदकर यहां मूर्तियां तराशी गयी हैं और गुफाएं भी बना दी गयी हैं। गुफा के अंदर छोटे–छोटे शिवलिंगों की स्थापना की गयी है।

ऊपरी नाले के पास एक पहाड़ी पर चांददेवी के मार्ग में जाते समय बायीं ओर एक छोटी पहाड़ी के ऊपर एक मंदिर का निर्माण अभी हाल में किया गया है। उसमें हनुमानजी की एक मूर्ति स्थापित है। यह इतनी पुरानी है कि हनुमानजी की आकृति स्पष्ट नहीं दिखती। इस प्रस्तर–प्रतिमा का आकार 84x53x20 सेमी0 है।

जनकपुर : जनकपुर का नाम आते आज भी मन में रोमांच हो आता है। यह स्थान इतना पिछड़ा हुआ है कि आज भी गांव का आदमी शहर के आदमी को देखकर दूर भाग जाता है। हम जिस रास्ते से जनकपुर पहुंचे थे, उसके आसपास माथमोर, कुआरपुर, ककरेजी, कोइलारा, आरा, तोजीतोजा, रामगढ़, छपरा–टीला, कंजिया, जैथान, गाजर पतवाही, जलडोल आदि गांव बसे हैं। यहां बैगा, गौड़, अहीर, चमार, पठारी, पनिका, भूर्तिया आदि जातियां निवास करती हैं। ये लोग अपने आनन्द–आह्लाद के लिए गोड़िन, शैला, करमा, अहिरही, आदि नृत्य दशहरा, दीवाली तथा अन्य पर्वों पर करते हैं। राम जियावन प्रसाद त्रिपाठी, हाई स्कूल के प्रधानाचार्य ने बताया कि यहां की पलिहा जाति आज भी मांसाहार पर ही जीवित है। ये लोग पौढ़ी, खिड़की, भुमका, लंगोटी लगाते और जंगल में रहते हैं। अपनी जातीय प्रथाओं के प्रति ये इतने कट्टर हैं कि उनके जाति की कोई लड़की यदि भगा दी जाती है तो भगने और भगाने वालों को कड़ा दंड देते हैं, उनका स्थान परिवर्तन कर दिया

जाता है। ये लोग आज भी धनुष–तीर और कुल्हाड़ी से जंगली जानवरों का शिकार करते हैं।

टांगीनाथ : सरगुजा मुख्यालय से लगभग 78 किमी0 दूर डीपाडीह नाम का एक स्थान है। हीपाडीह से कुसुमी मार्ग पर लगभग 21 किमी0 दूर कुसुमी से 21 किमी0 तक पदयात्रा करने के बाद इस स्थान पर पहुंचा जा सका था। यहां प्राचीन काल की कलात्मक मूर्तियां तथा 108 शिवलिंग प्राप्त हैं जिनमें से शिव, दुर्गा की मूर्तियां मुख्य हैं। इसके अलावा तलवार, त्रिशूल, लौह–अवशेष तथा हवन–कुण्ड प्राप्त हुये हैं। यह स्थान पहाड़ के ऊपर स्थित है। आश्चर्य होता है कि सैकड़ों वर्ष पूर्व यहां इन दुर्लभ मूर्तियों, कलात्मक वस्तुओं को कैसे लाया गया होगा। मन्दिरों का निर्माण चट्टानों को तराश कर किया गया है। शिवरात्रि के अवसर पर यहां 3 दिन का बड़ा मेला लगता है।

रमदा चुटकी : यहां रमदा चुटकी नाम का एक स्थान काफी प्रसिद्ध है। यहाँ कुछ प्रस्तर-मूर्तियां पहाड़ की चट्टान को खोदकर बनायी गयी है। गुफा के पास से ही एक झरना बहता है।

तमोड़ पहाड़ : सरगुजा जनपद में तमोड़ पहाड़ नाम का एक स्थान है जिसके ऊपर एक मंदिर बना है। इस स्थान के बारे में तरह–तरह की किम्बदन्तियां प्रचलित हैं। कहते हैं, मन्दिर का दरवाजा, फाटक और उसके सामने का नगाड़ा जो पत्थर के रूप में वर्तमान है, कभी लकड़ी के रूप में था। यहां सांप के कटे हुएं सात टुकड़े भी प्रस्तर खण्ड के रूप में प्राप्त हैं। यह नाग लोगों का स्थान था। यहां से लगभग दो किमी0 पूरब-उत्तर के कोण पर चन्द्रमेढ़ा नामक स्थान पर आज भी नाग देवता रहते हैं। वहां जाने का मार्ग सकरा है। उसके भीतर दह है।

तातापानी : यह स्थान सरगुजा जनपद के रामानुजगंज तहसील में मुख्यालय से 11 किमी0 दूर स्थित है। यहां पहाड़ी के अंदर से जल का एक श्रोत निकलकर बाहर आता है जिसका पानी गर्म, सुस्वादु, पौष्टिक और तमाम रोगों में गुणकारी माना जाता है। गर्मी हो या ठंड इस पानी का तापक्रम एक समान रहता है। अप्रैल के महीने में यहां दूर–दराज के लोग आकर स्नान

करते हैं।

देवगढ़ : अम्बिकापुर तहसील के एक गांव का नाम देवगढ़ है जिसे कुछ लोग देवरिया के नाम से भी जानते हैं। यहां कुछ टीले हैं जिसे 'टिकरा' कहकर पुकारा जाता है। यहां देवी-देवताओं की मूर्तियां इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं। इस स्थान के सर्वेक्षण से ऐसा प्रतीत होता है कि यहां किसी मन्दिर का निर्माण कराया गया होगा। यह ग्राम रेण नदी के तट पर स्थिति है। कहते हैं यहीं एकादश रुद्र की स्थापना की गयी थी और कुल ग्यारह मंदिर थे। उन सब में शिव प्रतिमाएं प्रतिष्ठित थीं।

'यो वसेत् टिकरा ग्रामे, शंकरः कुरुते जयेत्।
पंचाक्षर जयेत्मन्त्रं, नरः मुक्तिर्अवाप्नुयात्॥
देवगढ़ स्थितो यो ते, पातकं कुरुते नर :।
योनि प्रविश्य पैशाची, वर्षाणां मधुतायुतम्॥

पटना : भैयाथान से एक रास्ता ग्रामीण इलाके से होता हुआ पटना चला जाता है। इस रास्ते के दोनों ओर खेती के योग्य जमीने हैं और इससे हट कर दोनों ओर ऊंची नीची पहाड़ियां भी हैं। पटना आम, महुआ की बारी वाली एक घाटी में बसा है। इस क्षेत्र में तुरिया नाम की एक जाति डलिया बनाने का काम करती है जिन्हें अन्य स्थानों पर बंसोर, ढरकार कहते हैं। तुरिया लोगों ने बांस की बनी डलिया के अतिरिक्त सूपा, बेना, पुटला, हाथ का कंगन, सिर पर बोझ रखने के लिए मेड़री, विठवा आदि वस्तुएं अपनी दुकान पर सजा रखे थे। इस बाजार में सिधरी मछलियां तल कर बेंची जा रही थीं। यहां के आदिवासी शादी-व्याह में डफला बजाकर मड़वा के नीचे विशेष प्रकार का नृत्य प्रस्तुत् करते हैं। उनके पांवों में घुंघरू और पैरी बंधी होती है। वे गजरिया बांधते हैं। सीने पर कौड़ी गूंथ कर बांधते हैं। हंसराज बसोर ने बताया कि यहां के लोग उधुआ, डोमकच, झूमर, ठुमका, ददरिया आदि नाच नाचते हैं, किन्तु करमा नहीं करते। ये लोग किसी भी आकार-प्रकार के प्रस्तर-खण्ड को देवी-देवता मानकर उसकी पूजा करने लगते हैं। वहां वे या तो त्रिशूल गाड़ देते हैं या लाल रंग का झंडा बांस में लगाकर जमीन में गाड़ देते हैं।

प्रतापपुर : प्रतापपुर सरगुजा जनपद का तहसील मुख्यालय है। यह अंबिकापुर वाराणसी मार्ग पर सरगुजा और वाड्रफनगर तहसील के मध्य एक पहाड़ी क्षेत्र में स्थित है। जंगल पहाड़ से घिरे होने के कारण इसका प्राकृतिक सौंदर्य अत्यंत मनोरम है। यहां खेती–बारी भी होती है, जो अभो भी बहुत कुछ पारंपरिक है। सांस्कृतिक दृष्टि से यह स्थान आरंभ से ही जनजातीय क्षेत्र होने के कारण काफी महत्वपूर्ण रहा है। यहां के पुरावशेष इस बात के प्रतीक हैं कि यह स्थान मूर्तिकला एवं स्थापत्यकला की दृष्टि से काफी समृद्ध रहा है।

मेले-ठेले

प्रायः हर आदिवासी क्षेत्र में मेलों-ठेलों की परंपरा आरंभ से ही रही है। इसका कारण यह है कि आदिवासी जातियां रोज कुंआ खोदती और रोज पानी पीती हैं। उद्योग–धंधों में अथवा ठेकेदारी के अधीन काम करने के फलस्वरूप प्राप्त साप्ताहिक मजदूरी से वे प्रायः एक सप्ताह के लिए अपने दैनिक जीवन में, उपयोग आने वाली वस्तुएं खरीद कर रख लेते हैं और इसके लिए स्थानीय बाजारें लगती हैं। प्रतापपुर और उसके आसपास लगने वाली बाजारों का विवरण निम्नवत् है :

1. रविवार, परसवार, 10 किमी, चलगली के पास पूरब, 2. रविवार, वाड्रफनगर, लगभग 50 किमी0, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 3. सोमवार, गोविन्दपुर, 20 किमी0 उत्तर, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 4. मंगलवार, देवती, (गोविन्दपुर के पास), दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 5. मंगलवार, गोपालपुर, राजपुर रोड पर 16 किमी0 पूरब, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 6. बुधवार, बरती, वाड्रफनगर की ओर 25 किमी0 दूर, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 7. गुरुवार, कीरता, 22 किमी0 दक्षिण, अम्बिकापुर की ओर, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 9. शुक्रवार, सलका, सूरजपुर से आगे, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 10. शुक्रवार, प्रतापपुर, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 11. शुक्रवार, लडोरी, 50 किमी0 दूर, अम्बिकापुर से 16 कि0मी0 पहले, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, 12. शनिवार, भैंसामुड़ा, प्रतापपुर से 14 किमी0 दूर, दैनिक

उपयोग की वस्तुएं, 13. शनिवार, चलगली, लगभग 10 किमी0 दूर, दैनिक उपयोग की वस्तुएं।

इस क्षेत्र में शिवरात्रि के अवसर पर प्रतापपुर से लगभग तीन किमी0 दूर शिवपुर नामक स्थान पर एक बड़ा मेला लगता है, जिसमें दूर–दूर के हजारों दर्शनार्थी आकर मेले में सम्मिलित होते हैं। जंगल और पहाड़ के बीच में अवस्थित यह स्थान इस क्षेत्र का सबसे प्रमुख स्थान है।

बैकुण्ठपुर : बैकुण्ठपुर सरगुजा का सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यहां कई ऐसे स्थल हैं जिनके बारे में लोगों की तरह-तरह की धारणाएं हैं। यहां प्रेमाबाग के एक मंदिर में कोरिया राजा के समय का एक शिवलिंग स्थापित बताया जाता है। यहां गेज नदी प्रवाहित होती है। इसके तट पर कुछ नयी मूर्तियों की स्थापना अभी हाल में की गयी थी। 12 खम्भों पर टिके इस मंदिर में कई कलात्मक पत्थर लगाए गए हैं। मन्दिर का आकार 3X3X6 मीटर है जिसके अंदर संगमरमर का शिवलिंग नदी के तट पर स्थापित है।

भैयाथान : सूरजपुर से लगभग 22 किमी0 दूर भैयाथान नाम का एक स्थान है। यहां की दीवारों पर गोबर, माटी, चूना के बने कई सुन्दर चित्र दिखाई पड़े थे। दुर्गा–पूजा के अवसर पर यहीं नहीं, जनपद के अन्य कई भागों में भी दुर्गा–प्रतिमाओं की पूजा के उपरान्त मूर्तियों का विसर्जन किसी बड़ी नदी में कर दिया जाता है। यहां रेण नदी बहती है।

पुरानाधाम : कुदरगढ़ से कुछ दूरी पर विजयकुण्ड नामक स्थान है। यहां से दाहिनी ओर जंगल में एक पहाड़ पर झरने के पास पुरानाधाम नाम से एक स्थान प्रसिद्ध है। वहां कटी हुई एक विशाल चट्टान है, उसके सामने हवनकुंड और एक अस्पष्ट शिलालेख है। यहां विभिन्न आकार–प्रकार के कुछ शिलाखण्ड हैं, जिन्हें राजा बालन्द की पलंग और कुर्सी की संज्ञा दी जाती है। यहीं कोहबर नाम की एक गुफा है जिसकी दीवारों पर गेरू रंग के कुछ चित्र, कलश, पुष्प, चौक आदि बने हुए हैं। ये चित्र बाद के प्रतीत होते हैं।

मनेन्द्रगढ़ : महाराजा कोरिया द्वारा बसाई मनेन्द्रगढ़ एक बाजार है। यहां कुछ स्थानों पर साप्ताहिक बाजारें लगती हैं। यथा :—मनेन्द्रगढ़ बुधवार, विहारपुर, नागपुर, विजुरी गुरुवार, परवसपुर, वरवार, शुक्रवार, किलहारी, पटना–शनिवार, घुटरा, पटना–रविवार, पौड़ी, कालरी कचैड़ सोमवार, चिरमिरी मंगलवार। मनेन्द्रगढ़ में अब कुछ मंदिर भी बन गए हैं।

मनेन्द्रगढ़ इलाके में कुछ कलात्मक वस्तुएं देखने को मिली थीं। जैसे–बैलगाड़ी, यहां की बैलगाड़ियां मंदिरनुमा बनी होती हैं, जिन्हें बैल या भैंसे खींचते हैं। इनकी पहिया चौकी नुमा चौड़ी काठ की बनी होती हैं जिसमें पच्चीकारी करके कुछ चित्र बने होते हैं। इस प्रकार यहां 'बढ़ावन देव' देखने को मिले थे।[1] उनकी पूजा खनिहान में खलिहानी के बाद अन्न राशि पर रखकर गुड़-घी होम करके की जाती है। ऐसे ही यहां कुछ 'धोख' भी मिले थे।[1]

मनेन्द्रगढ़ से जनकपुर की यात्रा सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हुए जोखिम भरी भी थी। एक बार यात्रा करते हुए हम जंगल में भूल गए और जीप में जितना तेल था समाप्त हो गया। सूर्यास्त होने को आया। जंगल इतना भयानक था कि हर 10 कदम पर नदी, नाले पड़ते थे, किन्तु उनमें पानी नहीं था, इसी कारण चिड़िया, चुनमुन की सुनगुन भी नहीं मिलती थी। बड़े संयोग से हाथी पर सवार एक महात्मा जी आए और उन्होंने दो लीटर मिट्टी का तेल मुझे दिया जिससे हमारी गाड़ी जंगल से बाहर आयी और हमारी जान में जान भी आयी। हमारी गाड़ी जिस नदी में खराब हुई थी उसका नाम कपरकूटा था और हम अपने करम कूट रहे थे। इस वन में खतरनाक पशु मिले थे, लूट-पाट का भय था। यहां एक ऐसी वन्य जाति निवास करती है, जिसने कभी अन्न का स्वाद नहीं लिया था, ऐसा बताया गया। यहां नंग-धड़ंग 'पंडा' आदिवासी देखे गये थे।

राजमहल : यहां रामानुज 'विलास-पैलेस' का निर्माण किया गया है जिसके ऊपर रामचन्द्र सिंह देव अंकित है। यह महल कला की दृष्टि से बहुत

1. उ0प्र0 में आदिवासी बढ़ावन देव को बड़ादेव कहते हैं।

महत्वपूर्ण है। पूरा महल लगभग दो एकड़ भूमि पर मन्दिरनुमा गुम्बदों के आकार का पत्थर का बना है। इसका बार्जा लोहे का है जिसमें फूलपत्ती की सुन्दर सजावट की गयी है। महल की कुर्सी सवा मीटर ऊंची है। पूरा महल दो छतों में निर्मित है। महल का अनुपातिक आकार 20x50x20 मीटर है। सचमुच इसे बैकुण्ठपुर ही कहा जा सकता है। महल की खिड़कियां दक्षिण की ओर हैं। कुल 12 नीचे और 12 ऊपर खिड़कियां बनी हैं। सामने कुल 14 विशाल-द्वार हैं। इस प्रकार दूसरी ओर भी दरवाजे बने हुए हैं, जिनमें सागौन के नक्काशीदार चौखट और दरवाजे लगे हुए हैं। सभी द्वार मंदिरनुमा कलात्मक बने हैं। दाहिनी ओर के गैलरी में प्रवेश करने पर प्रथम कक्ष में बारहसिंगा, जंगली भैंसा आदि के सींग और मस्तक जड़े हुए हैं।

महल के बाहर तालाब के तट पर गुम्बदाकार दो मन्दिरों का निर्माण उसी समय का किया गया है। ये दोनों मन्दिर एक में मिले हुए हैं, जिनका आकार 12x10 मीटर है। मंदिर में शिव की प्रतिमा प्रतिष्ठित है।

मनेन्द्रगढ़ के आसपास 'पण्डे' लोग निवास करते हैं। पण्डो के अतिरिक्त गोंड, कोरवा, उरांव, पनिका, धसिया आदि जनजातियां भी निवास करती हैं। मनेन्द्रगढ़ के आसपास के कुछ प्रमुख सांस्कृतिक स्थल निम्नलिखित हैं—

जटाशंकर : चपली पानी या जटाशंकर नामक स्थान मनेन्द्रगढ़ से लगभग 60 किमी0 पूरब स्थित है। यहां शंकरजी की एक लम्बी गुफा है। यह चपली पानी रोड से 2 किमी0 दूर है जहां पहुंचने के लिए गुफा के अंदर लेट कर जाना पड़ता है। यहां दो कुण्ड, नाले, झरने भी हैं। लोगों का कहना है कि यहां शेर आकर पानी पीते हैं। इस गुफा के चारों ओर पहाड़ियां हैं। कुण्ड का पानी दूध के समान सफेद, सुस्वादु और निर्मल है। यह एक-एक बूंद गिरता है जो वर्षा के दिनों में धार के रूप में बदल जाता है।

सरौली : यह स्थान बेलमहरा के समीप लगभग 10 किमी0 दूर उत्तर की ओर हासदो नदी के तट पर स्थित है। यहां एक पुराना मंदिर निर्मित है। हनुमानजी की एक मूर्ति बाद में स्थापित की गयी जिसे कोरिया के राजा द्वारा

बनवाया गया था। दीपावली के बाद एकादशी के दिन यहां एक बड़ा मेला लगता है।

सिद्धबाबा का मन्दिर : मनेन्द्रगढ़ बाजार के समीप एक ऊंची पहाड़ी पर सिद्धबाबा का मंदिर है। यहां कोयले की खदान मिलने की संभावना थी। अतः किसी अंग्रेज ने ज्योंही उसे खुदवाना शुरू किया, उसे बार–बार स्वप्न होने लगा कि इसे मत तोड़ो, लेकिन इसके बाद भी खुदाई होती रही। फलस्वरूप ऊपर से विशाल चट्टान अपने आप कटकर नीचे गिर पड़ी जिसके भीतर लगभग 15 व्यक्ति दबकर मर गए। खदान की खुदाई का काम तो बंद हो गया, किन्तु देखा गया तो वहां हनुमानजी की एक मूर्ति थी, फिर क्या था तमाम श्रद्धालुओं ने पहुंच कर पूजा–पाठ करना आरम्भ कर दिया। यह मूर्ति पुरानी है और आश्चर्य होता है कि इस मूर्ति की स्थापना कैसे की गयी होगी। यहां मकर-संक्रान्ति के अवसर पर एक बड़ा मेला लगता है। लोगों ने बताया कि इस अवसर पर एक ट्रक तो केवल नारियल चढ़ाया जाता है।

महामाया मन्दिर : अंबिकापुर में महामाया का प्राचीन और महत्वपूर्ण मंदिर है। कहते हैं, महामाया के नाम पर जनपद का नामकरण अंबिकापुर पड़ गया। किम्बदन्ती है कि राजा मोरध्वज ने महिषापुर मर्दिनी श्री महामाया की सिंहवाहिनी अष्टभुजी प्रतिमा, जो पास की खारून नदी में उपेक्षित पड़ी थी, लाकर प्रतिष्ठित कराया था। एक ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर कहा जाता है कि हयहय वंशी कल्चुरिया राजा ने जब रायपुर को अपनी राजधानी बनायी तब उसने रतनपुर से अपनी कुलदेवी की प्रतिमा लाकर यहां प्रतिष्ठित की। इस मंदिर को रायपुर विजय, पश्चात नागपुर के भोषला राजाओं ने भी मान्यता दी और जीर्णोद्धार करवाया।

कहते हैं पहले यहां भैसों की बलि चढ़ायी जाती थी। नवरात्रि प्रारम्भ होते ही क्रमशः पहली तिथि को एक बलि, दूसरी तिथि को दो एवं तीसरी को तीन। इस प्रकार नौमी तक नौ भैंसे काटे जाते थे। मंदिर तो बहुत पुराना नहीं है किन्तु उसमें प्रतिष्ठित प्रतिमा पुरानी अवश्य है। पत्थर चिकना और काला है।

विश्रामपुर : विश्रामपुर सरगुजा जिले का एक चर्चित स्थान है। इसके

समीप कोयले की कई खदानें मिली हैं। यहां सोमवार के दिन जयनगर नामक स्थान पर मेले का आयोजन किया जाता है। मादल, लोहे का औजार, तिलहन, दहलन तथा बांस के बने पात्र, जड़ी–बूटियां, कपड़े, भूनी हुई सिधरी मछली, मुर्गी आदि वस्तुएं इस मेले में प्रमुख रूप से देखी गयीं।

शंकरगढ़ तहसील : सरगुजा जनपद की शंकरगढ़ तहसील सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसके विभिन्न भागों में प्राचीन मन्दिरों के अवशेष, गढ़ों, दुर्गों के भग्नावशेष, घने वन, पर्वत, पहाड़, नदी, नाले, झरनें हैं। यहां की आदिवासी स्त्रियों में पर्दा–प्रथा नहीं है सुख-दुख में समान भाव से जीवनयापन करना इनकी अपनी एक संस्कृति है। झोली में बच्चे को लिए पीठ और सिर पर सामान का भौका लिए ये कहीं भी निकल जाती हैं। खेत-खलिहानों में काम करती हैं और दिन भर अथक परिश्रम के बाद दो रोटी कमाकर घर में रहती हैं। यहां के अधिकतर लोग खपरैल के छाए कच्चे मकान में निवास करते हैं। उनके मकान की बनावट एवं छाजन काफी कलात्मक होती है। यहां एक विशेष प्रकार की काली मिट्टी पायी जाती है जिससे ये तरह-तरह की आकृतियां दीवारों पर बना देती हैं। यदा-कदा काली और सफेद मिट्टी को एक में मिलाकर घोल तैयार करके एक तीसरा रंग भी वे बना लेती हैं। यहां के लोग अपने घरों के सामने रेण के पेड़ और सेम की झाड़ियां अक्सर लगा देते हैं। झाड़ियों के साथ मैरा (फूस की झोपड़ी) लगाकर उसमें रहते या सामान रखते हैं। नया धान कटने के बाद सरहुल, करमा, छेरता के त्यौहार बड़े धूमधाम से मनाये जाते हैं। सभी लोग मौज–मस्ती में खाते-पीते और नए वस्त्राभूषण धारण करते हैं। मादल, ढोल, नगाड़ा, शहनाई और डफले की आवाज से पूरा वातावरण संगीतमय हो जाता है। यहां के प्रमुख सांस्कृतिक स्थल निम्नलिखित है—

सूरजपुर : सूरजपुर सरगुजा का एक विशेष टप्पा है, जो ऊंची-नीची जमीन के ऊपर बसा हुआ है। यहां कारागार, न्यायालय, थाना, होटल के अलावा एक छोटी सी बाजार है। एक दो मंदिर भी बने हैं जिनमें हनुमान, दुर्गा, शिव आदि की संगमरमरी मूर्तियां स्थापित हैं।

सूरजधारा : सरगुजा में सूरजधारा नाम का स्थान चर्चा का विषय बना

रहता है। बाहर से आए हुए व्यक्तियों को इसके बारे में यह बताकर कि यहां 7 रंग की 7 जल-धाराएं निकलती हैं, लोग चौंका देते हैं। यहां देवी की एक छोटी सी प्रस्तर-प्रतिमा स्थापित है तथा पानी गर्मी के दिनों में भी शीतल रहता है। यहां एक गुफा बनी हुई है जिसके भीतर एक कमरा खोदकर बनाया गया है जिसे सीतामढ़ी अथवा माड़ागुफा की अनुकृति मात्र कहा जा सकता है। इस गुफा के सामने से ही पानी बहता है और हमेशा बहता ही रहता है।

सोनहट : यह स्थान मनेन्द्रगढ़ से 70 किमी0 उत्तर की ओर स्थित है जहां कुछ पुराने खण्डहर मौजूद हैं। इन खण्डहरों से प्रस्तर-खण्ड और छोटी-छोटी कलात्मक मूर्तियां भी मिल जाती हैं।

संजय नेशनल गार्डन : मनेन्द्रगढ़ से लगभग 100 किमी0 दूर उत्तर की ओर जनपद की अंतिम सीमा जनकपुर तक, उधर शहडौल और सीधी के समीप तक संजय नेशनल पार्क सुरक्षित वन के रूप में बनवाया गया है। इस विशाल और भयंकर वन में वन्य पशु जैसे—शेर, चीता, साभर, भालू, हरिण, स्रियार, सुअर तथा अनेक प्रकार की चिड़ियां, जीव-जन्तु, कीड़े-मकौड़े निवास करते हैं। यह वन इतनी दूर तक फैला हुआ है कि पीछे जिस रास्ते जाइए इसे पड़ना ही पड़ना है। जंगल से होकर सड़कें बनायी गयी हैं, जिनमें मोटर गाड़ियां तो चलती हैं, किन्तु दिन में भी वहां भय लगता है। इस घनघोर इलाके को प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने राष्ट्रीय उद्यान घोषित करके विकसित किया, वरना यहां जंगल के सिवाय कुछ भी नहीं था।

इस तरह सरगुजा (च0ग0) जनपद मध्य प्रदेश का हृदय है। यह विविध संस्कृतियों की संगमस्थली है। साहित्य, संस्कृति, कला, जीवन, प्रकृति हर दृष्टि से इस जनपद की अपनी प्रतिष्ठा है। इसके अन्य पक्षों का आगे विस्तार से अध्ययन किया जायेगा।

सीधी

स्थिति :

सीधी मध्य-प्रदेश का एक महत्वपूर्ण जिला है, जो प्रायः वनों और

पहाड़ों से घिरा है। यह रीवां का ही एक भाग था जो शोणनद के प्रभाव-क्षेत्र में स्थित है। इसकी पूरब से पश्चिम की लम्बाई 155 किमी० तथा उत्तर से दक्षिण की चौड़ाई 95 किलोमीटर है। इसका कुल क्षेत्रफल 10532 वर्ग किलोमीटर है। सीधी जिले के पूरब में उत्तर प्रदेश का मिर्जापुर सोनभद्र जिला, दक्षिण में मध्य प्रदेश का सरगुजा जिला और पश्चिम में शहडोल और सतना जिले हैं, और उत्तर में रीवां जिला है। इस जिले में कुल 9 तहसीलें हैं—1. गोपदबनास, 2. देवसर, 3. सिंगरौली, 4. मझौली, 5. कुसुमी, 6. चितरंगी, 7. सिहावल, 8. चुरहट, 9. रामपुर नैकिन। इस जनपद का नगरी क्षेत्र सीधी है। अन्य तहसीलें छोटे-छोटे कस्बों, बाजारों के रूप में विकसित हो रही हैं।

भू-रचना : भू–रचना के आधार पर सीधी जिले को पांच भागों में बांटा जा सकता है—1. कैमूर श्रेणी, 2. सोन नदी की घाटी, 3. बड़वास और मझौली का पठार, 4. देवसर की पहाड़ियां, 5. सिंगरौली का मैदान।

कैमूर-श्रेणी : जिले की उत्तरी सीमा पर कैमूर नाम की एक पहाड़ी श्रेणी है जो दक्षिण-पश्चिम से उत्तर पूरब की ओर फैली हुई है। कैमूर की श्रेणी इस जिले को रीवां जिले से पृथक और सोन-घाटी के उत्तर में एक ऊंची दीवार के रूप में खड़ी है।

सीधी से हनुमना की ओर जाते समय और हनुमना से सीधी की ओर आते समय यह सुव्यवस्थित घाटी दर्शकों के मन को मोहित कर लेती है। इसके बीच-बीच में ऊंची-नीची पहाड़ियां, पर्वत-श्रेणियां हैं, तो बीच-बीच में नदी, नाले, एवं झरनें। वर्षा के दिनों में नदी, नालों-झरनों का पानी प्रपात बनाकर चारों ओर घिरी ऊंची पहाड़ियों से घाटी में गिरता है तो अजीब सुहावना दृश्य हो जाता है। इस पर्वतीय दीवार को पार करने के लिए कोई दर्रा नहीं है। अतः यातायात के लिए इस ऊंची दीवार को काटकर ही सड़कें बनायी गयी हैं। ये सड़कें घुमावदार हैं। कैमूरघाटी के छुहिया तथा मोहनियां दो घाट महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें यातायात वाहनों को चढ़ना-उतरना पड़ता है। इस सुव्यवस्थित घाटी में यत्र-तत्र छोटे-छोटे गांव बसे हुए हैं जहां प्रायः आदिवासी अथवा मिली-जुली जातियां निवास करती हैं। वे वहां खेती-बारी भी करते हैं। यह क्षेत्र अभी भी

शहरी वातावरण से अछूता है।

सोनघाटी : सोन मध्य प्रदेश के अमरकंटक की पहाड़ियों से निकलकर सीधी, मिर्जापुर को पार करती हुई बिहार में जाकर पटना में गंगा में विलीन हो जाती है। सोन में अगणित नाले, झरनें, तथा नदियां आकर मिलती हैं तथा इसके दोनों ओर अनेक गुफाएं भी प्राप्त होती हैं जिनमें आदि मानव-कुल निवास करता था। सोन-घाटी, कैमूर–श्रेणी के दक्षिण में स्थित है। यह पश्चिम से पूरब की ओर सकरी होती गयी है। इसका अधिकतर भाग पहाड़ी होते हुए समतल और उपजाऊ है। इसका उत्तरी भाग कृषि–योग्य है जिसमें खेती–बारी होती है। घाटी पूरब की ओर ढाल बनाती है। पश्चिम की ओर इसकी पहाड़ियों को 'केहेंजुआ की पहाड़ियां' कहते हैं।

बड़वास और मझौली का पठार : सोन-घाटी के दक्षिण में मझौली और गोपदबनास दो तहसीलें हैं, जिनका अधिकतर भाग पठारी है। इन तहसीलों की सीमाओं पर पहाड़ियां हैं, किन्तु मध्य का भाग समतल तथा उपजाऊ है। गोपद और बनास नदियों के कारण इसका ढाल सामान्यतया उत्तर की ओर है। ये दोनों नदियां उत्तर में जाकर सोन की धारा में विलीन हो जाती है। मोवाही और महान बनास की सहायक नदियां हैं। इन नदियों के सहायक हैं पहाड़ों और मैदानी भागों से निकलने वाले छोटे-छोटे नाले झरनें। इस पठार की ऊंचाई 200 से 450 मीटर है। .यहां की भूमि ऊंची-नीची कंकरीली-पथरीली तथा झाड़ियों से आच्छादित है। अब इस ऊबड़-खाबड़ जमीन को काट-छांट कर खेती के योग्य बनाया जा रहा है।

देवसर की पहाड़ियां : देवसर सीधी जिले की एक तहसील है जिसका अधिकांश तथा सिंगरौली की उत्तरी और पश्चिमी सीमा पर ऊंची-नीची पहाड़ियों में फैला हुआ है। इस पूरे सुव्यवस्थित भू-भाग को 'देवसर की पहाड़ियां' कहते हैं। पहाड़ियों की औसत ऊंचाई 380 से 470 मीटर है और इनका आकार प्रायः गोल अथवा अर्ध वृत्ताकार है। यह भू-भाग उबड़-खाबड़, कटा-फटा तथा अनुपजाऊ है। इसकी मिट्टी रेतीली तथा पथरीली है।

सिंगरौली का मैदान : यहां कोयले की कई बड़ी खानें निकलती हैं।

तहसील के दक्षिणी-पूर्वी भाग पर फैले मन्द ढाल वाले क्षेत्र को सिंगरौली का मैदान कहते हैं। जो पूरब में उत्तर प्रदेश के दुद्धी तहसील के मैदान से जुड़ा हुआ है। सिंगरौली का मैदान 304 मीटर से कम ऊंचा है। यहां की मिट्टी प्रायः दोमट है।

जलवायु :

सीधी जिले का अधिकांश पहाड़ों और वनों से घिरा है। अतः यहां की जलवायु भी उसीके अनुकूल है। यहां वर्षो के महीनों में दक्षिण-पश्चिम की ओर भाप भरी हवाएं बहती हैं। यही कारण है कि यहां वर्षा के दिनों में जहां-तहां उमड़-घुमड़ कर बादल बरसते ही रहते हैं। 24 घंटे में कई बार मौसम करवटें बदलता है। रात से 8 बजे दिन तक का मौसम सुहावना हो जाता है।

वनस्पति तथा पशु-धन :

सीधी जिले का लगभग 4379 वर्ग किमी0 क्षेत्र वनों से घिरा हुआ है जिनमें सागौन, साल, सरई, हल्दू, सैंधा और धवा आदि बहुमूल्य वृक्ष पाये जाते हैं। सीधी जिले के सागौन के वन बड़े मशहूर हैं, जो उत्तरी पश्चिमी भाग में कैमोर श्रेणी के छुहिया घाट के जंगलों में पाए जाते हैं। जिले के अधिकतर भागों में बांस, साज, बीजा, शीशम, तेंदू, सलई, सीध, पलाश महुआ आदि के वृक्ष भी पाए जाते हैं। इन वनों पर अनेक उद्योग-धंधे निर्भर करते हैं जिनमें कागज, पेंसिल, कलम, कुर्सी, मेज, पलंग तथा दैनिक उपयोग में आने वाली अनेक वस्तुएं तैयार की जाती हैं। सीधी के जंगलों में आंवला, हर्रा, बहेरा, बेचांदी, तीखुर, धूप, चिरौंजी, कत्था, महुआ तथा महुए की शराब, धवा, कुल्लू की गोद, चित्रक, वंशलोचन, जड़ी–बूटी, कन्द–मूल–फल तथा अन्य वस्तुएं भी प्राप्त होती हैं।

खनिज–सम्पत्ति :

सीधी जिले में कोयला, कुरन्द, सोलीमैनाइट, प्रमुख रूप से पाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त लोहा, मैग्नीज, अभ्रक, वाक्साइड्स, शीशम, तांबा, चीनी मिट्टी के चूने तथा सीमेंट के पत्थर आदि पाए जाते हैं जिनसे सरकार को कई

लाख करोड़ की वार्षिक आमदनी होती है। सीधी जिले में कोयले की खानें, झिंगुरदह, जयन्त, गोर्वी, दुद्धी चुआं तथा अमलोरी में मिली हैं जिनको एक में मिलाकर रिहन्द नदी के समीप सिंगरौली तहसील में पीपरा, करकोटा नामक स्थानों में पायी गयी हैं। कुरन्द बहुत बड़ा होता है जिसका इस्तेमाल सेंट पेपर (रेतमाल कागज) बनाने के काम आता है। सिलिमेनाइट का उपयोग प्रायः ईंट पकाने के काम में आता है।

सिंचाई तथा विद्युत-सुविधा :

सिंचाई तथा विद्युत एक दूसरे के पर्याय हो गए हैं। क्योंकि विद्युत के अभाव में सिंचाई ठीक से हो नहीं पाती। सीधी जिले का अधिकांश पहाड़ी होने के कारण यहां सिंचाई के साधनों का प्रायः अभाव है। तब भी कुआं, तालाब एवं नहर और नदी के पानी को पम्प द्वारा ऊपर उठाकर खेतों की सिंचाई की जाती है। यहां के ग्रामीण-क्षेत्रों में पारम्परिक ढंग से ढेकुली लगाकर भी सिंचाई की जाती है। बिजली पम्प द्वारा भी सिंचाई की व्यवस्था की गयी है।

कृषि-उपज :

सीधी जिला कृषि-प्रधान है। यहां के लोगों की जीविका कृषि पर ही निर्भर करती है। यहां पारम्परिक ढंग से कृषि की जाती है। कुछ बड़े किसान यत्र-तत्र ट्रैक्टर का प्रयोग करते हैं। यहां के कृषकों के मुख्य औजार हैं— फावड़ा, कुदाल, हंसिया, देशी हल, खुर्पी, टंगारी आदि।

उद्योग-धंधे :

देश के कोने-कोने में उद्योग धंधों का तेजी से विकास हो रहा है, किन्तु सीधी जिला उद्योग-धंधों की दृष्टि से अभी भी पिछड़ा हुआ है। सिंगरौली तहसील में कुछ बड़े उद्योगों की स्थापना की गयी है। सीधी जिले में आज भी पारम्परिक तरीके से बांस के सामान, मिट्टी के वर्तन, लोहे के औजार, लकड़ी की आधुनिक उपयोग में आने वाली वस्तुएं तैयार की जाती हैं। पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण यहां लकड़ी का काम भी बहुलता से होता है। सीधी और बहरी में बड़े पैमाने पर लकड़ी चीरने और उससे काष्ठोपकरण तैयार करने का काम

होता है।

परिवहन :

पहाड़ी गांवों को सड़क से जोड़ा नहीं जा सका है। यत्र-तत्र पक्की सड़कें बनायी गयी हैं। वर्ना अधिकतर सड़कें कच्ची ही हैं। सीधी जिले में आज भी बैलगाड़ियां अधिक चलती हैं। जिले की प्रमुख तहसीलों से मुख्यालयों तक जाने के लिए बसों की व्यवस्था है।

रेल-मार्ग :

सीधी जिले में रेल यातायात की सुविधा कम है। यहां एक मुख्य रेलवे लाइन कटनी से उत्तर प्रदेश के चोपन तक बनायी गयी है। यह रेलमार्ग सीधी जिले के दक्षिण से जाता है जिसका निर्माण विशेष रूप से सिंगरौली कोयला खदान के विकास के लिए किया गया है। जिला मुख्यालय को रेलवे लाइन से अभी जोड़ा नहीं जा सका है।

व्यापार :

सीधी जिले से इमारती लकड़ी, जलाऊ लकड़ी, बांस तथा बांस की बनी हुई दैनिक उपयोग की वस्तुएं जैसे सूपा, बेना, डलिया आदि आंवला, हर्रा, बहेरा, चिरौंजी, मधु, तेंदू पत्ती, महुआ, जड़ी-बूटी, कोयला, कुरन्द, सिलिमेनाइट आदि वस्तुएं बाहर भेजी जाती हैं। दवाइयां रासायनिक वस्तुएं, कागज तथा स्टेशनरी, कपड़े, चीनी, गुड़, नमक आदि दैनिक उपयोग की वस्तुऐं, कुछ मशीनरी के सामान, विद्युत उपकरण और मिट्टी का तेल आदि वस्तुएं बाहर से मंगायी जाती हैं।

निवासी :

सीधी जिले में मिली-जुली जातियां निवास करती हैं। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार सीधी जिले की जनसंख्या 9,88,929 थी। जिले में हिन्दू, मुसलमान, जैन, सिख तथा इशाई धर्मों के लोग निवास करते हैं। किन्तु 95% हिन्दू ही हैं। मुसलमानों की संख्या भी अधिक है, किन्तु जैन, सिख और ईसाई यहां कम हैं। हिन्दुओं में एक तिहाई-संख्या आदिवासियों की है,

जिनमें गोंड, कोल, बैगा, पनिका, खरवार, अगरिया तथा व्याल जातियों के लोग अधिक हैं। इनमें भी गोड़ों की संख्या सबसे अधिक है। सबसे अधिक संख्या में आदिवासी देवसर तहसील में हैं जो प्रायः गरीबी की रेखा से भी नीचे हैं। ये आदिवासी पारम्परिक ढंग से रहते हैं, तथा नाचते-गाते, मस्त रहते हैं। इनके बारे में विस्तार से अलग से लिखा गया है।

भाषा-बोली :

सीधी जिले के अधिकतर लोग हिन्दी बोलते हैं। मुसलमानों की भाषा उर्दू है। इसके अलावा वे बुन्देलखण्डी और बघेलखण्डी भी बोलते हैं। आदिवासियों की भाषा अलग-अलग है। गोंड़ अपनी भाषा को गोड़ी कहते हैं। इसी प्रकार अन्य जातियों के लोग भी अलग तरीके से बोलते हैं।

सीधी जिले का सांस्कृतिक इतिहास :

सीधी जिला बघेलखण्ड के अंतर्गत है जिसका नामकरण बघेल राजकुलों के आधार पर हुआ है। किन्तु उनके आने के पूर्व भी इस भू-भाग का गौरवशाली इतिहास रहा है। बघेलखण्ड 17वीं, 18वीं शताब्दी से अधिक प्रचलित हुआ। मुसलमानों द्वारा लिखित या मुस्लिम काल के ऐतिहासिक ग्रन्थों में उल्लिखित बघेलखण्ड का नामोल्लेख नहीं हुआ है।

प्राचीन काल : प्राचीन काल में इसका नाम 'भट्ट देश' या 'भट्टगोंण देश' लिखा हुआ, कुछ पुराने ग्रन्थों में मिलता है। मुसलमानों के आने के पूर्व यह प्रान्त, 'माह' (महा) कौशल, चेद देश या 'दाहाल' देश में सम्मिलित था।[1]

अकबर के समय में इसका कुछ भाग भट्टगोण में और कुछ सूखे इलाहाबाद के कालंजर सर्कार में शामिल कर दिये गये। यह प्रान्त और विशेषतः भट्टगोण या वान्धव प्रदेश के जमाने के प्रायः अज्ञात देश थे। सम्राट् औरंगजेब ने रीवां के आसपास के जिलों को, जिसमें सीधी भी सम्मिलित है, तथा सोहागपुर के परगने को भट्टगोण से अलग करके कालंजर सर्कार में सम्मिलित कर दिया गया।

1. रीवं राज्य दर्पण : जतिन सिंह, पृ0-29

हयहय, चेदि या कल्चुरि : हयहय चेदि या कल्चुरी जो एक ही शाखा के क्षत्रिय हैं, उनसे भी इस प्रदेश का संबंध रहा है। प्राचीन ग्रन्थों—जैसे रामायण, महाभारत, पुराणों और प्राचीन बौद्धग्रन्थों के अध्ययन से भी ऐसा प्रतीत होता है कि इन्हीं वंशों के राजाओं ने इन पर शासन किया था।

एक अन्य उल्लेख के अनुसार सोन नदी की घाटी तक का क्षेत्र मगधों के अधीन था और उसके आगे पश्चिम दक्षिण भाग का महाकौशल प्रदेश वैदियों के अधिकार में था।[1]

हयहय वंशियों का अधिकार आरम्भ में ही नर्वदा की घाटी पर हो गया था। हयहय अपने को यदुवंशी क्षत्रीय बताते और कहते हैं कि सहस्त्रबाहु कीर्तिवीर्य अर्जुन उनके अपने देश के मूल पुरुष थे।[2]

यह भी कहा जाता है कि उनकी प्राचीन राजधानी का नाम महीष्मती नगरी था। यह भी संकेत मिलता है कि 11 वीं शताब्दी में ये कल्याण देश के किसी चालुक्य राजा के आश्रित थे।

मौर्यवंश : बघेलखण्ड का वह भाग जो कैमूर पहाड़ के उत्तर में स्थित है। ई0 सन् के दूसरी, तीसरी शताब्दी पूर्व मौर्यवंशीय राजाओं के अधिकार में था। इस वंश के सबसे प्रतापी और प्रियदर्शी राजा अशोक ने अपने एक स्तूप भरहुत में बनवाया था। यद्यपि कुछ लोगों का ख्याल है कि पहली शताब्दी में यह प्रान्त सुंग वंशी राजाओं के अधीन था और भरहुत की स्थापना भी उन्हीं के द्वारा की गयी थी। चौथी और पांचवीं शताब्दी में इस प्रान्त के राजा गुप्तवंशी मगध राजाओं के करद हो गए थे। (रीवां राज्य दर्पण पृ0–32)

इसके प्रमाण में यहां के प्राचीन गढ़ों, मन्दिरों के अवशेषों तथा प्राप्त शिलालेखों को लिया जा सकता है। इसके पश्चात् हयहयों, चेदियों, या कल्चुरियों का प्रभाव बढ़ा। इन्हीं के नाम पर सन् 249 ई0 से एक नये सम्वत् सन् का श्री गणेश भी हुआ था। 6वीं शताब्दी के अंत तक चेदि वंशीय राजाओं

---

1. बुद्धिष्ट इण्डिया : राई देवी, पृ0–23
2. एन इण्डियन एन्टीक्वेरी जिल्द–12, पृ0 253, एपिक इण्डिया–11, 14

का ही आधिपत्य था।

हर्षवर्द्धन : 7वीं शताब्दी में कन्नौज के राजा हर्षवर्द्धन ने तमाम राजाओं पर अंकुश लगाए। किन्तु 648 ई0 में जब हर्षवर्द्धन का देहावसान हो गया तो वे पुनः स्वच्छन्द हो गए तथा अपने-अपने आधिपत्य जमा लिये। तदनुसार परमा का कन्नौज में तथा चालुक्य राजाओं का गुजरात मध्य भारत में राज्य स्थापित हो गया। इसी अन्तराल में चेदियों ने बघेलखण्ड को अधिकार में ले लिया और कालन्जर को शासन का केन्द्र बना लिया और फिर आसपास के सभी प्रदेश में अपना अधिपत्य जमाया। इसी समय इस पूरे प्रदेश का नाम चेदिदेश पड़ा होगा।

कल्चुरि : नवीं शताब्दी से 12 वीं शताब्दी के अंत तक इन भाग पर कल्चुरियों का राज्य स्थापित हुआ। जिस प्रकार चन्देल चूड़ामड़ि महाराज यशोवर्मन का नाम चन्देल वंश के इतिहास में अमर है, उसी प्रकार राजा गंगेय देव विक्रमादित्य का नाम कल्चुरियों के इतिहास में भी।

चन्देल : 12 वीं शताब्दी के आसपास मुसलमानों से पराजित होकर चंदेलवंशी राजे पूरब की ओर बढ़े और नर्वदा के उत्तर तक के प्रदेश को कल्चुरियों से छीन कर अपने अधिकार में कर लिये कालंजर से लगभग 60 किमी0 पूरब कंकरेजी नामक स्थान पर राजाओं ने राजधानी बनायी थी। वहां से प्राप्त ताम्रपत्रों के अध्ययन से जो बातें प्रकाश में आयी हैं, उनसे स्पष्ट होता है कि चन्देलों ने कल्चुरियों का आधिपत्य स्वीकारा था, किन्तु बाद में वे स्वयं शक्ति-सम्पन्न हो गए थे।

वन्य जातियां : मुसलमानों के शासनकाल में क्षत्रिय वंशीय राजाओं का प्रभाव क्षीण हो गया। वे अलग-अलग खेमों में बंट गए। किन्तु इसी समय भर, सेंगर और चौहान और वन्य जातियों में मुख्य रूप से गोंड़ शक्तिशाली होते गए। इनमें भर सबसे अधिक प्रभावशाली थे। भरों के बनाए हुए पुराने गढ़, मन्दिर, धर्मशालाएं, बावलियां तथा कूप आदि आज भी उपलब्ध होते हैं।

बघेल : चालुक्य या सोलंकी क्षत्रियों की एक शाखा का नाम ही बघेल

है, जिसकी उत्पत्ति अन्हिल वारापाटन के राजपूत से हुई बतायी जाती है। अग्निवंशज क्षत्रियों में 4 के नाम क्रमशः चालुक्य या सोलंकी पंवार या परमार, परिहार और चौहान हैं।

कहते हैं कि ब्रह्मा ने अपने ही अंश से अपनी हथेली पर मनुष्य की एक मूर्ति बनायी और पवित्र अग्निकुण्ड में डालकर उसको सर्वथा शुद्ध किया। उसी कुण्ड से कन्धे में जनेऊ और बाएं हाथ में वेद धारण किए एक वीर पुरुष निकला, वही चालुक्य कहलाया, जिसकी 16 शाखाएं हुईं। ब्रह्मा की चुलुका से उत्पन्न होने के कारण ही इनका नाम चालुक्य पड़ा बताया जाता है।

चौहान खण्ड : सीधी के आसपास चौहानों की घनी बस्ती है। सिहावल से लगभग 45 किमी0 पश्चिम सीधी नाम का एक गांव भी है, जहां अधिकतर चौहान जाति के क्षत्रिय निवास करते हैं। इसी को चौहान खण्ड कहते हैं।

मनोरंजन और खेलकूद

आदिवासी बहुल क्षेत्रों का सर्वप्रमुख खेल है आखेट जिसे 'आउट डोर गेम' कहा जा सकता है; किन्तु लोग घर में चौप, तास, सतरंज, गंजीफा आदि खेल अधिक खेलते हैं। यहां 'आटापारी' का खेल मशहूर है। इसमें कुछ लड़के छिपते हैं और शेष उनको ढूंढ़ते हैं। उत्तर प्रदेश में इसे 'लुकउवल' कहते हैं।

पिटाव : इसमें लड़के एक दूसरे को गेंद से मारते और दौड़ाते हैं।

चुर्रा-पट्टुकी : यह दुर्गबन्दी का खेल विशेष है। लड़के इसे दो दलों में विभक्त होकर खेलते हैं। एक दल दुर्ग की रक्षा में रहता है और दूसरा दुर्ग पर आक्रमण करता है। यदि दूसरे दल का कोई लड़का दुर्ग के भीतर पकड़ लिया जाता या वह विशेष रीति से स्पर्श कर लिया जाता है तो वह दल पराजित होकर दुर्ग की रक्षा में सन्नद्ध हो जाता है और तब दूसरा दल आक्रामक की भूमिका निभाता है। इस खेल को उत्तर प्रदेश में 'टइल सटर्रा' के नाम से जाना जाता है।

कबड्डी : बिना श्वांस तोड़े दौड़ते हुए दूसरे दल के खिलाड़ी को छू कर अपने सीमा क्षेत्र में लौट आने की क्रिया, कबड्डी खेल की विशेषता है।

तीतर-बटेर : तीतर-बटेर वन पक्षी होते हैं जिन्हें लड़ाने का खेल यहां तथा ग्राम अंचलों में प्रचलित है। इन पक्षियों को पिजड़े में बंद रखा जाता है किन्तु जब लड़ाना होता है तो आमने–सामने करके पिजड़े का द्वारा खोल दिया जाता है।

मुर्गे की लड़ाई : तीतर बटेर की ही तरह मुर्गे की लड़ाई का भी खेल बहुत लोकप्रिय है। लड़ाने के लिए ही कभी-कभी मुर्गे पाले जाते हैं। इन्हें खाने-पीने के लिए स्वास्थ्यवर्द्धक वस्तुएं दी जाती हैं। जब ये तन्दुरुस्त हो जाते हैं तो इन्हें लड़ाया जाता है। इसी प्रकार मोर, भेंड़ा और बकरों के लड़ाने की परंपरा भी प्रचलित रही है।

कला एवं शिल्प

साहित्य, संगीत और कला की विद्याएं राज–दरबारों में उनके महलों की चहारदीवारियों में कैद तो रहती थीं, किन्तु राजाओं के मनोरंजन के लिए ही सही, उन्हें प्रश्रय प्राप्त था। खासकर रीवां के महाराजा स्वयं भी साहित्यकार और संगीतज्ञ होते थे। महाराजा रामचन्द्र के समय में तानसेन और महाराज विश्वनाथ सिंह और रघुराज सिंह के समय में संगीत के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों को महत्व मिला था।

इस जनपद में कुन्देर, हुक्क की निगाली वसीठा (डंडा), रूला, छड़ी, सतरंज और पेपड़ की गोटियां, खेल के सामान, पलंग, कुर्सियां, हाथी के हौदा, रेहल, आलमारियां आदि वस्तुएं मुख्य रूप से बनायी जाती हैं। हाथी का हौदा, छड़ी, चौखट, आलमारी, पलंग आदि के निर्माण में कलाकार वर्षों बिता देते थे।

सतरंज और चौपट की गोटियां तथा छड़ी आदि पर वे लाख के लाल, पीले रंग भी चढ़ाते हैं। नारियल के हुक्कों के लिए यह क्षेत्र आज भी प्रसिद्ध है। यहां के बने कलात्मक हुक्के पार्श्ववर्ती इलाकों में भी भेजे जाते हैं। श्रृंगारदान

और बच्चों के खिलौने भी बड़े कलात्मक और सुन्दर ढंग से बनाने की परंपरा यहां रही है। जहां तक कुम्हारों का सम्बंध है, ये आरम्भ से ही मिट्टी के घड़े, मटके, नाद, दबकी आदि वस्तुएं बनाते रहे हैं। मिट्टी के बर्तनों के गढ़ने का काम चाक द्वारा किया जाता है। वे पीली मिट्टी स्थान विशेष से लाते हैं, फिर उसे भिंगोते हैं कि उससे लसीली मिट्टी की लुगदी तैयार हो जाती है। फिर उसे चाक पर रखकर मनचाही वस्तुएं तैयार कर लेते हैं। इसके द्वारा बनाया गया सबसे बड़ा पात्र कुण्डा होता है। छोटे धड़े को गगरी कहते हैं, इसी प्रकार सुराही, हंड़िया या हंडी, पुरवा, परई, घरिया आदि वस्तुएं भी वे बनाते हैं।

अल्पना डिजाइनें व पच्चीकारी का काम वे सूखने से पहले कच्चे घड़े पर ही कर लेते हैं, किन्तु उसकी रंगाई का काम वे पकने के बाद करते हैं। घड़ों के ऊपर लाल सफेद रंग की अल्पना डिजाइनें ही अधिक बनायी जाती हैं। डिजाइनें बनाने का काम वे विशेष प्रकार के व्रश से चूना या चावल का सफेद घोल बना कर करते हैं। अब घड़े पर वार्निश और पेंट चढ़ाने का काम भी किया जाने लगा है।

कपड़ा बुनाई का काम : कपड़े की बुनाई का काम मुख्य रूप से कारी, जुलाहे और पनिका जाति के लोग पारंपरिक रूप से करते आ रहे हैं। यहां एक विशेष प्रकार के कपड़े का नाम गंजी है, जिसकी बुनाई हाथ से मोटे सूत से की जाती है। यहां एक विशेष प्रकार की जाति 'लँहगीर' है जो औरतों के लिए लहंगा बनाने का काम विशेष प्रकार से करती है। जरी का काम ये लोग पहले लहंगों पर करते थे और एक से एक सुन्दर कलात्मक, बेलबूटेदार लहंगे तैयार करते थे। अब लहंगे बनाने का प्रचलन लगभग समाप्त है।

कपड़ा छापने का काम : कपड़ा छापने की कला भी एक पुरानी पारंपरिक कला है। इस काम को करने वाले विशेष रूप से मुसलमान जाति के लोग होते थे जो ताने-बाने के काम को धार्मिक अनुष्ठान के रूप में करते थे। इस कार्य को करने वाले कलाकारों को 'छिपी' कहा जाता है। छिपी रजाई, तोसक चांदनी, जाजिन, लुंगी, साड़ी पर हाथ की छपाई करते हैं। मोटे सूत की बनी हुई रजाइयों पर छीपी लोग ही रंग चढ़ाने का काम करते थे।

लोहारी का काम : सीधी क्षेत्र में लोहारी का काम भी बड़ा मशहूर रहा है। रीवां अथवा सीधी का सरौता देश-प्रसिद्ध है। यहां विविध आकार-प्रकार के लोहे और पीतल के सरौते यहां के कारीगरों द्वारा बनाए जाते हैं जिसकी बाहर से बहुत मांग रहती है। सरौतों पर कलाकारी भी की जाती है। उस पर डिजाइनें बनायी जाती हैं। सरौतों के अतिरिक्त लोहे की और भी वस्तुएं बनायी जाती हैं। अच्छे सरौते रामनगर, अमरपाटन और सेमरिया में बनते हैं तो अच्छे और कलात्मक फावड़े, सिंगरौली में बनते हैं।

चमड़े का काम : इस जनपद में मवेशियों की संख्या अधिक है, इसलिए कि यहां खेती एक प्रमुख उद्योग है। यहां के चमड़ों से तरह-तरह की वस्तुएं बनायी जाती हैं। सिझाए हुए चमड़ों से जूते, पेटियां या अन्य वस्तुएं बड़े पैमाने पर तैयार की जाती थीं। यहां अल्यूनिसस, बूट, गुर्बानी, जोड़े गाड़ी और घोड़े के साज, जीन, काठी तथा सैनिक सामग्रियां तैयार की जाती थीं। किन्तु अब इन पारंपरिक उद्योगों का भी ह्रास होता जा रहा है।

कृषक और कृषि :

सीधी कृषिजीवी जनपद है। कुछ बड़े किसानों को छोड़कर प्रायः सभी लोग खेती करते हैं और खेती के बारे में यह कहावत है—जो भी व्यक्ति अपने हाथ से कृषि-संबंधी सारा कार्य करता है वही इस उद्योग में सफल होता है—

"उत्तम खेती जिन हर गहा,
मध्यम खेती जिन संग रहा,
सांझ सबेरे पूछया पूछा जोधा कहां,
बरधा बीज बुड़िगा तहां।।

वन :

कछारी, वन, नद, नालों के तटवर्ती वन हैं, जो झाड़ी के रूप में नदी की धारा के समीप अपने आप जम जाते हैं। प्रबन्ध के हिसाब से भी वन को दो भागों में बांटा गया है। आरक्षित वन और साधारण वन। आरक्षित वन कीमती लकड़ियोंवाले वन हैं और साधारण वन में सामान्य लकड़ी वाले वन।

जंगलों का घनिष्ठ संबंध जंगली जातियों से है, जो जंगल लगाने से तैयार हो जाने पर उसे काटने तक का काम करते हैं। इन ज़ंगली जातियों में कोल, गोंड, बैगा, मरिया, माझी, पनिका, बैसवार, बीयार, अगरिया, कोटवार, बसोर, वसुहार, बेमरिहा, खरवार और पत्तेहारी हैं। यहां के जंगलों में पाए जाने वाले वृक्षों की नामावली प्रस्तुति है—अकोल, कोल्हा, अंजीर, अमर बेल, आकाश बेल, अमलतास, झगरइया, अरवार, हरूसा, अशोक, आम, अमरका, आमता, आवला, लाली, इमली, चिट्टा, उमर, गूलर, एंठी, कचनार, कटहल, कटन, बांस, कठजामुन, कदम्बकसही, एकदनियां, करौंदा, कहुआ, काहरिया, काजी, कारी, केंवांच, कुम्भी, कर्सी, कुर्नुरू, ककर, केवड़ा, कैधा, कैया, मुण्डी, कुसुम, कवला, खजूर, खमेर, खरहार, खैर, गब्दी, घनिवार, गिरछी, गुय सकरी, गुटार, सफेद गुर्ज, घोट, घुटेर, घुटहरे, चार, सनेका, चिवला, पलास, जमराती, जरफली, जामुन, झरवेल, झाऊ टंसा, सादन, तिलमन, तूत, तेंदू, तुमई, दहिमन, दुधई, करू इन्द्र जौ, धवई, सुरतली, धवा, उमा, धनकट, पाली, निगरी, नीम, पाकड़, पापर, पानियां बेल, पारल, जयमंगल, पीपल, बड़हर, वनकपास, बबूल, बमूरी, वर (वट) वरगा, वरंगा, बांस, सरहुल, विलाई, बेर, बेल, महका, वोरिया, चिकना, भिड़ार, कचूल, मिरिहा, कोहफा, भेड़ी, भेंरी, तुरनी, भवनी, मदार, लान अमुआ, सफ़ेद अमुआ, महानीम, महुआ, मुनगा, मेंहदी, महुआ महुआइन, मनहर, रायकरौंदा, रूसा, फरूसा, रैंगजा, रोरा, कुमकुम, लडिया, शीशम, झरई, ललई, सागोन, ताज, बरसाज, मारू, तिरिला सिंहरुआ, खेसरी, हरसिंगार, सीताफल, सीसु, सेमल, हर्रे, हल्टा, हल्दू आदि।

राजाओं के ऐतिहासिक चिह्न :

बघेल राज्य के अन्तर्गत प्राचीन कालीन कई अमूल्य और महत्वपूर्ण चिह्न पाए जाते हैं, उनमें से परिवाजक और उच्छकल्प शाखाओं के राजाओं के शिलालेख अग्रगण्य और दृष्टव्य हैं। अनेक स्थानों पर तत्कालीन भग्नावशेष प्राप्त हैं जिन्हें बहुमूल्य स्थापत्य कहलाने का गौरव प्राप्त है। ऐसे अनेक ऐतिहासिक स्थलों में आल्हाघाट, मुर्गी, मलांव, बैजनाथ चन्द्रेही, मार की गुफाएं और केवटी के पवित्र कुण्ड दर्शनीय हैं। मुर्गी मसांव के पास बौद्धकाल

की कौशाम्बी नगरी और चन्द्रेही में विचित्र आकार प्रकार के मन्दिरों के अवशेष भी प्राप्त हैं।

वस्त्राभूषण :

सीधी रीवां राज्यान्तर्गत था। उन दिनों राजा-प्रजा के पोशाक निश्चित थे। राजा लोग राजशी, जरीदार, हीरे, जवाहरात मणि-माणिक्य जड़ित, कामदार, रंगीन कपड़े पहनते थे। उनके सिर पर मुकुट होता था, जिसमें कीमती लरियां लगी होती थीं। वैसा ही कीमती कामदार हीरा, जवाहिरात, सोना, चांदी, जड़ित छत्र लिये पीछे परिचारक खड़ा रहता था। बगल में तलवार लटकती होती थी। कामदार जूते पहनने की प्रथा प्रचलित थी। जनेऊ, कामदार चादर, कामदार मिरजई, चूड़ीदार पाजामा भी पहनने का प्रचलन था।

राजदरबार लगता था। सिंहासन दो व्याघ्रों की मूर्तियों से युक्त होता था। यह सिंहासन भी सोने या चांदी से बनाया जाता था। पत्थरों पर राजशी भोग-विलास से संबंधित पच्चीकारी की जाती थी। सिंहासन इतना बड़ा होता था कि राजा-रानी दोनों एक साथ बैठ सकें। यह सिंहासन किसी चौकी पर रखा होता था। चौकी पर कामदार सोने-चांदी के पत्थरों से जड़ दिया जाता था। उस पर कीमती जरीदार चादर बिछी होती थी। इस सिंहासन को खींचने की भी व्यवस्था होती थी, जिसके लिए रथ बनाया जाता था। रथ ऐसा वैसा नहीं, सोने–चांदी के बने दो–तीन घोड़ों वाला। जब राजा हाथी पर सवार होता था तो उसका हौदा सजाया जाता था। सिंहासन उसके ऊपर रखा जाता था। हाथी का हौदा बहुत वेशकीमती जरीदार कपड़ों से बना होता था। राज-दरबार में सबको जाने की अनुमति नहीं होती थी। कोई भी व्यक्ति तहजीब से ही राज-दरबार में प्रवेश कर सकता था। सभा–पंडित के लिए मिरजई, चूड़ीदार पायजामा या धोती (कामदार चौड़े पट्टे की, जो सफेद या पीले रंग की हो सकती थी), साफा, अंगोछा या अपन्ना अनिवार्य परिधान होता था। मस्तक पर चंदन का टीका भी उतना ही जरूरी था, क्योंकि वैसे भी किसी ब्राह्मण का दर्शन बिना चन्दन के शुभ नहीं माना जाता। कुछ पढ़े-लिखे लोगों को छोड़कर बाकी सभी जातियां लंगोटी लगाती थीं या घुटने तक धोती पहनती थीं। अनेक ऐसे भी हैं जो अभी

भी नंगे रहते हैं। यहां के रईस किस्म के जमींदार धोती-कुर्ता, जंगौछी, जैकेट पहनते हैं। सिर पर मुरेठा बांधते हैं और कमर तक मिर्जई पहनते हैं। पहले कुछ लोगों द्वारा उपन्ना जामा नाम का एक लम्बी ओवर कोट पहनने की प्रथा भी प्रचलित थी। यह परंपरा तो अब मी है लेकिन यह विशेष प्रकार का जामा, जिसे कुछ प्रदेशों में जामा-जोरा भी कहा जाता है, विवाह के अवसर पर दूल्हा पहनता है। कन्धे के ऊपर से जनेऊ की भांति एक बिना सिला हुआ वस्त्र फेंटा भी पहना जाता है। जामा के ऊपर डालकर ढीला-ढीला बांध लेते हैं फिर माथे में पगड़ी बांधते हैं। यहां के लोग आधी या पूरी बांह के कुर्ते भी पहनते हैं। चूड़ीदार आस्तीनें और मिर्जइयां भी पहनी जाती हैं। गोले आकार की कामदार दो पलिया टोपी पहनने की प्रथा भी प्रचलित थी।

सीधी जनपद में एक बुढ़िया मिली थी जो अपने शरीर पर चांदी के बड़े मोटे-मोटे भारी गहने पहनी हुई थी। इसने बताया कि बांह के गहने (बेरवा) को 'बउटा' कहा जाता है जो दोनों बांहों को मिलाकर 500 ग्राम का भी हो सकता है। हाथ की दोनों कलाइयों में 'ककड़ाछन्नी' पहना जाती है। वह भी चांदी का होता है और लगभग उतने ही वजन का होता है। वांह में जो पहना जाता है, वह प्रायः फैटा बांधे हुए सर्प के आकार का होता है, कलाई का बेरवा शेर की मुखाकृति का होता है। इसी प्रकार गले में हंसुली पहनी जाती है, जो चांदी, सोना, अथवा गीलट की भी हो सकती है। यह भी भारी वजन की नक्कासीदार होती है। नाक में फुलिया पहनी जाती है। फुलिया का वजन पांव से दश ग्राम तक हो सकता है। यह भी चांदी तथा सोने की बनी नकासीदार होती है। इसके ऊपर लाल, हरे रंग का नग लगा होता है। कमर में सकरी नौ–दस की चांदी की होती है। इसी प्रकार पायल, काड़ा, झांझरा, पटरी, घुघरी आदि गहने भी पांवों में पहने जाते हैं। गले में एक और आभूषण 'कंठी भगवती' पहना जाता है। सीधी की 70 वर्षीया बतसिया ने बताया कि ''वही अकेली बची है जिसमें गहने का इतना शौक है। नई बहुरिया तो नये-नये गहने पहनती हैं, इतना भारी गहने वह पहिनकर चल भी नहीं सकतीं। मैं खचिया भर गहना पहनती हूं।'' यह पूछने पर कि वह कहां की रहने वाली है, उसने बताया ''अयोध्या की' पर अब तीन पीढ़ी से यहीं रह रही हूं। जाति की बनिया हूं।''

सोन और इसकी सहायक नदियां

संस्कृति और नदी का बहुत घनिष्ठ संबंध है। किसी भी देश की संस्कृति का उदय नदी की घाटियों या उसकी तलहटियों में होता है। सिन्धुघाटी की सभ्यता इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। जहां तक सर्वेक्षित क्षेत्र का प्रश्न है यह भी कई महत्वपूर्ण नदियों से घिरा है। अपने देश के 3 महानदों में एक नद 'शोण' है, जिसे 'सोणभद्र' के नाम से पौराणिक महत्व प्राप्त है। शोण का 14 वां स्थान है और 487 मील यानी लगभग 784 किमी0 लम्बा है। शोण, गंगा का सबसे बड़ा सहायक है और इसका उद्गम मध्य प्रदेश के अमरकंटक का ऊपरी जलस्रोत है।

सोनकथा : कहते हैं अमरकण्टक की पहाड़ी से शोण जब निम्नमुखी होकर देव लोंध घाट के समीप आया तो देखा वहां गायें चर रही थीं। उनके बह जाने का भय था अतः सोध ने विन्ध्याचल से राह के लिए प्रार्थना की, किन्तु वह तो महात्मा अगस्त्य के शाप से अचल हो चला था। क्या करता, उसने असमर्थता व्यक्त की और कहा—'यदि उचित समझो तो मुझे लांघकर चले जाओ। कुलांचे भरकर भी शोण शांत हो जाता, किन्तु वहां चरने वाली गायों से उसने राह छोड़ने के लिए कहा, "ऐसा संभव नहीं है, बुरे दिन आने पर हम विन्ध्य का साथ कैसे छोड़ें नित्य तो इसकी उपत्यकाओं में हरी-भरी घास चरती और इसके सोतों का शीतल जल पीती हूं।" सोण के सामने संकट की स्थिति उपस्थित हो गयी। उसने बीच का रास्ता निकाला और गायों को बचाते हुए ऐसी उछाल मारी कि सामने का पहाड़ बीच से सिमट गया और तब उसका मार्ग प्रशस्त हुआ। तभी से इस स्थान का महत्व बढ़ गया है। कहते हैं, यहां स्नान करने से पशु भी पशु योनि से छुटकारा पा जाता है और मनुष्य का कलुष धुल जाता है।

सोन के बारे में कई पाश्चात्य विद्वानों ने बहुत कुछ लिखा है। 'राजनिघुंट' के रचयिता का कहना है कि सोन का पानी रुचिकर, संतापहारी, हितकर, जठराग्निवर्द्धक, बलदायक, क्षीण अंगों के लिए पुष्टप्रद, मधुरकान्तिप्रद, पुष्टिकर, तुष्टिकर, सुष्टिकर, सुपाच्य और बलवर्द्धक है।—

केवई : अमरकंटक की पहाड़ियों से जब सोन की धारा अधोमुखी होती है तो बघेलखण्ड में आकर उसका पहला सम्मिलन होता है–केवई नदी से। यह नदी सरगुजा जिले की मनेन्द्रगढ़ तहसील की कोरिया पहाड़ियों से निकलती है और अपने तटवर्ती तमाम नालों, झरनों को अपने में समाहित करती हुई खर्री गांव के पास से दक्षिण की ओर प्रवाहित हो जाती है। इसी के तट पर सिलहरा नामक प्राचीन गुफाएं अवस्थित हैं। यह स्थान केवई–सोन–संगम से लगभग 11 किमी0 उत्तर, पूरब पड़ता है।

तिपान : केवई–सोन–संगम के उपरान्त लगभग 27-28 किमी0 दूर जाने पर सोन का संगम तिपान से होता है। यह तिपान सीतापुर गांव के समीप है। तिपान की लंबाई 70 किमी0 है। तिपान का उद्‌भव पेंडरा के समीप का स्थान है।

कुनुक : सोन की तीसरी सहायक नदी है कुनुक जो सरगुजा जिले की भरतपुर मनेन्द्रगढ़ तहसीलों की पश्चिमी सीमा के निकट कुनुक गांव के पास से निकलकर कनवाही गांव के निकट सोन में समाहित हो जाती है। इसके तट पर अनेक गांव बसे हैं। मूल निवासी हैं, वहां की आदिम जातियां।

जोहिला : जोहिला एक पौराणिक नदी है, जिसे त्योतिरथा भी कहा गया हैं। यह अमरकंटक के निकट मैकल पर्वत की उत्तरी ढलान से प्रवाहित होकर निकलती है। इसकी कई सहायक नदियां, नाले, झरने हैं।

कैमुरी महानदी : लगभग 200 किमी0 लम्बी सोन की यह 5वीं सहायक नदी है, जो मंडला जिले की डिडोरी तहसील के शाहपुरा गांव के दक्षिण–पश्चिम छोर से निकल कर ऊबड़-खाबड़ रास्ते को पार करती हुई सोन से संगम करती है।

बनास : बनास को बघेली बनास भी कहा जाता है। यह नदी सरगुजा जिले की भरतपुर तहसील के बराइल गांव के समीप से निकलती है। सहडोल, सरगुजा और फिर सहडोल सीधी का सीमांकन करती हुई प्रसिद्ध चन्द्रेह गांव से पश्चिम भवरसेन घाट के पास सोन-संगम करती है। घनघोर जंगल, पहाड़

से घिरे होने के कारण यहां बनैले जीवों का आतंक रहता था। मधुमक्खियों की अधिकता के कारण सम्भवतः इस स्थान का नाम भ्रमरशैल से बिगड़कर भवरसेन हो गया है। यह नदी लगभग 160 किमी0 लम्बी है।

गोपद : यह नदी सरगुजा जिले को सूरजपुर तहसील के उत्तरी-पश्चिमी जंगली इलाके से निकलकर पश्चिम को बहती हुई गोइली और लोहार नदियों का जल–ग्रहण करती हुई, सीधी और सरगुजा जिले की सीमा निर्धारित करती हुई सीधी जिले में प्रवेश करती है। वर्दी गांव के पास सोन से इसका संगम होता है। इसके संगम के पास भर सामन्तों का प्रसिद्ध गढ़ है

रेंण : रेंण या रिहन्द सोन की अन्य प्रमुख सहायक नदी है जिसकी लम्बाई लगभग 225 किमी0 है। यह सरगुजा जिले के दक्षिण में स्थित माइन पाट के दक्षिणी पश्चिमी भाग के मतरिंगा नामक पहाड़ से निकलकर सरगुजा के अधिकांश भागों को सरसब्ज बनाती हुई सोनभद्र जिले में चोपन और गोठानी के बीच आकर सोन में प्रवाहित हो जाती है। इसके तट पर सांस्कृतिक महत्व के कई गांव–तीर्थ अवस्थित हैं।

कहते हैं इसका पूर्व नाम 'अरण्या' था। पौराणिकता के आधार पर इसे रेंणु या रेंणुका भी कहा जाता है। यह इतनी पवित्र मानी जाती है कि एक श्लोक के अनुसार इसके नाम–स्मरण से ही जन्म-जन्मान्तर का पाप नष्ट हो जाता है। स्मरण से जन्म भर का, दर्शन से तीन जन्म का और स्नान करने से सहस्त्रों जन्मों का पाप विनष्ट हो जाता है। सोनभद्र में इसे बांध पर गोविन्द वल्लभ पन्त सागर के निर्माण द्वारा इसके तट पर कई तापीय विद्युतगृहों का निर्माण किया गया है।

घाघर : घाघर लगभग 80 किमी0 लम्बी नदी है जो सोनभद्र जिले के सोमा नामक गांव के समीप से निकलकर धंधरौल बांध वाले विशाल घाघर जलाशय में डुबकी लगाती है।

कनहर : कनहर 200 किमी0 से भी कुछ अधिक लम्बी सोन की सहायक नदी है, जो मध्य प्रदेश के रायगढ़ जिले में जसपुर तहसील के

चापापाट के दक्षिण–पूरब के ढोंढ़ी गांव से निकलती है। यह लगभग 25 किमी0 जसपुर तहसील में बहती है और लगभग 5 किमी0 तक सरगुजा रायगढ़ जिलों की सीमा का निर्धारण करती हुई सरगुजा जिले में पहुंचती है और लगभग 50 किमी0 तक जिले की यात्रा करके लगभग 100 किमी0 तथा सरगुजा, पलामू तक सीमा निर्धारित करती है।

पंडा नदी : कहते हैं पाण्डवों ने वनवास के समय इसके तट पर विश्राम किए थे और प्यास लगने पर तीर चलाकर धरती के गर्भ से जल निकालकर अपनी तथा पत्नी की पानी से प्यास बुझायी थी। इसकी लम्बाई लगभग 90 किमी0 आंकी गयी है। पंडा, रोहतास जिले के सोनतटीय नवाडीह खुर्द के सामने पलामू जिले में सोन से संगम करती है। इसके तट पर भी कई जनजातीय तीर्थ हैं

कोयल : यह नदी मुख्य रूप से पलामू जिले की सबसे महत्वपूर्ण नदी है जिसकी लम्बाई 200 किमी0 से कुछ कम है। किन्तु इसका जल–ग्रहण–क्षेत्र सोन की अन्य सहायक नदियों में सबसे अधिक है। एक उल्लेख के अनुसार बहुत अधिक जल यह सोन को सौंपती है। इसके अतिरिक्त कररवार बकान, कतना, कसण, मुडला, जनाढ़, चरणगंगा, समधिन और बिजुल आदि नदियां तथा कई महत्वपूर्ण नाले, झरनें भी इसमें मिले हैं, जिनका यथास्थान नामोलेख किया गया है।

नाले-झरनें :

रेंण के सहायक नदी–नाले : 1. घुघर 8 किमी0 लम्बा, 2. गोबरी 40 किमी0 लम्बा, 3. अक्ता 50 किमी0 लम्बा, 4. मोरंगा काफी लंबा, 5. लधो, 6. झरिया, 7. गाकनई 80 किमी0, 8. पीपर कछार 40 किमी0, 9. झरी 25 किमी0, 10. रेडिया 35 किमी, 11. खीरो 35 किमी0।

कनहर के सहायक नदी–नाले : गलफूला नाला 65 किमी0, 2. समेरखार 30 किमी0, 3. रीगर 40 किमी0, 4. वनान 40 किमी0, 5. सेंदूर 80 किमी0, 6. पांगन 80 किमी0, 7. धमा 45 किमी0, 8. लउआ

40 किमी0, 9. घेंघुरा 20 किमी0।

सहदो तथा इसके सहायक नदी-नाले : यह सोनभद्र के दक्षिण सरगुजा के मेडरा पहाड़ी से निकलकर महानदी में मिलती है। 1. बनियां, 2. हंसिया, 3. बुथरा नदी, 4. बभनी, 5. हलफनी, 6. झींकनदी आदि इसकी सहायक हैं।

संकेतात्मक भाषा :

सीधी जिले का यह क्षेत्र सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। हरवाहे, चरवाहे दैनिक जीवन में सांकेतिक शब्दावली का प्रयोग करते हैं। वे हल चलाते समय 'तत ओठी' कहकर बैलों को सीधा चलने के लिए आवाज या आदेश देते हैं तो 'तत ओहो' कर कर घूमने का। इसी प्रकार 'भेड़-छोरी-तोती', 'तीरे-तीरे' का प्रयोग भी वे भेंड़ के पास बैलों को घूमने के लिए करते हैं।

भैंस चराते समय उन्हें चलने के लिए 'हिरे-हिरे', नहलाते समय 'छः-छः', गधे को ले जाते समय 'हला-हला' गाय चराते समय 'गयी-गयी', गाय को खेत में जाने से रोकने के लिए 'ना चले के पक्ष रे पक्ष', हाथी पर अंकुश के लिए 'चगी बारी-बारी', आगे चलने के लिए 'धत-धत', बैठने के लिए 'सुलवट-सुलवट', घूमने के लिए 'मय-मय', घोड़े को आगे बढ़ने के लिए 'हला-हला', कुत्ते को भगाने के लिए 'मुनू-मुनू' या 'पूषी–पूषी' और भगाने के लिए 'दुरे छू' आदि शब्दावलियों का प्रयोग करते हैं। इसी तरह के प्रयोग भाषायी अंतर के साथ अन्य जनपदों में भी किये जाते हैं।

जातीय पंचायतें

सीधी ही नहीं, अपितु सर्वेक्षित लगभग पूरे क्षेत्र में जातीय पंचायतों की परंपरा बहुत पुरानी है। ब्राह्मणों, क्षत्रियों को छोड़कर अन्य प्रायः सभी जातियों में समय-समय पर जातीय पंचायतें होती हैं। इन पंचायतों की सबसे पहली विशेषता यह है कि इनकी कार्यवाही अलिखित अथवा मौखिक होती है। गांव का कोई व्यक्ति जब कोई अपराध कर बैठता है तो उसकी सूचना गांव या पूरे

क्षेत्र में बाढ़ के पानी की तरह फैल जाती है। गांव का उस जाति का मुखिया या चौधरी और उस जाति के चुने हुए चार अन्य व्यक्ति पंचायत में बैठते हैं, उसमें अपराधियों के इजहार तथा उनके खास गवाह लिए जाते हैं और फिर उस पर विचार करके जबानी ही फैसला दिया जाता है। इस पंचायत में व्याह, गृह–कार्य, जातिच्युत करने के मामले, जाति में मिलाने के मामले, स्त्री के भगने-भगाने, उसके साथ व्यभिचार करने, अछूत जाति के किसी मनुष्य के हाथ का छुआ पानी पीने, पक्की या कच्ची खा लेने, जाति अर्जित अथवा बलि किसी छोड़े हुए काम का बीड़ा उसी जाति के दूसरे व्यक्ति द्वारा उठा लेने के मामले पंचायतों में उठाए जाते हैं। अपराध सिद्ध होने पर पुनः प्रायश्चित स्वरूप अपराधी को गंगा-स्नान करने, तीर्थ-यात्रा करने, जातिच्युत किये जाने, विरादरी को खिलाने, जुर्माना भरने के दंड अलग-अलग अपराधी के लिए नियत किए गए हैं।

प्रमुख स्थलों की स्थिति एवं महत्व

ककरशीहा : गोपदवनास के अंतर्गत पूर्वोत्तर कोण में ककरशीहा नाम का एक गांव है। जहां 12वीं शताब्दी के तथा कुछ 9 वीं शताब्दी के मन्दिर और भग्नावशेष गृह प्राप्त होते हैं।

कठौली : सीधी जिला मुख्यालय से लगभग 20 किमी0 दूर दक्षिण दिशा में कठौली नामक गांव में 'देवी ठकुराइन' नाम की एक पहाड़ी है। कुछ लोग इसे 'शपनी दुआरी की पहाड़ी' भी कहते हैं। इस ऊंची पहाड़ी के शिखर पर देवी की एक मूर्ति प्रतिष्ठित है, किन्तु वहां कोई जाता नहीं है। एक किम्बदन्ती है कि देवी-धाम में एक भयंकर नाग देवता रहते हैं। नाग देवता और देवी की पूजा पहाड़ के नीचे से ही की जा सकती है। कहा जाता है कि इनका प्राकट्य पहाड़ के भीतर से हुआ है। यह पहाड़ी इतनी अधिक ऊंचाई पर है और इसकी चढ़ाई इतनी सीधी है कि यहां आसानी से पहुंचा ही नहीं जा सकता।

कस्बिन का मेला–कस्बिन का अर्थ वेश्या से लिया जाता है। औरतें

झगड़े में एक दूसरे को 'कस्बिनियां' कहकर गाली देती हैं। बिहार, मध्य प्रदेश के कुछेक आदिवासी-बहुल इलाके में कस्बिनियों का मेला लगता है जो सामन्ती व्यवस्था का प्रतीक है। जमींदार अथवा राजा, महाराजा ताल्लुकेदार, इस मेले में जाना अपने सम्मान का प्रतीक समझते थे। विलासपुर में यह मेला आज भी होली के अवसर पर लगता है। बदचलन युवक अपने मन-पसन्द औरतों के साथ रमण करते हैं और इसके बदले उन्हें कुछ धन-आभूषण या वस्त्र प्रदान करते हैं। तब भी इस अवसर पर नाच-गाने का बृहद् आयोजन किया जाता है।

कुसुमी-कुसुमी तहसील मुख्यालय पहाड़ियों के बीच सरगुजा की सीमा पर स्थित है। यहां के कच्चे मकान सुसज्जित और अलंकृत हैं। प्रवेश-द्वारों को चारों ओर से मिट्टी से अलंकृत कर दिया गया है। दीवारों पर स्वस्तिक, फूल-पत्ती, गमला आदि के आकार मिट्टी से उभाड़ कर बनाए गए हैं। जूरी में शिवजी का एक मन्दिर है। रमदहा के कुण्ड के पास की गुफा के अंदर एक शिलाखण्ड देखा गया है। मदौरा का कन्हैया दह प्रसिद्ध है।

कंचड़ : तहसील कुसुमी में कंचड़ नामक एक गांव में एक मन्दिर देखा गया, जो एक तालाब के किनारे लगभग 200 वर्ष पूर्व का बना हुआ है। इसमें शिव एवं नन्दी की प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हैं जो 60 x 84 x 35 सेमी0 तथा 90 x 55 सेमी0 नन्दी के आकार की हैं। मकर संक्रान्ति, शिवरात्रि, चैत रामनवमी, क्वार रामनवमी आदि अवसरों पर यहां सभी जाति के लोग एकत्र होते और शिव जी को प्रसाद चढ़ाते हैं। यहां ओझाई-देवाई की प्रथा भी प्रचलित है। यहां का पुजारी कोल होता है जो भभूत देकर बकरा, भेड़ा, नारियल आदि चढ़ाकर भक्तों को उसका प्रसाद वितरित करता है। इस अवसर पर मनसेधू (मर्द) गाते हैं और उनकी मेहरिया (औरतें) उनके साथ नृत्य करती हैं। यहां के लोग दूल्हादेव, काली जी, शारदा मइया, हनुमान, बड़ादेव, फूलमती, वनसत्ती, डीह, घनसान, बघउत, गोरइया आदि देवी-देवताओं की पूजा यथा समय विधि-विधान से करते हैं।

घरमरा-खटाई में घरमरा नामक स्थान पर एक तालाब के किनारे

शिवजी के नव निर्मित मन्दिर में कुछ पुरानी मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। नन्दी 35x40 सेमी0 0 के आकार के अलंकृत हैं। अर्घे का आकार 66x43x 20 सेमी0, एक अन्य अरघा 57x 42x 24 सेमी0 का मापा गया। यहां शिवजी की एक पिण्डी स्थापित है। मन्दिर पत्थर का बना है तथा उसके किनारे तालाब है।

चन्द्रेही : चन्द्रेही गोपदवनास का महत्वपूर्ण स्थान है, जो सोन नदी के तट से लगभग 1 किमी0 पूरब 24 अक्षांस 75 देशान्तर उत्तर और 81 अक्षांस 35 देशांतर पूरब में स्थित है। यहां एक सुन्दर मन्दिर और एक मठ पाया गया है। यहां के मन्दिरों में मूर्तियां स्थापित थीं किन्तु कालान्तर में संभवतः रीवां संग्रहालय में चली गयीं। यह मन्दिर वृत्ताकार है और उसके चारों ओर एक चौतरा बना हुआ है। मन्दिर की भीतर की वेदी भी वृत्ताकार ही है।

चन्द्रेह–सीधी जिला मुख्यालय से लगभग 55 किमी0 दूर सोन के तट पर चन्द्रेह नामक स्थान पर 3 मन्दिर बनाये गये हैं। एक नदी के इस पार है और दो नदी के उस पार हैं। दोनों ओर पहाड़ियां हैं और बीच में सोन की धारा अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित होती रहती है।

यहां का सूर्योदय और सूर्यास्त देखने योग्य है। कहते हैं यह कभी सिद्धपीठ था। राजा-रानी पूजा अर्चा के लिए यहां आया करते थे। चन्द्रेह में नदी के इस पार लगभग 300 मी0 ऊंची एक पहाड़ी पर शंकर जी का काले पत्थर का एक कलात्मक शिवलिंग स्थापित है। मन्दिर लगभग 3x30x4.50 मी0 के आकार का है। महाराज गुलाब सिंह के पिता रघुराज सिंह और उनके पिता विश्वनाथ सिंह ने इन मन्दिरों तथा गढ़ी का निर्माण करवाया था। नदी के उस पार के मन्दिर में श्री कृष्ण भगवान और शिव की मूर्ति प्रतिष्ठित है।

चन्द्रेह में एक 'शिलालेख' भी मिला है जिससे पता चलता है कि दसवीं सदी में जब कल्चुरि नरेश युवराज देव प्रथम का शासन था तब भक्त मयूर की शिष्य-परंपरा में दीक्षित विद्वान तपस्वी प्रशांत शिव इस शोण-संगम पर आये थे, वे मुनिजनों के सखा थे, फल-फूल कमलनाल उनका आहार था। उनका प्रशांत आश्रम था, जहां चिरौंजी का घना वन था। सोन-घाटी से बाहर उन्होंने

अनेक देवालय बनवाये हैं। इन्होंने आश्रम के निकट दसवीं सदी के लगभग मध्य में एक देवालय का निर्माण भी कराया था। देवालय के बाद, दसवीं सदी के कलचुरि शैव–स्थापत्य का प्राचीनतम् उदाहरण है। (देवकुमार मिश्रः सोनके पानी का रंग पृ0-179)

चचाई–केवटी से लगभग 18 किमी0 पश्चिम (24 अक्षांस 46 देशान्तर उत्तर और 81 अक्षांस 25 देशान्तर पूरब) में वोहर नदी पर एक बहुत ही ऊंचा जल–प्रपात है जहां 368 फीट की ऊंचाई से पानी गिरता है।

चोरहट–24 अक्षांस 25 देशान्तर उत्तर और 81 अक्षांस 45 देशान्तर पूरब में स्थित चोरहट नाम का गांव अब प्रसिद्ध हो गया है। यहां के ठाकुरों का पूरे इलाके में आनरेरी मजिस्ट्रेट के रूप में सम्मान है। यहां मध्य प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री अर्जुन सिंह की गढ़ी एक पहाड़ी पर बनी हुई है। गढ़ी के निर्माण की कला बहुत सुन्दर है तथा छोटे-छोटे ईंटों को चुनकर महल बनाया गया है। महल में 10,12 कक्ष हैं। गढ़ी के अन्दर रखे या लगाये गये काष्ठोपकरणों की कला सुन्दर है। यहां कुछ पुरानी गुफाएं हैं जिनमें 'माड़ागुफा' की तरह कुछ कला-कृतियां बनी हुई हैं। चूल्हीखोह में पहाड़ के भीतर एक कन्दरा बनी हुई है।

उमरिया–यहां उमरिया नामक एक स्थान पहाड़ी के ऊपर स्थित है जहां दशहरा के अवसर पर दुर्गा जी की प्रतिमा स्थापित की जाती है और उसकी पूजा पास-पड़ोस के लोग नारियल चढ़ाकर श्रद्धा-भक्ति से करते हैं। प्राकृतिक दृष्टि से यह स्थान अत्यन्त मनोरम है। यहां कई गुफाएं हैं, कई कुण्ड हैं, जिनमें सदा निर्मल- जल प्रवाहित होता रहता है।

देवसर तहसील–यह तहसील 1912, 13 में बनी थी, जिसमें प्राचीन बर्दी तहसील का प्रधान अंश शामिल है। यह रीवां के पूरब पहाड़ी प्रदेश में स्थित है। कैमूर-गिरि-शृंखला के दक्षिण में 81 अक्षांस 57 देशान्तर और 42 अक्षांस 47 पूर्वी देशान्तर तथा 23 अक्षांस 50 देशान्तर, 24 अक्षांस 42 उत्तरी अक्षांस के मध्य स्थित है। इस तहसील के उत्तर में कैमूर की पर्वत शृंखलाएं, पूरब में मिर्जापुर जनपद, दक्षिण में छत्तीसगढ़ जिले का चांग

भखार और कोरिया रियासत तथा पश्चिम में गोपदवनास तहसील है। इसका अधिकतर भाग पहाड़ी है, जिसके ऊंचे हिस्से को 'पाट' कहते हैं। यहां की सबसे बड़ी घाटी 'जियावन का मैदान' के नाम से जानी जाती है, जिसमें खेती-बारी होती है।

मड़वास–मड़वास नामक टप्पा सीधी से 45 किमी0 और कुसुमी से भी 45 किमी0 तथा मझौली से 18 किमी0 दूर है। यहां केवट, बाभन, बनियां, माझी, काछी, तेली, कलवार, ठाकुर, कोल, चमार, गोंड़, बैगा, गहरवार आदि जातियां निवास करती हैं। अमहां, सोंधिया–चनौरी, नगहा, मझगावां, झपरी, खजुरिया, बरहडोला, अकला, बकला, अकउना, जुडौला, परासी आदि गांवों में ये जातियां मिल जुलकर निवास करती हैं। उनमें शैला, बिरही, अहिरही, कोलदादर आदि नृत्य तथा गीत प्रचलित हैं। कलवार, तेली, दादर नाचते हैं। ये लोग नृत्य के अवसर पर डोर (घागरा) चौरासी कौड़ी और पगड़ी पहनकर नगरिया बाजा बजाते हुए यदा-कदा जुलूस भी निकालते हैं और नाचते-गाते हुए घमशान के धाम तक पहुंचते हैं। वहां स्थापित चौरे के पास बीसों बकरों की बलि एक साथ चढ़ायी जाती है। यहां देवी-देवताओं के देवालय बने हैं।

माड़ा या मुड़ी–23 अक्षांस 53 देशान्तर उत्तरी और 82 अक्षांस 35 देशान्तर पूर्वी में स्थित माड़ा या मुड़ी नामक स्थान एक ऊंची पहाड़ी के गर्भ में स्थित है। यहां समीपवर्ती चट्टानों को काटकर गुफाएं बनायी गयी हैं और उन गुफाओं में कलात्मक मूर्तियां उत्कीर्ण की गयी हैं। इन गुफाओं को 3 प्रखण्डों में बांटा जा सकता है जिन्हें वरादान, छेवार और रावन के नाम से जाना जाता है। इनमें कुछ चित्रकारी भी की गयी हैं'। इनमें से कुछ गुफाएं काफी लंबी–चौड़ी हैं। व्याहमोड़ा की गुफा मण्डपाकार और मन्दिर की आकृति की है। कनिंघम ने अपनी रिपोर्ट में इस गुफा को अधूरी लिखा है। (देखिये अर्क्यूलाजिकल सर्वे रिपोर्ट जिल्द 13 पृ0 20 से 31) ये गुफाएं चौथी से 9वीं शताब्दी तक की बनी हुई प्रतीत होती हैं।

योगी पहड़ी–सिरौला गांव से 2 किमी0 दक्षिण–पश्चिम की ओर एक

योगी पहड़ी है। यानी यहां मैदान में एक टीला है। टीले के ऊपर कुछ मूर्तियां और कुछ कलात्मक पत्थर के टुकड़े प्राप्त हुए हैं।

महाराजा गुलाब सिंह बड़े शौकीन व्यक्ति थे। उनके संग्रहालय में उनकी कलात्मक वस्तुएं संगृहीत हैं। उन्होंने मझौली मुख्यालय से लगभग 8 किमी0 दक्षिण नौडीहा नामक स्थान पर लकड़ी के एक बंगले का निर्माण कराया था। बंगले में लगी लकड़ियों पर की गयी नक्काशी बेजोड़ है। बीच-बीच में बेल-बूटे की खुदाई की गयी है। यह बंगला वनास नदी के तट पर स्थित है, जहां राजा साहब शिकार के लिए आते थे। एक पहाड़ी पर निर्मित होने के कारण यह बंगला काफी दूर से ही भव्य लगता है।

शारदा देवी–भीतरी की सीमा पर अमरही गांव के समीप शारदा देवी नामक एक देवी-धाम है, जहां एक पुराने टीले से एक देवी का प्राकट्य बताया जाता है। टीले से प्रकट हुई देवी की स्थापना उस गांव में एक स्थान पर की गयी है। लोगों का कहना है कि मइहर की शारदा मइया ही यहां प्रकट हुई हैं। मूर्ति पुरानी और सुन्दर है। यहां क्वार में नवरात्र के अवसर पर मेला लगता है।

(1) कालीदायी–भितरी में ही कालीदायी की एक अन्य मूर्ति स्थापित है। यह मूर्ति आधी खण्डित है और केवल सिर दिखलाई पड़ता है।

(2) माड़रि देवी : भितरी गांव में ही लगभग 1 किमी0 दक्षिण की ओर एक पुरानी देवी–प्रतिमा प्रतिष्ठित है, जिसे माड़रि देवी के नाम से जाना जाता है। यहां नवरात्र के अवसर पर मेला लगता है और देवी को एक लेहड़ बकरे चढ़ाये जाते हैं। यह एक प्रकार से गोंड़ों की देवी हैं और उनकी पूजा के लिए दूर-दूर से गोंड़ जाति के लोग आते हैं।

(3) नीलकण्ठ–महुअर नामक गांव में नीलकण्ठ भगवान की एक प्रतिमा प्रतिष्ठित है जहां शिवरात्रि और वसंत पंचमी के अवसर पर मेला लगता है। यह स्थान सीधी से लगभग 30 किमी0 दूर है। शिवलिंग 60 सेमी0 ऊंचा है। पत्थर चिकना काला है। उनके बारे में लोगों का कहना है कि

नीलकण्ठ भगवान स्वयं ही यहां सोन के तट से आकर प्रकट हुए हैं।

प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से सीधी जिले के वैढ़न तहसील का सिंगरौली क्षेत्र काफी समृद्ध हो चुका है। यहां कई कोयले की खदानें और तापीय विद्युतगृह निर्मित हुए हैं। इस इलाके के पिपरा नामक ग्राम में कुरन्द जाति का बहुमूल्य पत्थर प्राप्त है और अगरिया जाति के लोग पुरानी भट्ठी की रीति से इस लौहयुक्त पत्थर को पिघलाकर उससे लोहा निकालते और तरह-तरह के औजार बनाते हैं। यहां से बस-ट्रेन द्वारा वाराणसी जाया जा सकता है।

—●—

सर्वेक्षित क्षेत्र की मूर्तिकला : मंदिर तथा तीर्थस्थल ★
मिर्जापुर–सोनभद्र

अमिला-भवानी–सोन पार चोपन से लगभग 22 किमी० दक्षिण, पश्चिम की ओर आदिवासी बहुल क्षेत्र में अमिला भवानी का बड़ा प्रमुख स्थान है। यहाँ देवीस्थान पर पत्थर की एक प्रतिमा स्थापित है। बाजे-गाजे के साथ दर्शनार्थी जुलूस में आते और देवी की परिक्रमा करके नृत्य करते हैं। उन्हें रोट, जई, त्रिशूल, नारियल, रोरी आदि चढ़ाया जाता है। देवी ओझा पर सवार होती हैं तो 'गुरदम' भांजा जाता है, 'बाना' धारण किया जाता है।

ऑही चौबान की मूर्तियां : कछवां जेल से कई मूर्तियां चोरी चली गयी थीं, जिन्हें प्राप्त कर ऑही चौबानगांव में एक प्रतिष्ठित सज्जन के द्वार पर रखा गया है। कला की दृष्टि से ये दोनों मूर्तियां अद्भुत हैं। यहां विष्णु की एक मूर्ति दो भुजा वाली अत्यंत सुन्दर देखी गयी। उनके एक हाथ में शंख और दूसरे में चक्र सुशोभित है। सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में 4 मालाएं, घुटने तक जनेऊ, घुटने के नीचे देवी-प्रतिमा, दोनों ओर दो देवी की मूर्तियां तथा पार्श्वभाग में कुछ अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियां बनी हुई हैं। हल्के गुलाबी आभा के पत्थर की बनी यह मूर्ति सुन्दर है। मूर्ति का आकार 80x60 सेमी० है।

इसी गांव में कुएं के पास विष्णु भगवान की एक अन्य सुन्दर मूर्ति 1.20x.75 मीटर के हल्के गुलाबी रंग की बलुआ पत्थर की रखी हुई है। इस मूर्ति के शिरोभाग के पीछे कमल-दल बना है। दोनों ओर दो-दो देवी मूर्तियां–बाएं से सरस्वती, उनके नीचे अश्व, हाथी, गज उत्कीर्ण हैं। ये ही दूसरी ओर भी बने हैं। विष्णु भगवान खड़े हैं। उनके सिर पर मुकुट सुशोभित है। कानों में कुण्डन, गले में तीन मालायें, कमर में जनेऊ आदि से वे विभूषित हैं। यह

★ पलामू के मन्दिरों, तीर्थों का विवरण पलामू के परिचय के साथ ही दे दिया गया है।
—लेखक

मूर्ति चतुर्भुज है और चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म सुशोभित है। मूर्ति खण्डित होती हुई भव्य है। यह मूर्ति वहां के श्री अच्युतानन्द चौबे के दरवाजे पर पड़ी हुई है।

ऑही गांव में ही पत्थर का एक मंदिर काफी सुन्दर बना हुआ है। मंदिर के पार्श्वभाग में एक शिलालेख मंदिर में ही जड़ा हुआ है जिसमें अंकित है 'श्री गणेशाय नमः' श्री सं0 1911-1299 फ0 मिति वैशाख शुदी 12 का लाला गंगाप्रसाद कायस्थ सा0 मो0 ऑही श्री महाराज महादेव का शिवाला तैयार कर स्थापित किया। कृपा भगवती जी की शुभ...।

यह मंदिर गुलाबी रंग के लाल चिकने पत्थर का बना हुआ है। नीचे से ऊपर तक लगे प्रत्येक पत्थर में बारीक पच्चीकारी है मंदिर 4.90x2.75x7 मीटर के आकार का है। उसके भीतर 15 सेमी0 ऊंचा एक शिवलिंग बीच में स्थापित है और 12 छोटे अन्य शिवलिंग भी स्थापित किए गये हैं। मंदिर का भीतरी भाग 1.96x1.96 के आकार का है। उसके भीतर की दीवार में 35x26 सेमी0 के आकार की गणेश प्रतिमा प्रतिष्ठित है। इसी प्रकार पर्वत उठाई हुई हनुमानजी की प्रतिमा 80x45 सेमी0 की स्थापित है जो अहिरावण को पांव के नीचे दबाए हुए है।

इसी प्रकार भैरव की मूर्ति 35x26 सेमी0 के आकार की तथा शिव भगवान की मूर्ति 39x27 सेमी0 की है। लक्ष्मी नारायण 40x26 सेमी0 के आकार के स्थापित हैं। मन्दिर भीतर से अष्टबल दिखायी पड़ता है। मुख्य मंदिर के सामने बरामदा है। मंदिर के प्रवेश द्वार पर 35x32 सेमी0 के आकार की गणेश प्रतिमा स्थापित है। प्रवेश द्वार के ऊपर मंदिर का दरवाजा भी पत्थर का कलात्मक बनाया गया है जिसका आकार 1.50x1.01 सेमी0 है। प्रवेश द्वार के दोनों ओर देवी-देवताओं की सुंदर मूर्तियां मंदिर के दीवार के पत्थर में उत्कीर्ण हैं। मंदिर के पत्थर इतने बारीकी से जड़े गए हैं कि लगता है जैसे एक ही पत्थर को मंदिर का आकार दे दिया गया हो।

ओइनी : सोनभद्र में कर्मनाशा, खलियारी के मध्य ओइनी नाम का एक गांव है। इससे लगभग 500 मीटर उत्तर की ओर एक पुराने वृक्ष के नीचे

एक छोटा सा मन्दिर निर्मित है, जिसमें एक शिवलिंग स्थापित है। यह शिवलिंग सफेद रंग के पत्थर का पुराना है। इससे थोड़ी दूर पर हनुमानजी की एक मूर्ति 90x68 सेमी0 के आकार की देखी गयी। यहां कोई बहुत पुराना मन्दिर था जो भग्नावशेष हो जाने के कारण नष्ट हो गया। जमीन के अंदर से पुरानी पक्की ईंटें भी देखी गयीं जिनका आकार 28x13 सेमी0 है।

कन्तित–कन्तित मिर्जापुर नगर से विन्ध्याचल के मार्ग पर ओझला पुल से उत्तर-पश्चिम की ओर गंगा-तट का वह महत्वपूर्ण भू-भाग है, जहां शताब्दियों ही नहीं, सहस्राब्दि पूर्व के पुरावशेष प्राप्त होते हैं। यहां गंगा के उत्तरी तट पर अगियावीर कोट, गहरवार मीट और कड़ेरुआडीह नामक स्थानों पर पर्याप्त पुरा-सम्पदा भरी पड़ी है। यहाँ से कुछ सिक्के, मिट्टी के पात्र, टेराकोटा प्रस्तर मूर्तियां, कच्ची-पक्की ईंटें, मिट्टी की कच्ची गोलियां आदि वस्तुएं प्राप्त हुई हैं। गंगा की धारा से ही बड़े भाग कटकर गंगा में विलीन हो चुके हैं जिसके फलस्वरूप पुरावशेषों का भंडार नष्ट हुआ है। यहां मजबूत पक्की ईंटें मिलती हैं। चूंकि भदोही से कड़ेरुआ की दूरी मात्र 22 किमी0 है और भदोही से मिर्जापुर जाने का यह सीधा मार्ग था, अतः ऐसा अनुमान किया जाता है कि शताब्दियों पूर्व यह स्थान सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण रहा था। लगभग 2 किमी0 की परिधि में कुछ शिलालेख, कलश, मृण (मिट्टी) मूर्तियां, अलंकरण आदि वस्तुएं भी मिली हैं। यहां नारी की एक मृण-मूर्ति खण्डित सिर वाली मिली है जो अलंकरण की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। उसके गले में हार सुशोभित हैं। इस मृणमूर्ति का आकार 7x5 सेमी0 है। इसी प्रकार एक पुरुष की विकराल मूर्ति मिली है, जिसका आकार 10x7 सेमी0 है। मिट्टी का एक लघु फलक मिला है, जिसका आकार 6x5 सेमी0 है। इसी प्रकार नर-नारी की मूर्तियां मिली हैं। नारी की ही एक अन्य मूर्ति 8x7 सेमी0 की देखी गयी। इसी प्रकार मिट्टी के कुछ पात्र मिले हैं जिन पर चमकदार काले या लाल रंग की पालिश लगी है। पत्थर की ओखली तो प्रायः मिल जाया करती है। सर्वेक्षण के दौरान पक्की मिट्टी के कुछ पशु-मूर्तियां जैसे—शेर, गाय, बैल, घोड़ा, हाथी आदि भी मिले। ये पुरावशेष कुछ पाषाण कालीन और कुछ मध्यकालीन प्रतीत होते हैं।

कन्हरा–कन्हरा (शतद्वारी) से 4 किमी0 पश्चिम उत्तर की ओर स्थित है। यहां मंदिरों के भग्नावशेष, पुराने टीले, कलाकृतियां आदि प्राप्त हैं।

आदिशक्ति–यह खण्डित भव्य प्रतिमा 1.27x0.90 मी0 की सफेद रंग के चिकने पत्थर की बनी है। (बायां) पांव कटा है, दाहिना नीचे से मुड़ा है। दाहिने पांव में कड़ा, सूकर नीचे, दाहिने असुरमर्दिनी, कृपाणधारी ढाल, कृपाण वाले हाथों में नरमुण्ड, दो हाथ खण्डित एक अन्य, हाथ में खप्पड़, (बायां) हाथ मुड़कर ठुड्डी का स्पर्श करता हुआ दिखाया गया है। कानों में कुण्डल सिर पर मुकुट, मुख खुला हुआ, दांत दिखलायी पड़ते हुए, दाहिने त्रिशूल, डमरू, हाथ खण्डित-4, नीचे दाहिने देव-प्रतिमा। कुल बीस हाथ दिखाये गए हैं। नीचे सिंह, सूकर हैं।

त्रिदेव–क्षीरशायी, अन्य देवतागण, आराधना-रत, कच्छप, मत्स्य, मकर सभी काले-चिकने, पत्थर में। मूर्ति बहुत ही सुन्दर और कलात्मक है। आकार 65x62 सेमी0, उसी में देवी-प्रतिमा भी थी, जो खण्डित है। पूरी मूर्ति चन्द्राकार। यहां और भी मूर्तियां तथा प्रस्तर-स्तम्भ, कलश आदि बिखरे पड़े हैं जिनका विवरण निम्नवत् है—

क्रम	मूर्ति	आकार	पत्थर का रंग	अन्य
1.	देवी	32x19 सेमी0	सफेद	खण्डित
2.	गणेश	16 सेमी0	सफेद	बैठे हुए
3.	वाराह	40x20 सेमी0	सफेद	घोड़े के मुंह की आकृति
4.	स्तम्भ	38x14 सेमी0 देवी प्रतिमाएँ	सफेद	नृत्य शैली

कोरियांव–सोनभद्र जिले में विजयगढ़ परगना के एक बड़े गांव का नाम कोरियांव है। पन्नूगंज थाना से दो किमी0 पूरब उत्तर की ओर स्थित इस गांव में एक पुराना पोखरा है। इसके पूरबी–दक्षिणी भीटे पर फूलमती महारानी

का एक छोटा सा मंदिर है जिसमें देवी की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यह मूर्ति भी पोखरे से ही खुदाई कराते समय प्राप्त हुयी थी। मंदिर तथा भीटा पर कुछ अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियां भी स्थापित हैं जिनमें दो शिवलिंग लगभग 60 सेमी० तथा 30 सेमी० के हैं। पत्थर काला है। देवी-प्रतिमा की ऊंचाई 30 सेमी० के लगभग है। यहां प्रागैतिहासिक कालीन एक कुल्हाड़ी, पत्थर की बड़े आकार की लगभग 22 सेमी० लम्बी 15 सेमी० चौड़ी मिली थी।

कुड़ारी–कुड़ारी सोनभद्र के दक्षिणांचल का एक महत्वपूर्ण शक्तिधाम है। यह स्थान गोठानी-अगोरी से लगभग 10 किमी० दूर सोन के तटपर स्थित है। यहां फिलहाल एक मंदिर में कुछ मूर्तियां पड़ी हुई हैं जिसमें देवी की मूर्ति मुख्य है। कलात्मक पत्थरों के टुकड़ों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि सोलहवीं शताब्दी में यह स्थान काफी समृद्ध और धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा होगा। यहां जो प्रतिमाएं प्राप्त हुयी हैं उनसे ऐसा लगता है कि गोठानी और अगोरी दोनों स्थान एक समय में एक साथ शक्ति–साधना के केन्द्र रहे होंगे। जैसी मूर्तियां गोठानी में प्राप्त हैं, लगभग वैसी ही यहां भी। वहां किसी बड़े मंदिर के होने का संकेत मिलता है। आदिवासी बहुल इस इलाके में नवरात्र के अवसर पर एक माह का मेला लगता है

खलियारी–राबर्ट्सगंज से पन्नूगंज पकरहट होते हुए कर्मनाशा नदी पार करके एक पक्की सड़क खलियारी तक चली जाती है। दसवीं–ग्यारहवीं शताब्दी में यहां कुछ छोटे मंदिरों का निर्माण किया गया होगा और उसमें लघु आकार की मूर्तियां स्थापित की गयीं होंगी। खलियारी बस स्टेशन से लगभग 150 मीटर पश्चिम की पहाड़ी पर भग्नावशेष रूप में एक वृक्ष के नीचे ऐसी ही कुछ मूर्तियां सफेद पत्थर की बिखरी पड़ी मिलीं। जिनमें एक खण्डित शिवलिंग 19 इंच ऊंचा देखा गया। इसी के साथ नन्दी और विष्णु की प्रतिमाएं खण्डित देखी गयीं। इस स्थान से लगभग 300 मीटर पश्चिम एक और छोटा सा मन्दिर एक नाले के तट पर अभी हाल का बनवाया हुआ है जिसमें प्रकटनाथ की मूर्ति स्थापित है। प्रकटनाथ यानी शिव। जमीन के भीतर से निकलने के कारण उनका नाम यहां के लोगों ने प्रकटनाथ कर दिया। यह शिवलिंग काले पत्थर

का 12वीं शताब्दी का प्रतीत होता है

खोराडीह–राबर्ट्सगंज—मिर्जापुर मार्ग पर राबर्ट्सगंज से 22 किमी0 दूर करमा, करमा से 6 किमी0 पूरब-पश्चिम के कोण पर खैराडीह नामक गांव में एक पुराना बड़ा ताल है जिसे गांव के लोग असुरायण ताल कहते हैं। तालाब के पूर्वी छोर पर ही कुछ मूर्तियां देखी गयीं। मूर्तियों में गड़े हुए कुछ प्रस्तर स्तम्भ देखे गये। जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर 1.10x.42x.18 सेमी0 आकार के एक पत्थर पर घुड़सवार योद्धा की मूर्ति 40x20 सेमी0 आकार की बनी थी। ऐसी-ही दूसरे स्तम्भ पर एक अन्य योद्धा की मूर्ति बनी थी जिसका आकार (स्तम्भ) 1x32x18 सेमी0 था। इसी प्रकार नन्दी प्रतिमा 40x30 सेमी0, शिव-पार्वती की खण्डित प्रतिमा 20 सेमी0, मंदिर का कलश 1.70 मी0 वृत्ताकार, गणेश प्रतिमा 5x3 सेमी0 (श्री राम विलाश सिंह के घर तालाब से प्राप्त) मापी गयी। दो और प्रतिमा–स्तम्भ 1.20 मी0 के गड़े हुए पाये गये। यहाँ पूरब उत्तर की ओर मंदिर के भीतर कुछ मूर्तियां स्थापित हैं। इसमें नन्दी की मूर्ति 35x25 सेमी0 आकार की है जो काफी कलात्मक और सुन्दर है। बैल सजा हुआ बैठा है। हनुमानजी की प्रतिमा पांवों के नीचे राक्षस को दाबे हुए 1.30x.80 मीटर के आकार की स्थापित है। इसी मंदिर के समीप नीम के वृक्ष तले कुछ खण्डित प्रतिमाएं पड़ी हुयी हैं जिनमें से एक हनुमानजी की मूर्ति 12वीं शताब्दी की प्रतीत होती है। यह 1.25x.45 मी0 आकार की खुरदुरी पत्थर की है जो तीन खण्ड हो चुकी है। यहीं एक अन्य प्रतिमा 50x30 सेमी0 आकार की तथा अरघा, शिवलिंग, अन्य सुन्दर मूर्तियों के भग्नावशेष पड़े हुए हैं। ये सभी मूर्तियां चन्देल कालीन प्रतीत होती हैं, क्योंकि प्रस्तर स्तम्भ पर बने चन्द्र, शिवलिंग, हथेली के आकार–गोठानी, अगोरी में प्राप्त अवशेषों के मेल में हैं। कुछ लोगों ने बताया कि यहां एक शिलालेख भी देखा गया था, जो अब अनुपलब्ध है।

गोठानी के मंदिर और मूर्तियां–अगोरी से लगभग दो किमी0 पूरब तथा चोपन से लगभग 7 किमी0 पश्चिम सोन, बिजुल और रेणु के संगम पर गोठानी नामक एक गांव बसा है जिसे दसवीं, ग्यारहवीं शताब्दी में 'द्वितीय काशी' के रूप में जाना जाता था और जिसे स्थानीय लोग 'शोमनाथ' के नाम

से पुकारते हैं। यहा नदी के तट पर ही 10-12 की संख्या में छोटे-बड़े मन्दिरों का निर्माण कराया गया है जिनका निर्माण-काल वहां पर गड़े शिलालेख के अनुसार सं0 1601 है। इन मंदिरों में एक से एक सुन्दर पत्थर की कलात्मक मूर्तियां स्थापित की गयी हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है

1. बंसरा देवी—1.2x.6 मी0 काला चिकना पत्थर, 2. शोमनाथ बाबा का शिवलिंग 45 सेमी0 ऊंचा, जमीन में गड़े डुए भाग को छोड़कर। शिवलिंग की मोटाई 1.15 मी0 वृत्ताकार है। 3. नन्दी 45x22 सेमी0, 4. दुर्गाजी 68x38 सेमी0, 5. हनुमान विकराल मूर्ति 82x60 सेमी0, 6. दुर्गा जी 60x37 सेमी0, 7. नारायण प्रतिमा 56x32सेमी0, 8. गणेश 37x30 सेमी0, 9. दुर्गाजी 59x45 सेमी0, 10. गणेश 50x30 सेमी0, 11. शेष पत्थर 70x55 सेमी0, 12. लक्ष्मण 75x43 सेमी0, 13. दुर्गाजी 60x43 सेमी0 14. गणेश 45x28 सेमी0, 15. गणेश 53x38 सेमी0, 16. गणेश चतुर्भुज, 17. हाथी चतुर्भुज, 18. गजारूढ़ गणेश 80x36 सेमी0, 19. दुर्गा जी 98x75 सेमी0। इसके अतिरिक्त लगभग 20 शिवलिंग और हैं।

गोधना की मूर्तियां : गोधना नामक गांव में एक तालाब है जिसके चारों कोणों पर टीले देखने को मिले। लोगों का कहना है कि इन चारों स्थानों पर 4 मंदिर बने हुए थे। विवरण इस प्रकार है—

दुर्गा–प्रतिमा : यहां के एक टीले पर दुर्गाजी की विशाल भव्य खण्डित प्रतिमा मिली। मूर्ति का पत्थर बलुआ होने के कारण खुरदुरा है जिसका आकार 81x7 सेमी0 है। देवी की कुल 18 भुजाएं थीं जिनमें से अधिकतर खण्डित हैं। देवी सिंह पर सवार हैं। कला की दृष्टि से मूर्ति बहुत ही सुन्दर है।

शिव-पार्वती–यहीं 51x40 सेमी0 के आकार की खुरदुरे पत्थर की शिव-पार्वती की युगल मूर्ति सतद्वारी की सम्पृक्त प्रतिमा जैसी ही देखी गयी। शिव-पार्वती अपने गणों और वाहन के साथ लास्य रूप में विराजमान हैं। थोड़ी खण्डित होती हुई यह प्रतिमा कला की दृष्टि से अत्यंत सुन्दर है और 12 वीं शताब्दी की प्रतीत होती है।

इस स्थान पर जमीन के अंदर से 35x22x6 सेमी0 की पक्की ईंटें निकाली गयीं। मिट्टी हटाने के बाद मंदिर की नींव भी देखी गयी जिसकी लम्बाई 13.7x13 मीटर आंकी गयी। नींव की दीवार 1.20 मीटर चौड़ी है।

मंदिर तथा मूर्ति–देउवा तालाब के पास कोट के समीप उत्तर पूरब की ओर मंदिर के अवशेष देखे गये। वहां एक टीला है टीले के ऊपर दुर्गा जी की मूर्ति पड़ी हुई है। 1.48x.40 मीटर का एक प्रस्तर खण्ड देखा गया जिसमें नौ दुर्गा उत्कीर्ण हैं। इसमें देवी की मूर्तियां विभिन्न आकार–प्रकार में कलात्मक बनी हैं। पत्थर बलुआ है। यहीं पर विष्णु की खण्डित मूर्ति कलात्मक है और कला की दृष्टि से बहुत ही सुंदर है जिसका आकार 51x48 सेमी0 मापा गया।

विष्णु–विष्णु के कानों में कुण्डल, कमर में कमर का आभूषण, अधोवस्त्र स्पष्ट है किन्तु यह मूर्ति खण्डित है। यहां एक मूर्ति स्तम्भ 80x48 सेमी0 का पड़ा हुआ पाया गया। एक अन्य मूर्ति 90x70 सेमी0 की एक प्रस्तर स्तम्भ के बीच में उत्कीर्ण देखी गयी। यह खण्डित है किन्तु बहुत ही सुन्दर। यह विशाल मूर्ति थी। उस स्तम्भ में दोनों पांव कट गये हैं। इसमें शिव के गण बने हुए हैं जिनसे ऐसा लगता है कि बीच में शिव-पार्वती की सुन्दर सम्पृक्त प्रतिमा रही होंगी। ये सभी मूर्तियां हल्के गुलाबी रंग के बलुआ पत्थर की बनी हुई हैं। यहां एक अर्घा 58x58 सेमी0 का देखा गया। इसी प्रकार का शिवलिंग 52 सेमी0 ऊंचा और 55 सेमी0 के व्यास में प्राप्त हुआ। इसी प्रकार यहां एक और भी कलात्मक प्रस्तर-खण्ड देखा गया।

ऐसा लगता है कि यहां भी कोई मंदिर निर्मित रहा होगा; क्योंकि पुरानी ईंटें भी किनारे से टूटी हुई देखी गयीं। 5x5 मीटर के आकार का एक चौक भी प्राप्त हुआ जो जमीन की सतह से दो मीटर ऊंचा है।

कोट–कछवां के समीप गोधनागांव के आसपास, जैसाकि बताया गया, 4–5 की संख्या में कोटें मिलती हैं। ये कोटें जमीन की सतह से लगभग 4मी0 ऊंची हैं। यहां की एक कोट लगभग 4 एकड़ क्षेत्र में भग्नावशेष रूप में पड़ी देखी गयी। इसके चारों ओर खायीं बनी है। दो किनारों पर दो मंदिर बने

हैं। कोट के ऊपरी भाग में पुराने बर्तनों के टुकड़े, कुछ ईंटें प्राप्त हुईं। गांव के लोगों को एक सिक्का भी मिला था। इस कोट के चारों कोनों पर बड़ी मिनारों के अवशेष टीले के रूप में प्राप्त होते हैं।

शिव–मंदिर–इस बड़ी कोट से लगभग 10 मी0 दक्षिण एक शिव–मंदिर बना हुआ है जिसमें कई सुन्दर मूर्तियां दीवारों में जड़कर सुरक्षित कर दी गयी हैं। इस मंदिर में हरित आभा वाले पत्थर का एक शिवलिंग 55 सेमी0 ऊंचा (गड़े हुए भाग को छोड़कर) अर्घे में स्थापित है। इसका व्यास 95 सेमी0 है। मंदिर में 1.05x.50 मीटर की एक विष्णु प्रतिमा स्थापित है जो कला की दृष्टि से सुन्दर है। विष्णु के गले में छोटी बड़ी तीन मालाएं घुटने तक, एक बड़ी माला सुशोभित है। मूर्ति चतुर्भुजी है। विष्णु के सिर पर मुकुट सुशोभित है। यहां हनुमानजी की एक प्रतिमा 1.05x55 मी0 की स्थापित है। यहां शिव-पार्वती की अत्यंत सुन्दर कलात्मक सम्पृक्त प्रतिमा 1.10x.65 मी0 की स्थापित है। शिव जी अपने गणों के साथ हैं और प्रतिभा अत्यंत लास्य रूप में है। पास में शिवलिंग कार्तिकिय, नीचे बैल, दाहिने हाथ में त्रिशूल, बायां पांव मुड़ा हुआ और उसके ऊपर दाहिनापांव, बाएं हाथ के ठेहुन पर टिका हुआ दिखाया गया है।

इसी मंदिर में विष्णु और लक्ष्मी की चतुर्भुजी मूर्ति 75x7 सेमी0 की जड़ी हुई है। विष्णु भगवान जनेऊ धारण किए हुए हैं। विष्णु के बाम भाग में लक्ष्मी जी खड़ी हैं। यह मूर्ति सुन्दर है किन्तु खण्डित हो चुकी है। यही नागदेव और नागदेवी की एक सम्पृक्त प्रतिमा 55x35 सेमी0 के आकार की देखी गयी। यह प्रतिमा खड़ी-आभूषित है। नागदेवता और नागदेवी अपने एक-एक हाथ से उनके फन का स्पर्श कर रहे हैं। यह मूर्ति भी खण्डित किन्तु कला की दृष्टि से अत्यंत सुन्दर है। इस मंदिर में एक अन्य शिवलिंग 30 सेमी0 ऊंचा और 60 सेमी0 के व्यास में एक अर्घे में स्थापित है। विष्णु की एक अन्य चतुर्भुजी प्रतिमा 65x40 सेमी0 के आकार की पड़ी हुई है। विष्णु भगवान के गले में मालाएं और जनेऊ स्पष्ट है। पार्श्व भाग में लक्ष्मी जी विराजमान हैं। नन्दी की एक खण्डित मूर्ति 55x30 सेमी0 के आकार की देखी गयी।

गोरारी–राबर्ट्सगंज (सोनभद्र) से 2 किमी0 दक्षिण–पश्चिम की ओर गोरारी नामक ग्राम के सरहद पर तालाब के समीप एक पुराना मंदिर भग्नावशेष रूप में वर्तमान है। मंदिर के भीतर बाहर, वृक्ष के नीचे कुछ वर्ष पूर्व तक विभिन्न आकार-प्रकार की कलात्मक मूर्तियां स्थापित थीं। ज्ञात होता है कि मंदिर का प्रथम निर्माण नवीं शताब्दी में हुआ होगा। अधिकतर सफेद रंग के पत्थर की बनी मूर्तियां तथा पत्थर के कलात्मक टुकड़े, स्तम्भ, कलश आदि खण्डित हो चुके हैं। वर्तमान मूर्तियों का विवरण इस प्रकार है—

शिवलिंग—काला चिकना पत्थर 65 सेमी0, व्यास 30 सेमी0 ऊंचा, खण्डित विष्णु प्रतिमा, काला चिकना पत्थर, मंदिर की दीवारों में जड़ी गणेश-प्रतिमा 79x30 सेमी0। कलात्मक स्तम्भ मूर्ति युक्त 75x60 सेमी0, सरस्वती प्रतिमा-सफेद पत्थर 85x35 सेमी0, देवी-प्रतिमा 60x35, विष्णु प्रतिमा 65x25, देवकन्या 60x25, विष्णु 65x30, लक्ष्मी-गणेश 40x25 (युगल) 3 स्तम्भ 39x30 सेमी0, 3 कलश 2.50 मी0 व्यास में।

मंदिर तीन भागों में बना था। मंदिर के पीछे ईंटों की बनी नींव 60 सेमी0 चौड़ी देखी गयी। इसी प्रकार मंदिर से दाहिनी ओर उत्तर, पांच मीटर के बाद भी एक 60 सेमी0 चौड़ी नींव देखी गयी। सामने कूप जहां पत्थर बिखरे पड़े हैं। वर्तमान मंदिर की पुरानी नींव बाहर से 3.90x3.85 मीटर के आकार की है। इसके बाद नींव 8.20x6.15 मी0 के आकार की पायी गयी। बरामदा की नींव 3.79x2.25 मी0 आकार की है। यहां जो ईंट पायी गयी उसका आकार 30x22.6 सेमी0 है।

गौरी-शंकर–राबर्ट्सगंज से दस किमी0 पश्चिम गौरीशंकर का मंदिर है, जहां शिवरात्रि और वसंत पंचमी पर मेला लगता है। वट वृक्ष के नीचे एक टीले पर बना यह मंदिर तो अभी हाल में बना है, लेकिन इसमें प्रतिष्ठापित शिवलिंग में ही पार्वती का आकार बना है। मस्तक पर चन्द्रमा है। शिवके तीन नेत्र हैं। मंदिर से बाहर वृक्ष के नीचे कार्तिकेय, दुर्गा, हनुमान, आदि देवी-देवताओं की प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हैं। मूर्तियों का माप है—1. गौरीशंकर 107x67 सेमी0 सफेद 24x42 सेमी0 सफेद 2. नन्दी 24x25 सेमी0 काला, 3.

भैरव 42x28 सेमी० सफेद, 4. दुर्गा 52x40 सेमी० काला पत्थर।

चण्डिका देवी–चुनार, मिर्जापुर, वाराणसी के तिराहे पर गंगा-तट पर स्थित चण्डिका देवी की मूर्ति 1.80x1 मीटर के आकार की है। प्रतिमा चतुर्भुजी और काले पत्थर की है। यहीं हनुमानजी की स्थापना बाद में की गयी है। जीह्वा, आंखें, मस्तक ऊंचा, जूरा आदि के कारण मूर्ति अत्यंत भव्य दिखलाई पड़ती है। यहीं गणेशजी की भी एक मूर्ति 1.05x.90 मी० के आकार की स्थापित है जिसका पत्थर सफेद किन्तु खुरदुरा है। यहां एक वृक्ष के नीचे चौतरे पर 4 अन्य खण्डित मूर्तियां पड़ी हुई हैं। गणेश की मूर्ति कलात्मक और 1.10x.40 मीटर के आकार की है। इन सभी मूर्तियों का पत्थर गुलाबी रंग का है। कमण्डलधारी की एक मूर्ति 90 सेमी० x 50 सेमी० के आकार की है। एक अन्य मूर्ति लगभग 1 मीटर ऊंची और 50 सेमी० चौड़ी है। मंदिर का निर्माण पत्थर से किया गया है और जुड़ाई सुर्खी-चूना से की गयी है।

ज्वालामुखी देवी–कोटा, शक्तिनगर, चिलकाटांड में नवरात्र में विशेष पूजाभिचार होता है। नवरात्र के प्रथम दिवस जयी जमायी जाती है—जिसे नवें दिन देवी को चढ़ाते हैं। मोरपंख लेकर ढोलक, झांझ, झाल, करताल बजाकर समूह में स्त्री-पुरुष सभी नृत्य करते हुए हथेली पर प्रज़्ज्वलित अग्नि की अंगीठी लिये, जयी का पात्र लिये झूमते, उछलते हुए धाम में आते हैं। बैगा, कोल, कोइरी, धोबी तथा अन्य जाति के लोग यहां सम्मिलित होते हैं। वे त्रिशूल बाना से जीभ में छेद कर साधना की परिपक्वता का परिचय देते हैं। वे लोहे का गुरदा के गोले से पीठ पर प्रहार करते हैं और कहते हैं, 'देवी की कृपा से चोट नहीं लगती।' वे रक्तरंजित तक हो जाते हैं।

यह मंदिर गहड़वाल गांव के राजा द्वारा बनवाया बताया जाता है। मंदिर में जिह्वा (आकार 21x12 सेमी०) स्थापित है। नीम के वृक्ष तले स्थापित मूर्तियां हैं—शीतला, शिवलिंग जो रानी वारी गांव से लायी गयी हैं। इसके अलावा और भी शिवलिंग हैं। यहां त्रिशूल गाड़े जाते हैं। ज्वालामुखी की केवल जिह्वाकृति है। ऐसी मान्यता है कि यह देवी पास के नाले से प्रकट हुई थी। अन्य मूर्तियां जो इस क्षेत्र में हैं—1. कोहरवल गांव में बीना के पास 45

सेमी0 ऊंचा शिवलिंग। 2. अउड़ी मोड़ पर हनुमान प्रतिमा लगभग 1.5 मी0 ऊंची। 3. पार्वती 30 सेमी0, 4. दुर्गा 30 सेमी0, 5. तांत्रिक पिंडों की संख्या-5

नकुण्डी देवी–अहरौरा से लगभग 10 किमी0 पश्चिम चुनार-मार्ग पर नकुण्डी देवी नामक एक स्थान एक पहाड़ी पर बना हुआ है। यहीं बेलवां के समीप जरगों बांध बनाया गया है। यहां चतुर्भुजी देवी की कलात्मक सुन्दर मूर्ति बहुत पहले से स्थापित है। देवी शेर पर सवार हैं। यहां पहुंचने के लिए 360 सीढ़ियां चढ़नी होती हैं। यहाँ दो देवी मूर्तियां स्थापित हैं, एक बांध के अन्दर, जिनका दर्शन बांध का पानी सूख जाने पर किया जा सकता है, इन्हें 'पुरानी देवी के ' के नाम से और जो पहाड़ पर हैं उन्हें 'नयी देवी' के नाम से जाना जाता है। पहले यह कोलों, यादवों की पूज्य देवी थीं। कहते हैं लोरिक ने भी इनसे विजयी होने का वरदान प्राप्त किया था।

नलराजा–राबर्ट्सगंज जिला मुख्यालय से लगभग 25 किमी0 पूरब-दक्षिण की ओर नलराजा नाम का एक स्थान चरकोनवां कटरी गांव के पास स्थित है। यह स्थान कर्मनाशा नदी के तट पर जंगल और पहाड़ के बीच नालों, झरनों से घिरा हुआ है। यहां एक विशाल शिवलिंग स्थापित है जिसे नलेश्वर महादेव के नाम से जाना जाता है। यह शिवलिंग 1.10 मी0 ऊंचा और 1.50 मी0 के व्यास में है। उसके नीचे का भाग 1.7 मी0 के व्यास का है। इस मंदिर के सामने एक वृक्ष के नीचे देवी-देवताओं की कुछ खण्डित प्रतिमाएं बिखरी पड़ी हैं जिनमें से एक देवी मूर्ति 48x40 सेमी0 के आकार की है। एक दूसरा प्रस्तर खण्ड चौकोर 52 सेमी0 के व्यास का देखा गया। इसी प्रकार मंदिर के सामने एक नन्दी प्रतिमा स्थापित है। नन्दी की यह मूर्ति भी अलंकृत है। इसका आकार 40x17 सेमी0 है। पेड़ के नीचे पड़ी मूर्तियों में एक मिथुन मूर्ति 30x11 सेमी0 के आकार की देखी गयी।

डॉ0 राकेश तिवारी, निदेशक पुरातत्व संगठन उ0प्र0 के निर्देशन में इस स्थान की खुदाई करायी गयी है जिसमें जौ, गेहूँ, मसूर के जले दाने, पाटरीज, अस्थियां तथा अन्य वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं। यहाँ अभी तक 3000 वर्ष

पूर्व के पुरावशेष पाये गये हैं।

पकरहट (विजयगढ़ क्षेत्र)–राबर्ट्सगंज से लगभग 26 किमी0 पूरब कर्मनाशा नदी के तट पर वाराणसी सीमा से लगा पकरहट एक गांव है। इस क्षेत्र में हल चलाते खोदखाद करते मूर्तियाँ मिल जाती थीं, जिनका संग्रह एक पीपल वृक्ष के नीचे किया गया है जो कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। विवरण इस प्रकार है—

हनुमान–160x66 सेमी0 सफेद उत्तम कला 10वीं शताब्दी। गणेश–40x35 सेमी0 सफेद उत्तम कला 10वीं शताब्दी 2, शिव–39x20 सेमी0 सफेद उत्तम कला 10 शताब्दी 1, दुर्गा–सफेद उत्तम कला 10वीं शताब्दी 12

पंचमुखी महादेव–राबर्ट्सगंज से 5 किमी0 दक्षिण राबर्ट्सगंज–चुर्क मार्ग पर दक्षिण की ओर एक लगभग दो सौ मीटर ऊँची पहाड़ी है। उस पर काले चिकने पत्थर की पंचमुखी शिव, नन्दी (38x33x50 सेमी0) खण्डित तथा अन्य कुछ भग्नावशेष मूर्तियाँ पहले ही से हैं। यहीं पर 1x.5 मी0 की सफेद पत्थर की खण्डित विष्णु–प्रतिमा है। नवम्बर 87 में इस स्थान का जीर्णोद्धार यहाँ की एक रुद्र महायज्ञ समिति द्वारा कराया गया। मन्दिर की नींव खोदते समय यहाँ निम्नलिखित मूर्तियाँ तथा पाषाण–खण्ड प्राप्त हुए थे—

नाम	संख्या	आकार	अनुमानित समय
अरघा	5	63x50 सेमी0	11वीं शताब्दी
संयुक्त शिव पार्वती	5	50x33 सेमी0	11वीं शताब्दी
त्रिशूल	1	50 सेमी0	या
चकला	2	40x25 सेमी0	11वीं शताब्दी
कलात्मक स्तम्भ	50	1.70x.18x.38 मी0	10वीं शताब्दी
कमल स्तम्भ	1	1.80 मी0	व्यास का
तांत्रिक प्रस्तर चौकोर	2	75x60 सेमी0	11वीं शताब्दी
नाली के पत्थर	5	विभिन्न आकार में	11वीं शताब्दी

मछली के आकार बने लंबे पत्थर	4	खण्डित	11वीं शताब्दी
नन्दी	1	38x52x40 सेमी0	11वीं शताब्दी
गणेश	1	75x70 सेमी0	11वीं शताब्दी
ईंटें	1	38x22x7 सेमी0	11वीं शताब्दी

यहाँ मकरवाहिनी गंगा, सूर्य, कार्तिकेय, गणेश, हनुमान, भैरव, बीजमंत्र से संबंधित मूर्तियाँ भी मिली थीं। शिव-पार्वती खड़े हैं। शिव के चार हाथ हैं। शिव के एक हाथ की हथेली पर पार्वती के हाथ की हथेली रखी है। हथेली पर पुष्प या द्रव्य है। शिव का दूसरा हाथ पार्वती के दाहिने गाल पर है। यह लास्य प्रतिमा लगता है विवाह के अवसर की है। पार्वती भी परिधान धारण की हुई हैं। शिव त्रिशूल लिए हुए हैं।

खोदाई में सिल-लोढ़ा, सिक्के, चकली भी मिली हैं। ईंट का बना टीला पहले ही से है। एक नाली भी है। यह स्थान ऊँचाई पर है जिसके नीचे प्रागैतिहासिक कालीन गुफाएँ तथा दक्षिण की ओर प्राकृतिक दृश्य दर्शनीय हैं। गुफाओं में शिकार, गोचारण, युद्ध, पूजा, आराधना, पशु-पालन तथा गणितीय प्रतीक चित्र बनाए गए हैं। गुफा के दो चित्र टांकी-हथौड़ी से काटे जा रहे हैं- चोरों द्वारा।

बदेवरानाथ-यहाँ पूष कृष्ण त्रयोदशी के दिन बड़ा मेला लगता है। इस पूरे क्षेत्र में बदेवरानाथ की बड़ी मान्यता है। मन्दिर बाहर से 514x7x4 मी0 सप्तकोणीय है। प्रवेश-द्वार पूरब की ओर है। सामने एक तालाब है। मन्दिर में स्थापित शिवलिंग (गड़े हुए भाग को छोड़कर) 10 सेमी0 ऊँचा है। इसका अरघा खण्डित था। मन्दिर की दीवार दरवाजा कलात्मक पत्थर से बना 1.80 सेमी0 ऊँचा है। इसका चौखट पत्थर का बना है जिसका आकार 1.80x1.45 मी0 है। एक ही मन्दिर में कुल 9 शिवालय या मन्दिर हैं। बीच में स्थापित ऊँचा मन्दिर लगभग 12 मीटर ऊँचा है। ऐसी मान्यता है कि यहाँ आकर कुछ दिन सेवा करने, मन्दिर के अर्घे के जल का पान करने, उसका लेप करने से बतास रोग समाप्त हो जाता है।

बरबटा–कुसहा से 1 किमी0 दक्षिण बरबटा गांव में हनुमान जी की एक पुरानी मूर्ति एक साधारण मन्दिर में स्थापित है। किन्तु मन्दिर के नाम कई एकड़ भूमि श्रद्धालुओं द्वारा दान के रूप में प्राप्त हुई है। मन्दिर में स्थापित हनुमान मूर्ति 1.36x.60 मी0 के आकार की है। यह मूति आरम्भ में पेड़ के नीचे पड़ी हुई थी। हनुमान जी के बाएँ पाँव के नीचे कालनेमि राक्षस शिर झुकाए पड़ा है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि आठ शनि और आठ मंगल को नियमित आकर दर्शन करने से इच्छित फल की प्राप्ति होती है। यहीं विष्णु, राम, सीता और लक्ष्मण की नई मूर्तियाँ स्थापित कर दी गयी हैं।

बनसत्ती देवी–बरबटा से लगभग डेढ़ किमी0 दक्षिण पहाड़ के नीचे दुलहरदायी देवी की मूर्ति वनसत्ती देवी के नाम से जानी जाती हैं। यहीं एक शिलालेख है। पर्यटन की दृष्टि से यह स्थान सुन्दर है और यहाँ पहाड़ से प्रवाहित जल–श्रोत के कारण पेयजल सदा उपलब्ध रहता है। यहाँ इसी तरह का 'ऋषि खोहिया' नामक स्थान है। कहते हैं किसी ऋषि के प्रताप से यहाँ जल की धारा प्रवाहित होती रहती है। इस क्षेत्र में हनुमान जी की कुछ अन्य मूर्तियां स्थापित हैं।

बरैला–राबर्ट्सगंज के समीप बरैला का वर्तमान मन्दिर पुनरुद्धरित है। उसका बरामदा और गुम्बज राबर्ट्सगंज के दुखी साहु ने बनवाया था। लोगों के अनुसार यहाँ शिव के अलावा एक देवी–प्रतिमा थी। एक शिलालेख है, पर पढ़ा नहीं जाता। नींव से पुरानी ईंट और कलात्मक पत्थर मिलते हैं।

विष्णु–बरैला मन्दिर से 100 मीटर दक्षिण एक नये मन्दिर में विष्णु भगवान की विशाल मूर्ति स्थापित है जो .52x.55 मीटर के आकार की है। घुटने तक माला, कमर में करधनी, बाम भाग में जनेऊ, कवच, कुण्डल, बायें के एक हाथ में शंख, दूसरा नीचे का हाथ देवी के मस्तक पर, देवी प्रतिमाएँ दो, दोनों पांव कमल पर। दाहिने हाथ–एक खण्डित, दूसरा नीचे का हाथ देवी के मस्तक पर, देवी हाथ जोड़े खड़ी, पास में एक और देवी–प्रतिमा, विष्णु के मस्तक पर मुकुट सुशोभित, दोनों पार्श्वभाग में देवी–देवताओं की प्रतिमाएँ। पूरा पत्थर 30 सेमी0 मोटा, हल्के गुलाबी रंग का खुरदुरा है। मूर्ति नवीं

शताब्दी की है।

त्रिनेत्र–शिव–मंदिर में शिव जी की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। अरघे में गड़े हुए भाग को छोड़कर यह प्रतिमा 98 सेमी0 ऊँची तथा ब्यास में 1.28 मी0 है। पत्थर खुरदुरा हल्के गुलाबी रंग का है। जटाजूट, चन्द्रमा, केश–बंध, नासिका सुन्दर, होठ खुले हुए, सुन्दर ठुड्डी, कानों में कुण्डल, गले में रुद्राक्ष की माला सुशोभित है।

नन्दी–85x32x75 सेमी0 1 चारों पांवों पर बैठा हुआ, दोनों सींगों के मध्य सर्प, गले में माला मुख रस्सी से नथा हुआ।

दुर्गा जी–81x52 सेमी0, सिंहवाहिनी चतुर्भुजी, अर्द्धपद्मासना। यह मूर्ति बाद की प्रतीत होती है।

बिसरेखी–घोरावल के समीप शतद्वारी से 3 किमी0 पूरब बिसरेखी नामक गांव है। यहाँ बट वृक्ष के नीचे कुछ मूर्तियों के स्तम्भ रखे हुए हैं जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. प्रस्तर स्तम्भ कलात्मक देवी–देवताओं की मूर्तियों से युक्त 66x36, 70x30, 68x30 सेमी0 के आकार के। 2. हनुमान जी ऊपर से खण्डित किन्तु कलात्मक 88x46 सेमी0, 3. प्रस्तर स्तम्भ–92x43, 66x36, 53x68 सेमी0 कलात्मक, 4. कलश कलात्मक 88x88x17 सेमी0 व्यास में, 88x34 सेमी0, 5. गणेश–41x28 सेमी0 कलात्मक, सफेद पत्थर। विष्णु–शतद्वारी से विष्णु की एक अत्यंत सुन्दर कलात्मक प्रतिमा चोर चुराकर लिए जा रहे थे जिसे वहाँ की पुलिस ने बरामद किया। यह मूर्ति घोरावल थाने में रखी हुई है। कला की दृष्टि से यह अद्भुत प्रतिमा है। विष्णु के चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित है। उसका आकार 73x50 सेमी0 है। मूर्ति सीधी खड़ी है। पांव में पैजनी, घुटनों तक माला, कमर में सफेद फेटा, जनेऊ, माला, कानों में कुण्डल, सिर पर मुकुट। नीचे दोनों ओर तीन नर प्रतिमाएँ, दाहिने देवी–प्रतिमा तथा दो देव–प्रतिमाएँ दोनों ओर गण, हाथी–घोड़ा, ऊपर से खण्डित दाहिनी ओर सिर के पीछे कमल–दल। पत्थर अत्यंत

काला, चिकना, पीछे से खोखला।

भुइली—अहरौरा से उत्तर—पूरब का क्षेत्र भुइली है। वैसे भुइली एक गांव का नाम है जिसके बारे में आम धारणा है कि इसे भूरिश्रवा ने बसाया था। यहाँ गरई नदी बहती है जिससे पूरा इलाका सरसब्ज रहता है। यह स्थान सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है—

मीनार—यहाँ एक पहाड़ी पर ईंट का बना पुराना स्तम्भ प्राप्त है। यह पहाड़ी लगभग 50 मीटर ऊँची है, उसके ऊपर लगभग 15 मीटर ऊँची मीनार बनी है जिसके कारण यह इतना ऊँचा हो गया है कि इस पर खड़ा होकर देखिए तो काशी, चुनार का दुर्ग तक दिखलाई पड़ता है। यह दो छतों में बनी है और गोलाकार है। इसे सुरखी चूना से जोड़कर उसी से लेप कर दिया गया है। जुड़ाई लम्बी चौड़ी—पक्की ईंटों से की गयी है।

महकूम साहब की मजार—इस मीनार से दूसरी ओर एक लगभग उतनी ही ऊँची पहाड़ी पर एक गुफा महकूम साहंब की मजार के नाम से जानी जाती है। यहाँ नवम्बर में उर्स लगता है जिसमें हिन्दू, मुसलमान सभी सम्मिलित होते हैं।

अन्य अवशेष—भुइली बाजार में तालाब के तट पर एक भग्नावशेष मन्दिर में सहस्त्र शिवलिंग के साथ अन्य मूर्तियाँ देखी गयीं। इस बाजार में लोगों के दरवाजों पर तथा अन्य मन्दिरों में हनुमान, गणेश, शिव, पार्वती, दुर्गा आदि की प्रतिमाएँ भी देखी गयीं। सहस्त्र शिवलिंग भूरे पत्थर का है।

मऊ—मऊ सोनभद्र का सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण स्थान है जो अब तक उपेक्षित और अपरिचित रहा है। यह स्थान राबर्ट्सगंज से विजयगढ़ किले के मार्ग में किले से लगभग 3 किमी0 पहले ही पड़ जाता है। इसके समीप में एक नाला बहता है और तीन ओर पहाड़ियों से घिरा है। अब यहाँ एक संग्रहालय बन गया है।

मन्दिर—मार्ग पर जाते समय बायीं ओर मऊ बन—दफ्तर के समीप शिवजी का मन्दिर निर्मित है। यह 7.70x6 मीटर के आकार का मुण्डा है तथा

केवल पत्थर का बीस फलकों से बना है। पूरब का प्रवेश-द्वार 1.50x.65 मीटर के आकार का पत्थर के चौंखट का बना है। चौतरे के पूर्वोत्तर कोण पर एक मूर्तियुक्त कलात्मक स्तम्भ लगा है जिसका आकार 1.19x.38x16 मीटर है जिसके ऊपर नन्दी, गणेश मूर्ति (38x4 सेमी0) विष्णु, अलंकृत देवी मूर्ति बनी है। देवी के हाथ में मालां है। पत्थर खुरदुरा तथा लाल रंग का है। मंदिर की दीवार 1.50 मीटर मोटी है। चौतरा लगभग 60 सेमी0 ऊँचा और निर्मित मन्दिर के लगभग दूने क्षेत्रफल में है।

शिवलिंग-मन्दिर में एक शिवलिंग है। शिवलिंग के सामने नन्दी प्रतिमा स्थापित है जो सुन्दर और अलंकृत है। इसका आकार 45x45 सेमी0 है। एक अन्य नन्दी का आकार 47x27 सेमी0 है। यहीं दुर्गा की एक अष्टभुजी प्रतिमा देखी गयी। मंदिर से अलग उत्तर की ओर झुरमुट में एक दूसरा शिवलिंग पड़ा हुआ है जो 70 सेमी0 ऊँचा और डेढ़ मीटर के व्यास का है। इस शिवलिंग से लगभग 5 मीटर उत्तर नव निर्मित कूप के समीप एक अन्य शिवलिंग प्रतिष्ठित है। जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर यह शिवलिंग 75 सेमी0 ऊँचा और 1 मी0 55 सेमी0 के व्यास का है। इस स्थान से 50 मीटर दूर पूरब एक नाले में एक शिला-खण्ड पर कुछ मूतियाँ बनी हुई हैं। इसी प्रकार दूसरी ओर की पहाड़ी पर भी कुछ मूर्तियाँ स्थापित हैं। शिला पर गुहाचित्र भी बनाये गये हैं। मऊ पर डॉ0 राकेश तिवारी ने अच्छा कार्य किया है।

शिवलिंग-चौतरे से उत्तर बाड़ी में एक अन्य मूर्ति जमीन में गड़ी पड़ी है। यह जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर 70 सेमी0 ऊँची है और उसका व्यास 1.50 मीटर है। यह पुराना शिवलिंग हल्के गुलाबी रंग का है। इसमें आस-पास मूर्तियों, कलात्मक स्तम्भों के टुकड़े देखे गये। इसी प्रकार एक और शिवलिंग गड़े हुए भाग को चोड़कर 75 सेमी0 ऊँचा 1.55 मी0 गोलाकार देखा गया। यह शिवलिंग मुख्य मन्दिर से उत्तर की ओर 5 मीटर दूर स्थित है।

सहस्त्र शिव-मन्दिर से उत्तर-पूरब के कोण पर कुएँ के पास पूरब की ओर एक विशाल सहस्त्र शिव-प्रतिमा देखी गयी। इस शिवलिंग की ऊँचाई

जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर 94 सेमी0 तथा व्यास 1.50 मी0 (बीच का) तथा 1.60 मी0 नीचे का है। नीचे का भाग खुरदुरा तथा अष्टबल है। एक शिवलिंग में छोटे-छोटे शिवलिंग मध्य भाग से ऊपर बने हैं, कहीं कोई शिवलिंग खण्डित नहीं है। पत्थर का रंग सफेद है। इसका समय मध्य काल का आरंभ हो सकता है।

मधुपुर—सोनभद्र से वाराणसी जाने वाले मार्ग पर राबर्ट्सगंज से उत्तर लगभग 20 किमी0 दूर स्थित मधुपुर एक छोटी बाजार है। लेकिन यहाँ एक लगभग तीन सौ वर्ष पुराना शिव-मन्दिर है जिसकी लंबाई 8 मी0 चौड़ाई 7.2 मी0 है। यह मन्दिर पत्थर का बना है और कलात्मक है। ऊपर पीतल के गुम्बज लगे हुए हैं जैसा कि शिवालयों में होते हैं। शिवलिंग नारियल के आकार का है जिसकी लंबाई 22 सेमी0 है। अरघा 54 सेमी0 लंबा है। मन्दिर में स्थापित गणेश प्रतिमा 22x22 सेमी0 आकार की, पार्वती जी 25x22 सेमी0, चतुर्भुजी प्रतिमा 30x30 सेमी0, नन्दी प्रतिमा चिकने काले पत्थर की 85x68x25 सेमी0, हनुमान जी की प्रतिमा 95x42 सेमी0 के आकार की है। हनुमान जी अपने कन्धों पर राम, लक्ष्मण को लिए हुए हैं। वीररूप, दाहिने पांव के नीचे डाइन है। भैरो की प्रतिमा 30x30 सेमी0 की है। शिव जी अरघे में हैं। पत्थर का रंग सफेद है। मन्दिर का भीतरी भाग 2.50x2.50 मी0 है।

मझवाँ—कछवाँ में मझवां नाम का एक गांव है। इसी मझवां के नाम पर पूरे क्षेत्र का नामकरण मझवां क्षेत्र कर दिया गया है। इस गांव में एक पुराना टीला है जिसका आकार 12x5 मीटर अनुमानित है। यहाँ की जमीन खोदने पर 33x22x6 सेमी0 आकार की पक्की ईंटें प्राप्त हुईं। इस टीले पर जो मूर्तियाँ बिखरी पड़ी हैं उनका विवरण इस प्रकार है—

विष्णु—विष्णु भगवान की एक सुन्दर विशाल प्रतिमा टीले पर पड़ी हुई है जिसका आकार 1x.80 मी0 है। यह मूर्ति सफेद बलुआ पत्थर की है। विष्णु के घुटने तक माला, कमर में आभूषण, कमर के नीचे भी आभूषण, फेंटा, गले में तीन मालाएँ सुशोभित हैं। बायीं तरफ उनके हाथ के नीचे देवी-देवताओं की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं किन्तु वे भी खण्डित हो चुकी हैं।

अन्य–यहीं एक युगल खण्डित मूर्ति 75x57 सेमी0 के आकार की पड़ी है। एक तीसरी मूर्ति भी 70x40 सेमी0 के आकार की देखी गयी। इसी प्रकार कुछ अन्य मूर्तियाँ 65x55 सेमी0, शिवलिंग 30 सेमी0 ऊँचा और 72 सेमी0 व्यास में, देवी प्रतिमा 1.32x.35 मी0 स्तम्भ के रूप में, देवी–देवताओं की मूर्तियाँ स्तम्भ के ही रूप में लगभग उसी आकार की, तीन संख्या में और पड़ी हुई हैं। एक स्तम्भ 1.45x.38 मी0 के आकार का देखा गया। ये सभी प्रस्तर स्तम्भ सोनभद्र जनपद के बरैला मन्दिर के समीप पड़े प्रस्तर खण्डों के मेल में हैं।

मड़रा–मड़रा राबर्ट्सगंज–घोरावल मार्ग पर राबर्ट्सगंज से लगभग 7 किमी0 पश्चिम–दक्षिण की ओर गौरीशंकर से दो किमी0 दक्षिण सोनवट गांव के समीप स्थित है। यहाँ पगडंडी मार्ग अथवा कच्ची सड़कों से जाया जा सकता है। इस गांव में पत्थर का एक पुराना मंदिर ग्यारहवीं शताब्दी के आस–पास का है। मन्दिर में सफेद अथवा हल्के गुलाबी रंग के पत्थर लगे हुए हैं। मंदिर भीतर से 1.70x1.70x2.25 मीटर के आकार का एक तालाब के समीप पीपल के वृक्ष के तले लगभग दो मीटर ऊँचे टीले पर निर्मित है। इसकी जुड़ाई में किसी मसाले का प्रयोग नहीं किया गया है और यदि किया भी गया है तो बहुत बारीक। मन्दिर की नींव पकी हुई ईंटों से भरी गयी है जिनका आकार 32x23 सेमी0 है। मन्दिर का टीला अथवा क्षेत्र 70x45 मीटर मापा गया।

मन्दिर अष्टबल आकार का है जिसमें बड़े–बड़े कलात्मक पत्थर लगे हुए हैं। पत्थरों में देवी–देवताओं की सुन्दर मूर्तियाँ बनी हुई हैं। मन्दिर के मध्य में दो शिवलिंग क्रमशः 31 सेमी0 ऊँचा 61 सेमी0 व्यास में तथा 45 सेमी0 ऊँचा 49 सेमी0 व्यास में स्थापित हैं। तीन अन्य खण्डित शिवलिंग भी देखे गये। ये सभी सफेद रंग के पत्थर के हैं। मन्दिर में दो अरघे क्रमशः 50 तथा 40 सेमी0 के आकार के तथा दो नंदी क्रमशः 42x40 तथा 80x30 सेमी0 के आकार के हैं। सभी सफेद खुरदुरे पत्थर के आभूषित हैं। कुछ सुन्दर मूर्तियां पद्मासन मुद्रा में भी देखी गयीं। ये मूर्तियां चिकने पत्थर की अलंकृत किन्तु

खण्डित हैं, जिनमें से एक मूर्ति 54x25 सेमी0 के आकार की है। दूसरी हनुमान जी की खण्डित मूर्ति 80x44 सेमी0 आकार की बलुआ पत्थर की देखी गयी है। इसी प्रकार गणेश प्रतिमा 84x48 सेमी0 के आकार की स्तम्भ में बनी देखी गयी। एक युगल मूर्ति 62x35 सेमी0, बलुआ पत्थर की विष्णु की खण्डित चार मूर्तियाँ क्रमशः 100x48, 105x60, 100x41सेमी0 के आकार की पाई गयीं। ये सभी काफी सुन्दर और अलंकृत हैं। एक ओर युगल मूर्ति 82x38 सेमी0 आकार की देखी गयी। यह मूर्ति शिव–पार्वती की संपृक्त है, मुद्रा आलिंगन की, मस्तक पर अर्द्धचन्द्र, पत्थर का रंग सफेद है। दो पत्थरों को जोड़ने के लिए लोहे की कसवारी का उपयोग किया गया है।

नटराज शिव–यहाँ मन्दिर की दीवार में जड़ी हुई नटराज शिव की एक अद्भुत प्रतिमा देखी गयी जो 69x34 सेमी0 आकार की गुलाबी रंग के पत्थर (खुरदुरे) पर बनी है शिव की छह भुजाएँ हैं, दाहिने की भुजाओं में एक में डमरू, बायें की एक भुजा में चक्र, एक में गदा सुशोभित है, बाकी भुजायें खण्डित हैं। दोनों ओर देवाकृतियाँ, सिर के ऊपर हाथी, जटाजूट, कुण्डल, जनेऊ स्पष्ट है। इससे रौद्रता का आभास होता है। लगता है रुद्र भगवान दाहिना पांव नीचे जमाये हुऐ, बायें पांव से किसी को दाबे हुए हैं। उनके गले में माला है। मुद्रा ताण्डव–नृत्य की है। मन्दिर के बाहरी भागों में चारों ओर आठ भुजाओं वाली मूर्तियां हैं। गले में मुण्डमाला है, कमर में करधनी, गले में माला, माले में भूताकृतियां प्रदर्शित हैं। इसमें भगवान के भूतभावन रूप को दर्शाया गया है। खण्डित होने के कारण मूर्ति बहुत स्पष्ट नहीं है।

बाहर से मन्दिर का आकार 3.50x3 मीटर मापा गया। दरवाजा पूरब की ओर है। सामने चौतरा लगभग 6x4 मीटर के आकार का बना है। मंन्दिर के पूरब पश्चिम दोनों ओर ईंटों के टीले देखे गये जिससे सहज ही अन्दाजा लगाया जा सकता है कि मन्दिर विशाल रहा होगा अथवा कथा–वार्ता के लिए चारों ओर जगह रही होगी। दक्षिण की ओर तालाब में उतरने के लिए सीढ़ियों के चिह्न भी देखे गये। उनमें ईंटें लगी हुई हैं। ईंटें गिट्टी से जोड़ी गयी हैं। सुर्खी–चूना का उपयोग प्लास्तर के लिए किया गया है। मन्दिर के बाहर एक

अलंकृत कलशनुमा पत्थर भी देखा गया जिसका आकार 2.70 मीटर व्यास में पाया गया। दो पत्थरों को जोड़कर यह मूर्ति जिस प्रस्तर-स्तम्भ पर बनी है उसके दोनों ओर गणेश सहित अन्य मूर्तियां हैं। गणेश प्रतिमा 65x35 सेमी0 आकार की है। इस प्रकार कमण्डल-धारी चतुर्भुजी प्रतिमा 65x35 सेमी0 के आकार की प्राप्त है।

महांव—घोरावल (सोनभद्र) से शिवमंदिर शिवद्वार से लगभग 3 किमी0 पश्चिम दक्षिण महांव नामक गांव एक टीले पर ही बसा हुआ है। यहाँ गांव के दक्षिण तालाब के किनारे एक वृक्ष के नीचे टूटी-फूटी मूर्तियां रखी हुई हैं। ये मूर्तियां पुरानी तो हैं ही, कला की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं। यथा-

भैरव—यहाँ भैरव की विकराल मूर्ति 170x60 सेमी0 के आकार की पड़ी हुई है। इसका पत्थर सफेद रंग का है। बायें हाथ में सर्प है, हाथ में कंगन, बाजू में भी आभूषण, गले में माला, जनेऊ, दाहिने हाथ में पानपात्र प्रदर्शित है। सेविका भी आभूषित, घुटने तक सज्जित, मुकुट, कुण्डल, पैजनी पहने हुए है। सिर के पीछे चक्र, दोनों ओर दो देव-मूर्तियों के हाथों में भी सर्प।

सिंहवाहिनी—64x61 सेमी0 खण्डित, दो पांव केवल अलंकृत, दाहिनी ओर सिंह, हाथी पर सवार, युगल मूर्ति, खण्डित, दो देवी प्रतिमाएँ कलात्मक।

शिव-पार्वती—76x40 सेमी0, पत्थर काला चिकना, बायें सिंह देवगण, नृत्य-मुद्रा सिरोभाग से खण्डित। शिव का बांया हाथ पीछे (पार्वती के) से मुड़कर पार्वती के वामस्तन का स्पर्श करता हुआ (जैसा कि शतद्वारी में है) दाहिना हाथ ठुड्डी के पास (पार्वती का) दाहिने से ऊपर मुख किए हुए गणेश, ऊपर चार देवगण, नृत्य की मुद्रा में नीचे युद्ध का दृश्य। यहीं श्री तेजप्रताप सिंह के द्वार पर भी कुछ मूर्तियां तथा प्रस्तर लेख देखे गये।

देवी-मूर्ति—55x16 सेमी0, 45x16 सेमी0, स्तम्भ 57x24 सेमी0 आकार का, सफेद पत्थर, कलात्मक स्तम्भ, 148x46x28 सेमी0 इसमें तीन बड़ी मूर्तियां हैं और बीच में छोटी।

विष्णु–105x66 सेमी0 चतुर्भुजी है, बायें हाथ में शंख, दाहिना एक हाथ खण्डित, इसी हाथ से लगा प्रस्तर–खण्ड जिसमें नीचे तक आठ देवमूर्तियां, दाहिने हाथ पीछे की ओर मुड़कर कनपटी पर बायीं ओर घोड़ा, शंख, हाथी उसके ऊपर अस्पष्ट जनेऊ या माला घुटने से नीचे तक, पीछे होकर यानी ताबीज, मुकुट।

शिवलिंग–बरैला जैसा, 66x80 (व्यास में), देव–प्रतिमा–खण्डित 42x40 सेमी0, देव प्रतिमा–56x41 सेमी0, संभवतः शिव–पार्वती की, नन्दी–30x17 सेमी0 सफेद पत्थर, अन्य छोटी–छोटी मूर्तियां 10। बताया गया कि एक मूर्ति तालाब में गिर कर पानी में पड़ी हुई है। कलश 50x37 सेमी0 है।

अन्य मूर्तियां–इसी गांव में श्री रामनाथ के दरवाजे पर कुछ खण्डित मूर्तियां पड़ी हुई हैं जिनमें से चिकने लाल पत्थर की शिव–प्रतिमा 41x24 सेमी0 के आकार की, देवी–मूर्ति 50x20 सेमी0 के आकार की, शृंगार प्रसाधन की मुद्रा में है। गाँव में नीम के वृक्ष के तले भी कुछ पुरानी खण्डित मूर्तियां पड़ी हुई हैं जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. शेर–42x35 सेमी0 सफेद हाथी पर आक्रमण करता हुआ, 2. अष्टबल चक्र–95x92 सेमी0 सफेद कलात्मक, 3. नारायण 62x62 सफेद शंख, चक्र, गदा पद्मधारी, 4. यक्ष–55x35 सफेद, खण्डित, अलंकृत, 5. कलशचक्र 95x95 सफेद गले में हार, हाथ में शंख, 6. स्तम्भ–2 75x36 सफेद कलात्मक, 7. स्तम्भ–52x38 सफेद, तीन ओर देवी–प्रतिमाएँ, 8. देवी 54x41 सफेद, कलात्मक, 9. देवी 55x25 सफेद कलात्मक, 10. सिंह 48x42 सफेद कलात्मक, 11. नन्दी 32x12 सफेद कलात्मक, 12. कलश–20 सेमी0 वृत्ताकार सफेद कलात्मक, 13. कलश 126x126 सफेद, सुन्दर। (सभी सेमी0 में)।

टीला–ये सभी मूर्तियां तथा भग्नावशेष मन्दिर एक टीले पर निर्मित हैं। यहां एक कूप का अवशेष भी मिला। ईंटें मिलीं, पक्के टीले का आकार लगभग 10x10 मीटर है। टीले पर मन्दिर के समीप कई कलात्मक मूर्तियां

रखी हुई हैं।

नरसिंहावतार–कलात्मक, आकार, 70x48 सेमी0 जांघों पर बिठाकर हिरणकश्यप को मारते हुए, सीना चीरते हुए। दोनों ओर देवी प्रतिमाएँ। सिर के दोनों ओर युगल प्रतिमाएँ, वृत्ताकार, उंगलियां, अस्पष्ट माला, कुण्डल, दाहिंने पांव से राक्षसों को दाबे हुए, बाया पांव बायीं ओर से मुड़ा हुआ। यह मूर्ति नव निर्मित मंदिर में स्थापित है।

महुरेश्वर–यह स्थान राबर्ट्सगंज से शाहगंज मार्ग पर सड़क से लगभग 10 किमी0 उत्तर स्थित है। यहाँ एक तालाब के तट पर पुराने मन्दिर के खण्डहर विद्यमान हैं। मन्दिर इमली के वृक्ष के नीचे है। नींव में पक्की ईंटें देखी गयीं, जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि आरम्भ में यहाँ एक विशाल मन्दिर का निर्माण किया गया होगा। कालान्तर में उसका पुनरुद्धार भी हुआ। मन्दिर का आकार 5.4x3.6 मी0 मापा गया। मुख्य मन्दिर के सामने एक बरामदा भी बना है, जिससे होकर मन्दिर की परिक्रमा की जाती होगी। मुख्य मन्दिर में एक विशाल शिवलिंग स्थापित है। अर्घा काले पत्थर का है। यहीं एक हनुमान–प्रतिमा बीचोबीच इस तरह खण्डित है जैसे उसे किसी धारदार हथियार से काट दिया गया हो। मन्दिर में गुम्बज, कलश, कमल–दल, गणेश, सरस्वती तथा अन्य देवी–देवताओं की मूर्तियां भी देखी गयीं।

गांव के लोगों से बातचीत के दौरान ज्ञात हुआ कि यहाँ एक सिक्का मिला था और तालाब की खुदाई से कुछ और वस्तुएँ भी प्राप्त हुई थीं। तालाब में ही कच्चे–पक्के कुओं के अवशेष भी मिले हैं। पक्की मिट्टी के कुछ खिलौने, हाथी, घोड़ों की मिट्टी की मूर्तियां, धातु, गोलाकार टुकड़े, प्रस्तर की गौतमबुद्ध की प्रतिमा, पूजा–सामग्री, मन्दिर का चौड़ा सिंहासन, चौकी, मिट्टी का हण्डा, गैण्डा, सूकर और साकला के दाने जले हुए, जौ के दानें, वारहसिंगा आदि की मूर्तियां, ताण्डव की मुद्रा में शिव, पक्की ईंटें (1 फिट लम्बी) हाथ का कंगन आदि वस्तुएं भी प्राप्त हुई हैं। गड़ौरा, कण्डाकोट, गौरीशंकर, बरेला, महुरेश्वर आदि सभी स्थानों पर प्रतिष्ठापित शिवलिंगों से प्रतीत होता है कि 11वीं 12वीं शताब्दी में इस क्षेत्र में भी शिव–पूजकों की

संख्या अधिक हो गयी थी।

एक उल्लेख के अनुसार उस समय यहाँ काशी की ओर से गोसाइयों का एक जत्था आया था, जो इधर–उधर बिखर करे इन शिव–मन्दिरों में पूजा–पाठ का काम करता था। इन मन्दिरों के पुजारी आज भी अधिकतर गोसाईं लोग ही हैं।

यहाँ के प्रस्तर–खण्डों पर भग या योनि की आकृतियां भी देखी गयीं जो अन्यत्र नहीं देखी गयी थीं। इससे ऐसा लगता है कि शिव–साधना के अंतर्गत पारंपरिक रूप में कभी लिंग–पूजा के साथ–साथ योनि–पूजा की परंपरा भी रही है। महुरेश्वर आज भी यात्रा–पथ से जुड़ा नहीं है।

मिर्जापुर–मिर्जापुर से विन्ध्याचल तक लगभग 10 किमी० की दूरी में प्रायः गंगा–तट पर शताधिक विशाल कलात्मक मन्दिर तथा मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। पूरब की ओर से यदि देखा जाय तो मन्दिरों का क्रम फतहां से ही प्रारम्भ हो जाता है। फतहां में जिलाधिकारी के आवास के आस–पास छह–सात छोटे–बड़े मन्दिर हैं, जिनमें दुर्गा, हनुमान, गणेश एवं शिवलिंग की स्थापना की गयी है। इनमें प्रतिष्ठित मूर्तियां प्रायः सफेद एवं भूरे रंग की हैं, जिनका समय सोलहवीं शताब्दी है।

कचहरी घाट और उसके आस–पास के अनेक मन्दिर तथा मूर्तियां गंगा की गोद में समाहित हो चुकी हैं, किन्तु उनके अवशेष तटों पर देखे जाते हैं। सर्वेक्षण के दौरान कलात्मक पत्थर, छोटी–बड़ी ईंटें, टूटी–फूटी भग्न मूर्तियां मिट्टी के पात्र एवं उनके टुकड़े तथा मन्दिरों के भग्नावशेष देखे गये थे। इस घाट पर स्थापित शिवलिंग, दुर्गा–प्रतिमा एवं हनुमान जी की मूर्तियां सुंदर और कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

वर्तमान सूचना कार्यालय एवं जिला चिकित्सालय के पीछे भी कुछ मन्दिर एवं पुराने भवनों के अवशेष हैं, जिनका निर्माण प्रायः पत्थर–ईंट और सुर्खी चूने से किया गया है। भवनों का निर्माण अंग्रेजी शासन में अठारवीं शताब्दी के मध्य में किया गया था। इस स्थान से नील का व्यापार दूर–दराज

तक बड़े पैमाने पर किया जाता था। नील कारखाना चलाने के लिए जिन विशाल लौह-यंत्रों का प्रयोग किया गया है, वे वहाँ पड़े हुए देखे गए। साथ ही नील बनाने का हौज भी भग्नावशेष रूप में वहाँ विद्यमान है। इस हौज से पूर्व की ओर एक वृत्ताकार निर्माण देखा गया जिसके मुख्य-द्वार पर दीवार में दो मिथुन मूर्तियां पड़ी हुई हैं। कला की दृष्टि से ये खजुराहो की अनुकृति प्रतीत होती हैं। ये गुलाबी रंग के पत्थर की बनी हैं।

इस स्थान पर एक और बड़ा मन्दिर है, जिसमें विशाल शिवलिंग और उसके चारों ओर दस-बारह की संख्या में छोटे शिवलिंग स्थापित किये गये हैं। मन्दिर में लगभग 4 फिट की हनुमान जी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। मन्दिर के पीछे कीर्तन-स्थल बना हैं जिसके दोनों ओर सफेद भूरे रंग के पत्थर तथा रूद्र, सूर्यदेव की चार मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। यह मन्दिर तो पुनरुद्धरित होता रहा, किन्तु मूर्तियां दसवीं शताब्दी की हैं। सूर्य भगवान की एक स्थान पर इतनी मूर्तियां अन्यत्र प्राप्त नहीं होतीं।

वासलीगंज चौराहे से उत्तर की ओर बढ़ने पर दाहिने हाथ एक विशाल प्रस्तर-मन्दिर बना है, जो कला की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है। यहाँ शिवलिंग के अतिरिक्त हनुमान, गणेश, दुर्गा आदि की बड़ी ही विकराल मूर्तियां स्थापित हैं। मन्दिर की दीवारों में भी पशु-आकृतियां मिथुन मूर्तियां तथा देवी-देवताओं के अतिरिक्त योगिनियों, परियों की मूर्तियां भी बनाई गयी हैं। इस मन्दिर से लगभग 100 कदम आगे बढ़ने पर बरिया घाट पड़ता है जिसके दायीं ओर ताड़केश्वर नाथ तथा 108 मन्दिरों का वर्णन पहले भी किया जा चुका है। इस घाट के दोनों ओर चार पाँच बड़े मन्दिर निर्मित हैं, जो कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। मन्दिर की दीवारों में शताधिक कलात्मक मूर्तियां पत्थरों पर पच्चीकारी करके बनायी गयी हैं। इन मन्दिरों की पच्चीकारी एक-एक इंच पर की गयी है। हरिताभ रंग के पत्थर से निर्मित यह मन्दिर देखने से लगता ही नहीं कि कहीं से जोड़ा गया है। लगता है पूरे मन्दिर की कला एक ही पत्थर पर की गयी है। मन्दिर की सीढ़ियों के दोनों ओर छोटे-छोटे मन्दिर बनाये गये हैं जिनमें शिव, गणेश, हनुमान आदि की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

बरिया घाट से पश्चिम सुन्दरघाट पड़ता है। जहाँ छोटे-बड़े पाँच, छह मन्दिर निर्मित हैं, जिनमें गंगा जी, शिव, हनुमान, गणेश की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। इसी प्रकार बाबा घाट में भी छोटे-बड़े छह-सात मन्दिर बने हैं, जो कला की दृष्टि से बहुत सुन्दर हैं। इन मन्दिरों में शिवलिंग और अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। यह स्थान आश्रम जैसा है, जहाँ प्रायः साधु-महात्मा रहते हैं। कुछ मन्दिर तथा उनमें प्रतिष्ठित मूर्तियां गंगा की धारा में समाहित हो गयी हैं। गंगा निरन्तर शहर की ओर बढ़ रही हैं जिसके कारण प्रायः हर वर्ष उनके तट पर स्थित दो-चार मन्दिर धराशायी हो जाते हैं। इन घाटों का निर्माण नहीं किया गया तो एक अरसे बाद अधिकतर मन्दिर एवं उनमें प्रतिष्ठित मूर्तियां विनष्ट हो जायेंगी।

प्रेमघन मार्ग स्थित तिउरानी टोला में तीन मन्दिर बने हैं, जो कला की दृष्टि से उत्तम हैं। इनमें गणेश की एक विशाल मूर्ति देखने योग्य है। इसके अतिरिक्त चार-पांच देवी-देवताओं की अन्य मूतियां तथा कलात्मक प्रस्तर-खण्ड वहाँ बिखरे पड़े हैं। ये प्रस्तर-खण्ड तांत्रिक भावना के प्रतीक लगते हैं। तिवरानी टोला से पश्चिम मीरजापुर का सबसे प्रसिद्ध पक्काघाट पड़ता है जो तीन गलियारों में विभक्त है। इनसे होकर गंगा-तट जाने के लिए मजबूत सीढ़ियां बनी हैं। पश्चिम के गलियारे से उत्तरोन्मुख होकर ज्यों ही आप गंगा की ओर बढ़ेंगे, आपके बाजू के दोनों ओर गंगा-तट पर मन्दिर ही मन्दिर दिखाई पड़ेंगे। इनका निर्माण गुलाबी, हरा तथा सफेद रंग के पत्थरों से किया गया है। मन्दिर के शिखर पीतल के प्रस्तरों से बने हैं और इनकी पच्चीकारी बहुत ही आकर्षक है। पत्थरों को बड़ी बारीकी से जोड़ा गया है। तथा एक-एक इंच पर पच्चीकारी की गयी है। मन्दिर की दीवारों में देवी-देवताओं, योगिनियों और परियों की मूर्तियां पूजा-नृत्य की मुद्रा में प्रदर्शित हैं। दूसरे गलियारे में भी लगभग यही स्थिति है। घाट पर गंगा जी, दुर्गा जी, शिव, हनुमान, गणेश, विष्णु आदि की भव्य मूर्तियां बनी हैं जो पक्काघाट बनाते समय ही स्थापित की गयी होंगी। गंगा के उद्‌गम-स्थान से समुद्र में समाहित होने तक ऐसा माना जाता है कि पक्का घाट जैसा सुन्दर घाट कहीं अन्यत्र बना ही नहीं है। पक्का घाट पर पश्चिम की ओर भी कुछ और मन्दिर बने हैं, जिनमें देवी-देवताओं की

मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। पक्काघाट के पश्चिम गऊघाट तथा उसके बाद नारायण घाट पड़ता है जिसके पौराणिक महत्व का उल्लेख त्रिकोण यात्रा के अन्तर्गत किया गया है। इन घाटों पर घाट के दोनों ओर आठ नौ बड़े मन्दिर निर्मित हैं जिनका निर्माण पत्थरों से किया गया है और जिनकी पच्चीकारी बस देखते ही बनती है। मन्दिर के भीतर और बाहर दीवारों पर नृत्य और अभिवादन की मुद्रा में नर्तक–नर्तकियों, योगिनियों, परियों तथा देवी–देवताओं की मूर्तियां इतनी अधिक संख्या में और सुन्दर बनी हैं कि आश्चर्य होता है कि कलाकारों ने किस भावना से प्रेरित होकर, कितना समय देकर, किस परिष्कृत रुचि से, कितनी तल्लीनता और कला–भावना से इनका निर्माण किया होगा।

पूर्व के बड़े मन्दिर में शिवलिंग के अतिरिक्त, दुर्गा, गणेश, लक्ष्मी और सूर्यदेव, सारथी की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। पश्चिम की ओर एक दूसरा बड़ा मन्दिर है जिसमें लगभग 44 फीट ऊँची विकराल एवं भव्य मूर्ति स्थापित है। ऐसी मूर्ति अन्यत्र देखने को प्रायः नहीं मिलती।

मूड़ीसेमर बाबा–यह सोनभद्र जिले में दुद्धी से लगभग 25 किमी0 दक्षिण पूरब स्थित है। आदिवासियों में वृक्ष–पूजा की परम्परा अनादि कालीन है। मिर्जापुर के दक्षिणी छोर के एक गांव का नाम मूड़ी सेमर है, बाद में यह विंढमगंज के नाम से विंढम साहब नामक एक अधिकारी द्वारा अकाल के समय राहत कार्य की सुविधा देने के कारण ख्यात हुआ। मूड़ीसेमर नामकरण के सम्बन्ध में कहा जाता है कि अलियार और बलियार नामक दो भाई पोलवा महुली स्टेशन के पास के रहने वाले थे जो जाति के खरवार थे। कहते हैं, वंशीधर प्रतिमा की औरंगजेब की दुहिता उनका नित्य पूजा करती थी। उसी के कहने पर औरंगजेब ने उसे दिल्ली ले जाना चाहा, लेकिन जब यह खबर शिवाजी को लगी तो उन्होंने उसकी सुरक्षा के लिए अलियार बलियार को नियुक्त कर दिया। बलियार सिंह ने उसे एक पहाड़ी पर छिपा दिया। यह खबर नगर के शासक भैया साहब को लगी तो मूर्ति को पाने के लिए बरियार साहब को कटवाकर नदी में फेंकवा दिया।

बरियार साहब घोड़े पर सवार था। सिर कटने पर सिर तो अलग होकर

गिर गया, लेकिन धड़ घोड़े के पीठ पर ही रह गयी जो आगे जाने पर पोलवा नामक स्थान पर जा गिरी। जहाँ सिर गिरा, उसका नाम मूड़ीसेमर और जहां धड़ गिरी उसका नाम "राजाबाबा" पड़ा। यहाँ के आदिवासी दोनों स्थानों पर जाकर पूजा करते हैं। मिट्टी का बना घोड़ा चढ़ाने और पूजने की परंपरा यहां अद्यावधि प्रचलित है। यह भी कहा जाता है कि वंशीधर की मूर्ति के लिए बलियार और भैयासाहब में भी लड़ाई हुई जिसमें राधा की मूर्ति चुरा लेने के कारण अलियार सिंह भी मारा गया। मूड़ी सेमर बाबा को इष्टदेव की संज्ञा प्रदान की गयी है।

रघुनाथपुर के विष्णु–राबर्ट्सगंज (सोनभद्र) से लगभग 10 किमी0 पश्चिम–दक्षिण के कोण पर रघुनाथपुर बंधा बना है। यहाँ पहाड़ी के किनारे एक टीला है, टीले पर एक भग्नावशेष मन्दिर है, मन्दिर में विष्णु भगवान की भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यह सफेद पत्थर की मूर्ति है जो 135x52 सेमी0 के आकार की मन्दिर की दीवार के सहारे पड़ी है। ज्ञात हुआ कि यह मूर्ति दो–तीन टुकड़ों में मिली थी जिसे जोड़कर खड़ा किया गया। मन्दिर की दीवार पक्की ईंटों की बनी है। ईंटों का वजन 13 किग्रा0 तथा आकार 43x20x8 सेमी0 है। ये काफी बड़ी ईंटें हैं जिनका अनुमानित समय नवीं शताब्दी माना जा सकता है। दीवार के सामने हवनकुण्ड हैं। मंदिर का आकार 4.50x4.50 मीटर है। पानी के बहाव के लिए उत्तर की ओर एक कुण्ड 4.50x2.40 मी0 के आकार का बना है। इस स्थान को जोगियाबीर के नाम से जाना जाता है।

राकी–राबर्ट्सगंज से 20 किमी0 और पकरहट से दो किमी0 पूर्व राकी नाम का एक गांव है। यहां एक वृक्ष के नीचे काले पत्थर की कई मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं, जो कला की दृष्टि से उत्तम हैं, विवरण निम्नवत् है—

मूर्ति	कला	पत्थर	आकार	समय (अनुमानित)
विष्णु	चौबीस अवतार	काला	96x45 सेमी0	11वीं शताब्दी
शिव	कलात्मक	काला	65x40 सेमी0	11वीं शताब्दी
शिव	कलात्मक	स्वेत	39x54 सेमी0	11वीं शताब्दी

कहते हैं ये मूर्तियां हल चलाते समय खेतों से प्राप्त हुई हैं।

रामगढ़—रामगढ़ किरियात क्षेत्र का महत्वपूर्ण स्थान है। लगभग 200 वर्ष पूर्व गांव के मध्य में घास छिलते समय शिव जी की एक पिण्डी दिखलाई पड़ी। उसे यथास्थान रहने दिया गया और वहाँ के जमीदार रईस नवल किशोर सिंह ने उसी स्थान पर मन्दिर का निर्माण करा दिया। जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर मन्दिर में स्थापित शिवलिंग 1 फिट ऊँचा है। इसका पत्थर हरिताभ, चिकना, एक ओर कटा हुआ सा दीखता है। अर्घा 38 इंच के घेरे में है। इसका पत्थर सफेद है। सामने नन्दी की स्थापना की गयी है। 8.70x8.70x9 मीटर के चौतरे पर बीच में मन्दिर का निर्माण किया गया है। किरियात क्षेत्र के प्रायः सभी मन्दिरों में घण्टे बांधने की परंपरा रही है। यहीं दूसरे मन्दिर में एक चौतरा पर काले पत्थर के शिवलिंग की स्थापना की गयी है जो 25 सेमी0 लम्बा है। वृक्ष के नीचे नन्दी की स्थापना की गयी है। यहीं हनुमान जी की एक भव्य मूर्ति स्थापित की गयी है जिसका आकार 1.90x1.15 मी0 है। हनुमान जी के पांव के नीचे डाइन पड़ी हुई है। मन्दिर 3.30x3.30x10 मीटर के आकार का है। प्रवेश द्वार कलात्मक प्रस्तर-खण्डों से निर्मित है।

विजयपुर—विजयपुर कन्तित परगने का एक मुख्य स्थान है। यहाँ राजा की गढ़ी है। इसके अतिरिक्त छोटे-बड़े कई मन्दिर तथा तीर्थ हैं। तीर्थयात्रियों के आवागमन के कारण एक छोटी सी बाजार भी यहाँ बस गयी है। इस बाजार का पेड़ा मशहूर है। यहाँ के अधिकतर मन्दिर पत्थर के ही बने हैं। कारण, यहाँ की पूरी बस्ती पहाड़ पर ही बसी हुई है। भवन-निर्माण के लिए यहाँ के पत्थर काफी दूर तक जाते हैं।

शीतला माता—विजयपुर के शीतला माता की बड़ी प्रसिद्धि है। उन्हें बड़ीमाता भी कहते हैं। मन्दिर के अन्दर शीतला की लगभग 45 सेमी0 लंबी मूर्ति स्थापित है। यहाँ सावन में हर सोमवार को मेला लगता है। पूरा मन्दिर पत्थर का ही बना है।

हनुमान जी—विजयपुर में हनुमान जी की एक विशाल प्रतिमा सफेद पत्थर की प्रतिष्ठापित है, जिसका आकार 60x30 सेमी0 है। इनके बाएँ हाथ

की हथेली पर राम–लक्ष्मण विराजमान हैं और उनके दाहिने हाथ में गदा सुशोभित है। अहिरावण बाएँ पांव में नीचे पड़ा है। हनुमान जी के पांव में कड़ा स्पष्ट है। सब मिलाकर यह मूर्ति कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। गले में माला, कानों में कुण्डल, सिर पर मुकुट, और पूंछ पीछे से मुड़कर ऊपर दिखलाई पड़ती है। यह मूर्ति इतनी विशाल होती हुई कहीं से खण्डित नहीं है। जिस मन्दिर में यह मूर्ति स्थापित है वह पुराना मुण्डे के आकार का है और पत्थर का बना है।

दूसरे हनुमान–यहीं एक अन्य हनुमान जी की मूर्ति भी स्थापित है, जो वीर मुद्रा में अत्यंत कलात्मक है। इस मूर्ति का आकार 1.50x1 मीटर है। हनुमान जी के बाएं पांव तले अहिरावण को दिखाया गया है। साथ ही वीरभद्र, बाएँ हाथ की हथेली में राम–लक्ष्मण विराजमान हैं। इसी शिलाखण्ड पर मन्दिर, कमल, पहाड़, उसके ऊपर हनुमान जी की पूंछ का निर्माण किया गया है। साथ ही लंका–दहन का दृश्य है। इनके कमर में करधनी, लंगोट, गले में रुद्राक्ष की दो–तीन माला, सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, सुशोभित हैं। पत्थर का रंग सफेद है। चिकने पत्थर की बनी यह मूर्ति एक चौकोर मन्दिर में प्रतिष्ठित है।

शिव–मन्दिर (1)–इसी स्थान पर एक दूसरा **मन्दिर** शिवजी का निर्मित है। इसमें 20 सेमी0 ऊँचा शिवलिंग स्थापित है। एक मंदिर में पार्वती जी की प्रतिमा 46x31 सेमी0 के आकार की है। मन्दिर पत्थर का बना है जो 2x2x4 मीटर के आकार का है।

शिव–मन्दिर (2)–यहाँ एक अन्य शिव–मन्दिर है जिसमें शिवलिंग स्थापित है। इसी मन्दिर में स्थापित एक सुन्दर कलात्मक नन्दी–प्रतिमा स्थापित है, जिसका आकार 12x9x9 सेमी0 है। इसके अतिरिक्त पार्वती और गणेश की छोटी–छोटी प्रतिमाएँ स्थापित हैं। पत्थर का बना यह मन्दिर भी तत्कालीन है।

शिव–मन्दिर (3)–यहाँ कई शिव–मन्दिर निर्मित हैं और प्रायः सभी कलात्मक हैं। यह मन्दिर भी पत्थर का ही बना है जिसके सामने गणेश

जी की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। मन्दिर का आकार 1.50x1.50 मीटर है और उसके चारों ओर परिक्रमा के लिए गलियारा बना हुआ है। शिवलिंग के सामने बसहा बैल स्थापित है। नन्दी का आकार 72x45x26 सेमी0 है। यह मन्दिर काफी सुसज्जित और अलंकृत भी है। नन्दी की दोनों सींगें मुड़कर आपस में स्पर्श कर रही हैं। गले में घण्टी सुशोभित है। इसी मन्दिर में 28x17 सेमी0 की गणेश प्रतिमा 31x26 सेमी0 की सूर्य-प्रतिमा, 30x22 सेमी0 की युगल सम्पृक्त-प्रतिमा और 56x43 सेमी0 का अर्घा भी स्थापित है।

शिव-मन्दिर (4)-एक अन्य मन्दिर में अर्घा, नन्दी और शिवलिंग स्थापित हैं। यह मन्दिर लगभग 3 मीटर ऊँचा है।

शिव-मन्दिर (5)-एक दूसरे मन्दिर में नन्दी, सूर्य, शिवलिंग गणेश आदि की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं। मन्दिर का आकार 1.75x1.50 सेमी0 है, जिसके चारों ओर परिक्रमा के लिए गलियारा बना हुआ है। इसमें चिकने सफेद रंग के पत्थर की मूर्तियां स्थापित हैं। यहाँ के पण्डा, पुजारियों के अनुसार ये सभी मूर्तियां लगभग 16-17वीं शताब्दी की हैं।

भैरवनाथ-विजयपुर में ही एक भैरवनाथ का मन्दिर है जिसका आकार 1.08x.60 मी0 है। यह मूर्ति कसौटी के सुन्दर चिकने पत्थर की बनी है। भैरव डमरू, त्रिशूल, तलवार, नरमुण्ड लिये हुए हैं। उन्हें कुत्ता द्वारा चाटते हुए दिखाया गया है। वे कुत्ते पर सवार हैं। भीतर से मन्दिर का आकार 2x2 मीटर है। मन्दिर मुण्डा है और पत्थर का बना है। इस मन्दिर के पार्श्व भाग में चिकने सफेद पत्थर की सिंह-मूर्ति स्थापित है जो काफी विशाल दिखती है। इसका आकार 1.50x.87x0.56 मी0 है। पास में एक नन्दी भी स्थापित है जिसका आकार 1.3x0.42x0.34 मी0 है। ये दोनों मूर्तियां बाद की बनी हैं।

काली माई-यहाँ काली माई का एक बहुत ही सुन्दर कलात्मक मन्दिर निर्मित है। यहाँ का यह सबसे सुन्दर मन्दिर है, यद्यपि यह बाद का बना है। इसका निर्माण भूपेन्द्र सिंह ने कराया था। सामने विशाल प्रस्तर-स्तम्भ 1.32 मी0 के व्यास में है। मन्दिर के ऊपर लगा हुआ घण्टा अष्टधातु का बताया जाता है। यह घण्टा अपने आप में काफी महत्वपूर्ण है। यह लगभग 1 मी0

70 सेमी0 के व्यास में निर्मित है और लगभग एक मीटर लंबा है। यह काफी मोटा, विशाल और सुन्दर है, घण्टे पर अलंकरण भी किया गया है। यह मन्दिर सं0 1941 का बना है और यह विशाल घण्टा भी उसी समय का बना होगा।

विजयपुर को मन्दिरों का पुराना नगर कहा जा सकता है; क्योंकि यहाँ 25 से भी अधिक संख्या में मन्दिर बने हुए हैं और प्रायः सभी में मूर्तियां स्थापित हैं। इसी प्रकार मूर्ति-कला और स्थापत्य कला की दृष्टि से यह स्थान काफी महत्वपूर्ण हो गया है।

कोदवा माता—विजयपुर क्षेत्र में ही एक स्थान कोदवा माता के नाम से मशहूर है। यह भी एक प्रकार का शीतला मन्दिर है। क्योंकि जब किसी के कोदों के आकार की शीतला माता (छोटी माता) निकलती हैं तो उससे मुक्ति के लिए वह माता के धाम में मनौती मानता है। शीतला माता का प्रभाव कम होने पर और अन्य कोई अनिष्ट न होने पर वह वहाँ जा कर देवी की पूजा करता है जिसके कारण यह स्थान इस क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण हो गया है।

शतद्वारी—शतद्वारी घोरावल से 7 किमी0 पश्चिम बेलन के समीप स्थित है। शिवद्वार, शतद्वारी और सौढ़रीगढ़ तीनों स्थान एक ही किमी0 के क्षेत्र में हैं। अधिकतर मूर्तियां शतद्वारी में हैं। उनमें से कुछ मूर्तियों का विवरण निम्नवत् है—

शिव-पार्वती—शिवपार्वती नन्दी पर सवार हैं। पत्थर अत्यंत चिकना तथा काला है। बाम भाग में देवी-मूर्ति आराधना की मुद्रा में, दोनों ओर ऊपर से नीचे तक गणों की प्रतिमाएँ, नीचे गणेश जी, कार्तिकेय, सिर के ऊपर चतुर्भुजी रूप, बायें हाथ में सर्प, दूसरा हाथ पार्वती के कमर से होता हुआ उनकी बायीं कांख के नीचे से आकर बायें स्तन को सहारा देता हुआ, दाहिने हाथ में त्रिशूल, चौथे हाथ में भी सर्प, लास्यरूप। कला की दृष्टि से अत्यंत सुन्दर। नीचे विष्णु, हनुमान, आकार 130x72 सेमी0। दुर्लभ कलाकृति।

सहस्त्र-शिव—26 सेमी0 ऊँचा, 168 सेमी0 व्यास, बीच से फटे

हुए अरघे का आकार 92x80 सेमी0, खुरदुरा सफेद पत्थर, पुरानी मूर्ति।

प्रस्तर–स्तम्भ–मुख्य मन्दिर से 100 मीटर पश्चिम सड़क से बायीं ओर एक टीला लगभग 10x10 मीटर लम्बा-चौड़ा है। इसके ऊपर एक कलात्मक प्रस्तर-स्तम्भ रखा है। बीच में सिंहवाहिंनी दुर्गा जी की प्रतिमा है और दोनों ओर देवदासियां हैं। दुर्गा चतुर्भुजी हैं। स्तम्भ 112x56 सेमी0 के आकार का है। पत्थर सफेद है।

अन्य मूर्तियां–मन्दिर से 200 मीटर पूरब पीपल के वृक्ष के तले जो मूर्तियां रखी हुई हैं। उनमें से अधिकतर खण्डित हैं, किन्तु वे सभी कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इनमें एक स्तम्भ 50x45 सेमी0 के आकार का सफेद पत्थर का हैं। शंख 48x22 सेमी0 के आकार की है। युगल मूर्ति 50x20 सेमी0 के आकार की है तथा अन्य खण्डित मूर्तियां 12 की संख्या में हैं। शतद्वारी में लोगों के घरों, कूपों, दीवारों तथा खेतों में तमाम मूर्तियां पड़ी हुई हैं। श्री रमाकांत दुबे के घर के सामने मन्दिर में भी अनेक कलाकृतियां देखी गयीं।

शिवशंकरी धाम–चुनार-वाराणसी मार्ग पर सड़क के समीप चुनार से लगभग 12 किमी0 दूर यह स्थान स्थित है। यहाँ एक साधारण मन्दिर में दुर्गा जी की लगभग 60 सेमी0 ऊँची प्रतिमा स्थापित है। यह मूर्ति लगभग दो सौ वर्ष पुरानी है। मन्दिर के बाहर दरवाजे पर दो शेरों की मूर्तियां स्थापित हैं, सुन्दर हैं, जिनका आकार 1.75x3.5 मीटर है। यहां बसंत के महीने में शिवरात्रि पर मेला लगता है। मन्दिर के सामने एक पुराना पक्का कूप बना हुआ है। यहाँ लोग कान काट कर खसी छोड़ते हैं। नारियल-चुनरी, चढ़ाकर देवी की पूजा करते हैं। मन्दिर पीपल के वृक्ष तले स्थित है। भारत महान है। यहाँ प्रत्येक पीपल की पूजा की जाती है, कुएँ का भी विवाह किया जाता है।

शिवद्वार–शतद्वारी–शिवद्वार राबर्ट्सगंज से 42 किमी0 पश्चिम घोरावल से लगभग 8 किमी0 दूर है। इस स्थान को 11वीं शताब्दी में 'द्वितीय काशी' के नाम से जाना जाता था। इस स्थान का विकास गहड़वालों और चन्देलों के समय हुआ।

यहाँ घर-घर मूतियाँ हैं और अनुमान है कि पाँच सौ से अधिक मूर्तियां इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं। यहाँ के मकानों, कुओं का निर्माण कलात्मक पत्थरों और मूर्तियों से किया गया है। यहाँ से सैकड़ों कलात्मक मूर्तियां चोरी चली गयीं। कुछ जो बची हैं, उनमें से मुख्य का विवरण इस प्रकार है—

नाम	आकार से0मी0 में	पत्थर	शताब्दी (अनुमानित)
शिव पार्वती	133x72	काला चिकना	11वीं शताब्दी
शिव	96x49	काला चिकना	11वीं शताब्दी
नन्दी	153 व्यास में	काला चिकना	11वीं शताब्दी
गणेश	50x51	काला खुरदुरा	11वीं शताब्दी
हनुमान	53x50	काला खुरदुरा	11वीं शताब्दी
कलश	48x33	काला खुरदुरा	11वीं शताब्दी
देवी	57x43	काला खुरदुरा	11वीं शताब्दी
विष्णु	64x26	काला खुरदुरा	11वीं शताब्दी
शिवलिंग	30x22	काला चिकना	11वीं शताब्दी
अन्य	88x27	सफेद	11वीं शताब्दी
सहस्र लिंग	99x71	हल्का काला	11वीं शताब्दी
अन्य	43x29	खुरदुरा काला	11वीं शताब्दी
नन्दी	61x21	हल्का सफेद	11वीं शताब्दी
दुर्गा	44x33	काला सफेद	9वीं शताब्दी
अन्य	82x51	काला सफेद	9वीं शताब्दी
देवी	67x60	काला सफेद	9वीं शताब्दी
शिव	115x63	सफेद	9वीं शताब्दी
विष्णु	56x54	काला	10वीं शताब्दी
शिव-पार्वती	63x54	काला	10वीं शताब्दी
शिव	38x28	काला	10वीं शताब्दी

शिवद्वार शताद्वारी के आस-पास 1 किमी0 दूर एक गांव में है, जहाँ और भी कलात्मक मूर्तियां प्राप्त हैं। 3 किमी0 दूर 'वर' नामक स्थान पर दुर्गा

जी की सुन्दर प्रतिमा तथा कुछ तांत्रिक प्रस्तर खण्ड पड़े हैं। 4 किमी0 दूर 'बर्दिया' नामक स्थान पर दुर्गा प्रतिमा, 11 किमी0 दूर मझिगवां में विष्णु और गणेश की प्रतिमाएं प्रतिष्ठापित हैं। इस पूरे टप्पे को जो अट्ठाइस गांवों का है, "कड़िया अट्ठाइस" कहते हैं। यहाँ एक बहुत बड़ा सुरहा तालाब है जिसके बारे में अनेक किंबदन्तियां प्रचलित हैं। कहते हैं लोरिक की बारात अगोरी जाते समय इसमें डूब गयी थी। यहाँ आल्हा कुश्ती लड़ता था।

शिवल्ला गांव—राबर्ट्सगंज से 17 किमी0 पूरब रामगढ़ नामक स्थान से 3 किमी0 उत्तर शिवल्ला गांव नाम का एक स्थान है, जहाँ पत्थर का निर्मित पुराना मन्दिर है। एक छोटे से तालाब के तट पर निर्मित यह मन्दिर 16वीं शताब्दी का प्रतीत होता है। इस मन्दिर में एक शिवलिंग तथा कुछ अन्य मूतियां भी स्थापित हैं। यहाँ मकर संक्रान्ति के अवसर पर मेला आयोजित होता है। इस मन्दिर के समीप ही एक वृक्ष के नीचे कुछ अन्य प्रतिमाएँ पड़ी देखी गयीं। यही प्रागैतिहासिक काल की एक कुल्हाड़ी भी मिली थी।

शीतला मन्दिर—चुनार–घाट गंगा–तट पर चुनार दुर्ग के दूसरे किनारे पर स्थित है। यहाँ से लगभग 8 किमी0 उत्तर की ओर अदलपुरा नाम का एक स्थान है। अदलपुरा से लगभग 1 किमी0 पूरब गंगा के ठीक तट पर शीतला जी का बहुत पुराना मन्दिर निर्मित है। ऐसा लगता है कि इस मन्दिर का पुनरुद्धार कई बार किया गया है। अब संगमरमर के सुन्दर पत्थर से इसे अत्यंत भव्य बना दिया गया है। मन्दिर का प्रवेश–द्वार पूरब है। मन्दिर के अंदर लगभग 15x60 सेमी0 की शीतला जी की प्रस्तर–प्रतिमा प्रतिष्ठित है। इसी प्रकार कुछ अन्य कलात्मक सुन्दर काले पत्थर की प्रतिमाएँ भी प्रतिष्ठित हैं, जिनका आकार क्रमशः 75x65x60 सेमी0 है। दूर दराज से मनौती मान कर पूजा के निमित्त दर्शनार्थी आते ही रहते हैं। चेचक के प्रकोप के फलस्वरूप जिस किसी की आँख खराब हो जाती है या किसी स्त्री को संतान प्राप्ति नहीं होती, किसी के शरीर में अपंगता रहती है, तब यह मनौती मान कर यहाँ आता है। ऐसा विश्वास है कि यहाँ 3 बार आने के बाद मनौती पूरी हो जाती है। यहाँ समीप के एक मन्दिर में 54 सेमी0 ऊँची हनुमान प्रतिमा स्थापित है। इसी के

समीप एक छोटा-सा शिवलिंग और नन्दी प्रतिमा स्थापित है।

इस क्षेत्र में स्थान-स्थान पर शिव-मन्दिर बने हैं और उनमें चुनार-घाट के समीप पश्चिम की ओर एक पुराना शिव-मन्दिर निर्मित है, जिसकी ऊँचाई लगभग 6 मीटर है। इसमें एक शिवलिंग और नन्दी की स्थापना की गयी है। यहाँ प्रायः प्रत्येक गांव में किसी न किसी जगह कोई न कोई शिव-मन्दिर बना है। खानपुर में 300 वर्ष पुराना एक शिव मन्दिर स्थापित है। इसी प्रकार मगरहा में एक 6 मीटर ऊँचा शिव-मन्दिर निर्मित है। बगहा में 10, 12 की संख्या में शिव-मन्दिर बने हुए हैं जिनमें शिवलिंग स्थापित हैं। ये मन्दिर प्रायः पत्थर के ही हैं। सुन्दरता के लिए चुनार का गुलाबी रंग का पत्थर पूरे देश में मशहूर है। चुनार के समीप होने के कारण इन मन्दिरों में भी वे ही पत्थर लगाए गए हैं।

शिवपुर—राबर्ट्सगंज जिला मुख्यालय से 17 किमी0 पूरब रामगढ़ नामक बाजार पड़ती है। इससे लगभग 5 किमी0 उत्तर शिवपुर नामक एक गांव एक नाले के किनारे बसा हुआ है। यहाँ एक वृक्ष के नीचे कई प्रस्तरप्रतिमाएँ इधर-उधर पड़ी हैं। यहाँ देवस्थान के समीप एक बड़ा टीला देखा गया हैं जिसके संबंध में पूछताछ के बाद ज्ञात हुआ कि यहाँ, जहाँ कहीं भी खुदाई की जाती है, मूर्तियां अथवा कलात्मक पत्थर, मन्दिर के स्तम्भ, कलश आदि निकल आते हैं। इस स्थल पर बहुत सारी कलात्मक मूर्तियां मिली थीं, जिन्हें दूर-दराज तक लोगों ने ले जाकर अपने घरों में स्थापित कर दिया है। पीपल के वृक्ष-तले स्थापित एक नन्दी 78x38 सेमी0 के आकार का खुरदुरा पत्थर का देखा गया। यहीं पार्वती जी की एक मूर्ति 68x38 सेमी0 की देखी गयी जो अब बहुत स्पष्ट नहीं है। मन्दिर के ऊपर का कलश एक मीटर 85 सेमी0 का अलंकृत और गोलाकार है। एक दूसरा कलश 99 सेमी0 के व्यास का भी देखा गया। एक मूर्ति स्तम्भ 70x50 सेमी0 दूसरा 96x57 सेमी0 का देखा गया। (जिस पर दो पावों के निशान बनें हैं।) पाँचवां कमल दल, छठां 47x40 सेमी0 के आकार के हैं। इसी प्रकार एक मूर्ति का खण्डित जंघा 25x13 सेमी0 के आकार का देखा गया। एक अन्य देवी की खण्डित मूर्ति

71x31 सेमी0 के आकार की देखी गयी। इसी प्रकार एक सम्पृक्त युगल प्रतिमा 71x45 सेमी0 के आकार की मिली। एक अन्य खण्डित मूर्ति 66x35 सेमी0 के आकार की है। इसी तरह एक मूर्ति 52x34 सेमी0, एक अन्य मूर्ति 52x34 सेमी0 की नृत्य–शैली में देखी गयी। इसी प्रकार एक देवी प्रतिमा, जो दोनों हाथ जोड़ी हुई थी, 55x31 सेमी0 की मिली थी। यह मूर्ति काफी अलंकृत है। गले में माला, कमर में करधनी का अलंकरण, दाहिना पांव बहुत मुड़ा हुआ, एक पांव खण्डित देखा गया। यह मूर्ति सफेद चिकने पत्थर की है।

मन्दिर के अवशेष–पीपल के वृक्ष से लगभग 2 मीटर पश्चिम एक मन्दिर के अवशेष भी देखे गए। वहाँ लगभग 5 फिट की खुदाई की गयी है। गांव से उत्तर–पूरब की ओर तालाब के तट पर इमली के एक वृक्ष के नीचे भी कुछ मूर्तियां रखी हुई हैं। उसमें से देवी की एक मूर्ति 73x31 सेमी0 के आकार की, पूजा की मुद्रा में देखी गयी। देवी के एक हाथ में शंख, गले में लाल माला, घुटने के नीचे तक अलंकृत है। दूसरी देवी–प्रतिमा 66x30 सेमी0 के आकार की नृत्य की मुद्रा में अलंकृत देखी गयी। तीसरी मूर्ति 66x41 सेमी0 के आकार की सफेद पत्थर की मिली थी। यहीं एक खुरदुरे पत्थर की शिव–प्रतिमा भी देखी गयी थी। इसी प्रकार शिव–पार्वती की एक अन्य प्रतिमा 48x30 सेमी0 के आकार की लास्य भाव में, शिवद्वार की तरह खण्डित, देखी गयी। इसी प्रकार हनुमान जी की भी एक खण्डित प्रतिमा को वीर मुद्रा में–दाहिना हाथ मस्तक पर, बायां हाथ जोड़कर सीने के ऊपर, बांया पांव से डाइन को दबाये हुए, जनेऊ पहिने, पूंछ को पीछे से मोड़ कर सिर तक उठाये हुआ, दिखाया गया है। यह मूर्ति 93x40 सेमी0 के आकार की तालाब के किनारे स्थापित है। (ऐसी ही एक मूर्ति इसी क्षेत्र में पकरहट गांव में भी प्राप्त है।)

टीला एवं तालाब–शिवपुर में टीले के समीप एक तालाब है। तालाब तो बहुत पुराना है किन्तु इसका पुनरुद्धार तीन–चार वर्ष पूर्व कराया गया था। लोगों ने बताया कि पुनरुद्धार के समय खुदाई में कई कलात्मक पत्थर–

मूर्तियां–गरुड़, शिवलिंग आदि की मिली थीं। यहीं एक कूप भी मिला था जिसे मिट्टी का ढोना बनाकर बांधा गया है। यह कूप तालाब में लगभग 6 मीटर नीचे मिला था। यहाँ जो टीला देखा गया, वह लगभग 25 सेमी0 लंबा और 20 मीटर चौड़ा है। इसके नीचे कलात्मक पत्थर और मूतियां तो मिलती ही हैं, पकी हुई ईंटें भी मिलती हैं। यहाँ पूरी ईंटें तो नहीं मिली लेकिन एक जो ईंट मिली थी उसे 30x22 सेमी0 का मापा गया था।

परिवेश–इस क्षेत्र में शिवपुर के आसपस कई ऐसे स्थान हैं जहाँ कुछ मूर्तियां और कलात्मक पत्थर प्राप्त हो जाते हैं। सण्डी नामक गांव में कुछ दिनों पूर्व 4, 5 सोने के सिक्के मिले थे जिन्हें यहाँ के लोगों ने पन्नूगंज थाने में जमा कर दिये थे। कहते हैं इन सिक्कों को सील मुहर करके तत्कालीन थानेदार ने सम्भवतः किसी संग्रहालय में भेज दिया। इसी प्रकार समीप के बनौली नामक गांव में भी कुछ ईंटें–लंबी–चौड़ी लगभग इसी प्रकार की मिली थीं। इसी गांव में लोहे का गगरा, मिट्टी का घड़ा भी मिला था। यहाँ के पार्श्ववर्ती तेलंग, बगही, बगरिया, जय मोहरा, ढोढ़री, नाको, जिगनी, महुआरी, सरई, नरंगा, बकवार, कुराकला, नवगांव, शिकरिया, ततहारा, बगौरा आदि गांवों में भी यदा–कदा पुरातत्व के महत्व की कुछ वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं।

शेरवां–शेरवां मिर्जापुर–वाराणसी की सीमा पर स्थित है। वाराणसी का पहला गांव मझिगांवा इसकी सीमा से जुड़ा है। शेरवां, भुइली, समीपवर्ती स्थल हैं जहाँ पुराने खण्डहर प्राप्त हैं। उन खण्डहरों में ग्रामवासियों को एक दो सिक्के भी मिले थे। किंबदंती है कि एक बार बाहर के कुछ लोग यहाँ आये थे, उन्होंने खण्डहरों की खुदाई की थी और उसमें प्राप्त धन–सोना, चाँदी सिक्के आदि ऊँटों पर लाद कर ले गये थे। इसी प्रकार एक तांत्रिक अंगूठी (नग जड़ित) मिली थी। यहीं एक पुरानी मस्जिद में पारसी में लिखा शिलालेख भी मिला था। यहाँ पत्थर के धरोहर का अवशेष भी प्राप्त है, जिसके ऊपर चढ़कर युद्ध आदि का संकेत दिया जाता था।

किले का खण्डहर–शेरवां में पुरानी गढ़ी का खण्डहर भी देखा गया। यहाँ एक कूप, चारों ओर खाईंनुमा, गड्ढा, भारी प्रस्तर–स्तम्भ, कक्ष सूरखी

चूना से जोड़े हुए देखे गये। 78x32 सेमी0 आकार के प्रस्तर खण्ड भी मिले जिनमें नक्कासी की हुई थी। दीवार की मोटी नींव, बर्तन के टुकड़े सर्वत्र बिखरे पड़े हैं। दीवारें प्रायः 68 सेमी0 मोटी पत्थर को जोड़कर बनायी गयी हैं। कक्षों का आकार अनुमानित 14x7 मीटर है। यह खण्डहर किंवदन्ती के अनुसार बावन बीघा यानी 48 एकड़ के लगभग क्षेत्र तक फैला हुआ है। कलात्मक पत्थरों को देखने से सहज अनुमान किया जा सकता है कि यहाँ गढ़ी, मन्दिर का निर्माण 13वीं शताब्दी के आस–पास किया गया होगा।

मदरसा–शेरवां में एक पहाड़ी पर एक वृत्ताकार खण्डर देखा गया जिसे गांव के लोग मदरसा के नाम से जानते हैं। यहाँ वृहस्पतिवार को दीपक जलाया जाता है। यह पहाड़ी लगभग 6 मीटर ऊँची है जिस पर लगभग 20 मीटर ऊँचा वृत्ताकार निर्माण किया गया है और जिसके बीच–बीच में लोहे की चिरैया लगी है। इसका प्रवेश–द्वार पूरब की ओर लगभग 2 मीटर ऊँचा है। वह मेहराबदार है। इसकी एक दीवार 1.50 मीटर चौड़ी है। द्वार–रक्षकों के लिए चारों ओर स्थान बने हैं जिनमें से एक ओर पेड़ हैं। इनके सामने भी एक पक्का कूप है।

सरइया–चुनार में जरगों नदी के तट पर सरइया नामक एक गांव है। यहाँ शिव और हनुमान के दो मंदिर बने हैं। लगभग सवा सौ वर्ष पूर्व का बना यह मन्दिर कला की दृष्टि से बहुत सुन्दर है। लाल गुलाबी रंग के पत्थर के बने इस मन्दिर में ऊपर पीतल के पत्तर जड़े हुए हैं। मन्दिर 2.85x2.85x8 मीटर के आकार का है। इसमें स्थापित सूर्य 55x40 सेमी0, भैरव 58x36 सेमी0, गणेश 48x35 सेमी0, पार्वती जी 40x26 सेमी0 आकार की प्रतिमाएँ मन्दिर की भीतरी दीवार में जड़ी हुई हैं। सभी कलात्मक हैं। शिव–मन्दिर के सामने एक पक्का पत्थर का तत्कालीन कूप बना है। यहीं एक अन्य मन्दिर में हनुमान जी की प्रतिमा स्थापित है। यह मूर्ति भी सुन्दर, विशाल और कलात्मक है। मूर्ति तत्कालीन है और लगभग डेढ़ मीटर ऊँची है।

सारनाथ–सारनाथ कछवां बाजार से 3 किमी0 दूर जमुवां बाजार के मार्ग पर गोधना के समीप का एक स्थान है, जहाँ एक टीले पर पत्थर का

मन्दिर बना हुआ है। मन्दिर का भीतरी भाग 2.35x2 मी0 के आकार का है। मन्दिर के मध्य में एक अर्घा 75 सेमी0 का बना हुआ है। बाहर दाहिनी ओर 90x75 सेमी0 का एक कुण्ड बना है जिसमें मन्दिर का पानी बह कर उस कुण्ड में चला जाता है। मन्दिर की ऊँचाई भीतर से 4 मीटर है। यह चतुष्कोण है और 4 खम्भों पर टिका हुआ है। मन्दिर के भीतर जाने के लिए 5 सीढ़ियां नीचे उतरनी पड़ती है। नीचे बाद में शिवलिंग स्थापित कर दिया गया। बरामदा सहित मन्दिर की लंबाई 6 मी0, चौड़ाई 5 मी0 और ऊँचाई 7 मी0 के लगभग है। मन्दिर के सामने का बरामदा 4x3.70 मीटर का है। मन्दिर के सामने 8 खम्भे पत्थर के लगे हुए हैं जिसके एक ओर मन्दिर है और तीन ओर से खुला हुआ है। सामने दाहिनी ओर देवी की कलात्मक प्रतिमा 95x57 सेमी0 के आकार की सफेद चिकने पत्थर की जड़ी हुई है। इसी क्रम में एक देवी मूर्ति 75 सेमी0 ऊँची जड़ी हुई है जिसके गले में हार, मुकुट, कुण्डल सुशोभित है। किन्तु यह मूर्ति खण्डित है। मन्दिर के सामने और भी खण्डित मूर्तियां कई आकार-प्रकार की जड़ी हुई हैं। यहीं एक अलंकृत देवी-प्रतिमा जड़ी हुई हैं जिसके बाएँ हाथ में कलश दायां हाथ सामने की ओर मुड़ा हुआ है। मूर्ति वस्त्राभूषणों से सुसज्जित और त्रिभंगी मुद्रा में है। यहीं एक गणेश-प्रतिमा मन्दिर की दीवार में जड़ी हुई है, जिसका पत्थर खुरदुरा है। इसी प्रकार तीन अन्य वीर प्रतिमाएँ भी जड़ी हुई हैं जिनका आकार 80x45 सेमी0 है। ये तीनों घोड़े पर सवार हैं। यहीं एक पत्थर 1.20 मी0 के व्यास का जड़ हुआ देखा गया। सम्पूर्ण मन्दिर हल्के गुलाबी रंग के पत्थर का बना हुआ है। इसे जोड़ने के लिए किसी बारीक मशाले का प्रयोग किया गया है। मन्दिर के चारों ओर भीतर, बाहर कलात्मक विभिन्न आकार-प्रकार के पत्थर लगे हुए हैं। यहाँ के कुछ प्रस्तर-खण्डित खजुराहो की शैली में बनी मूर्तियों से युक्त देखे गये। एक प्रस्तर-स्तम्भ में 3 युगल लास्य प्रतिमाएँ निर्मित देखी गयीं। मन्दिर के सामने बरामदे से बाहर नन्दी की एक विशाल बाम भाग से सीधी कटी हुई मूर्ति स्थापित है, जिसका आकार 1.25x.55 मीटर है। नन्दी के गले में घण्टा बंधा हुआ है और वह आभूषित है। यह सिर से कटा हुआ है। मन्दिर से दक्षिण 10 मीटर की दूरी पर विद्यालय की नींव खोदते समय नीचे प्लास्तर की हुई पक्की

जमीन मिली थी। इसका विस्तार और भी दूर तक बताया गया। इससे ऐसा लगता है कि इस मन्दिर के साथ दूर तक प्रवचन के लिए पक्के फर्श बनाये गये होंगे।

यह मन्दिर लगभग 3 मीटर ऊँचे एक टीले पर निर्मित है, जिसके पृष्ठ भाग में एक छोटा सा तालाब है। नीचे अन्दर प्राप्त पक्के फर्श से मन्दिर के दाहिने वाले भाग को सम्मिलित करते हुए पूरे क्षेत्र का अंकन 20x10 मी0 में किया जा सकता है।

मन्दिर के बाम भाग की एक शिला में अंकुश वाले तीर का निशान बना कर किसी पुरानी लिपि में "यात्रा" लिखा हुआ है। स्थानीय लोगों ने बताया कि यहीं से एक भुइनाश बना है जिसके भीतर से चुनार किले तक जाया जा सकता है। मन्दिर के प्रवेश द्वार के ऊपर कुछ सुन्दर कलात्मक मूर्तियां मन्दिर के पत्थर पर ही बनी हुई हैं। ये सभी मूर्तियां पद्मासन में हैं जिनमें से 3 बड़ी हैं और बीच–बीच में कुल 8 छोटी मूर्तियां हैं। बड़ी मूर्तियां ब्रह्मा, विष्णु, महेश की हैं जिनका आकार 55x40 सेमी0 है। ये सभी मूर्तियां एक ही बड़े पत्थर पर उत्कीर्ण हैं।

रोहतास

रोहतास जिले का ऐतिहासिक महत्व तो हैं ही, धार्मिक महत्व कुछ कम नहीं है। यहाँ अनेक प्राचीन, नवीन मन्दिर, तीर्थ, मकबरे तथा साधना–स्थल हैं, जहाँ विशिष्ट अवसरों पर मेले–ठेले का आयोजन होता रहता है। इसमें से प्रमुख इस प्रकार है—

उमापुर—भभुआ तहसील में भभुआ से मुण्डेश्वरी देवी के मार्ग में उमापुर नाम का एक गांव है। लोगों का ख्याल है कि उमा यानी पार्वती के नाम पर ही इस गांव का नामकरण उमापुर कर दिया गया था। उमापुर में कई सुन्दर कलात्मक मूर्तियां स्थापित हैं जिनमें से मुख्य हैं सहस्त्र शिवलिंग। यानी एक ही बड़े शिवलिंग में एक हजार छोटे–छोटे शिवलिंग बने हुए हैं। यह शिवलिंग

96 सेमी० वृत्ताकार है और इसकी ऊँचाई जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर 48 सेमी० ऊँची है। इस शिवलिंग में कुल 13 पंक्तियां हैं और प्रत्येक पंक्ति में 72 शिवलिंग निर्मित हैं। बाकी पंक्तियां जमीन में अन्दर गड़ी हुई हैं। ऐसा अनुमान है कि जमीन में गड़े हुऐ भाग को मिलाकर कुल 1001 शिवलिंग बनाए गए हैं। शिवलिंग का पत्थर काला है।

इस शिवलिंग के समीप ही कुछ और मूर्तियां देखी गयीं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित मुख्य हैं—1. हनुमान जी 23 सेमी०, 2. देवी प्रतिमा 23 सेमी०, 3. शिवलिंग 32 सेमी०, 4. 18 सेमी०, 5. दुर्गा जी 30 सेमी०। हनुमान जी के दो हाथ हैं। एक हाथ में गदा है और दूसरे में ब्रह्मास्त्र। उनके पावों के नीचे असुर राजा रावण को प्रदर्शित किया गया है। यहाँ कलात्मक पत्थरों और मूर्तियों के अवशेष भी कुछ देखे गये।

चन्द्रेश्वरी—चन्द्रेश्वरी देवी मन्दिर के पास एक शिलालेख देखा गया, जिसे ब्राह्मी लिपि के नाम से जाना जाता है। वैसे तो इस मन्दिर का निर्माण अधिकतर पत्थर से ही किया गया है किन्तु यहाँ कुछ पक्की ईंटें भी मिली थीं। लोगों ने बताया कि यहाँ से दो मूर्तियां जो अत्यंत भव्य थीं, पटना संग्रहालय को भेजी गयी हैं। इसमें से एक मूर्ति कार्तिकेय जी की लगभग 7 सेमी० ऊँची और दूसरी मूर्ति सूर्य भगवान की है।

जगरनाथपुरी—यहीं पर जगरनाथ जी की प्रतिमा स्थापित है। भगवान का नरसिंहावतार दिखाया गया है। प्रह्लाद की पत्थर की बनी मूर्ति आकार में 1.70x1 मीटर है। हनुमान प्रतिमा 1.35x.95 मीटर है। इसके अतिरिक्त और भी प्रतिमाएँ हैं जो इस प्रकार हैं—1. जगरनाथजी की प्रतिमा 2.90x1.80 मीटर, 2. गणेश 50x45 सेमी०, सफेद कलात्मक पत्थर 3. सूर्यदेव 47x30 सेमी०, 4. नन्दी 55x28 सेमी०।

यहाँ कुल लगभग 9 मी० ऊँचाई के 7 मन्दिर निर्मित हैं। वहाँ के एक सज्जन ने बताया कि इन मन्दिरों का निर्माण लगभग 400 वर्ष पूर्व जगरनाथ दास द्वारा किया गया था। इस स्थान से पश्चिम उदासी मन्दिर निर्मित है, किन्तु उसमें कोई मूर्ति नहीं है। यहाँ आसपास शिव जी, जगरनाथ जी, हनुमान

स्वामी, मत्स्यावतार की कलात्मक मूर्तियां भी देखी गयीं। मत्स्यावतार की मूर्ति 45 सेमी0 आकार की है जो रास्ते में एक स्थान पर जड़ दी गयी है।

जमुआंव–जमुआंव में 'सती माई का कोठा' नामक एक स्थान बहुचर्चित है। कहा जाता है कि यहीं हरसूब्रह्म बाबा की पत्नी सती हुई थीं। वह जमुआंव की ही थीं। हरसूब्रह्म के देहावासान के बाद उन्होंने यहीं पर आकर देह–त्याग किया था और सती हो गयी थीं। उन्हीं के नाम पर यहाँ सती माई का कोठा हो गया। शालिवाहन परिवार में कुमारी परंपरा थी। क्योंकि किसी शाप के परिणामस्वरूप पुरुष का जन्म ही नहीं होता था।

ताराचण्डी भवानी–सासाराम में ताराचण्डी भवानी का सर्वोपरि महत्व है। यह स्थान सासाराम से 4 किमी0 दक्षिण एक पहाड़ी के समीप स्थित है। यहाँ जाने के लिए पक्की सड़क बनी हुई है। देखने से ऐसा लगता है कि देवी की प्रतिमा पहाड़ी की एक गुफा में प्रतिष्ठित थी, जिसे घेर कर एक मन्दिर का रूप दे दिया गया। पहाड़ी की गुफा में स्थित यह अत्यंत प्राचीन देवी–धाम और शक्ति–पीठ है। देवी भागवत पुराण के अनुसार सती कन्या का अंग सुदर्शन चक्र से कट कर यहीं गिरा था। हय हय वंशीय कोस्यकार समिति की ओर से 15 मी0 30 सेमी0 ऊँचा स्वर्ण ध्वज 1986 में स्थापित किया गया है। देवी की मूर्ति 45 सेमी0 ऊँची है, तथा पत्थर का रंग भूरा है। देवी के दो हाथ हैं और वह शेर पर सवार हैं। लोक में इन्हें सतयुगी देवी कहकर पुकारा जाता है।

कहते हैं औरंगजेब ने इनकी शक्ति की परीक्षा लेना चाहा था। उस समय प्रवेश–द्वार पूरब की ओर था, उसने प्रवेश करते कहा—'देवी! तुम अपनी शक्ति दिखाओ।' इतना सुनते मन्दिर का द्वार अपने आप दक्षिण और पूरब की ओर खुल गया और तब औरंगजेब ने भी माँ का दर्शन किया। इसी खुशी में उसने देवी के पास में एक मस्जिद का निर्माण करा दिया। अब यहाँ हिन्दू, मुसलमान दोनों जाते और बिना किसी भेदभाव के दर्शन करते हैं। इन्हें विन्ध्याचली देवी का बहिन बताया जाता है।

देव–मारकण्डेय–विक्रमगंज तहसील में देव मारकण्डेय नामक स्थान सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्त्व का है। विक्रमगंज से डिहरी रोड पर इटिम्भा

नामक स्थान से लगभग 5 किमी0 उत्तर यह स्थान पड़ता है। इस स्थान को गौरी शंकर महादेव के नाम से भी जाना जाता है। इस स्थान पर एक पुराना कूप है। गांव के लोगों ने बताया कि यहाँ खेत जोतते समय हल के फार से पत्थर का एक टुकड़ा टकरा गया। उसको उभाड़ कर देखा गया तो अत्यन्त सुन्दर कलात्मक मूर्ति थी। उसकी स्थापना यहाँ के एक टीले पर कर दी गयी। किन्तु बाद में क्रमशः और भी कई मूर्तियां मिलती गयीं और उसकी स्थापना उस टीले पर की गयी। टीले पर रखी बहुत सारी मूर्तियां गायब भी हो चुकी हैं। चोरों के भय से उन्हें मन्दिर बना कर मन्दिर की दीवार में ही जड़ दिया गया है। इनको देखने से ऐसा लगता है कि 11वीं शताब्दी में यह स्थान सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्पवूर्ण रहा होगा। इस स्थान पर प्राप्त मूर्तियों का विवरण इस प्रकार है—

1. शिवलिंग 95 सेमी0 ऊँचा, (जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर)। वृत्ताकार 1.60 सेमी0। 2. विष्णु प्रतिमा 3.10x3.10 मीटर। जिस मन्दिर में ये प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं, उसका आकार बरामदा सहित 10.25x10.35 मीटर है। 3. ब्रह्मा 95x40 सेमी0, 4. काली 45x30 सेमी0, 5. गणेश 50x40 सेमी0 6. गणेश 45x25 सेमी0। मन्दिर के भीतर जो मूर्तियां स्थापित हैं, उनका विवरण इस प्रकार है—

1. विष्णु :0x40 सेमी0, 2. विष्णु 60x35 सेमी0, 3. चतुर्भुजी मूर्ति 65x40 सेमी0 4. देव प्रतिमा 65x35 सेमी0, 5. देव प्रतिमा 65x35 सेमी0 6. देव प्रतिमा 65x40 सेमी0।

इसमें लगी ईंटें पुरानी हैं, जिनका आकार 30x20 सेमी0 है। गांव के एक प्रतिष्ठित सज्जन चन्द्रमा मिश्र ने बताया कि यहाँ 11 रुद्रों की स्थापना की गयी थी जिनके नाम लिंगवा महादेव, शृंगवा महादेव, पंचमुखी महादेव, शत्रुनाशक महादेव आदि रखा गया था। यहाँ देव पाण्डेय गांव में राजा का किला था। उस किले से राजा साहब डोंगी (छोटी नाव) द्वारा इस मन्दिर तक आकर जल चढ़ाते और पूजा करते थे। इस संबंध में उन्होंने अपनी डायरी से एक पुराना श्लोक भी उद्धृत किया जो इस प्रकार है—

श्रीमद्विक्रम वत्सरे निगदिते, शून्येयुगे चन्द्रके ।
अर्द्धांगी खलु फूलचंद नृपते, नाम्ना च गोभामिनी।
ज्येष्ठो वैश्रवणे शशांक दिवसे, शुक्ले तिथौ पंचमी।
साध्वी धर्मरता चकारनामकरणे, देवालयो भूधराम् ।

यहाँ आरम्भ में किसी विशाल मन्दिर का निर्माण किया गया होगा और धर्मशाला भी बनायी गयी होगी। इस टीले से तथा गांव के आसपास के स्थानों से पुराने मिट्टी के पात्र, पात्रों के टुकड़े, ढकना, सड़क, कलात्मक पत्थर, शिलालेख, तालाब, कुएँ, लावरी (लखावरी) ईंटें, टूटी-फूटी मूर्तियां आदि मिलती रहती हैं। टीले का आकार 27x35 मीटर है। यहाँ की अधिकतर मूर्तियां काले चिकने पत्थर की बनी हुई हैं। कुछ भग्नावशेष मूर्तियां पीपल के वृक्ष तले रख दी गयी हैं। उनमें से मुख्य हैं विष्णु, सूर्य, गणेश तथा अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियां। इनका आकार निम्नवत् है—1. गणेश प्रतिमा 40x28 सेमी0, 2. गणेश प्रतिमा 20x11 सेमी0, 3. सूर्यदेव 1x.52 मी0 खण्डित है, 4. शिव-पार्वती .50x.35 मी0, 5. महिषासुर मर्दिनी .40x.25 मी0।

यहाँ की त्रिकोण-यात्रा का बड़ा महत्व है। त्रिकोण-यात्रा के अंतर्गत रोहतास के देव मारकण्डेय, भोजपुर के देवचन्दा और गया के देवपुरा स्थान आते हैं।

रोहतास नगर : पंचमुखी महादेव मन्दिर—रोहतास नगर ही में पंचमुखी महादेव की एक कलात्मक मूर्ति स्थापित है। उसका पत्थर चिकना है। उसकी ऊँचाई लगभग 2.90 मीटर है। शेषनाग चन्द्रमा युक्त भगवान त्रिनेत्र हैं। स्वामी कार्तिकेय भी साथ हैं। सामने स्थापित नन्दी की मूर्ति अत्यंत कलात्मक है। यहीं 22 सेमी0 ऊँची चतुरानन की काले चिकने पत्थर की एक अन्य कलात्मक मूर्ति भी स्थापित है।

प्राचीन हनुमान मन्दिर—नगर में एक स्थल-चाचा फागूमल गुरुद्वारा जाते समय मार्ग में प्राचीन हनुमान मन्दिर है। यहाँ हनुमान जी की एक सुन्दर, विशाल और कलात्मक मूर्ति स्थापित है। हनुमान वीर मुद्रा में श्रीराम लक्ष्मण

को कंधों पर बिठाए हुए हैं। राम-लक्ष्मण और हनुमान जी खड़ाऊँ पहने हैं। वे दोनों ओर से राम-लक्ष्मण के पांव पकड़े हुए हैं। पूरी मूर्ति लगभग 1.50 मी0 x 90 सेमी0 एक ही पत्थर पर निर्मित है। पत्थर का रंग भूरा है। राम लक्ष्मण धनुष-बाण धारण किये हुए हैं। वे गले में माला तथा कमर में करधनी पहने हुए हैं। उन्हें किशोर वय में दिखाया गया है। पत्थर पर मूर्ति के अतिरिक्त वाले भाग पर शिलालेख अंकित है जो सुपाठ्य नहीं है। कहते हैं यह मूर्ति शिवसागर क्षेत्र में एक खेत में मिली थी। तब यहाँ जंगल था।

बारहदरी–रोहतासगढ़ में बारहदरी नामक स्थान कुहिरा नदी के किनारे विन्ध्यगिरि पर्वत के ऊपर बना है, जिसमें पत्थर के कुल 12 खम्भे खड़े हैं। 12 खम्भों का होने के कारण ही इसका नाम बारहदरी पड़ा है। तीन-तीन खम्भे चारों दिशाओं में निर्मित हैं। यहाँ बख्तियार खिल्जी का रोजा मजार शहीद सुलेमान शाह के द्वारा बनवाया गया था। वहाँ और कई मजारें हैं और पहाड़ी के नीचे हनुमान जी की एक मूर्ति एक चौतरे पर रखी हुई है जो 90 सेमी0 x 60 सेमी0 आकार की है। यहीं पर एक शिव-मन्दिर भी है जिसका निर्माण किशोरी रमन के पूर्वजों ने कराया था। यहाँ नट और बघउत की पूजा की जाती है।

बद्रीनारायण का मन्दिर–सासाराम नगर से दो किमी0 दूर, दक्षिण सागर महल से थोड़ी दूर पर स्थित बद्रीनारायण का मन्दिर महत्त्वपूर्ण है। मूर्ति सफेद किंतु चिकने पत्थर पर निर्मित है जिसकी ऊँचाई1 मी0 80 सेमी0 तथा चौड़ाई 1 मी0 है। शिल्प की दृष्टि से यह मूर्ति सासाराम की अन्य सभी मूर्तियों से विलक्षण हैं। यहीं पुनरुद्धरित तथा बाहर के नव निर्मित अन्य मन्दिरों में कुछ मूर्तियां देखी गयीं जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. **विश्वकर्मा**–90 सेमी0 भूरे रंग का पत्थर। विश्वकर्मा के दोनों ओर उनके दो पुत्रों को उत्कीर्ण किया गया है जिनकी ऊँचाई 47 सेमी0 है। ये भी अनुमानित तत्कालीन हैं।

2. **गणेश**–65x33 सेमी0 प्रस्तर प्रतिमा 10वीं शदी।

3. **शीतला**–30x30 सेमी0 प्रस्तर प्रतिमा 10वीं शदी।

4. गणेश—40x30 सेमी0 प्रस्तर प्रतिमा 10वीं सदी।

इसे गौलसर्मा मन्दिर के नाम से भी जाना जाता है। यहाँ लकड़ी के सामान का मेला लगता है।

भलुनीभवानी—भलुनीभवानी देवी-धाम है जहाँ पशुओं का बहुत पुराना एक बड़ा मेला लगता है। सोने-चाँदी के व्यापारी भी दूर-दराज से यहाँ आकर क्रय-विक्रय करते थे। एक समय ऐसा भी था कि मेले के अवसर पर सोना बरसता था। पशु और सोना-चांदी के क्रेता-विक्रेता देश के कोने-कोने से यहाँ आते थे और लाखों हजारों का व्यापार घण्टों में हो जाता था।

यहाँ चैत रामनवमी के अवसर पर रामनवमी के 5, 7 दिन पहले से मेला शुरू होता है और 15 दिन तक निरन्तर अपार भीड़ रहती है। देवी का मंदिर खुले मैदान में एक तालाब के किनारे निर्मित है। यह मन्दिर कई बार बनाया-बिगाड़ा गया है। इस मन्दिर में कई आकार-प्रकार की ईंटें पुरानी मूर्तियां देखने को मिलीं।

देवी को बैठे हुए विशेष मुद्रा में दिखाया गया है। इस मुद्रा में देवी की अन्यत्र प्रतिमा कहीं नहीं देखी गयी। देवी के पावों में आभूषण है। मूर्ति लगभग 90 सेमी0 ऊँची वर्गाकार किन्तु अर्धवृत्त में 1.5 मी0 के आकार की है। देवी की दो भुजाएँ हैं। देवी के आंख, कान, नाक आदि सभी स्पष्ट हैं। मन्दिर का निर्माण पतले लखौरी ईंटों से किया गया है। मन्दिर के सामने बायीं ओर एक बड़ा हवन कुण्ड 4.10x4.10 मीटर का त्रिकोणाकार बना है। यहीं शीतला माता की मूर्ति स्थापित है। इसके अलावा 7 बहनों के पिण्ड भी बनाए गए हैं। मन्दिर के पाश्र्वभाग में शाण्डिल्य ऋषि की मूर्ति स्थापित है जो बाद की है। इसके अलावा गायत्री, सूर्य, विश्वकर्मा आदि की मूर्तियां स्थापित हैं। विश्वकर्मा भगवान की मूर्ति 65x35 सेमी0 आकार की है।

यहाँ एक पीठ-देवी भी हैं, जिनका केवल पृष्ठ भाग ही दिखलाई पड़ता है। मूर्ति में लोग सिन्दूर का लेप करते हैं। मन्दिर के पाश्र्वभाग में स्थापित एक शिव-मन्दिर में खुरदुरे पत्थर का 26 सेमी0 ऊँचा शिलालेख है। वहीं पार्वती

जी की प्रतिमा है जो 28x24 सेमी0 आकार की है। मन्दिर का आकार अष्टबल है। एक मीटर मोटी दीवार से बने इस मन्दिर का भीतरी भाग ढाई मीटर लंबा–चौड़ा है। परिक्रमा के लिए स्थान बना हुआ है। मुख्य मंदिर का आकार 5.70x5.70 मीटर है। यहीं मन्दिर के भीतरी प्रांगण में एक पुराना कूप देखा गया। मन्दिर और कूप में लगी हुई ईंटों का आकार 20x14x4 सेमी0 तथा 14x10x4 सेमी0 है। दो प्रकार की लगी ईंटों से ऐसा लगता है कि इस मन्दिर का निर्माण दो बार हुआ है। मन्दिर के पण्डा–पुजारी श्री वशिष्ठ पाण्डेय बच्चा जी ने बताया कि यह सिद्धपीठ त्रिकोणाकार है। पहले यहाँ सोने–चाँदी की 100 दुकानें लगती थीं और सम्पूर्ण बिहार प्रदेश में इस स्थान की प्रतिष्ठा दूसरे स्थान पर थी।

भभुआ के पंचमुखी शिव–रोहतास जनपद के भभुआ तहसील में थाने के अन्दर पंचमुखी भगवान की अत्यंत सुन्दर प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यह प्रतिमा खुरदुरे पत्थर की 58 सेमी0 और 27 सेमी0 वृत्ताकार है। यह अपने ढंग की अनोखी है, शिव जटाधारी हैं। उनकी मुकाकृति हनुमान जैसी कुछ देखने में डरावनी सी प्रतीत होती है। उनकी नाक चिपटी है और वे कानों में कुण्डल और गले में रुद्राक्ष की माला पहने हुए हैं। कहा जाता है कि यह प्रतिमा मुण्डेश्वरी देवी पहाड़ी के ऊपर स्थापित थी जिसे चोरों ने चुराना चाहा था। जब वे उसे जड़ से उखाड़ सकने में असमर्थ हो गए तो उसे बीच से खण्डित कर दिया। यहां से आधी मूर्ति लेकर वे चले, जिसकी जानकारी पुलिस को हुई। पुलिस ने उसे बरामद किया और लाकर थाने में बन्द कर दिया। जो भी हो शिवलिंग के दोनों टुकड़ों को यदि एक में मिला दिया जा तो एक विशाल शिवलिंग हो जाता है।

मुण्डेश्वरी माता मन्दिर–भभुआ से लगभग 22 किमी0 दक्षिण 180 मी0 ऊँची पहाड़ी पर माता मुण्डेश्वरी भवानी का जनपद का सबसे प्राचीन और सर्वोत्कृष्ट मन्दिर स्थित है, यहाँ कुछ चक्र वाले कलात्मक प्रस्तर–खण्डों को देखने से ऐसा लगता है कि यह स्थान तांत्रिकों के लिए साधना का केन्द्र था। पूरा मण्डप प्रस्तर के विशाल खण्डों से निर्मित है। यह मन्दिर पहाड़ी

पर स्थित होने के कारण 1906 तक मानव की पहुँच से बाहर था। जनपद के तत्कालीन जिलाधिकारी श्री के0एन0 मिश्र ने यहाँ आने के लिए पक्के मार्ग का निर्माण कराया, जिसके फलस्वरूप दर्शनार्थियों का आना जाना शुरू हो गया। यहाँ पहुँचना अत्यंत कठिन है। सीधी ऊँची चढ़ाई है। इसी देवी ने चण्ड–मुण्ड का बध किया था। दुष्ट मुण्ड की मृत्यु की खुशी में शालिवाहन ने मंडलेश्वरी देवी की मूर्ति स्थापित की थी। मुंड प्रायः बुद्धिजीवियों पर प्रहार करता था और उसका प्रभाव इतना व्यापक था कि उसके भय से कोई बुद्धजीवी कलम उठाने का साहस तक नहीं करता था।

मुंडेश्वरी मन्दिर की मूर्ति से लगभग 50 मीटर पहले दाहिनी ओर गणेश जी की अत्यंत सुन्दर मूर्ति पड़ी है। यह मूर्ति भूरे काले पत्थर की 1 मी0 x 65 सेमी0 है। सम्भवतः इस मूर्ति की स्थापना मन्दिर में प्रवेश के पूर्व परम्परानुसार की गयी थी। पहाड़ी के ऊपर प्रवेश करते ही मूर्तियों का अपार संसार दृष्टिगत होता है। बायीं ओर से प्रारम्भ करें तो सबसे पहले भारत सरकार का एक लौहपट्ट यहाँ लगा है जिसमें लिखा है "मुण्डेश्वरी या मंडेश्वर का यह अष्टकोण पत्थर का बना मन्दिर बिहार के सबसे प्राचीन और सुन्दर मन्दिरों में से एक है। यहाँ से मिले एक शिलालेख से पता चलता है कि यह मन्दिर 635 ई0 में विद्यमान था।" इस मन्दिर की दीवारों पर सुन्दर ताखें अर्द्धस्तम्भ और घरपल्लव के अलंकरण बने हैं। दरवाजे के चौखटों पर द्वारपाल और गंगा–यमुना आदि की मूर्तियां खुदी हैं। मन्दिर के भीतर पंचमुखी शिवलिंग और पत्थर के दो विशाल पात्र हैं। मन्दिर का शिखर नष्ट हो चुका है।

यहाँ कलात्मक पत्थरों के छोटे बड़े खण्डित, अखण्डित स्तम्भ बिखरे पड़े हैं। ये स्तम्भ मन्दिर में लगाये गये होंगे। यहीं कुछ पत्थरों पर अष्टदल कमल का रेखांकन और छोटे–बड़े आकार की लगभग दस मूर्तियां निर्मित हैं। इससे पाँच मीटर आगे चार अन्य प्रस्तर–स्तम्भ गिरे पड़े देखे गये जिनमें से एक पर शिव जी की कलात्मक प्रतिमा निर्मित है। मन्दिर के ठीक सामने बीच मैदान में 54x4x6 फिट के आकार का एक और स्तम्भ गड़ा है, जो चौकोर है और जिसके चारों ओर 60x32 सेमी0 की विष्णु, गणेश, नारायण और

देवी प्रतिमाएँ निर्मित हैं। यह सम्पूर्ण प्रस्तर–खण्ड अत्यंत कलात्मक और भूरे रंग का है। मन्दिर का प्रवेश–द्वार कलात्मक मूर्तियों से बना है जिसकी लंबाई–चौड़ाई 2.10 मी0 x 1.50 मी0 है। इस अष्टकोण मन्दिर के चारों ओर कलात्मक पत्थर लगाए गए हैं। मन्दिर में प्रवेश करते ही कलात्मक मूर्तियों से निर्मित कुछ शिलाखण्ड देखे गए, जिनकी लंबाई 6.3x3 मी0 है। मन्दिर के बीच में भगवान शिव की पंचमुखी प्रतिमा प्रतिष्ठित है जिसकी ऊँचाई 1.2 मी0 है। उसके चारों ओर मूर्तियां बनी हैं, बीच में विशाल शिवलिंग है। इसी शिवलिंग का ऊपरी भाग चोरों द्वारा काट लिया गया था जिसे प्राप्त कर भभुआ में स्थापित कर दिया गया। इसकी लंबाई 6 मी0 90 सेमी0 (जमीन में गड़े भाग को छोड़कर) और चौड़ाई 3 मीटर वर्गाकार है। शिव की प्रतिमा खुरदुरे भूरे पत्थर की है और शिव जटाधारी हैं।

शिव की मुखाकृति हनुमान जैसी है। नाक चिपटी और गाल पर कुण्डल तथा गले में रुद्राक्ष की माला है। यहाँ कुछ ऐसे प्रस्तर–खण्ड भी मिले जिस पर विविध आकृतियां बनी हैं जो तांत्रिक साधना की प्रतीत हैं और उनमें से कुछ ब्राह्मीलिपि जैसी हैं। पूछताछ से ज्ञात हुआ कि पटना संग्रहालय में यहाँ की दो मूर्तियां स्वामी कार्तिकेय एवं सूर्यदेव की संकलित हैं जो आठवीं और छठीं शदी की बताई जाती हैं। मन्दिर की ऊचाई लगभग 6 मी0 30 सेमी0 है। कुछ मूर्तियां 90x60 सेमी0 हैं। तीन अन्य मूर्तियां 10 सेमी0 ऊँची, मन्दिर के अन्दर ही स्थापित की गयी हैं। मन्दिर के पिछले भाग में 8.7x2.7 मी0 का विशाल लोहे का दरवाजा बाद का लगाया प्रतीत होता है। मन्दिर में स्थित अन्य मूर्तियों का विवरण इस प्रकार है।

1. युगल प्रतिमा 5.4x3.6 मी0, 2. युगल प्रतिमा 6.6x3.6 मी0 3. गणेश प्रतिमा 6.6x3.9 मी0, 4. देवी 6x4.2 मी0, 5. प्रस्तर पात्र 11 मीटर वृत्ताकार, 6. मुण्डेश्वरी 16.8x7.8x3.6 मी0 चतुर्भुजी खण्डित भैंसे पर सवार, 7. जलपात्र 14.7x6.6 मी0, 8. नन्दी 16.8x16.2 सफेद पत्थर, 9. शिव प्रतिमा 3.6x3.6 मी0।

सफेद कलात्मक पत्थरों का आकार 19.5 डाईमीटर है। मन्दिर लगभग

51 डाईमीटर (गोलाकार) में है।

गणेश जी–मुण्डेश्वरी देवी जाने के मार्ग में मुण्डेश्वरी से पहले उसी पहाड़ी पर लम्बोदर गणेश जी की एक सुन्दर मूर्ति चढ़ाई के मार्ग में ही दाहिनी ओर पड़ी हुई है। यह समझा जाता है कि इस मूर्ति की स्थापना मन्दिर में प्रवेश के पूर्व दर्शन हेतु मन्दिर में स्थापित की गयी थी। सफेद पत्थर की बनी यह मूर्ति 1 मी0 65 सेमी0 के आकार की है।

शाहाबाद गजेटिवर में इस मन्दिर को बिहार का प्राचीनतम मन्दिर बताया गया है जो नागरा शैली का अनुपम उदाहरण है। इसका निर्माण आक्टेगन के आकार का है जो बहुत कम मिलता है। इसके चार दरवाजों में से पूरब का दरवाजा सबसे विशाल है। इनके ऊपर मन्दिर का अधिकांश हिस्सा टिका हुआ है। मन्दिर के अन्दर नृत्य और संगीत करते हुए नर्तकों को दिखाया गया है जिसकी कला अपने ढंग की अनोखी है।

शंकरी–रोहतास से मुगलसराय मार्ग पर कुदरा के समीप ही शंकरी नाम का एक स्थान है। यहाँ एक पुराने तालाब के तट पर राम, जानकी मन्दिर का निर्माण किया गया है जिसके अन्दर लगे वन्दनवार के रूप में पत्थरों पर की गयी नक्काशी देखने योग्य है। उसमें राम–जानकी और लक्ष्मण की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। ये मूर्तियां संगमरमर की हैं। मन्दिर के पुजारी ने बातचीत के दौरान बताया कि यहाँ छः छः पसेरी (लगभग 6 किग्रा0) पीतल या अष्टधातु की कलात्मक मूर्तियां स्थापित की गयी थीं जो बाद में चोरी चली गयीं। इनमें से कुछ मूर्तियां कैमूर–घाटी के ऊपर खजरा नामक पहाड़ पर रखी गयी हैं। यहाँ राधा–कृष्ण की एक बहुत ही सुन्दर मूर्ति थी जो चोरी चली गयी। उसके स्थान पर एक दूसरी मूर्ति संगमरमर की स्थापित की गयी है। उसी स्थान पर एक अन्नपूर्णा माता की 90 सेमी0 ऊँची प्रतिमा स्थापित है। यहाँ हनुमानजी की एक विलक्षण प्रतिमा देखी गयी जो अपने पावों से अहिरावण को दबाए हुए हैं। यह प्रतिमा 1.2x.57 मी0 के आकार की है और पुरानी है।

नन्दी की प्रतिमा भी अत्यंत सुन्दर है। शिवलिंग 64x30 सेमी0 के आकार का है। यहाँ एक पुराना घण्टा भी था जो चोरी चला गया। मन्दिर में

सूर्यदेव की 33x18 सेमी0 के आकार की काले पत्थर की कलात्मक प्रतिमा प्रतिष्ठित है। एक अन्य चतुर्भुजी मूर्ति 49x28 सेमी0 की स्थापित है। तालाब के किनारे पत्थर का एक शिलालेख लगा है जिससे ऐसा लगता है कि 16वीं शताब्दी में सांस्कृतिक दृष्टि से यह स्थान काफी महत्व का था।

हनुमान मन्दिर–सासाराम नगर में पुल पार करने के बाद एक मन्दिर हनुमान जी का निर्मित है। इसमें हनुमान जी की भव्य कलात्मक प्रतिमा लगभग 5 फिट ऊँची प्रतिष्ठित है। यहाँ सन् 1310 का एक कपाट बनकर रखा है, अतः अनुमान किया जाता है कि यह मूर्ति भी उसी समय की होगी। मन्दिर का निर्माण बाद का प्रतीत होता है। यहाँ काष्ट–निर्मित एक सुन्दर कलात्मक पुराना मन्दिर है जिस पर पीतल का पत्तर जड़ दिया गया है। यहीं राधा–कृष्ण की एक मूर्ति 45x45 सेमी0 की प्रतिष्ठित है। चित्रगुप्त की मूर्ति 90 सेमी0 की और कलात्मक है।

हरसूब्रह्म–भभुआ से लगभग 14 किमी0 पश्चिम चैनपुर ग्राम में हरसूब्रह्म बाबा की प्रसिद्ध समाधि है जहाँ देश के कोने–कोने से प्रेत–बाधा के निवारणार्थ अथवा मनौती करने के निमित्त स्त्री–पुरुष सभी यहाँ आते रहते हैं। हरसूब्रह्म बाबा की समाधि से लगभग 5 किमी0 उत्तर जमुआंव नामक स्थान पर बाबा जी रहते थे। वे यहाँ के तत्कालीन राजा शालिवाहन के पुरोहित थे। शालिवाहन प्रतिदिन दान देकर ही अन्न–जल ग्रहण करते थे। उन्हें कोई सन्तान न थी। फलस्वरूप उन्होंने सन्तान की कामना से अपना दूसरा विवाह रचाया। इससे बड़ी रानी माणिक मोती को डाह होने लगी। रानी एक दिन अपने किले पर चढ़कर दूर तक प्राकृतिक दृश्य का अवलोकन कर रही थी तो उसने देखा कि कुछ दूर पर एक दीपक टिमटिमा रहा है। यह दीपक उक्त ब्राह्मण पुरोहित का ही था। उसने इस बात के लिए राजा से हठ किया कि हमारे राज्य में किसकी हिम्मत है, जो यह अखंड दीप मेरे दीपक से ऊपर जलाये। उसने राजा से–कहा "इसे बुझवा दीजिए, तभी मैं अन्न–जल ग्रहण करूँगी।" राजा ने रानी को बहुत समझाया लेकिन तब भी वह क्यों मानती। अंत में पुरोहित का मकान गिराने के लिए राजा ने अपने कर्मचारियों को आदेश दे दिया। उक्त ब्राह्मण

पुरोहित ने राजा को ऐसा करने से मना किया, लेकिन राजा भी क्यों मानने वाला था। तना-तनी के फलस्वरूप लड़ाई छिड़ गई। बाबा जी अनशन पर तुल गये। वे बीस दिन तक अनशन पर ही रहे। इक्कीसवें दिन छोटी रानी ने पुरोहित को भोजन कराया। वह उस समय गर्भवती थी जिससे उनका अनशन टूट गया। बाबा ने प्रसन्न होकर उस रानी से कहा कि अपने गर्भस्थ शिशु की रक्षा करने हेतु तुमको यह गढ़ छोड़ देना चाहिए। इतना कहकर बाबा ने शरीर त्याग दिया, किन्तु उनका वह शरीर पर्वताकार हो गया। फलस्वरूप दाह-संस्कार हेतु तमाम लोगों द्वारा उठाये जाने के बाद भी वह उठा नहीं। अब राजा ने भी उनकी शक्ति का आभास पाया। अतः पुत्तल विधानान्तर्गत उस बस्ती के साथ राजा ने पुरोहित का दाह-संस्कार कराना चाहा; लेकिन यह भी संभव न हो सका। कहते हैं 1427 में आलमशाह बादशाह का यहाँ आगमन हुआ। शालिवाहन राजा और आलमशाह में छः माह तक घमाशान युद्ध होता रहा। अन्त में हरसूब्रह्म बाबा की आत्मा में मिलकर उसने आलम शाह को पराजित किया और शालिवाहन वंशजों का सर्वनाश किया। छोटी रानी से कहा कि अपने वंशजों से कहो कि यहीं मेरी प्रतिष्ठा करके पूजा करें, जहाँ मैं मरा हूँ। तभी से यहाँ आज तक लगातार हर नवरात्र में तथा हर सोमवार को वृहद् पूजा का आयोजन होता है।

इस स्थान पर 2.1x1.2 मी0 का प्रस्तर पिण्ड अवस्थित है। समीप में 2.7x2.1 मी0 की एक गणेश प्रतिमा, 3.60x2.7 मी0 की सूर्य-प्रतिमा, 5.4x2.7 मी0 की कामाख्या देवी की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। यहाँ विशेष रूप से प्रेत-बाधा से पीड़ित रोगी आते रहते हैं और बाधा-मुक्त होते हैं। वे प्रसाद के रूप में चीनी, बरफी, इलायची दाना, जनेऊ, खड़ाऊँ, लंगोट चढ़ाते हैं। यहाँ के पंडा पुजारी के पास प्रथम दिन अपनी तकलीफ से अवगत कराते हुए बाबा के द्वार पर अरजी देनी पड़ती है। अरजी स्वीकार होने पर दूसरे दिन बाबा के समक्ष मंत्र-पाठ करके प्रेत को बुलाया जाता है। लगभग 60 सेमी0 की एक छड़ी से रोगी को झाड़ा जाता है और माना जाता है कि इससे दुःख दूर हो जाता है।

हरसूब्रह्म का किला–हरसूब्रह्म में पत्थर का बना एक पुराना किला भग्नावशेष रूप में विद्यमान है, जिसका निर्माण सुर्खी, चूने से किया गया है। किले के बायीं ओर दीवार पर देवी–मूर्ति की स्थापना की गयी है, जो पुराने पत्थर की 65x45 सेमी0 चौड़ी है। पश्चिम की ओर एक शिव–मन्दिर बना है जो कलात्मक है और 200 वर्ष पुराना प्रतीत होता है। यह मन्दिर 15x3x3 मीटर आकार का है। मार्ग में ही एक अन्य शिव–मन्दिर 3x3x6 मीटर आकार का है। मन्दिर में 13 सेमी0 का शिवलिंग स्थापित है। अर्घे का आकार 1 मीटर वृत्ताकार है। गणेश प्रतिमा 65x32 सेमी0 की है। शिवमूर्ति 13x9 सेमी0 है। इस मन्दिर में 8 अन्य छोटी–छोटी मूर्तियां भी रखी हुई हैं।

सरगुजा

डीपाडीह :

डीपाडीह सरगुजा का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है जहाँ से खुदाई में 500 से भी अधिक मूर्तियाँ मिली हैं। यह जिला मुख्यालय अम्बिकापुर से 73 किमी0 उत्तर की ओर गलफुल्ला नीद के तट पर भी बसा है। समुद्र की सतह से डीपाहीह की ऊँचाई लगभग 2,900 फीट है। यहाँ शिव मंदिरों के लगभग 20 टीले और बावलियाँ मिली हैं। यहीं परशुधर शिव की प्रतिमा है जो कालक्रम से कई भागों में भग्न हो गयी है। डीपाडीह के 4–5 किमी0 के क्षेत्रफल में मंदिरों के लगभग 30 टीले प्राप्त हैं, जिनके आधार पर इन्हें 'मन्दिरों का नगर' कहना अनुचित न होगा।

डीपाडीह का मुख्य मन्दिर–द्वार देखने से ऐसा लगता है कि मन्दिर का निर्माण योजनाबद्ध तरीके से किया गया था। क्योंकि यहाँ एक विशाल चौतरा बना है, जिसके अंदर मंडप, अंतराल और गर्भ–गृह तीनों बने हुए हैं। मन्दिर का मुख पूरब की ओर है और 3 सीढ़ियों को पार करके मंदिर के अंदर प्रवेश करना होता है। मंडप में 16 स्तम्भ बने थे। 4 स्तम्भों की 3, 3 पंक्तियाँ हैं, जिनकी कुम्भियाँ अपने मूल स्थान पर हैं तथा उत्तर और दक्षिण दिशा में 2–2 दीवाल–स्तम्भ बने हैं। उत्तर की ओर एक–एक शार्दूल प्रतिमा, शार्दूल–मंडप में स्थापित थी। इसके भीतर उत्तरी दिशा में यमुना की प्रतिमा स्थापित थी। मन्दिर के द्वार के चौखटों में विद्याधरों को पुष्पहार लिये हुए दिखाया गया है। मन्दिर का गर्भगृह वर्गाकार है जिसके बीच–बीच में लाइम स्टोन के बने शिवलिंग जलहरी सहित स्थापित हैं। मन्दिर के बाहरी दीवारों पर सर्प, बिच्छू, केला खाते बंदर, सर्प, मयूर, योद्धा, कमंडल, कमंडलधारी प्रतिष्ठित हैं। मन्दिर के जंघे वाले भाग पर कमलपुष्प पुरुष शिष्य, चैत्य, गवाक्ष में उमा–महेश्वर और युगल मूर्तियाँ बनी हुई हैं। इसके अतिरिक्त एक सिर और 2 धड़युक्त सींग, मिथुन युगल प्रतिमा, अर्द्ध उत्कटासन में बैठे हुए पुरुष चैत्य

और गवाक्ष में सूर्य भैरव आदि की मूर्तियाँ बनी हुई हैं। उत्खनन करने वाले अधिकारियों के अनुसार यह मन्दिर 8वीं शती के उत्तरार्द्ध में निर्मित हुआ था।

सामत सरना स्थित टीले से वर्गाकार गर्भगृह द्वार, चौखट, वर्गाकार मंडप तथा कला की दृष्टि से अत्यंत सुन्दर विशाल अद्‌भुत प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। इस टीले के सामने भग्नावशेष, आयताकार नदी, मंडप भी मिले हैं। मंडप के उत्तरी एवं दक्षिणी भित्तियों से लगी प्रतिमाओं के 4–4 पादमूल (पेडस्टल) लगे हैं जिनमें उत्तरी भित्ति के केवल दो पादमूलों पर दशमुखी महिषासुर मर्दिनी, दशभुजी भैरव तथा दक्षिणी भित्ति के एक पादमूल पर दो भागों में विभक्त गौरी–प्रतिमाएँ हैं। एक प्रतिमा में ब्रह्मा को पुरोहित का कार्य करते और अग्नि द्वारा मानव रूप में विवाह–दृश्य देखने का लोभ–संवरण न कर पाना स्पष्टतः किम्बदन्ती है। गणेश एवं कार्तिकेय भी विवाह में उपस्थित हैं। नन्दी भी प्रसन्न होकर निहार रहे हैं। मन्दिर के अंतराल एवं गर्भगृह में प्रविष्ट होने हेतु प्रस्तर–निर्मित विशाल द्वार चौखट हैं, जिसका उदुम्बर अपने मूल स्थान पर है। उसके मध्य में चन्द्रशिला अर्द्धपद्‌माकृति में है तथा दोनों ओर ढाल, तलवार लिए योद्धा एवं गज पर पीछे से हमला करते हुए सिंह का अंकन है। प्रवेश–द्वार की द्वार शाखाएँ विशाल हैं। दायीं ओर की द्वार–शाखा में वाहन मकर पर सवार नदी देवी गंगा का अनुचरों सहित अंकन है। बीच में बानर एवं ऊपर वीणाधारिणी बनी हैं तथा लता पत्रावली का सुरूचिपूर्ण अंकन है। ऐसा ही अंकन बायीं ओर की द्वार–शाखा में नदी देवी, यमुना बाहन, कच्छप के अंकन हैं। सिरदल भी विशाल है। मध्य में गज, लक्ष्मी का अंकन है तो दोनों ओर माला लिए विद्याधरों का अंकन है। दाएँ किनारे पर नदी पर आरूढ़ चतुर्भुजी नृत्य–शिव तथा बायीं ओर चतुर्भुजी परशुधर शिव अंकित हैं। ऊपर और नीचे की शाखा पर लता पत्रावली का अंकन है।

वर्गाकार गर्भगृह के बीच में चौकोर जलहरी के मध्य विशाल सिलटी प्रस्तर का भग्न शिवलिंग है। मलवा–सफाई में मंदिर के मंडप की वाह्य भित्तियों के पास गणेश कार्तिकेय, विराट विष्णु, ब्रह्मा की अति सुन्दर और विशालकाय प्रतिमाएँ पायी गयी हैं जो समानुपातिक एवं कलात्मक हैं। गर्भगृह

की वाह्य–भित्तियों के मलवे में गौरी और विविध देवसिर अर्ध नागेश्वर भैरव, विष्णु, उमा–महेश्वर, सूर्य, शार्दूल, गणेश आदि की प्रतिमाएँ व प्रतिमा–खण्ड मिले हैं। इसी प्रकार कमल–पत्रों पर लघु कलश–दधिका में चैत्य गवाक्ष, पद्म शार्दूल, कुछ अन्य लघु मन्दिर एवं लघु शिवलिंग शिव–मन्दिर के उत्तरी पार्श्व में, 3 गर्भगृह, वर्गाकार मंडप, चतुर्भुजी शिव, गंगा–यमुना की मूर्तियाँ प्राप्त हैं। गंगा के एक कान में चक्र, कुण्डल एवं दूसरे में पांगी अलंकरण हैं। यहाँ की अन्य प्रतिमाओं में भी पोगी अलंकरण देखा गया जिसे उरांव जनजाति की स्त्रियाँ पहनती हैं।

डीपाडीह के पूर्वोत्तर में लगभग 2 किमी0 दूर एक चैला पहाड़ है जिसके बारे में किम्बदन्ती है कि इस पहाड़ का पत्थर मूर्तिशिल्प के लिए अधिक उपयोगी है और डीपाडीह की मूर्तियों का निर्माण भी यहीं के पत्थरों से ही शिल्पियों द्वारा किया गया था। इस पहाड़ की बनावट भी कुछ अजीब है। इसे तीन तरफ से काट कर समतल किया गया है। इसके निचले स्तर पर शिल्प के चिह्न, मध्य स्थल में "ओम नमः विश्वकर्मायः" अभिलेख तथा बालि–सुग्रीव–युद्ध के हाथी और पुरुष बज्र आदि का अंकन, कुबेर नदी आदि की मूर्तियाँ बनायी गयी हैं। शासन की ओर से मार्च 1988 में श्री के0 के0 चक्रवर्ती, आई0ए0एस0 (कमिश्नर पुरातत्त्व) की देखरेख में टीलों की सफाई का कार्य आरंभ किया गया था। सफाई के दौरान अनेक पुरावशेष प्राप्त हुए। यहाँ प्राप्त एक शिलालेख से ऐसा प्रतीत होता है कि छठीं से आठवीं शताब्दी में सांस्कृतिक दृष्टि से यह स्थान काफी महत्व प्राप्त करना चाहता था। श्री राहुल सिंह संग्रहाध्यक्ष पुरातत्व विभाग द्वारा करायी गई खुदाई से एक विशाल शिव–मन्दिर प्राप्त हुआ है। उसके गर्भगृह की दीवार लगभग 2.50 मी0 लंबी है। यहाँ 4.5 मी0 ऊँचा और 60 से0मी0 के ब्यास का एक शिवलिंग मिला है। मन्दिर के बाहर गंगा और जमुना की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। दरवाजों के चौखट में शेषनाग की मूर्ति देखी गयी। प्राप्त हुई प्रमुख मूर्तियों का विवरण निम्नवत है—

चामुण्डा—कला की दृष्टि से चामुंडा की मूर्ति काफी महत्वपूर्ण है।

देखने में यह काफी भयावनी प्रतीत होती है। लाल रंग के पत्थर से बनी इस मूर्ति के गले में सर्प है। सर्प से स्पर्श करती हुई मुंडमाला, एक हाथ में त्रिशूल, दूसरे में खप्पर, तीसरे में मुंड और चौथे में अभय मुद्राएँ हैं। यह मूर्ति अष्टभुजी हैं। देवी के अन्य चारों हाथों में आयुध दिखाए गए हैं। चामुंडा देवी के स्तनों को कुछ लटका हुआ दिखाया गया है। नासिका को दो बड़े छिद्रों और मुख को खोह के संकेतों द्वारा प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति के अगल-बगल गणों को खड़ा हुआ दिखाया गया है।

शिव–इस स्थान पर पहले ही से लगभग 2.4 मी0 लंबी और 1.5 मी0 ऊँची ताण्डव नृत्य मुद्रा में शिव की विशाल चतुर्भुजी प्रतिमा यहाँ के निवासियों के लिए श्रद्धा का केन्द्र रही है। चतुर्भुज मूर्ति के एक हाथ में शंख, दूसरे में त्रिशूल, तीसरे में अंकुश और चौथे में फावड़ा है। यह विशाल मूर्ति लेटी हुई हैं। इस मूर्ति के समीप भैरव, चन्द्रमा, चामुंडा, गरुड़, शिवलिंग तथा अन्य छोटी-मोटी मूर्तियाँ खण्डित-अखण्डित रूप में वर्तमान हैं।

शिव–त्रिभंगी शिव मंदिर के बाहरी ओर दक्षिण कोने में स्थापित यह मूर्ति कला की दृष्टि से अद्भुत है। शिव को चतुर्भुज रूप में दिखाया गया है और उनकी मुद्रा विश्राम की है। वे फावड़ा लिए हुए हैं जिसके कारण कमर कुछ टेढ़ी हो गयी है। वे त्रिशूल धारण किए हुए हैं। नागफांस उनके हाथ में है। होठ ऐसे दीखते हैं, जैसे वे अट्टहास करना चाहते हैं। भोलेनाथ की यह तिरछी चितवन वाली प्रतिमा अपने ढंग की अलग-थलग है। यह प्रतिमा लगभग 1.8 मी0 ऊँची और 1.10 मी0 चौड़ी है। यह मूर्ति चमकदार, खुरदुरे पत्थर की बनी है।

कार्तिकेय–स्वामी कार्तिकेय की यह मूर्ति दो भागों में विभक्त है। कार्तिकेय को मयूर पर बढ़ते दिखाया गया है। मयूर की गर्दन इनके हाथ में है। यह मूर्ति लगभग 2 मी0 ऊँची है। इस मूर्ति के पार्श्व भाग में बालि-सुग्रीव की पूंछ दिखलाई गयी है। इस मूर्ति की स्थापना मुख्य शिव-मन्दिर की परिक्रमा-स्थल पर की गयी है।

विष्णु–विष्णु भगवान की मूर्ति स्वामि कार्तिकेय की दाहिनी ओर

स्थापित है। यह प्रतिमा भी लगभग 2 मी0 ऊँची है। विष्णु के 20 हाथ दिखाए गए हैं जिनमें वे आयुध लिए हुए हैं। एक हाथ में गरुण को दिखाया गया है और गरुण के गले में नाग लिपटा हुआ है।

वाराहावतार–वाराह भगवान की मूर्ति भी 2 खण्डों में विभक्त है। नीचे युगल शेषनाग, ऊपर वाराह दिखाया गया है। यह प्रतिमा चतुर्भुजी है, जिसके एक हाथ में किसी नारी को दिखाया गया है। इसके ऊपर 2 विद्याधरियाँ हैं। यह प्रतिमा छठीं शताब्दी की प्रतीत होती है।

अर्धनारीश्वर–इस तमाम मूर्तियों में एक मूर्ति भगवान शिव की अर्धनारीश्वर है। अर्धनारीश्वर का तात्पर्य शिव और पार्वती का सम्पृक्त रूप "वागर्थाइवसम्पृक्तौ" है। लोगों से बातचीत के बाद ज्ञात हुआ कि अब तक प्राप्त प्रतिमाओं में यह सबसे सुन्दर और लास्य रूप में है। ऐसी प्रतिमा दुर्लभ है। इसे बलुआ पत्थर से तराशा गया है। इसकी ऊँचाई लगभग 1 मीटर है। इस प्रतिमा की विशेषता यह है कि एक ही प्रस्तर खण्ड के आधे भाग में शिव और दूसरे आधे भाग में पार्वती की मूर्ति इस तरह तराशी गयी है कि वह एकाकार हो गयी है। इसका समय 8वीं शताब्दी प्रतीत होता है।

शिव–विवाह–यहाँ भगवान शिव की एक मूर्ति ऐसी है, जिससे शिव–पार्वती–विवाह का दृश्य उपस्थित हो जाता है। इसमें पार्वती जी का दाहिना पाँव शिव के बाएँ हाथ के नीचे दर्शाया गया है और चतुर्भुज ब्रह्मा जी स्वयं आहुति दे रहे हैं। वहाँ के प्रबुद्ध श्री विजय कुमार अग्रवाल ने बताया कि इस पूरे क्षेत्र की लगभग 100 एकड़ भूमि तमाम टीलों से भरी पड़ी हैं और उनमें मूर्तियाँ भी भरी पड़ी हैं।

देवगढ़–देवगढ़ उदयपुर से 20 किमी0 उत्तर की ओर है। यहाँ भी महेशपुर की ही तरह मंदिर के ध्वंशावशेष प्राप्त हैं। इस पूरे क्षेत्र के लगभग 2 किमी0 की परिधि में कई टीले, मन्दिरों के ध्वंशावशेष तथा मूर्तियाँ देखी गयीं। सर्वेक्षण में लंबी–चौड़ी ईंटें और प्रस्तर–खण्ड यत्र–तत्र बिखरे पड़े मिले। यहाँ के एक प्रतिष्ठित श्री कमलाकान्त शुक्ल के पास कुछ सिक्कों और मूर्तियों का संग्रह भी बताया गया। यह स्थान रेण नदी के तट पर अवस्थित है, जो बारो

पहाड़ से निकल कर उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले में गोठानी और चोपन के मध्य पहुँचकर सोण की धारा में विलीन हो जाती है। इस नदी का उद्गम स्थल मतिरिमा गाँव है, जहाँ पहाड़ों के सोते मिलकर नदी का रूप धारण कर लेते हैं। उदयपुर से नदी का यह उद्गम स्थल लगभग 35 किमी0 दक्षिण है।

देवगढ़ में एक विशाल शिवलिंग की स्थापना मंदिर के बीच में की गयी है। इसमें स्थापित शिवलिंग से सोनभद्र जिले के बरैला, गौरीशंकर के शिवलिंग की अनुकृति पर शिव–पार्वती की सम्पृक्त प्रतिमा का स्पष्ट आभास होता है। इस शिवलिंग का आकार जमीन में गड़े भाग को छोड़कर 1.5 x 1.0 x 1 मीटर है। इस मन्दिर का आकार 12.15 x 4.85 x 3.20 मीटर मापा गया है। इसमें स्थापित एक अन्य मन्दिर 3.40 x 3.60 मीटर है। दीवार 75 सेमी0 मोटी है। इस प्रकार एक अन्य मन्दिर 3.3 मीटर का मापा गया जिसमें एक शिवलिंग स्थापित है। एक और मन्दिर 3.80 x 2.70 मी0 के आकार का बना था। मन्दिर में स्थापित शिवलिंग महेशपुर के मन्दिर में स्थापित शिवलिंग जैसा ही देखा गया। यहाँ एक गोले आकार का मन्दिर बना था जिसका आकार 11.40 मी0 है। मन्दिर के बीच में शिवलिंग स्थापित है। मन्दिर एक वृक्ष के नीचे ध्वंसावशेष रूप में वर्तमान है।

इसी प्रकार एक अन्य मन्दिर और उसमें स्थापित शिवलिंग देखा गया। रेण नदी के तट पर भी मूर्तियों के टूटे–फूटे टुकड़े, शिवलिंग तथा एक सूर्य प्रतिमा देखी गयी। सूर्यदेव को 7 घोड़े वाले रथ पर सवार दिखाया गया है। मूर्ति का आकार 75 सेमी0 x 28 सेमी0 है। इस मन्दिर से हट कर एक पुरानी वावली भी देखी गयी। शिवरात्रि के अवसर पर यहाँ बड़ा मेला लगता है। इसके अतिरिक्त शिव जी के गण और ऋद्धि–सिद्धि की मूर्तियाँ भी देखी गयीं। यहाँ कुछ मूर्तियाँ खण्डित होकर इधर–उधर बिखरी पड़ी हैं किन्तु वे कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। यहाँ के एक मन्दिर की जमीन से एक साबूत ईंट इन पंक्तियों के लेखक ने खोदकर निकाली जिसका आकार 45 x 22.50 सेमी0 था। इस मन्दिर के मार्ग में एक अन्य मन्दिर की दीवारें आधी गिर कर समाप्त हो गयी हैं, किन्तु जो बची हैं, उनमें कलात्मक पत्थर लगाए गए हैं।

उन कलात्मक पत्थरों में भी मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। यहाँ एक मूर्ति कालभैरव की 1.40 x .50 x .40 मीटर की है, जिसका पत्थर सफेद, खुरदुरा और बलुआ है। जनेऊधारी गणेश प्रतिमा का आकार 1.30 x .40 x .30 मीटर है। यह भी सफेद खुरदुरे पत्थर की है। देवी–प्रतिमा 1.25 x .55 x .40 मीटर की खुरदुरे सफेद पत्थर की है। उसे जल चढ़ाने की मुद्रा में सूर्यदेव को अर्घ देते हुए प्रदर्शित किया गया है। छत्रधारी एक अन्य प्रतिमा महामाया की अत्यंत सुन्दर है जिसका पत्थर चिकना और हलका सफेद है। स्वामी कार्तिकेय की प्रतिमा 1.35 x .45 x .38 मीटर के आकार की खुरदुरे पत्थर की है। यहाँ एक मूर्ति गिलहरी की भी मिली। स्थानीय लोगों ने बताया कि यहाँ की कुछ जातियों में गिलहरी की पूजा की परंपरा बहुत पहले से प्रचलित है। इसी प्रकार यहाँ 1.45 मीटर ऊँची देवी की एक अन्य अत्यंत सुन्दर मूर्ति, .53 x .36 मी0 की एक अन्य देवी प्रतिमा देखीं गयी। इसके अलावा इस स्थान पर सताधिक प्रस्तर–खण्ड और उनमें उत्कीर्ण मूर्तियाँ देखी गयीं। एक अन्य मन्दिर का आकार 11 मी0 x 6 मी0 तथा दूसरे मन्दिर का आकार 6 मी0 x 11 मी0 का मापा गया। यहाँ गणेश प्रतिमा तथा कुछ खण्डित प्रतिमाएँ देखी गयीं।

पवनगढ़–चलगली के पास एक पहाड़ी है, जिसे पवनगढ़ के नाम से जाना जाता है। यहाँ एक शिवलिंग स्थापित है। फाल्गुन कृष्ण पक्ष त्रयोदशी के अवसर पर यहाँ पूजा–अर्चा होती है। कहते हैं यहाँ कोई पुराना गढ़ था, जो अब नष्ट हो गया, उसके भग्नावशेष रह गए हैं। यहाँ पुराने पत्थरों के टुकड़े यत्र–तत्र बिखरे पड़े हैं। कुछ पत्थरों पर खुदाई करके आकृतियाँ भी बना दी गयी हैं।

प्रतापपुर के मंदिर–प्रतापपुर में इस समय कुल 11 मन्दिर निर्मित हैं जिनमें से दो धराशायी हो चुके हैं और 9 को पुनरुद्धरित करके उनमें मूर्तियाँ स्थापित की गयी हैं। यहाँ के मन्दिरों में प्रतिष्ठित मूर्तियों का विवरण निम्नवत् है—

शिव–मन्दिर–यहाँ तालाब के समीप एक पुराना मन्दिर निर्मित है,

जिसके बाहर न तो प्लास्टर किया गया है और न तो चूने से पोता गया है, किन्तु उसके भीतरी भाग को सुर्खी-चूने से प्लास्टर करके चूने से पोत दिया गया है और उसमें गेरू रंग के कई सुन्दर चित्र भी बनाए गए हैं। इस मन्दिर की दीवारें 55 सेमी0 मोटी हैं। इस मन्दिर में तीन प्रवेश द्वार बने हैं और चारों ओर से परिक्रमा के लिए बरामदे भी बनाए गए हैं। भीतर का मन्दिर गुम्बदाकार है, लेकिन ऊपरी भाग शिवलिंग के आकार का है। इसके निर्माण की यह अनोखी कला है। मन्दिर के भीतर मछली के चित्र और फूल-पत्ती की नक्काशी खोदकर की गयी है। उसके खम्भे भी ईंटें के ही बनाए गए हैं। पूरा मन्दिर 6 x 6 मीटर के आकार का है। इसमें लगी ईंटें दो तरह की हैं। कुछ ईंटें 20 x 15 x 3 सेमी0 की हैं तो कुछ ईंटें 10 x 7 x 3 सेमी0 आकार की।

सूर्य-मन्दिर-तालाब के तट पर एक सूर्य मन्दिर निर्मित है जिसमें 1.20 x .60 मी0 की रथारूढ़ सूर्य-प्रतिमा प्रतिष्ठित है। सारथी रथ खींच रहे हैं और रथ में घोड़े लगे हुए हैं। सूर्यदेव पद्मासन की मुद्रा में बैठे हुए हैं। सारथी के एक हाथ में त्रिकोण पताका फहरा रहा है और दाहिने हाथ में घोड़े की लगाम है। रथ की एक ही पहिया दिखलाई पड़ रही है। सूर्यदेव की यह मूर्ति भूरे एवं कुछ खुरदुरे पत्थर की बनी हुई है जिसका समय 17वीं शताब्दी प्रतीत होता है।

हनुमान-मन्दिर-सूर्य मन्दिर के समीप ही हनुमान जी का एक अन्य मन्दिर निर्मित है, जिसमें 1.50x60 मी0 की हनुमान प्रतिमा प्रतिष्ठित है। हनुमान जी एक हाथ में गदा, दूसरे हाथ में पहाड़ लिए हुए वीरासन मुद्रा में बैठे हुए हैं। प्रतिमा देखने में बड़ी भयंकर प्रतीत होती है। वे किसी असुर को अपने दाहिने पाँव के नीचे दबाए हुए हैं। उनके सिर पर मुकुट सुशोभित है।

भैरवनाथ मन्दिर-प्रतापपुर में भैरवनाथ का एक प्रसिद्ध मन्दिर है जिसमें भैरव की 1.58x.63 मी0 की भूरे पत्थर की अत्यंत सुन्दर प्रतिमा प्रतिष्ठित है। भैरव को जटाजूट में, दाहिने हाथ में गदा लिए हुए कछनी काछे हुए, बाएँ हाथ में लड्डू लिए दिखलाया गया है। उनके दाहिनी ओर कुत्ता है, जो उनका वाहन है। उन्हें मूँछ, कुण्डल, बेरवा और पैजनी धारण किए हुए

दिखलाया गया है। मन्दिर के बाहर सामने भैरव के वाहन कुत्ते की प्रतिमा प्रतिष्ठित है जो 68x23 सेमी0 के एक ही पत्थर पर कलात्मक ढंग से तराश कर बनायी गयी है।

शीतला मन्दिर–प्रतापपुर बाजार में बस्ती के ही अन्दर शीतला मन्दिर खपरैल का बनाया हुआ है जो चारों तरफ से खुला है और जिसके मध्य में सप्तदेवियों के सप्तपिण्ड स्थापित किए गए हैं।

दुर्गा जी–बाजार ही में सिंहवाहिनी दुर्गा जी की प्रतिमा एक मन्दिर में स्थापित है। यह प्रतिमा मिर्जापुर के विन्ध्यवासिनी की अनुकृति जैसी प्रतीत होती है। प्रतिमा का आकार 1.20x45 मी0 है। मन्दिर नया है किन्तु प्रतिमा पुरानी है। इसमें दुर्गा की दो प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं जिनका आकार 90x45x60 सेमी0 है। ठाकुरवाणी में हनुमान जी की एक मूर्ति 45x22 सेमी0, यहीं गणेश की एक मूर्ति 45x22 सेमी0 की देखी गयी। इसके अतिरिक्त 10–12 की संख्या में अन्य मूर्तियाँ भी देखी गयीं। इस मन्दिर में ठाकुर जी, सत्यनारायण बाबा, शालिग्राम, श्रीकृष्ण आदि की छोटी–छोटी मूर्तियाँ रखी गयी हैं। इसमें से कुछ मूर्तियाँ धातु–निर्मित हैं। यहाँ एक शिवलिंग भी प्राप्त हुआ था जिसमें उल्लेख किया गया कि सन् 1620 में यह स्थान काफी समृद्ध और धार्मिक, सांस्कृतिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण था। यहाँ कई मूर्तियों, मन्दिरों की स्थापना तत्कालीन शासकों द्वारा की गयी थी।

तालाब–यहाँ एक बड़े और गहरे तालाब का निर्माण कराया गया था। यह तालाब चारों ओर से पक्की ईंटों से बनाया गया है जिसके चारों ओर स्नानागार भी बनाए गए हैं। तालाब में स्नान करने के लिए लम्बी चौड़ी सीढ़ियों का निर्माण कराया गया है। पक्का होने के कारण तालाब का जल अभी भी काफी निर्मल रहता है।

गढ़ी–प्रतापपुर में एक गढ़ी अब भग्नावशेष रूप में प्राप्त है। यह गढ़ी पक्की एवं छोटे–बड़े ईंटों से बनायी गयी है और उसे सुर्खी–चूना से जोड़ा गया है। उसकी दीवारें लगभग 90 सेमी0 चौड़ी बनायी गयी हैं। उसका प्रवेश–द्वार विशाल एवं काफी आकर्षक है। सुरक्षा की दृष्टि से भी यह गढ़ी

काफी महत्वपूर्ण है।

कोर्ट—प्रतापपुर में एक कोर्ट का निर्माण किया गया था जिसकी दीवारें पक्की ईंटों से बनायी हुई 90 सेमी0 मोटी हैं तथा इनकी चुनाई सुर्खी–चूने से की गयी है। इसमें लगी ईंटों का आकार 30x15x6 सेमी0 है।

महेशपुर—अम्बिकापुर जिला मुख्यालय से 40 किमी0 दूर उदयपुर नामक स्थान है, जहाँ से लगभग 10 किमी0 उत्तर–पूरब की ओर महेशपुर नामक स्थान पड़ता है। यहाँ 5, 6 खण्डहरों के भग्नावशेष विद्यमान हैं, जिनमें शिव–पार्वती, द्वादशरुद्र, ऋषभदेव आदि के नाम पर विशाल मन्दिरों का निर्माण कराया गया था। यहाँ की मूर्तियाँ नवीं से 12वीं शताब्दी के मध्य प्रतीत होती हैं। इस स्थान पर खण्डहरों के बीच कुछ बौद्ध प्रतिमाएँ भी देखी गयीं। इन मन्दिरों के व्यापक सर्वेक्षण के उपरान्त जितनी मूर्तियाँ प्राप्त हुई उनका विवरण निम्नवत् है—

1. बुद्ध–प्रतिमा 1.30 x .75 x .30 मी0, सफेद, सिर के ऊपर त्रिछत्र 'और दोनों ओर हाथी, भिक्षुणियाँ तथा दो सिर, फिर उसके नीचे भिक्षुणी। 2. भिक्षुणी—70 x 60 x 20 सेमी0, 3. वाराह .50 x .55 x .15 मी0, 4. खण्डित प्रतिमा गणेश पार्वती, 5. एक अन्य प्रतिमा (अस्पष्ट)। 1 मीटर x .55 मी0 नृत्य की मुद्रा में। ये मूर्तियाँ जहाँ प्राप्त हैं, वहाँ मन्दिर की नींव भी स्पष्ट है जिसका आकार 7.90 मीटर x 6.20 मीटर का है।

इस मन्दिर में प्रतिष्ठित बुद्ध–प्रतिमा के संबंध में गाँव के लोगों ने बताया कि इसे 40 व्यक्ति मिलकर उठा कर अन्यत्र ले जाना चाहते थे, लेकिन वह उठी नहीं। लखनपुर के राजा साहब ने इसे हाथी पर ले जाने का प्रयास किया तब भी यह मूर्ति टस से मस नहीं हुई। मानपुर के बाबा साहब ने एक बार इसे खोदने का भी प्रयास किया था जिसमें से ताँबा आदि के कुछ पात्र मिले थे। यहाँ सर्वेक्षण के दौरान पुरानी पक्की ईंटों के टुकड़े भी देखे गए, जिनसे ऐसा लगता है कि मन्दिर का निर्माण पत्थर और ईंटों से किया गया होगा। एक दूसरे मन्दिर के प्रांगण में कुछ बड़ी ही कलात्मक और सुन्दर प्रस्तर–प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं जिनका विवरण इस प्रकार है—

शिवलिंग–.55 मी0 ऊँचा, जमीन के भीतर गड़े हुए भाग को छोड़कर 1.53मीटर वृत्ताकार। अर्घे का आकार 1.30 मीटर x 1.40 मीटर x 50 सेमी0। जिस मन्दिर में यह मूर्ति स्थापित है, उसका आकार 2.80 मी0 x 2.85 मीटर है। मन्दिर का टूटने के बाद बचा हुआ भाग 1.7 मीटर ऊँचा है। दीवार की मोटाई 62 सेमी0 है। अर्घ से पानी बहने के लिए नाली बना दी गयी है। मन्दिर का बाहरी भाग 10.75x7.10 मीटर के आकार का है।

एक अन्य मूर्तियुक्त स्तम्भ भी देखा गया, जिसकी ऊँचाई 1.15 मीटर है। यहीं देवी प्रतिमा स्थापित है साथ ही एक बुद्ध प्रतिमा भी जिसका आकार 50x35 सेमी0 है। ये सभी मूर्तियाँ खुरदुरे हलका सफेद रंग की हैं। एक अन्य स्तम्भ पर निर्मित विष्णु–प्रतिमा का आकार 76x72 सेमी0 है। एक दूसरी विष्णु प्रतिमा 85x50 सेमी0 है। यह प्रतिमा चिकने पत्थर की है और इतनी सुन्दर है कि लगता है जैसे इसे साँचे में ढालकर निकाला गया हो। यहाँ कुछ कलात्मक प्रस्तर–स्तम्भ ऐसे देखे गए जिनमें बनी मूर्तियों की शैली खजुराहो की शैली से प्रभावित है। एक प्रतिमा कामुक–मुद्रा में देखी गयी जिसका आकार 1.25x.50x.30 मीटर है। इसी प्रकार एक अन्य बुद्ध प्रतिमा छोटे आकार की देखी गयी। मन्दिर से पश्चिम भग्नावशेष, भवन के अवशेष प्राप्त हुए, जिसे धर्मशाला का नाम दिया जा सकता है और उसका आकार 20x25 मीटर है। धर्मशाले के पश्चिमी भाग में एक मन्दिर की नींव देखी गयी जो 50 मीटर लम्बी है। यहाँ एक भवन भी देखा गया जिसमें विभिन्न आकार–प्रकार के 5 की संख्या में शिवलिंग स्थापित हैं।

इसी प्रकार एक प्रस्तर–स्तम्भ में विष्णु की प्रतिमा देखी गयी। मन्दिर के पार्श्व भाग में 1 मीटर वर्गाकार का एक अन्य शिवलिंग भी पाया गया। वहाँ एक विशाल वृक्ष है, जिसके नीचे ध्वंसावशेष बिखरे पड़े हैं। लगता है, यहाँ भी एक विशाल मन्दिर का निर्माण किया गया था, जिसका आकार 90x35.20 मीटर है। इस मन्दिर में कई कलात्मक प्रस्तर–स्तम्भ, जिनमें मूर्तियाँ भी खुदी हुई हैं, देखे गये। एक प्रस्तर–स्तम्भ का आकार 1 मीटर x .37 सेमी0 x .15 सेमी0 है। यहीं एक प्रस्तर–स्तम्भ पर देवीमूर्ति बनी है, जो 1.40 x .95

x .30 सेमी0 के आकार की है। मन्दिर का आकार 40x25 मीटर के लगभग है। यह मन्दिर भी वृत्ताकार है। इसके चारों ओर प्रवेश द्वार बने हुए हैं। सभी प्रवेश द्वारों पर प्रस्तर–स्तम्भ हैं और उनमें कलात्मक मूर्तियाँ बनायी गयी हैं। मन्दिर का आकार 25x19 मीटर है। पूरे क्षेत्रफल के मध्य भाग में मन्दिर अवस्थित है जो 6.25x6.25 मीटर का है। दीवार की ऊँचाई 1 मी0 x .90 मी0 है। उसमें स्थापित शिवलिंग 80 सेमी0 वृत्ताकार है। उसके पार्श्वभाग में सफेद चिकने पत्थर की विष्णु–प्रतिमा स्थापित है जिसका आकार .75x.50 सेमी0 है। यहीं एक अन्य मन्दिर भी भग्नावशेष रूप में प्राप्त है, जिसमें स्थापित शिवलिंग 75x50 सेमी0 है।

राजपुर–राजपुर सरगुजा जिला मुख्यालय अम्बिकापुर से 38 किमी0 दूर रामानुजगंज से 70 किमी0 पूरब स्थित है। यहाँ 4–5 मन्दिर डेढ़ दो सौ वर्ष पूर्व के बने हुए हैं। कहते हैं, पहले यहाँ खण्डहर था, जिसे बाद में मन्दिर का आकार दे दिया गया। इससे ऐसा स्पष्ट होता है कि मन्दिर–निर्माण से पूर्व भी यहाँ मन्दिरों का निर्माण किया गया था और उनमें मूर्तियाँ स्थापित थीं। यहाँ के वर्तमान मन्दिरों में महामाया का मन्दिर मुख्य है जिसमें राम, भैरो, शिव, महावीर और महामाया की मूर्तियाँ स्थापित हैं। यहाँ के पुजारी से हुई बातचीत से ज्ञात हुआ कि शिव, राम और भैरो की प्रतिमाएँ यहाँ पहले से ही थीं जिनकी स्थापना मन्दिर बनाकर की गयी। मन्दिर में एक बड़ा शंख, जो कला की दृष्टि से भी अत्यन्त सुन्दर है, मन्दिर में रखी हुई थी। पुजारी के अनुसार यह शंख खुदाई में ही मिली थी। यहाँ से प्राप्त मूर्तियों तथा मन्दिरों का विवरण निम्नवत् है—1. भैरो काला पत्थर, 60x45 सेमी0, 2. महामाया–कालापत्थर सिंहवाहिनी 75x60 सेमी0। मन्दिर की दीवार 1.10 मीटर चौड़ी है तथा आकार 1.50x1.50 मीटर है। कहते हैं सरगुजा राजा के सहयोग से लाल जयपाल सिंह ने इस मन्दिर का निर्माण कराया था। मन्दिर की बाहरी दीवार 2.50x2.25 मीटर है। बाहर से मन्दिर 22x25x25 मीटर है। मन्दिर का बरामदा 1.75 मी0 है। मन्दिर की जोड़ाई सुर्खी चूने से की गयी है।

रामगढ़ के मार्ग में–रामगिरि उर्फ रामगढ़ सरगुजा जिले का सांस्कृतिक दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण स्थल है। यह सांस्कृतिक दृष्टि से जितना महत्वपूर्ण है, प्राकृतिक दृष्टि से उतना ही मनोरम। इन पंक्तियों के लेखक ने अनुभव किया कि सरगुजा के विभिन्न दुर्गम अंचलों की यात्राओं के साथ सबसे महत्वपूर्ण और रोमांचकारी यात्रा रामगढ़ की ही रही है। रामगढ़ का पहाड़ बहुत ऊँचा है। यहाँ जाने के लिए सरगुजा से 40 किमी0 दूर विलासपुर मार्ग पर उदयपुर नामक स्थान पड़ता है, जहाँ से पहाड़ की चढ़ाई शुरू हो जाती है। लगभग 2 किमी0 की यात्रा घने जंगलों की करनी होती है। ये जंगल इतने भयावह हैं कि एक बार रास्ता भूल जाने पर उनसे बाहर निकलना कठिन हो जाता है।[1] रामगढ़ पर्वत की ऊँचाई समुद्र सतह से 3206 फिट है।[2]

वस्ती के अवशेष–हथफोर गुफा को पार करने के बाद ही पहाड़ के दोनों बाजुओं के बीच ऊबड़–खाबड़ लम्बा–चौड़ा मैदान दीखता है। इसके बीच से होकर ही हथफोर का नाला बहता है। इस नाले के दोनों ओर की ऐसी बनावट है कि जिसको देखने से ऐसा लगता है कि यहाँ कभी बस्ती रही होगी। पानी की सुविधा और सुरक्षा की दृष्टि से भी तत्कालीन मानव के लिए यह स्थान काफी उपयोगी रहा होगा। इस नाले के आस–पास कई तरह के पुरावशेष प्राप्त हुए हैं जिनका अच्छा–खासा संग्रह वहाँ के अध्यापक श्री फतेह बहादुर सिंह ने किया है। बातचीत के बाद उन्होंने बताया कि दो–तीन वर्षों के बीच उन्हें उस स्थान से मनके, करीब 40 की संख्या पुराने, धातु के सिक्के, धातु के ही कुछ आभूषण, मिट्टी के पात्रों के टुकड़े, पुरानी ईंटों के टुकड़े, जांत, चकरी, सील–बट्टा तथा दैनिक उपयोग की अन्य वस्तुएँ, सोने के टुकड़े आदि प्राप्त हुए थे जिन्हें असह्य जानकर उन्होंने रामगढ़ पहाड़ के बाल ब्रह्मचारी महात्मा जी के हवाले कर दिया।

लक्ष्मण बेंगरा–हाथीपोल से थोड़ी ही दूर दक्षिण की ओर एक पहाड़ी मिलती है, जिसे लक्ष्मण बेंगरा के नाम से जाना जाता है। यह पहाड़ी लगभग 32 मीटर ऊँची है। पूरी पहाड़ी बलुई है जिसे काट–तराश कर गुफाएँ बनायी

1. स्टेटिकल एकाउंट्स ऑफ बंगाल बैलूम 17 पृ0–2231 से 240)
2. छत्तीसगढ़ फ्यूडेटरी स्टेट गजेटियर पृ0–229–233।

गयी हैं। लोगों ने बताया कि लक्ष्मण जी वनवास के समय इसी गुफा में रहते थे। यह गुफा सामने से 8.15 मीटर लम्बी और 9 मीटर गहरी तथा 3 मीटर ऊँची है। इसके चार प्रकोष्ठ हैं 3x4.5 मीटर, दूसरा 4.5x4.5 मी0 तथा तीसरा 1.5x1 मी0।

हाथीपोल–रामगढ़ के मार्ग में हाथीपोल नामक एक स्थान है, जहाँ संकरे मार्ग से पहुँचा जा सकता है। हाथीपोल गुफा लगभग 60 मीटर लम्बी है। इस गुफा में जहाँ से प्रवेश किया जाता है, वह लगभग 20 मीटर चौड़ी और 100 मीटर गहरी है। इसके बीच से एक नाला प्रवाहित होता है। इस नाले के कारण भी क्रमशः यह स्थान अधिक चौड़ा होता जा रहा है। इस गुफा का हाथीपोल नामकरण इसलिए किया गया है कि इसके अन्दर हाथी भी प्रवेश कर सकता है। इस गुफा के अन्दर जल–प्रवाह के कारण छोटे–छोटे कुण्ड बन गए हैं जिनमें से एक कुण्ड का नाम सीताकुण्ड है। कहते हैं, वनवास के समय सीता जी यहां आयी थीं और उन्होंने इस कुण्ड के जल का पान किया था। इस कुण्ड का जल काफी शीतल, सुस्वादु, आरोग्यवर्द्धक बताया जाता है।

विश्व की प्राचीनतम नाट्यशाला

सीता–बोंगिरा–सीताबोंगिरा को विश्व की प्राचीनतम् प्राकृतिक शैल्य नाट्यशाला होने का गौरव प्राप्त है। जैसा कि नाम से भी स्पष्ट है, एक किम्बदन्ती के अनुसार भगवान राम वनवास के समय जानकी और लक्ष्मण के साथ यहाँ आए थे। उन्होंने इन जंगलों में दुष्टों के संहार और साधु–संतों की रक्षा के लिए यहीं शिलाओं को खोदकर अपना आवास बना लिये थे। उनमें जो स्थान सीता जी के रहने के लिए सुरक्षित बनाया गया था, उसे सीता–बोंगिरा के नाम से जाना जाता है। बोंगिरा का अर्थ है कक्ष या कमरा। रामगढ़ या रामगिरि पर्वत पर स्थित यह स्थान 23.28 अंश तथा 24.6 अंश उत्तरी अक्षांश और 81.35 अंश तथा 84.15 अंश पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। समुद्र–तल से इसकी ऊँचाई 3202 फुट और पूर्वी सतह से 2000 फुट है। इस स्थान का संबंध पाण्डवों और अलकापुरी से निर्वासित यक्ष के निर्वासन से भी जोड़ा जाता है। कहते हैं पाण्डवों ने यहीं अज्ञातवात किया था। यक्षदूत का

एक प्रासंगिक श्लोक यहाँ उद्धृत है—

कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकार प्रमत्तः,
शापेनास्तंगमितमहिमा वर्ष भोग्येनभर्तुः,
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छाया तरुषुवसतिं रामगिर्याश्रमेषु॥[1]

भरत नाट्यशास्त्र में विक्रिष्ट, चतुरस्त्र और त्रयस्त्र 3 प्रकार के नाट्य-मंडपों का उल्लेख हुआ है। 'शिवरत्न' एवं 'भाव प्रकाश' में भी विक्रिष्ट एवं चतुरस्त्र मंडपों का उल्लेख हुआ है। सीताबोंगिरा गुफा के भीतर गणेश हनुमान तथा नृत्यांगनाओं की मूर्तियाँ बनी हुई हैं। इस नाट्यशाला की लम्बाई 8 मीटर और गहराई 4.5 मीटर है। इसकी दीवारें सीधी खड़ी हैं। प्रवेश-द्वार अर्द्ध वृत्ताकार है जिसकी ऊँचाई 1.8 मीटर है। भीतर की ओर क्रमशः वह कम होती गयी है और अंत में 1.2 मी0 ही रह गयी है। इस गुफा के सामने एक विशाल चट्टान है जिस पर एक साथ सैकड़ों व्यक्ति बैठ सकते हैं। ऐसा समझा जाता है कि यहीं दर्शक-दीर्घा रही होगी। यह किला चन्द्राकार है जिस पर बैठने के लिए विशेष सज्जा की गयी है। इन पीठों पर 60-70 व्यक्ति एक साथ बैठकर नृत्य या संगीत का आनंद ले सकते हैं। प्रवेश-द्वार के फर्श पर दोनों ओर से दो छिद्र बने हैं-जिनसे सम्भवतः लकड़ी बांस गाड़ कर पर्दे टांगे जाते रहे होंगे।

इस गुफा से थोड़ी दूरी पर एक अन्य गुफा बनी हुई है जो 4 मीटर x 3 मीटर x 2 मीटर के आकार की है। इसके सामने एक चौतरा था जिसे काट-छाँट कर ठीक कर दिया गया है। सीताबोंगरा गुफा के दो भाग हैं-एक बड़ी है, दूसरी छोटी। बड़ी गुफा 13.40 मीटर लम्बी है और छोटी गुफा 13x10 मीटर लम्बी है। एक अन्य गुफा 5 मीटर लम्बी है और 4 मीटर चौड़ी है। सामने से इस गुफा की गहराई 3.85 मीटर है। यह मंच नीचे से क्रमशः ऊपर की ओर सीढ़ीनुमा बना हुआ है। सबसे नीचे लंबा-चौड़ा चौतरा है, जिस पर एक साथ 500 से अधिक व्यक्ति बैठ सकते हैं। पूरा मंच पहाड़ की छत से ढका हुआ है और सुरक्षित भी है। इसके समीप तीन चौतरे बने हुए

1. मेघदूत : कालिदास—श्लोक-1

हैं। ऐसा लगता है कि यहाँ तीन तरह के दर्शक बैठते रहे होंगे। मंच की ऊँचाई 1 मीटर है। छत की ऊँचाई 1.80 मीटर है। पार्श्व की दीवारों को अलंकृत किया गया है। वैसे वे दीवारें चिकनी हैं। दाहिनी दीवार के अंदर 5 इंच मोटा छिद्र बनाया गया है जिससे ऐसा लगता है कि इसमें लकड़ी या बांस के खम्भे लगाये जाते रहे होंगे और ऊपर परदा लगाया जाता रहा होगा। बाएँ हाथ एक अन्य छिद्र है, जिसमें आवाज देने से लक्ष्मण बोंगरा तक आवाज गूँजती हैं। लोगों का कहना है कि इसी छिद्र के माध्यम से वार्ताएँ 'प्राम्टिंग' की जाती थीं। मंच के दोनों ओर पार्श्वभाग में सज्जा–कक्ष बना हुआ है, जो 8.32 मीटर लंबा, 4.32 मीटर चौड़ा तथा 3.7 मीटर गहरा और 1.20 मीटर ऊँचा है। पूरे मंच का आकार अर्धवृत्ताकार है। सामने का प्रवेश–द्वार 7 मीटर लंबा है। यहाँ और आगे चलकर 8.20 मीटर हो गया है। सामने के प्रवेश–द्वार पर दो गहरे गड्ढे हैं। मंच पर जाने के लिए बायीं ओर से सीढ़ियाँ बनायी गयी हैं। सामने की पूरी चट्टान लगभग 27 मीटर लंबी है। इस नाट्यशाला के सामने से एक गहरा नाला बहता है जो सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसके सामने का दृश्य काफी सुहावना और सुन्दर है। आकाश खुला है। वृक्ष लगे हुए हैं। नाला के सामने एक लम्बा चौड़ा बाग है जिसमें हजारों व्यक्ति बैठ सकते हैं।

गुहाचित्र–(सीताबोंगिरा)–रंगशाला के दाहिने हाथ एक दूसरी गुफा है। यह भी मानव–निर्मित है। इस गुफा की छत में रक्त–वर्ण के कुछ चित्र बनाए गए हैं जिनमें से एक चित्र लंबी मछली के आकार का है तथा लगभग ढाई मी0 लंबा और 60 सेमी0 चौड़ा है। इस चित्र के चौतरफा पंक्तिबद्ध मानवाकृतियाँ बनायी गयी हैं। इनमें से कुछ चित्र काले रंग के भी देखे गए। ऐसा ही चित्र सोनभद्र के पंचमुखी गुफा में देखा गया था जिसका विवरण अलग से दिया गया है।

शिलालेख–रंगशाला के दाहिने हाथ की गुफा में दाहिने हाथ एक शिलालेख देखा गया। इस पूरी गुफा का आकार 6 मीटर x 4.40 मीटर x 2.50 मीटर है। यह गुफा खुले और प्रकाशयुक्त स्थान पर बनी हुई है। इसके दाहिने लगभग 27 सेमी0 मोटी एक छिद्र बना हुआ है जिसके भीतर से प्रकाश आता रहता है।

सीताबोंगिरा की गुफाओं को देखते हुए रामगिरि या रामगढ़ की पहाड़ी पर पहुँचा जा सकता है। यहाँ से पहाड़ की जड़ लगभग 1 किमी० दूर है। मार्ग में शीतल जल–स्त्रोत अनबरत बहता मिलता है। जल का यह स्त्रोत कहाँ से आता है, यह पता नहीं चलता।

रामगढ़

किले का अवशेष–रामगढ़ के मार्ग में काफी ऊँचाई पर जाने के बाद प्रस्तर निर्मित एक द्वार मिला। उस द्वार पर कलाकृतियाँ की गयी हैं और अर्गला के लिए स्थान बनाए गए हैं। मेहराबदार उस द्वार को देखने से ऐसा लगता है कि किले में जाने का यही प्रवेश–द्वार रहा होगा। यहाँ कई बड़े–बड़े पत्थर के कलात्मक टुकड़े भी देखे गए हैं जिनको जोड़कर किले की दीवारों का निर्माण किया गया होगा। द्वार के पीछे चिकने पत्थर की एक खण्डित मूर्ति देखी गयी। श्री फतेह बहादुर सिंह ने बताया कि यहाँ एक किला भी बना था जो गिर कर नष्ट हो चुका है।

प्रवेश–द्वार से आगे बढ़ने के बाद कुछ और प्रस्तर–खण्ड तथा मूर्तियाँ देखी गयीं। इस स्थल को देखने से लगा कि यहाँ एक मन्दिर रहा होगा और ये मूर्तियाँ उसी मन्दिर में प्रतिष्ठित रही होगीं। मन्दिर का द्वार ढाई मीटर चौड़ा, डेढ़ मीटर ऊँचा मापा गया। यहाँ एक यक्षिणी की मूर्ति देखी गयी जिसके पावों में कोई आभूषण तथा वस्त्र घुटने तक था। इसी के साथ कुछ धनुर्धरों के चित्र भी देखे गए। इस स्थान को पार करने के बाद ही चढ़ाई लगभग समाप्त हो जाती है और ऊपर ऊँचे–नीचे जंगली मार्ग दिखलाई पड़ने लगते हैं। इस मार्ग से लगभग 300 मीटर दूर जाने के बाद रामगढ़ का मन्दिर मिलता है। इस पुराने मन्दिर की ऊँचाई 4 मीटर से अधिक नहीं है, लेकिन इसके अन्दर तथा बाहर बहुत सारी मूर्तियाँ बिखरी पड़ी हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है–

1. धनुर्धर 64x23 सेमी०, 2. हनुमान 1x.63 मी०, 3. अष्टभुजी 92x60 सेमी० 4. शिवलिंगों की कुल संख्या 5 है, 5. विष्णु–प्रतिमा 52x42 सेमी०, 6. विष्णु–प्रतिमा 1.20 मी० x 50 सेमी० काला पत्थर, 7. देवी–प्रतिमा 50x30 सेमी०, 8. शेषावतार 75x45 सेमी०, 9. राम–

जानकी, हंनुमान 80x40 सेमी0, 10. मन्दिर का आकार भीतर–भीतर 2.40x2.50 मीटर, 11. विष्णु–प्रतिमा 67x40 सेमी0, 12. सूर्यचक्र तथा खण्डित मूर्तियाँ 1, मूर्तियों की संख्या लगभग 20, 13. यक्षिणी–प्रतिमा, नृत्यमुद्रा में 30x25 सेमी0।

रामगिरि के बाबा जी ने हमें अपने संग्रह की अनेक वस्तुएँ दिखायीं जो उसी अंचल के श्री फतेह बहादुर सिंह द्वारा खोजी गयी थीं। वे हैं–दो कंगन पीतल के, दो अन्य कंगन तथा 5 चूड़ियाँ पीतल की, छोटे–बड़े गुप्तकालीन धातुओं के 43 सिक्के, अष्टधातु का नन्दी, पत्थर के सांचे, कान की बाला, बलय, गले की मुहरें, पारदर्शी पत्थर के टुकड़ों की मालाएँ, पत्थर का कंठा (गले में पहनने वाला), मनके, कर्धन का जन्तर, कुछ पात्र जिन पर शेर आदि के चित्र भी बने हैं तथा पारदर्शी पत्थरों के नग, नाक का आभूषण और नाक की नकबुल्ली आदि। ये सिक्के 3 से 5 सेमी0 तक लंबे, चौकोर, गोलाकार हैं। इन सिक्कों पर कुछ मूर्तियाँ बनी हैं और उन्हें पंच करके कुछ लिखा गया है जो जंग लग जाने के कारण अस्पष्ट है। तब भी अनुमान है कि ये सिक्के गुप्तकालीन होंगे। बाल ब्रह्मचारी बाबा शंकरपुरी और श्री फतेह बहादुर सिंह ने भी बताया कि ये सभी प्रकार के सिक्के अष्टधातु के हैं तथा नन्दी सीताबोंगिरा के पीछे के नाले के आस–पास से प्राप्त हुए हैं। जहाँ बस्ती होने के संकेत प्राप्त हैं, ये आभूषण रेखांकित, अलंकृत हैं।

कबीर–चौरा और वशिष्ठ–गुफा–कबीर चौरा नामकरण संतकवि कबीर के नाम पर और वशिष्ठ गुफा का नामकरण महर्षि वशिष्ठ के नाम पर किया गया है। कबीर चौरा को धर्मदास योगी की साधना–भूमि के रूप में जाना जाता है और कहा जाता है कि वे रामगढ़ के अंतिम योगी हो चुके हैं। इसके आगे वशिष्ठ गुफा मिलती है। कहते हैं इसी गुफा में मुनि वशिष्ठ ने तपस्या की थी। यहाँ से ऊपर जाने के लिए सीढ़िया बनी हुई हैं। गुफा के दरवाजे विशाल प्रस्तर–खण्डों से निर्मित हैं और उनमें भैरव की मूर्ति बनायी गयी है। इसके आगे गणेश, फिर सीढ़ियाँ मिलती हैं जो रावण–द्वार तक पहुँचती हैं। द्वार के सामने गणेश और हनुमान जी की मूर्तियाँ रखी हुई हैं। इसके बाद रावण–

दरबार आता है। यहाँ रावण, कुम्भकर्ण और नृत्यांगनाओं की मूर्तियाँ बनी हुई हैं। यहीं से होकर एक संकरा मार्ग पहाड़ की ओर चला जाता है, जिसके ऊपर राम, जानकी, लक्ष्मण की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। बाहर शिव और हनुमान की मूर्तियाँ बनी हैं। इसी के साथ भरत, शत्रुघ्न, विष्णु की मूर्तियाँ भी बनी हैं। ये सभी मूर्तियाँ अलंकृत हैं। गुफा के नीचे पेय–जल से पूर्ण एक जलाशय है। इस पहाड़ी पर एक किला है। किले के ऊपरी हिस्से में मन्दिरों के अवशेष मिलते हैं। पहला मन्दिर वरुणदेव या भैरव का है जिनके सामने देवांगनाओं को हाथ जोड़े दिखाया गया है। दूसरा मन्दिर अष्टभुजी देवी का अर्द्ध नग्न रूप में दर्शाया गया है। देवी के हाथ में मुण्ड, पाश, त्रिशूल है। यहीं शंकर, गणेश की मूर्तियाँ भी प्रतिष्ठित हैं। तीसरा मन्दिर किले के आखिरी छोर पर बना हुआ है। मन्दिर को तोरण, कलश तथा देवी–देवताओं की मूर्तियों, कमल–पुष्प एवं बेल–बूटों से सजा दिया गया है। इस मन्दिर में अप्सराओं, यक्षुणियों के अतिरिक्त राम, सीतला हनुमान की मूर्तियाँ बनी हुई हैं। यहाँ एक जलाशय भी प्राप्त है, जिसका पानी प्रायः गंदा रहता है।

लक्ष्मणगढ़–रामगढ़ के समीप लक्ष्मणगढ़ नाम का एक गाँव है। गढ़ नामकरण से ऐसा प्रतीत होता है कि कभी यहाँ कोई गढ़ रहा होगा जिसके भग्नावशेष यहाँ देखने को मिलते हैं। यहाँ के भग्नावशेषों में कुछ मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं जिनमें शिवलिंग, कमल, लक्ष्मी, गज तथा कुछ बेल–बूटे आदि हैं। यहाँ एक मूर्ति पुत्रवती नारी की, स्तन–पान कराते हुएं देखी गयी जिसके आसपास कुछ अन्य नारियाँ खड़ी हैं। श्रीकृष्ण को नन्दगाँव को ले जाते हुए दृश्य का अंकन भी किया गया है।

रामानुजगंज–यह स्थान पुरातत्व एवं स्थापत्य की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण नहीं है। पहले यहाँ राजशी एवं सामन्तशाही व्यवस्था कायम थी। अतः दो, ढाई सौ वर्ष पूर्व के बने कुछ मकान एवं मन्दिर देखे गए। यहाँ के प्रमुख मन्दिरों में महामाया, शिव, राम–लक्ष्मण, हनुमान, कंगालिन देवी, ग्वालिन पत्थर मुख्य हैं।

शिवपुर–शिवपुर प्रतापपुर तहसील से लगभग 3 किमी0 दूर एकांत में

स्थित एक स्थान है जो जंगल और पहाड़ से घिरा हुआ है। यहाँ एक विशाल शिवलिंग स्थापित है, जिसका स्पर्श करता हुआ जल–श्रोत निरंतर प्रवाहित होता रहता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह जल–धारा निरंतर एक ही गति से प्रवाहित होती है। इसका जल अत्यंत सुस्वादु, आरोग्यवर्द्धक, शीतल और निर्मल है। यह जल–श्रोत आगे लगभग 8 फुट दूर जाकर दूसरे शिवलिंग के समीप से प्रवाहित होकर नीचे गिर जाता है। पहला शिवलिंग (जमीन के अंदर गड़े हुए भाग को छोड़कर) 40 सेमी0 ऊँचा है। इसका कुल व्यास 1 मी0 है। इसका पत्थर काला, चिकना और सुन्दर है। दूसरा शिवलिंग (जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़) 95 सेमी0 ऊँचा है। इसका कुल व्यास 1.41 मी0 है। इसे पर्तदार चट्टानों को काटकर तराशा गया है और बीच में दरार पड़ गयी है जिसे मशाले से जोड़ दिया गया है। यह शिवलिंग अत्यंत चिकने, काले और सुन्दर पत्थर का निर्मित है। एक तीसरा शिवलिंग अत्यंत चिकने, काले और सुन्दर पत्थर का निर्मित है। एक चौथा शिवलिंग भी समीप में स्थित है जो (जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर) 37 सेमी0 ऊँचा है। इस स्थान से लगभग 12 मीटर सामने ही एक विशाल मन्दिर (शिवालय) निर्मित है जो अत्यंत ठोस और मजबूत बनाया गया है तथा अष्टबल आकार का है। इसके चारों ओर विशाल द्वार है जिनमें से किसी एक द्वार से प्रवेश करके पूरे मन्दिर की परिक्रमा की जा सकती है। मन्दिर की दीवारें 72 सेमी0 मोटी हैं। पूरा मन्दिर लगभग 9x9 मीटर का है। दूर से देखने में 5 मंदिर प्रतीत होते हैं। एक मन्दिर बीच में है, और उसके चारों ओर चार अन्य मन्दिर बनाए गए हैं। इस पंच मन्दिर को देखने से ऐसा लगता है कि इसमें पंचमुखी भगवान शिव की प्रतिमा प्रतिष्ठित की गयी होगी। यहाँ कोई प्रतिमा नहीं है। मन्दिर का निर्माण सुर्खी–चूना से किया गया है। पूछताछ के बाद लोगों ने बताया कि इस मन्दिर का निर्माण 16वीं शताब्दी में सरगुजा राज्य के राजाओं द्वारा किया गया था और इसमें भगवान शिव की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित थीं। यहाँ शिवरात्रि के अवसर पर राधाकृष्ण की अद्भुत मूर्तियाँ मन्दिर के पुजारी द्वारा ला कर दर्शनार्थ प्रतिष्ठित की जाती हैं। यह मूर्ति अष्टधातु की बनी है तथा लगभग 45 सेमी0 ऊँची है।

सीतामढ़ी–जनकपुर तहसील मुख्यालय का सीतामढ़ी एक प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ पहुँचने के लिए बनास नदी को पार करना पड़ता है। जनकपुर से सीतामढ़ी 15 किमी0 दूर है। सीतामढ़ी रामा नदी के तट पर स्थित है। यहाँ एक विशाल चट्टान को काटकर गुफाएँ बनायी गयी हैं जिनका प्रवेश द्वार पूरब की ओर है। गुफा की कुल चौड़ाई 5 मीटर और लम्बाई 10 मीटर है। पूरी शिला की अनुमानित चौड़ाई 25 मीटर है। इसके बाएँ एक बरामदा है, जिसके पार्श्वभाग में 92 सेमी0 x 92 सेमी0 x 1.10 मी0 के आकार का मन्दिर है। बाएँ से प्रवेश–द्वार बना है। ऊपर जाकर भी गुफा में प्रवेश किया जा सकता है। प्रवेश–द्वार 90x50 सेमी0 का है। सामने से गुफा में प्रवेश के लिए 3 द्वार बने हुए हैं। बाएँ से इसका पहला द्वार 1.20 मी0 x 86 सेमी0, दूसरा 1.45 मीटर x 1 मीटर, तीसरा 1.45 मीटर x 90 सेमी0 है। सामने का चबूतरा 3 मी0 10 सेमी0 x 4.25 मीटर के आकार का है। भीतरी बरामदा 7.30 मीटर x 1 मी0 के आकार का है। गुफा के कक्ष को लेकर बाएँ से जो पहला कक्ष बना है उसका द्वार 1.70 0 x 1.85 मीटर है। बायीं ओर का भीतरी कक्ष 1.80 x 1.80 मी0 के आकार का है। प्रवेश–द्वार 1x1.32x.75 मी0 का है। दीवार 32 सेमी0 मोटी है। भीतरी दीवार 2x.80 मी0 x 2.10 मी0 है। गुफा की पूरी ऊँचाई 1.85 मीटर है। बीच के कक्षों में अर्घे के अन्दर शिवलिंग स्थापित है जिनकी परिक्रमा के गलियारे की चौड़ाई 1.15 मीटर है। दाहिने हाथ के कक्ष बाएँ हाथ के कक्ष के बराबर हैं। पूरी गुफा खुदी हुई है जिसमें टाँकी के निशान सर्वत्र बने हुए हैं। मुख्य गुफा के बाएँ शंकर जी की मूर्ति दीवार पर खुदी हुई है जिसकी ऊँचाई 1.60 मीटर है। शिव के कानों में कुण्डल, माथे पर गंगा जी, त्रिनेत्र रूप, गले में माला, दाहिना हाथ अभय के रूप में ऊपर उठा हुआ दिखाया गया है। शिव–प्रतिमा गुफा के दोनों ओर लगभग एक ही आकार–प्रकार की बनी हुई है।

दूसरी प्रतिमा की मुट्ठी में सर्प, बाएँ हाथ में त्रिशूल कमर में बाघम्बर स्पष्ट है। बीच का कक्ष 1.80x1.75 मी0 के आकार का है। इसमें भी शिवलिंग स्थापित हैं जिसका व्यास 52 सेमी0 है। अर्घ का आकार 80x55x45 सेमी0 लगभग सभी का हैं। अर्घे और शिवलिंग दोनों सफेद पत्थर के बने हैं।

एक अन्य शिवमूर्ति का आकार 1.55x.70 मी0 है। शिव के कानों में कुण्डल, गले में माला, हाथ में त्रिशूल, बायाँ हाथ कमर पर, वे कुछ ताण्डव की मुद्रा में हैं। सर्प पूरे शरीर में नीचे से लेकर कमर तक लिपटा हुआ है। शिव–प्रतिमा दाहिने हाथ की दीवार पर बनी है। दाहिने हाथ की गुफा के द्वार पर भी शिव–प्रतिमा बनी है और भीतर शिवलिंग स्थापित है। इन कक्षों में अर्घ, अर्घ के ऊपर शिवलिंग और बाहरी द्वार पर प्रतिमाएँ बनायी गयी हैं। ऐसी ही एक गुफा यहाँ हरचौका और छतौड़ा में भी पायी गयी है।

इन गुफाओं के बारे में लोगों की तरह–तरह की धारणाएँ हैं। वहाँ के एक अध्येता श्रीराम जीवन प्रसाद त्रिपाठी के अनुसार इन गुफाओं का निर्माण तब किया गया था जब मनुष्य ने हथौड़े का उपयोग करना सीख लिया था। उस समय लोग अधिक से अधिक तीर्थ यात्राएँ करते थे। अतः उन्हें ठहरने के लिए स्थान–स्थान पर धर्मशालाओं की आवश्यकता पड़ती थी। उन दिनों धर्मशालाएँ तो थीं नहीं, ये गुफाएँ ही धर्मशाला का काम करती थीं, जिन्हें यात्री अपनी यात्रा की सुविधा के लिए ही बना लेते थे। इसलिए ये स्थान पानी के स्रोत के पास ही बने हुए हैं।

हरचौका–हरचौका एक गाँव का नाम है जिसके किनारे एक पहाड़ी काटकर एक गुफा बनायी गयी है। वैसे तो यहाँ और भी कई गुफाएँ हैं, किन्तु उनमें से एक गुफा में सुन्दर–सुन्दर कई मूर्तियाँ बनायी गयी हैं। छोटी–छोटी इन कोठरियों के निर्माण की भी अपनी एक कला है। इन कोठरियों में शिवजी की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं। सन् 1870–71 में सर्व प्रथम इन गुफाओं को सरकारी अधिकारियों द्वारा खोज निकाला गया था।

घाघरा की मढ़ियाँ–घाघरा एक गाँव का ही नाम है जो एकांत स्थान में बसा हुआ है। इस गाँव में एक पुराना मन्दिर है जिसके अन्दर देवी–देवताओं की मूतियाँ प्रतिष्ठित हैं। मन्दिर का निर्माण पत्थरों को जोड़कर किया गया है। मन्दिर की दीवारों में जड़े हुए विशाल पत्थरों पर ही देवी–देवताओं की मूर्तियाँ उत्कीर्ण की गयी हैं। यहाँ एकादश रुद्रों में ही 75 सेमी0 ऊँचे अर्घ पर 60 सेमी0 ऊँचा एक विशाल शिवलिंग स्थापित है। इस विशाल शिवलिंग का वृत्त

लगभग 60 सेमी0 है। शिवलिंग के ऊपर पार्वती जी की सुन्दर कलात्मक मूर्ति बनायी गयी है। इस अर्घ के निर्माण की एक विशेषता है कि शिवलिंग पर चाहे जितना पानी चढ़ाया जाय, कहीं बाहर दिखलाई नहीं पड़ता, अन्दर ही अन्दर वह न जाने कहा चला जाता है। ''रेणुकेश्वर महात्म्य'' में उल्लिखित है कि– ''यह रेणुकेश्वर मन्दिर रेणुका के तट पर अवस्थित है। इसके दर्शन मात्र से बड़ा से बड़ा पातक दूर हो जाता है। यह स्थान विन्ध्य पर्वत के मध्य में मध्य देश में बना है। इसमें प्रतिष्ठित महादेव हमारी हर मनोकामना की सिद्धि करने वाले हैं।''

इस मन्दिर में बड़े–बड़े पत्थर लगे हुए हैं और इसके खम्भों पर सुन्दर से सुन्दर शिव प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं। उन्हें फूल, पत्तियों, तोरण, वन्दनवारों से सजा दिया गया है। खम्भों पर उत्कीर्ण मूर्तियों में काल भैरव, गणेश, भैरवी आदि की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। यहाँ लगभग डेढ़ किमी0 दूर तक मन्दिरों के कई अवशेष और मूर्तियों के भग्नावशेष मिल जाते हैं। काल भैरव की मूर्ति की चारों भुजाओं में त्रिशूल, डमरू, खप्पर और दंड सुशोभित हैं। वे गले में मुण्डमाला धारण किए हुए हैं। गणेश जी भी अपनी चारों भुजाओं में क्रमशः त्रिशूल, सर्प, माला, लड्डू लिये हुए हैं। उनके गले में कई आभूषण सुशोभित हैं।

सीधी

चमरोहा–सीधी से सिहावल जाते समय मार्ग में एक चमरोहा नामक गाँव है जिसमें सड़क के पास ही नीम के वृक्ष के तले कुछ खुदी मूतियाँ पड़ी थीं। इनमें से कुछ मूतियाँ बहुत ही कलात्मक थीं। उनमें से एक शिवलिंग था जिसकी लंबाई 40 सेमी0 और व्यास 46 सेमी0 था। अर्घा 45x45 सेमी0 का था और यहीं ब्राह्मण, वीरबाबा, दो दुर्गा प्रतिमाएँ, महिषासुर मर्दिनी एवं सिंहवाहिनी की रखी हुई थीं। ये सभी मूर्तियाँ खण्डित किन्तु कलात्मक हैं। एक प्रस्तर–खण्ड में गणेश मकर, हाथी की मूर्तियाँ बनी हुई थीं। महिष को दुर्गा के दाहिने पांव को चाटता हुआ दिखाया गया है। इसी प्रकार अर्द्ध पद्मासन मुद्रा

में दुर्गा जी को दिखाया गया था जिनका बायाँ हाथ सिंह के सिर के ऊपर और दाहिना पाँव मुड़ा हुआ था। इस प्रतिमा का आकार 51x40 सेमी0 है। एक अन्य देव-प्रतिमा 54x20 सेमी0 की देखी गयी। इस वृक्ष-तले मन्दिर के स्तम्भों के कलात्मक टुकड़े बिखरे पड़े थे जिससे ऐसा लग रहा था कि किसी सुन्दर मन्दिर का निर्माण किया गया होगा, किन्तु इस वृक्ष तले मन्दिर की कोई दीवार या नींव नहीं देखी गयी। इस क्षेत्र में और भी कई स्थानों पर ऐसी मूर्तियाँ पड़ी हुई हैं जैसे—परसिद्धी गाँव में बूढ़ी मइया का स्थान है जहाँ इमली के पेड़ के नीचे देवी की भग्नवावशेष कलात्मक प्रतिमा प्रतिष्ठित है। इसी प्रकार चमरोहा में पेड़ के नीचे पीपल के वृक्ष तले भगवती की मूर्ति लगभग 45 सेमी0 ऊँची पड़ी हुई है। जोकहाँ में भी दुर्गा जी की लगभग 60 सेमी0 ऊँची चतुर्भुजी प्रतिमा सफेद खुरदुरे पत्थर की प्रतिष्ठित है। आमापयी में नीम के नीचे लगभग 45 सेमी0 ऊँची दुर्गा की द्विभुजी प्रतिमा प्रतिष्ठित है। गडंउर में एक शिवलिंग, एक दुर्गा-प्रतिमा तथा कुछ अन्य खण्डित प्रतिमाएँ पड़ी हुई हैं। कौरैली में हनुमान एवं देवी-प्रतिमा है। हनुमान एवं देवी की प्रतिमा लगभग 90 सेमी0 ऊँची है। दुर्गा प्रतिमा खण्डित है।

मदरहा, महुआ में फाल्गुन, शिवरात्रि के अवसर पर मेले का आयोजन किया जाता है। यहाँ भी देवी-देवताओं की मूर्तियाँ पड़ी हुई हैं और बड़े गाँव एवं सोरना के बीच में पंचमुखी शिव स्थापित हैं। इनकी ऊँचाई लगभग 45 सेमी0 है।

डीपाडोल—कुसुमी से मझौली जाते समय मझौली से लगभग 3 किमी0 पूरब एक नाले के किनारे डीपाडोल नामक एक स्थान है। वहाँ एक नये मन्दिर का निर्माण वहाँ के वयोवृद्ध रामनाथ द्वारा किया गया है। मन्दिर के पास एक वृक्ष के नीचे उबड़-खाबड़ काले पत्थर की कुछ मूर्तियाँ स्थापित कर दी गयी हैं, जिन्हें रामनाथ जी शंकर-पार्वती का प्रतीक मानते हैं। यहाँ स्थापित शिव-प्रतिमा का आकार 1.35x.44 सेमी0 है। यानी यह मूर्ति नीचे पतली और बीच में सबसे मोटी और ऊपर जाकर पुनः पतली हो गयी है। बीच का भाग दबा हुआ गहरा है। पार्वती जी की मूर्ति पेड़ के नीचे स्थापित की गयी है।

यह मूर्ति लगभग 125x40 सेमी0 आकार की है। जो वहीं नाले से स्वप्न होने पर निकाली गयी थी।

दोरज की हनुमान मूर्ति–सीधी से लगभग 90 किमी0 दूर चितरंगी तहसील में दोरज नामक गाँव एक पहाड़ी के समीप बसा है। इस गाँव के एक पहाड़ी पर बजरंगबली की एक पुरानी मूर्ति स्थापित है। पहाड़ी की ऊँचाई लगभग 100 मीटर है। पत्थर की यह कलात्मक मूर्ति लगभग 1.80 मी0 ऊँची है। कहते हैं यहाँ कोई पुराना मन्दिर था जो कालांतर में विनष्ट हो गया।

इस स्थान के बारे में ऐसा कहा जाता है कि तीर्थयात्री यात्रा के समय स्थान–स्थान पर पड़ाव बना कर रहते थे। वहीं वे मूर्तियाँ टाँकी, हथौड़ी से बनाते थे। सम्भवतः ऐसी मान्य परंपरा रही होगी कि प्रत्येक यात्री के लिए मूर्ति और मन्दिर बनाना अनिवार्य कर दिया गया हो।

पौड़ी–सीधी–जनकपुर मार्ग पर सीधी से जनकपुर जाते समय दाहिने हाथ और जनकपुर से सीधी आते समय बाएँ हाथ सड़क से लगा पौड़ी नामक गाँव में एक पुराना मन्दिर एक पहाड़ी पर बना हुआ है। ऐसा लगता है कि 14वीं शताब्दी में यहाँ कोई विशाल मन्दिर बना होगा। मन्दिर के मुख्य द्वार पर गणेश प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। मन्दिर का आकार 1.25x.67 सेमी0 है। गणेश मूर्ति 5x6 सेमी0 के आकार की छोटी है। सामने स्थापित नन्दी की मूर्ति खण्डित है। समीप में एक मूर्ति दीवार के नीचे नव निर्मित मन्दिर के बायीं ओर जड़ी हुई है जिसका आकार .53x.22x.30 मीटर है। इसी प्रकार दाहिनी ओर भी एक मूर्ति दीवार में जड़ी है, जिसका आकार .70x.38 मीटर है। चबूतरा सहित मन्दिर का आकार 3.20x3.25 मीटर का है। मन्दिर की ऊँचाई लगभग साढ़े चार मीटर है। आस–पास कई कलात्मक प्रस्तर–खण्ड बिखरे पड़े हैं। .57x.65 के आकार का एक कलात्मक प्रस्तर–स्तम्भ भी देखा गया जो तांत्रिक प्रतीक मालूम होता है। यहाँ एक वृक्ष के नीचे शिवजी का खण्डित मस्तक देखा गया जिससे ऐसा लगता है कि शिव–पार्वती की कोई सुन्दर प्रतिमा प्रतिष्ठापित रही होगी। टीले का अनुमानित आकार 80x55 मीटर है। मुख्य मन्दिर से हटकर कुछ छोटे–छोटे मन्दिरों के अवशेष भी देखे गए। ऐसा

लगता है कि मुख्य मन्दिर के चारों ओर छोटे–छोटे मन्दिरों का निर्माण किया गया होगा। यहाँ एक विशाल कलश देखा गया जिसका आकार .81x.81x.35 मीटर मापा गया। द्वारिका प्रसाद (शिक्षक) से ज्ञात हुआ कि यहाँ शेर की भी एक सुन्दर मूर्ति थी जो चोरी चली गयी।

बढ़ौरानाथ–सीधी से लगभग 18 किमी0 दूर बढ़ौरानाथ नाम का एक स्थान है जहाँ शिवरात्रि एवं वसंत पंचमी के अवसर पर आंचलिक मेले का आयोजन किया जाता है। वैसे हर त्रयोदशी को भी यहाँ मेला लगता है। बढ़ौरानाथ की मान्यता अन्नोत्पादन वृद्धि के लिए प्रसिद्ध है। इनके बारे में कहा जाता है कि जमीन के भीतर से इनका प्राकट्य हुआ है। आदिवासियों में मिट्टी व पत्थर के बने बढ़ावन देव की पूजा आज भी प्रचलित है।

यहाँ दो शिवलिंगों की स्थापना की गयी है जो एक ही साथ एक ही स्थान से एक ही आकार–प्रकार में प्राप्त हुए थे। इन पंक्तियों के लेखक को पहली बार चौकोर शिवलिंग के दर्शन हुए। जलहरी को सम्मलित करते हुए शिवलिंग का आकार 20x20x15 सेमी0 है। अर्घे में लाल रंग के पत्थर के नाग देवता बने हुए हैं। यहीं एक और मूर्ति महाकाली की है जिसका आकार 20x12 सेमी0 है। इसी प्रकार नन्दी, शिव, गणेश की मूतियाँ भी स्थापित हैं। मलमास में यहाँ एक माह का मेला लगता है। यहीं पीपल के वृक्ष तले 30x22x17 सेमी0 आकार का एक और शिवलिंग स्थापित है।

बरौंधा–देउरा घाट से लगभग तीन किमी0 पश्चिम बरौंधा नामक पुरानी बस्ती है। यहाँ खण्डर के रूप में गढ़ी का ध्वंसावशेष विद्यमान है। इस क्षेत्र में विवाह के अवसर पर बनियों में गोतियाई (भाई गोती में) न्योते में साबुन की छोटी टिकिया बाँटने की परंपरा प्रचलित है। यह सुपारी का स्थानापन्न है। यहाँ के बनिये गन्दे कपड़े पहनते थे। वे इतने गरीब थे कि साबुन का इस्तेमाल कर ही नहीं सकते थे। अतः साबुन की टिकिया बाँटने की प्रथा का श्रीगणेश हुआ।

महुआर–सीधी, सिंगरौली, चितरंगी मार्ग पर लउवा से लगभग 2 किमी0 दूर महुआर नाम के एक गाँव के तालाब के किनारे एक शिव–मन्दिर

बना हुआ है। मन्दिर के अन्दर हरे चिकने पत्थर का 65 सेमी0 के व्यास का एक सुन्दर शिवलिंग प्रतिष्ठित है। यहीं एक दूसरा शिवलिंग खुरदुरे पत्थर का 65 सेमी0 व्यास का स्थापित है। इस मन्दिर में एक दूसरी मूर्ति 25x12 सेमी0 आकार की है। यहाँ की प्रायः सभी मूर्तियाँ पुरानी और उनका समय ग्यारहवीं शताब्दी के आसपास प्रतीत होता है। मन्दिर के बाहर बायीं ओर कुछ अन्य मूर्तियाँ भी जमीन पर पड़ी हुई हैं। यहाँ एक स्तम्भ 2.10x.37 मी0 चौड़ा खड़ा है जिसका कुछ भाग जमीन के अन्दर है। इस पुराने कलात्मक पत्थर पर हथेली की आकृति बनी हुई है। बीच में शिलालेख खुदा है जो अस्पष्ट एवं अपाठ्य है।

मझौलीं–मझौलीं तहसील सीधी से 48 किमी0 पूरब दक्षिण की ओर स्थित है। स्थापत्य की दृष्टि से यह स्थान महत्व का है।

हनुमान मन्दिर–मझौली में हनुमान जी का एक मन्दिर है, जिसमें 48x40 सेमी0 के आकार की हनुमान प्रतिमा स्थापित है। यह मूर्ति पुरानी है। इसी मन्दिर में शिवलिंग, नन्दी की प्रतिमाएं भी स्थापित की गयी हैं। इसके अतिरिक्त राम, लक्ष्मण, जानकी और हनुमान जी की मूर्तियाँ भी स्थापित हैं। हनुमान जी की प्रतिमा 50 सेमी0 लम्बी है। राम–सीता मुट्ठी बाँधे हुए हैं। मन्दिर में लगाए गए दरवाजे और चौखट की कला अत्यंत सुन्दर है। उसमें एक–एक अंगुल पर नक्काशी की गयी है। लकड़ी पर नक्कशी करके लोहे की फुलिया लगा कर उसे चौखट में जड़ दिया गया है।

शिव–मन्दिर–मझौली बाजार में एक ओर लगभग 200 वर्ष पुराना मन्दिर मिला है। उसमें शिवलिंग एक अर्घे में स्थापित किया गया है जिसका आकार 65x42 सेमी0 है। पत्थर अत्यंत चिकना तथा हरित आभा वाला है। मन्दिर 5.20x3.72 सेमी0 के आकार का है। इसमें लगी ईंटें 30x17x4 सेमी0 के आकार की हैं। ये ईंटें अधपकी हैं। मन्दिर में पत्थर की सुगिया चारों ओर से लगायी गयी है।

माड़ागुफा–प्राचीन काल में जब छापेखानों का आविष्कार नहीं हुआ था तब भी मनुष्य ने अपनी संस्कृति को सुरक्षित रखने के लिए अनेक उपाय

सोचे और किए। उसने चट्टानों पर अपने संदेश खोदे, ताड़ों से ऊँचे धातुओं से चिकने पत्थर के खम्भे खड़े किए। ताँबे और पीतल के पत्तरों पर आदर्श वाक्य लिखे। सभ्यता का विकास होने के साथ जब वे प्राकृतिक गुफाएँ भी असुरक्षित हो गयीं और मानव जीवन बाधित होने लगा तो उन्होंने पहाड़ काट कर उसमें अपने आवास बनाने शुरू किए। पहाड़ों को काट कर आवास और मन्दिर बनाने की परंपरा लगभग सवा दो हजार वर्ष पुरानी है। अजन्ता की गुफाएँ पहाड़ काट कर बनायी जाने वाली देश की सबसे प्राचीन गुफाओं में से हैं। एलोरा और एलीफैंटा की गुफाएँ भी सबसे पिछले काल की हैं।

सीधी के बैढ़न तहसील से लगभग 30 किमी0 दूर दक्षिण की ओर कैमूर की पहाड़ियों में पहाड़ खोदकर कमरे बनाए गए हैं जो मन्दिर नुमा और उनमें कलात्मक एवं एक से एक सुन्दर मूर्तियाँ उत्कीर्ण की गयीं हैं जो निम्नवत् हैं—

रावणमाड़ा–पहाड़ के दक्षिणी भाग को रावण माड़ा के नाम से पुकारा जाता है। लोगों का कहना है कि इस गुफा में रावण रहता था। इस गुफा के प्रवेश द्वार से बायीं ओर एक अत्यंत सुन्दर कलात्मक रावण की मूर्ति उत्कीर्ण है। बरामदे की बायीं दीवार में उत्कीर्ण यह मूर्ति पहाड़ को खोदकर बनायी गयी है। दोनों पाँव पीछे की ओर मोड़ कर वीरासन मुद्रा में बनी यह मूर्ति कई दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पीठ और पाँव को देखने से लगता है कि यह मूर्ति उल्टी बैठी है किन्तु सिर को देखने से लगता है सीधी है। इस एक विशाल मूर्ति के साथ अन्य मूर्तियाँ भी उत्कीर्ण हैं, जिसके बारे में स्थानीय लोगों ने बताया कि यहीं रावण का परिवार है। मूर्ति में आठ–आठ हाथ यानी कुल 16 हाथ स्पष्ट दिखलाई पड़ते हैं। गले में हार सुशोभित है और कमर में करधनी बँधी है। कानों में कुंडल और शरीर में कलात्मक परिधान हैं। सभी मूर्तियाँ नंगे पाँव हैं। नर मूर्तियों के अतिरिक्त शेर, बंदर, भालू के चित्र भी उत्कीर्ण हैं। हाथों में अस्त्र–शस्त्र भी दिखलाई पड़ते हैं। वीर हाथों पर जैसे पूरे नगर को उठाए हुए हैं।

इसी गुफा में द्वार पर द्वारपालों की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। एक मूर्ति गणेश

की देखी गयी। शिव–ताण्डव का दृश्य उत्कीर्ण है। इस गुफा के दोनों ओर कई मूर्तियाँ बनायी गयीं हैं। इसी प्रकार हर प्रवेश द्वार के सामने दोनों ओर मूर्तियाँ खोदी गयी हैं जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. पहली मूर्ति 1.75x1.75 मी0, 2. द्वारपाल मूर्ति 1.10x.66 मी0, 3. द्वारपाल 1.10x.66 मी0, 4. बरामदा 1.50x.68 मी0, 5. स्तम्भ 2 मी0 लम्बा है।

कुल स्तम्भों की संख्या 12 है। 6 बाहर हैं और 6 भीतर। हर स्तम्भ 1.75x1.75 मी0 का है। प्रवेश द्वार 1.50x1.10 मी0, भीतर के कमरे 2.40x2.40 मी0 के हैं। यहाँ मकरोहर नामक स्थान पर एक पुराना पोखरा बना हुआ है जिसके बारे में किम्बदन्ती है कि इसे रावण ने एक ही रात में स्वयं खोदकर बनाया था।

भूताली–रावण–माड़ा से उत्तर की ओर थोड़ी ही दूर पर भूताली नाम का एक स्थान है। यहाँ झरना है और उससे सुन्दर जल–प्रवाह होता रहता है। झरने का जल अत्यंत निर्मल, सुस्वादु और स्वास्थ्यकर है। इस स्थान के बारे में जनश्रुति है कि यहाँ कभी भयंकर भूत और नाग दोनों रहते थे। भूत और नाग देवता दोनों ही यहाँ से कहीं दूर चले गये और सन् 1960 से यहाँ दिखलाई नहीं पड़े।

जलजलिया–भवानी–माड़ागुफा से दाहिनी ओर थोड़ी ही दूरी पर एक स्थान जलजलिया भवानी के नाम से जाना जाता है। यहाँ लगभग 15 मी0 ऊँची पहाड़ी के अन्दर से जल का श्रोत निकल कर सदा प्रवहमान रहता है। यह बहुत ही स्वच्छ और निर्मल है। यहाँ का जल–स्रोत कभी न घटता और न बढ़ता है। यहाँ एक गुफा है जिसके ऊपरी दीवार पर विष्णु और लक्ष्मी की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। ये मूर्तियाँ भी पहाड़ में पत्थर को खोदकर बनायी गयी हैं। विष्णु की मूर्ति 70x62 सेमी0 के आकार की है और लक्ष्मी की मूर्ति 40x25 सेमी0 के आकार की। ये सभी गुफाएँ बलुआ खुरदुरे पत्थर की चट्टानों को खोदकर बनायी गयी हैं। इस पत्थर की यह विशेषता है कि इसे जितना खोदा जाएगा उतना ही वह कट कर अलग होगा। इस गुफा से लगभग 10 किमी0

दाहिने एक अन्य पहाड़ी है जिसके सामने के पत्थर को खोदकर छोटा सा कुंड बना दिया गया है जिसमें बरसात का पानी भरता रहता है। इसके एक किनारे 38 सेमी0 लंबा, 38 सेमी0 चौड़ा एक सुरंग का द्वार देखा गया जिसके बारे में वहाँ के निवासी श्री कैलाश प्रसाद ने बताया कि भीतर से यह सुरंग काफी लंबी-चौड़ी है और इसी सुरंग से प्रवेश करके यहाँ के सभी गुफाओं के अंदर जाया जा सकता है।

तीसरी गुफा-इस स्थान से लगभग 100 मी0 उत्तर की ओर इसी पहाड़ी के एक सिरे पर एक अन्य गुफा बनायी गयी है जिसे 'विवाह माड़ा' के नाम से जाना जाता है। इस गुफा का अकार बरामदे के माप के अनसुार 16.2 मी0 है। इस गुफा के दोनों ओर दीवारों पर मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। यहाँ की एक मूर्ति 1.5 मी0 है। बायीं ओर शिव जी को त्रिशूल लिए हुए दिखाया गया है। पूरी गुफा लगभग 15 मी0 लम्बी और 4.8 मी0 ऊँची है। इस गुफा में छोटे-छोटे कक्षों का निर्माण किया गया है जो औसतन दो-दो मी0 के हैं। इस गुफा के ऊपर शिलाखण्ड के सहारे गणेश जी की मूर्ति बनायी गयी है जो 1 मी0x.85 मी0 की हैं। प्रवेश द्वार 1.80x1.80 मी0 का है। जिस शिला पर गणेश प्रतिमा उत्कीर्ण है उसका आकार 3x3x1.5 मी0 है। गणेश की मूर्ति चतुर्भुजी है। उनके एक हाथ में माला, दूसरे में लड्डू, तीसरे कुल्हाड़ी और चौथा हाथ पांव के घुटने पर है। उनके दोनों कान सूप के आकार के हैं। वे लम्बोदर हैं और सिर पर मुकुट धारण किए हुए हैं। इस गुफा से कुछ ही दूर दक्षिण-पश्चिम की ओर एक अन्य गुफा भी है जिसका आकार 22.5 मी0 है। इसमें भी कुछ कलात्मक मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। अमावस्या के अवसर पर यहाँ मेला लगता है।

चौथी गुफा-तीसरी गुफा से थोड़ी दूरी पर एक चौथी गुफा है जिसमें शिव-ताण्डव का दृश्य देखने योग्य है। शिव जी को विलक्षण मुद्रा में दर्शाया गया है। मूर्ति का आकार 1.50x1.5 मी0 है। यह मूर्ति 7.2 मी0 है तथा कमर टेढ़ी है, चितवन बांकी है। इस मूर्ति को देखकर श्रीकृष्ण की त्रिभंगी मूर्ति का स्मरण हो जाता है। मूर्ति का एक हाथ कमर के नीचे है तो दूसरा हाथ

त्रिशूल लिए हुए तथा तीसरे हाथ में नाग देवता हैं, जो दूसरी ओर के हाथ में सर्प लिपटे हुए हैं और चौथा हाथ कनपटी पर है। पाँचवाँ हाथ बायीं ओर की कनपटी पर दिखलाया गया है। दूसरे हाथ में नाग, तीसरे हाथ में डमरू है और मुद्रा त्रिभंगी है। दाहिनी ओर एक अन्य मूर्ति पड़ी हुई है जो 60 सेमी0 लंबी और .40 मी0 चौड़ी है। यह मूर्ति हनुमान की है और अत्यंत सुन्दर है। इसके बायीं ओर भी एक मूर्ति 65x42 सेमी0 के आकार की है। घिसी होने के कारण स्पष्ट नहीं होता कि वह मूर्ति किसकी है। गुफा का आकार 1.65x1.05 मी0 है। इसी गुफा में भीतर की ओर एक अन्य गुफा 2.1x2.1 मी0 के आकार की बनी हुई है।

पाँचवीं गुफा–यह गुफा 4.2x3x1.8 मी0 के आकार की है जो एक शिलाखण्ड को खोदकर बनायी गयी है। ऐसा लगता है कि ऊपर का हिस्सा टूट कर नीचे चला गया है जिसके कारण गुफा का द्वार बीच से बंद हो गया है, किन्तु इस टूटे हुए शिला के दोनों ओर से गुफा के अन्दर जाने का रास्ता बना हुआ है। इस गुफा के अन्दर शिला को खोदकर त्रिदेव प्रतिमा उत्कीर्ण है। अर्थात् एक ही पत्थर पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश की आकृतियाँ खुदी हुई हैं। बीच की मूर्ति का आकार 1.65x.9 मी0 है। बायीं ओर की दूसरी मूर्ति त्रिनेत्र भगवान शिव की है जिसका आकार 1.20x.65 मी0 है। गले में माला और सर्प स्पष्ट उत्कीर्ण हैं। दाहिने ओर की तीसरी मूर्ति का आकार 1.10x.64 मी0 है। ये तीनों मूर्तियाँ पूरे आकार में उत्कीर्ण नहीं हैं। अपितु कमर से ऊपर ही उत्कीर्ण हैं। ये मूर्तियाँ यदि पूरे आकार की बनायी गयी होतीं तो अत्यंत विशाल और अनोखी दिखलाई पड़तीं। इनको देखने से ऐसा लगता है कि ये अब बोलना ही चाहती हैं। गुफा का द्वार 1.5 मी0 ऊँचा है। प्रवेश द्वार के दोनों ओर वीर प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं जो 1.5x.49 मी0 आकार की कलात्मक हैं।

छठवीं गुफा (विवाह माड़ा)–विवाह माड़ा की गुफा लगभग 1 किमी0 पश्चिम पहाड़ी के ऊपर घने जंगलों के बीच अवस्थित है। इस गुफा के तीनों ओर काफी ऊँची पहाड़ियाँ हैं। इसके सामने से एक नाला बहता है।

गुफा लगभग 22.5 मी0 की ऊँचाई पर एक पहाड़ी को खोदकर बनायी गयी है। इसमें कई कोठरियाँ बनी हैं जिनका आकार 2.2x2.2 मी0 है। यह पूरी गुफा तीन भागों में बँटी हुई है जिसमें तीन बरामदे हैं। पहली गुफा के कमरों का आकार 2.15x2.15x2.15 मी0 है। सामने के बरामदे का आकार 9x1.3 मी0 है। इसके खम्भे 60x60 सेमी0 हैं। तीसरे कक्ष का बरामदा भी लगभग उतना ही बड़ा है। इसमें भीतर की ओर कुछ कक्षों का निर्माण किया गया है जिनका आकार पूर्व वर्णित कमरों के अनुसार है। दरवाजा 1.5 मी0 ऊँचा है। तीनों ही गुफाएँ एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। बीच में दीवारे बनी हुई हैं। द्वार के बरामदे के स्तम्भों की संख्या 6 है। सभी स्तम्भ कलात्मक हैं और उन पर मूर्तियाँ खुदी हुई हैं।

इसके दाहिनी ओर भी उतनी ही बड़ी और वैसी ही बनी हुई तीसरी गुफा है जिसके भीतरी भाग में छोटे—छोटे कमरे बने हुए हैं। इस गुफा का प्रवेश-द्वार काफी सुन्दर और कलात्मक है। तीनों गुफाओं के सामने बैठने के लिए पर्याप्त स्थान छोड़ा गया है। इसके सामने के चबूतरे के दोनों ओर की शिलाओं पर कलात्मक मूर्तियाँ बनायी गयी हैं। बीच की गुफा में प्रवेश-द्वार के ठीक सामने दो मूर्तियाँ बनायी गयी हैं। ये मूर्तियाँ 1.5x.9 मी0 हैं। पूरी गुफा के ऊपर शिला को तराश कर बैठने के लिए चौतरा बना दिया गया है। चौतरे के पीछे भी बरामदा युक्त एक अन्य गुफा बनी हुई है। बरामदे को खम्भों से जोड़ दिया गया है। यह गुफा काफी सुन्दर कलात्मक और आकर्षक है। इस प्रकार यह पूरी गुफा दो छतों में बनी है। ऊपर की गुफा में तीन छोटे-छोटे कक्षों का निर्माण किया गया है जिनका आकार 2.4x2.4 मी0 है। ऊपर की गुफा में भी कुछ कलात्मक और सुन्दर मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं।

तराई में हनुमान मूर्ति-चितरंगी तहसील में ही तराई नामक गाँव में हनुमान जी की एक पुरानी मूर्ति स्थापित है। यहाँ के मन्दिर का निर्माण श्री छोटेलाल सिंह ने कराया है। यह मूर्ति बालन्द के समय की है। इसका आकार 95x45 सेमी0 है। रीवां के राजा गुलाब सिंह ने इस मूर्ति की जागरूकता को देखते हुए उसे रीवां ले जाकर अपने मंडल के अदर प्रतिष्ठित करने का प्रयास

किया था। उसे ले जाने के लिए एक हाथी लाया गया। मूर्ति को उठाकर हाथी पर लादने के अनेक प्रयास किए गए किन्तु मूर्ति टस से मस नहीं हुई। तब उसे वहीं एक पेड़ के नीचे छोड़ दिया गया। जहाँ वह आज तक यथावत् पड़ी हुई है।

राजगढ़–राजगढ़ में मुख्य मार्ग के समीप एक तालाब के तट पर जो मंदिर स्थापित है उसके बारे में पूछताछ के बाद सम्पत पटेल ने बताया कि यह मन्दिर लगभग 400 वर्ष पहले बनाया गया था। इस मन्दिर के अन्दर छत की दीवारों पर गेरू रंग में तरह–तरह के रेखांकन किए गए हैं। वे अधिकतर नर्तक–नर्तकियों, योद्धाओं, हाथी–घोड़ों, मछली, वृक्ष, लताकुंजों, यात्रा–प्रसंगों, गमला आदि के हैं। ये चित्र बड़े ही साफ सुथरे और सुन्दर हैं। ये वैसे तो प्रागैतिहासिक कालीन चित्रों के अनुकरण पर बनाए गए हैं, किन्तु ये हैं बाद के ही, लगभग 200 वर्ष पुराने। अधिकतर चित्र युद्ध के हैं। योद्धाओं के हाथ में तलवार, धनुष–बाण है।

मन्दिर भीतर से 2.85 मीटर लंबा और उतना ही चौड़ा है। मन्दिर की दीवार 85 सेमी0 मोटी है। प्रवेश द्वार पूर्व की ओर है जिसके सामने तालाब है। दरवाजा भी पत्थर का बना है जिसका आकार 1 मी0 60 सेमी0 ऊँचा है। मन्दिर का निर्माण सुर्खी–चूना के मशाले से जोड़कर किया गया है। मंदिर के भीतर निम्नलिखित प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं—

1. पार्वती जी 87x30 सेमी0, 2. शिवलिंग–अर्घ के अन्दर कुल 5 शिवलिंग स्थापित हैं। प्रत्येक की ऊँचाई 13 सेमी0 है। 3. गणेश वाहन चूहा 54x25x22 सेमी0 के आकार का है। 4. गणेश प्रतिमा 37x25 सेमी0 के आकार की है।

अधिकतर मूर्तियाँ काले चिकने पत्थर की हैं। ये मूर्तियाँ 13वीं शताब्दी की बनी होंगी जिन्हें यहाँ स्थापित करके मन्दिर का पुनर्निर्माण किया गया होगा। यहाँ हनुमान जी की एक प्रतिमा 80x45 सेमी0 की स्थापित है। नन्दी प्रतिमा एक मी0 लंबी 67 सेमी0 चौड़ी और 42 सेमी0 ऊँची है। भैरव की प्रतिमा 45x30 सेमी0 के आकार की है। प्रवेश–द्वार पर प्रतिष्ठित गणेश–प्रतिमा

30x25 सेमी0 है। मन्दिर के बाहर की दीवारं पर चित्ताकर्षक उभड़ी हुई कलात्मक मूर्तियाँ बनायी गयीं हैं। मन्दिर में परिक्रमा करने के लिए चारों ओर से गलियारा बना हुआ है। बाहर से मन्दिर का आकार 11 मी0 लंबा, 9.25 मी0 चौड़ा है। मन्दिर के बाहरी दीवारों पर भी जो चित्र बने हैं उनमें से अधिकतर नृत्य–मुद्रा में हैं। मन्दिर की अनुमानित ऊँचाई 7 मी0 है। इस मन्दिर के पार्श्ववर्ती 4 अन्य मन्दिर भी बने हैं जिनका निर्माण अभी हाल में किया गया है और उनमें भी नयी पुरानी मूर्तियाँ स्थापित हैं।

लउवा देवी–सीधी जिला मुख्यालय से लगभग 36 किमी0 दूर लउवा नामक एक गाँव बसा है। यहाँ देवी की एक प्रतिमा प्रतिष्ठित है जिसके बारे में ऐसी मान्यता हैं कि यह देवी सप्त देवियों में से एक हैं यहाँ चैत रामनवमी के अवसर पर मेला लगता है। भक्त अपनी जीभ काट या छेद कर भक्ति प्रकट करते हैं, विश्वास है कि लगभग 3 सेमी0 कटी हुई जीभ 12 या 24 घंटे के अंदर देवी की कृपा से पुनः यथावत् हो जाती है। कटी हुई जीभ दूध में डाली जाती है। वह दूध में ही घुलती है और दूध में ही घुलकर दूध बन जाती है और उधर कटी हुई जीभ पूरी हो जाती है। इस देवी की स्थापना एक मन्दिर में दीवार के अन्दर की गयी है। मूर्ति की बायीं ओर एक जिह्वा है। नवरात्र में कटी हुई जीभ 12 घंटे में पूरी हो जाती है। जिसे पुत्र नहीं होता या जिसके ऊपर अन्य कोई बाधा होती है, वह देवी के धाम में आकर मनौती करता है और मनौती पूरी होने पर अपनी जीभ काटकर चढ़ाता है और इस प्रकार यह देवी इस पूरे क्षेत्र में बहुत ही पूज्य मानी जाती हैं। देवी की मूर्ति एक तालाब के तट पर स्थापित है। मन्दिर के बाहर कुछ और मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। सामने के एक अन्य मन्दिर में हनुमान जी की विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यहाँ की मूर्तियों का विवरण निम्नवत् है—

क्र0	मूर्ति का नाम	आकार	पत्थर का रंग–रूप	अन्य
1.	**हनुमान जी**	1.70 मी0 लंबा 80 सेमी0 चौड़ा	भूरा, खुरदुरा	गदा, पर्वत हाथ में

2.	**दुर्गा जी**	70x25 सेमी0	पुराना	चतुर्भुजी
3.	**जिह्वा**	15x8 सेमी0	पुराना	
4.	**युगल मूर्ति देवी**	60 सेमी0		पाँव के नीचे असुर
5.	**वीर प्रतिमा**	40x52 सेमी0	धनुर्धर, सफेद	कछनीकाछे एवं कुंडल धारण किए हुए।
6.	**वीर प्रतिमा**	60x25 सेमी0	भूरा–पुरानी	आल्हा–उदल जैसी
7.	**अन्य मूर्ति**	48x14 सेमी0	सफेद	

शिकारगंज (भवरसेन)–रीवां–सीधी मुख्य मार्ग से लगभग 6 किमी0 दक्षिण भवरसेन नाम का एक स्थान है। यहाँ सोन के तट पर पहाड़ियों के बीच एक गढ़ी का निर्माण किया गया है। कहते हैं महा राजा गुलाब सिंह यहाँ आकर शिकार खेलते थे। यहाँ से नदी पार करके चन्द्रेह पहुँचा जा सकता है।

यहाँ का बना स्थापत्य लगभग 200 वर्ष पुराना है जो अब पी0डब्ल्यू0डी0 के डाक बंगले के रूप में बदल गया है। मन्दिर की दीवारें चौड़ी हैं। ईंटों का आकार 22x17 सेमी0 है। नदी तक जाने के लिए गढ़ी और मन्दिरों के बीच से पक्का मार्ग बना हुआ है। मन्दिर के स्थान पर चौकोर चौतरे बने हुए हैं। इसी प्रकार गढ़ी का निर्माण बहुत मजबूत है। कुल 3 कक्षों का निर्माण हुआ है तथा इसकी दीवारें काफी मजबूत और मोटी हैं।

सन्यासी बाबा–रामपुर तहसील में मुख्य मार्ग पर मुर्तला नामक गाँव में सन्यासी बाबा का एक स्थान है जिसके बारे में बताया गया कि लगभग 300 वर्ष पूर्व यहाँ एक संन्यासी बाबा हुए थे। उन्होंने यहाँ एक तालाब खुदवाया था। तालाब बनने के उपरांत ही उन्होंने उसके भीटे पर शरीर त्याग कर दिया था। अब यहाँ एक लाल रंग के पत्थर का अर्घा है जिसका आकार 121x91x20 सेमी0 है। इसी के समीप एक षट्कोण मन्दिर का भग्नावशेष है। कहते हैं संन्यासी बाबा आज भी इसी मन्दिर में रहते हैं और जब कोई भक्त इनका स्मरण करता है तो उसकी मनोकामना पूरी कर देते हैं।

बढ़ौली–बढ़ौली नामक स्थान पर, जो शहर से 3 किमी0 दूर है, एक पुराना ध्वंसावशेष मन्दिर देखा गया जिसमें कई दुर्लभ और पुरानी मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। मन्दिर के नीचे सुरंग भी देखी गयी। यहाँ की मूर्तियों का विवरण निम्नलिखित है–

सिंहवाहिनी दुर्गा–यहाँ दुर्गा की बड़ी सुन्दर और कलात्मक मूर्ति स्थापित है, जिसका पत्थर सफेद है किन्तु पानी पड़ते–पड़ते काला पड़ चुका है। दोनों ओर दो बाहुओं में चार–चार हाथ, यानी दुर्गा की यह अष्टभुजी मूर्ति है। बाएँ हाथों में कमण्डल, धनुष, ढाल, कवच तथा दाहिने हाथों में भी कोई न कोई प्रतीक है। देवी शेर के ऊपर छतरी पर आसीन हैं, बायाँ पाँव नीचे और दाहिना पद्मासन मुद्रा में मुड़ा हुआ है।

मन्दिर के बाहर दाहिनी ओर कुछ मूर्तियाँ और प्रस्तरखण्ड रखे हुए हैं जिनमें से एक शिलालेख है। शिलालेख में अंकित अन्य बातें स्पष्ट नहीं होती, किन्तु उसमें निर्माण काल सम्वत् 1404 अंकित है। यहाँ शिवलिंग तथा 3 फिट के लंबे खड़े पत्थर पर देवी–देवताओं की मूर्तियाँ बनी हुई हैं जो तांत्रिक अथवा मिथुन हैं। एक लगभग ढाई फिट ऊँचे प्रस्तर–खण्ड पर चारों ओर से मूर्तियाँ बनी हुई हैं। कला की दृष्टि से ये मूर्तियाँ भी काफी सुन्दर हैं। इस मन्दिर के बाएँ इसी मन्दिर का एक दूसरा कक्ष है जिसमें कई छोटे–छोटे प्रस्तर खण्ड और उनमें बनी कई छोटी–छोटी मूर्तियाँ देखी गयीं। उसके सामने एक विशाल शिवलिंग स्थापित है।

फूलमती मन्दिर–इस मन्दिर से कुछ ही दूरी पर फूलमती मन्दिर निर्मित है, जिसमें माँ दुर्गा की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यह सीधी से अमहा मुहल्ला में है। मूर्ति 54x27 सेमी0 ऊँची है। कला की दृष्टि से यह मूर्ति महत्वपूर्ण है। इसका निर्माण काल ग्यारहवीं शताब्दी के आस–पास प्रतीत होता है। यहीं पर एक धनुर्धर की मूर्ति स्थापित है जो 60x34 सेमी0 है। इसके अतिरिक्त हनुमान जी की एक मूर्ति 45x30 सेमी0 के आकार की है। यहाँ देवी–देवताओं की और भी छोटी–बड़ी मूर्तियाँ देखी गयीं। एक शिवलिंग भी यहाँ 25x12 सेमी0 के आकार का अर्घे में स्थापित है।

करौंधिया शिवलिंग–नगर से थोड़ी दूर पर नाला पार करने के बाद एक मन्दिर करौंधिया शिवलिंग के नाम से जाना जाता है। शिवलिंग 30 सेमी0 ऊँचा एक अरघे में स्थापित है। इस स्थान को मुन्नीबाई कोलोनी के नाम से जाना जाता है। मुन्नीबाई एक नर्स थीं, जिन्होंने इस शिवलिंग को भेड़ा घाट (जबलपुर) से ले आकर यहाँ स्थापित किया था। यह मूर्ति वहाँ के एक कुंड से निकालकर लायी गयी है। इस कुंड के बारे में ऐसी मान्यता है कि लोग (भक्तगण) श्रद्धा और भक्ति से मूर्ति प्राप्त करने की कामना से जब डुबकी लगाते हैं तो उन्हें कोई न कोई मूर्ति मिल जाती है, उसकी स्थापना यथा–स्थान श्रद्धा–भक्ति से की जाती है।

कलेक्टरेट में मूर्तियों का संग्रह–सीधी के भूतपूर्व जिलाधीश ने आस–पास के विभिन्न स्थानों से लाकर अपने कक्ष में कुछ मूर्तियों का संग्रह किया है जो कला की दृष्टि से बड़ी महत्वपूर्ण हैं। समेंकित मूर्तियों का विवरण इस प्रकार है—

क्र0सं0	**मूर्ति का नाम**	**खण्डित/ अखण्डित**	**पत्थर का आकार**	**अनुमानित समय**
1.	नन्दी	अखण्डित	54x33 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
2.	विष्णु	खण्डित	95x60 सेमी0 सफेद गुलाबी	मध्यकाल
3.	युगलमूर्ति यक्ष	अखण्डित	60x45 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
4.	विष्णु (स्तम्भ खण्ड में)		45x33 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
5.	विष्णु	संयुक्त प्रतिमा	45x25 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
6.	देवी प्रतिमा	अखण्डित	32x22 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
7.	गणेश	अखण्डित	60x32 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
8.	विष्णु	अखण्डित	56x32 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
9.	गणेश	अखण्डित	43x32 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
10.	देवी मूर्ति	अखण्डित	66x47 सेमी0 सफेद	मध्यकाल
11.	विष्णु	खण्डित	90x60 सेमी0 सफेद	मध्यकाल

इसके अतिरिक्त बरामदे में क्रमशः दो गुलाबी रंग के स्तम्भ खण्ड पड़े हुए हैं। एक पर शिलालेख है जो सुपाठ्य नहीं है। दूसरे स्तम्भ में रेखांकन किया गया है और अश्वारोही के साथ दो युगल मूर्तियां निर्मित हैं। इसके पत्थर का रंग सफेद है।

हरचौका–सीधी जनकपुर मार्ग पर मवई नदी के बाएँ तट पर बनास के समीप नदी पार करने के बाद जनकपुर से लगभग एक किमी० पहले हरचौका नामक एक स्थान महत्वपूर्ण है। सीतामढ़ी की ही तरह यहाँ भी चट्टान खोदकर कक्ष और मन्दिर बनाए गए हैं। मूर्तियों का निर्माण नदी की ओर है जहाँ से नदी की धारा मात्र 4.5 मीटर से अधिक नहीं है। प्रांगण 5x4x4 मीटर के आकार का है, लेकिन यह 3 खण्डों में अलग–अलग विभाजित है। शिव, पार्वती, हनुमान आदि की मूर्तियाँ चट्टान को खोदकर बनायी गयीं हैं। सीतामढ़ी में भी ऐसा ही है, किन्तु दोनों में अन्तर यह है कि सीतामढ़ी में खम्भे बने हुए हैं और यहाँ खम्भे नहीं हैं चट्टान की दीवार है और भीतर कक्ष। आंगन की कुल चौड़ाई 13.50 मीटर, इसका एक भाग 5 मी० 70 सेमी०। शिला की गुफा .15x15 मीटर। आंगन के सामने के चबूतरे 14x7 मीटर के दो हैं। सामने का चौक 2.70x1.50x2.90 मीटर। 1.40x1.25 मीटर गहरा। 1.75x1.70 मीटर दाहिने कक्ष। 3.60x4 मीटर बाएँ का कक्ष। पूरब की ओर से गुफा की ओर जाने के लिए सीढ़ियों का निर्माण किया गया है। उससे दक्षिण 1.70x1.85 मी० नीचे सीतामढ़ी की ही तरह सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। आंगन की छत खुली हुई है। गुफा के बरामदे में 7.50x2.75x1.75 मीटर के चार कक्ष, जिसके भीतर अर्घों में शिवलिंग स्थापित हैं। सभी शिवलिंग एक ही तरह के हैं। बाएँ भाग में बने कक्षों के ऊपर छत है जिसके नीचे एक कक्ष निर्मित है। इसका आकार 1.3x75x1.35 मीटर है। इसके अंदर किसी देवता की प्रतिमा बनी है जिसके दोनों कानों में कुण्डल, कमर में अर्धवस्त्र, गले में माला सुशोभित है। सामने के द्वार पर दोनों ओर प्रहणी की मूर्तियाँ खुदी गयी हैं। इसी प्रकार एक अन्य कक्ष 1.70x1.80 मीटर का है जिसके अन्दर शिवलिंग स्थापित है। इसके छत की ऊँचाई 1.40 मीटर है। द्वार का आकार .55x1.05 मीटर है। लगभग उसी आकार के अन्य चार कक्ष भी बने हैं। कक्ष में आराधना की मुद्रा

में कोई मूर्ति निर्मित है जिसका आकार .55x.30 मीटर है।

चट्टान बलुआ पत्थर की है, इसलिए सभी मूर्तियाँ उसी बलुआ पत्थर की चट्टान को खोदकर बनायी गयी हैं। अतः वे सभी खुरदुरी हैं। एक अन्य कक्ष में दुर्गा प्रतिमा प्रतिष्ठापित है, जिसका आकार 1.05x1.45 मीटर है। दुर्गा जी सिंह पर सवार हैं। इसी प्रकार एक और मूर्ति .65x.40 मीटर की है। एक अन्य प्रस्तर खण्ड 1x.55 मीटर का है जिसमें 5 देवी मूर्तियाँ खुदी हुई हैं।

यहाँ एक विष्णु की खण्डित प्रतिमा भी देखी गयी जिसका आकार .75x.40 मीटर है। इसका पत्थर सफेद चिकना है। पार्श्व भाग की गुफा 1.70x1.80x1.30 मीटर के आकार की है, जिसके अंदर अर्घे में शिवलिंग स्थापित है। इसी प्रकार एक अन्य गुफा 1.35x1x1.30 मीटर के आकार की है। शिव, पार्वती की प्रतिमा सुन्दर और कलात्मक है। वह लास्य रूप में है। इसका आकार 60x40 सेमी0 है। कान में कुण्डल, हाथ में शस्त्रास्त्र, गले में माला सुशोभित है। आंगन में दरवाजे की दीवार पर खुदी मूर्ति का आकार 95x95 सेमी0 है। एक हाथ में कमल दूसरे हाथ में आयुध है और अष्टभुजी है। यह मूर्ति 1.25 मीटर ऊँची है।

टीला–इस गुफा से लगभग 100 मीटर दूर दक्षिण–पूरब की ओर एक टीला देखा गया, जिसके ऊपर मन्दिर बना हुआ था। गिरे हुए मन्दिर की नींव का आकार 3.85x40 मीटर है। इसके सामने भी आंगन है। इसके सामने को सम्मिलित करते हुए आकार 7x40x6 मीटर है। इस टीले पर कई कलात्मक प्रस्तरखण्ड, जिनके ऊपर कलात्मक मूर्तियाँ भी बनी हैं, देखे गए। ऐसा लगता है कि पूरा मन्दिर अधिकतर कलात्मक पत्थरों को जोड़ कर बनाया गया था। प्रस्तर स्तम्भों में कलात्मक मूर्तियाँ बनी हुई हैं। एक प्रस्तर–खण्ड का आकार 1.30x.25x.30 मीटर है। सभी प्रस्तरखण्ड सफेद गुलाबी रंग के पत्थर के हैं। मन्दिर के अन्दर एक छोटा–सा शिवलिंग स्थापित है जो 70 सेमी0 के व्यास का है। सामने नन्दी–प्रतिमा 70x30x40 सेमी0 के आकार की है। एक अन्य नन्दी प्रतिमा 50x35x40 सेमी0 के आकार की है।

— ● —

प्रागैतिहासिक कालीन कला और संस्कृति

प्रागैतिहासिक कालीन संस्कृति और कला अब शोध का पृथक विषय है। विदेशों के अलावा अपने देश में भी शताधिक चित्रित शैलाश्रय प्राप्त हो चुके हैं। मध्य–प्रदेश में ऐसे शैलाश्रयों की संख्या सबसे अधिक है। उ0प्र0 में सबसे अधिक शैलाश्रय सोन–घाटी, बेलन–घाटी तथा उसके आस–पास मिले हैं। यहाँ गुफाओं में प्राप्त चित्रों, उपकरणों तथा उनके महत्व पर प्रकाश डाला जा रहा है—

प्रागैतिहासिक संस्कृति का विकास–काल

क्रम	युग	काल	विशेषताएँ
1.	आदिपाषाण–युग (इयोलिथिक युग)	अनिर्णित	भद्देहस्त निर्मित या स्वनिर्मित प्रस्तर औजार पत्थर के औजार
2.	पुरापाषाण–युग (पोलियोलिथिक युग)	100000 से 10,000 ई0पू0	पत्थर के गढ़े सुडौल औजारों तथा आभूषणों का निर्माण
3.	नवपाषाण युग (नियोलिथिक युग)	10,000 से 4000 ई0पू0	कला का जन्म तीखे औजारों का निर्माण।
4.	ताम्र–युग	4000–3000 ई0पू0	कृषि एवं कला का विकास : मिश्र में ताँबे को गलाने का प्रारम्भ
5.	कांस्य–युग	3000–2000 ई0पू0	मिश्र के बाद मेसोपोटामिया और उत्तर पश्चिम भारत में कांसे की वस्तुओं का निर्माण।
6.	लौह–युग	2000 ई0पू0 से	शिल्प का विकास[1]

---

1. मानव और संस्कृति : श्यामाचरण दुबे (पृ0सं0 43 के आधार पर तैयार तालिका।)

सर्वेक्षित क्षेत्र में जो चित्र, शस्त्र अथवा उपकरण प्राप्त हुए हैं वे पुरापाषाण काल तक जाते हैं। फेंक कर जानवरों को मारे जाने वाले अनगढ़ पत्थर (स्क्रैपर), खुरचनी आदि वस्तुएँ अनेक गुफाओं में प्राप्त हुयी हैं जिनका उल्लेख अनेक विद्वानों ने किए हैं। अधिकतर उपकरण, चित्र तथा गुफाएँ नव–पाषाण काल की हैं। बेलनधारी में प्राप्त कुल्हाड़ियाँ तथा अन्य औजार तथा उनके टुकड़े प्राप्त हुए हैं। इसी प्रकार ताम्र–युगीन, कांस्य–युगीन तथा लौह–युगीन उपकरण, चित्र, कलाकृतियाँ, पुरावशेष आदि प्राप्त हुए हैं जिनका उल्लेख यथास्थान किया गया है।

सर्वेक्षित क्षेत्र प्रागैतिहासिक संस्कृति की दृष्टि से सम्पन्न है। सोनभद्र जनपद से लेकर सीधी, कुछ सरगुजा के क्षेत्र में विद्वानों को अनेक अवशेष प्राप्त हुए हैं। काकवर्न महोदय को इस क्षेत्र में अनेक शैलाश्रय और उनमें पुरा–उपकरण रीवां क्षेत्र में तमसा के समीप, सिंगरौली में सीधी–रिहन्द नदी के तटवर्ती इलाकों में पिपरी के पास तथा कैमूर के अन्य कई क्षेत्रों में मिले थे जिसका समर्थन कई अन्य विद्वानों ने भी किया है।[1] श्री वी० डी० कृष्णस्वामी ने पुरा–पाषाण युग के औजारों की एक सूची तथा उनके छाया–रेखा–चित्र भी प्रस्तुत किए हैं, जैसे बैक्ड, ब्लेड्स, पैरेलल साइडेड ब्लेड्स, लुनेट्स, कोर और कोर–स्क्रैपर, मिस्लेनियत वर्क्ड फ्लेक्स, अलमण्ड शेप्ड प्वाइंट, एकोहेड्स तथा फ्लेकब्लेड्स आदि।[2]

इस क्षेत्र में वैसे भी शैलाश्रयों के आसपास इस तरह के औजार पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो जाते हैं, जिससे प्रतीत होता है कि उस युग के मानव ने इन क्षेत्रों में ''टूल्स इण्डस्ट्री'' भी कायम कर दी थी, इस तथ्य का उल्लेख भी कृष्ण स्वामी जी ने किया है।[3] ये औजार कार्टाइज वर्ट अन्य प्रकार के प्रस्तर–खण्डों से बनाये जाते थे, हां, जानवरों और वृक्षों के जीवाश्म प्राप्त नहीं हुए थे, जिन्हें बाद में प्राप्त किया गया।[4]

1. एन्सिएंट इंडिया बुलेटिन ऑव आर्कियोंलाजिकल सर्वे आव इण्डिया 7, 1985 पृ०–63, 65
2. वही पृ०–60
3. वही, पृ०–59
4. देखिए आगे ''जीवाश्म'' पृष्ठ 310

प्रागैतिहासिक कालीन मिर्जापुर–सोनभद्र

विश्व में सबसे पहले कार्लाइल महोदय ने 1868 में उन चित्रों की खोज की थी। बाद में काकबर्न ने पंचमुखी, भल्दरिया के चित्रों के दर्शन करके हर्ष व्यक्त किया था और उन्हें कदाचित शंखलिपि की संज्ञा दी थी। इस ध्यानाकर्षण के बाद पाश्चात्य तथा भारतीय अन्य विद्वानों का ध्यान गया और डी0 एन0 मजूमदार, डॉ0 जगदीश गुप्त, डॉ0 अर्जुनदास केसरी, डॉ0 राकेश तिवारी, डॉ0 यशोधर मठपाल ने इन्हें महत्व प्रदान किये और रिपोर्टें तथा पुस्तकें भी लिखी गयीं। मिर्जापुर में जो गुफाएँ प्राप्त हुई हैं उनमें गेरू, रक्तवर्ण तथा कुछ काले और पीले रंग के चित्र प्राप्त हुए हैं। अधिकतर चित्र पशु–पक्षियों के आखेट से संबंधित हैं। युद्ध, गोचारण, पूजा–पाठ, नृत्य–संगीत, यात्रा, ग्राम–निवास से संबंधित चित्रों की भी कमी नहीं है। इन्हीं चित्रों का अध्ययन इस अध्याय के अंतर्गत किया गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए क्षेत्र के हिसाब से इन चित्रों को पृथक्–पृथक् भागों में बाँट दिया गया है।

जहाँ तक आकार का संबंध है सबसे छोटा चित्र 7 सेमी0 का और सबसे बड़ा चित्र 3 मीटर तक का मिला है। सोनभद्र के चनाइनमान पूरब की गुफा में बड़े, अल्पना प्रधान चित्रों की प्रधानता है। ऐसी अल्पनाएँ अन्यत्र नहीं मिलीं। इसी गुफा में लंबे आकार के रेखाचित्र, जिन्हें काकवर्न ने शंखलिपि की संज्ञा दी है, निम्नलिखित आकार के मापे गये :—

1. छत की अल्पना 3 मीटर लंबी, 5 मीटर चौड़ी
2. छत की अल्पना 97x83 सेमी0
3. छत की अल्पना 95 सेमी0 लंबी
4. दीवार की अल्पना 65 सेमी0 लंबी
5. दीवार की अल्पना दाहिने 95 सेमी0 लंबी
6. पंचमुखी से उत्तर की चढ़ाई के समीप खुली शिला पर बना चित्र 1.46x0.88 मीटर
7. यहीं नीचे का चित्र 85 सेमी0 लम्बा

पंचमुखी–राबर्ट्सगंज से 7 किमी0 दक्षिण पंचमुखी महादेव का स्थान

अनेक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यहाँ से सोनांचल का प्राकृतिक दृश्य अति मनोरम है। यहाँ टीले से दक्षिण गैंडा, बैल, सूअर, हाथी और अन्य कई पशु तथा मानवाकृतियाँ गेरू रंग से बनायी गयी हैं। इससे दक्षिण लगभग 50 मीटर पूरब–दक्षिण की ओर एक अन्य गुफा है, जिनमें बकरी, बैल, मानव, हरिण, बारहसिंगा, ऊँट, हाथी, घोड़ा, गैंडा, शेर और तीर कमान से गैंडे के शिकार के चित्र बने हुए हैं। इस गुफा से पश्चिम लगभग 50 मीटर आगे दक्षिण की ओर से एक तीसरा शैलाश्रय प्रारम्भ हो जाता है, जिसमें एक सौ से अधिक संकेत लिपियों, योद्धाओं, चरवाहों तथा देवी–देवताओं के चित्र बने हुए हैं। जहाँ यह गुफा समाप्त होती है वहीं सामने की शिला पर मानव और पशु–आकृतियों के अतिरिक्त एक सीढ़ी द्वारा मधुमक्खी निकालने का दृश्य–चित्र अंकित है। इसके बाद लगभग 500 मीटर पश्चिम एक और शिला है जिसके ऊपर गोला, चौकोर पान की आकृतियों की अल्पना डिजाइनें भी बनाई गयी हैं। ऐसी डिजाइनें बहुत कम प्राप्त होती हैं। इससे दक्षिण बाएँ हाथ एक शिला पर नर्तकी–अप्सरा या पूजा–आराधना में लीन युवती का मनमोहक चित्र बनाया गया है। इस गुफा को चनाइन मान (पूरब) भी कहते हैं। पंचमुखी मंदिर और चनाइन मान के बीच एक खड़ी शिला पर ऊड़ते हुए तोते की तरह लगभग सवा मीटर लम्बे चित्र लाल रंग के बने हैं, जिसे काकबर्न साहब ने शंखलिपि का नाम दिया है। ये सभी चित्र आंधी–पानी, तूफान और धूप के बावजूद अमिट दिखलाई पड़ते हैं। पहाड़ी के नीचे हाथी–गेंड़े के शिकार के दृश्य खड़ी शिला पर बने हैं। यहाँ कुल 16 गुफाएँ प्राप्त हैं।

चनाइनमान–चनाइन मान गुफा राबर्ट्सगंज से 6 किमी0 दक्षिण छपका पावर हाउस के पीछे दक्षिण की ओर पहाड़ी को कहते हैं। पंचमुखी राबर्ट्सगंज–चोपन, मुख्यसड़क से पूरब है तो चनाइन मान सड़क से आधा किमी0 पश्चिम। यहीं मुख्यालय बना है। सामने के शैलाश्रय तोड़े जा रहे हैं। पहाड़ी आधे के लगभग तोड़ी जा चुकी है। इन पंक्तियों के लेखक के अनेक प्रयास के बाद गुफा खतरे में है।

चनाइनमान पूरब–यह गुफा भी दो भागों में विभक्त है, एक उत्तर को

जिसकी शिला की छतों पर अल्पना डिजाइनें–जैसे पान–पत्ता, षट्कोण, अष्टकोण की आकृतियाँ बनी हुई हैं और दूसरी जो दक्षिण की ओर हैं, जिसकी दीवारों पर तथा पड़ी शिला पर युद्ध, आखेट, नंगे मानव, व्यूह–रचना, शस्त्रास्त्र, तोता, गरुड़, कुत्ता, बकरी, चक्रधारी अष्टभुजी देवी, अप्सरा आदि के चित्र बने हुए हैं। यहाँ बने हथेली, बन्दनवार, और चक्र, वृक्ष, आदमी पर शेर का आक्रमण, गेंडा तथा शेर की कुश्ती के चित्र बड़े महत्व के हैं। इस तरह की अल्पना डिजाइनें लिखनमाड़ा (शहडोल) में भी देखी गयी थीं।[1]

चनाइनमान पश्चिम–छपका पावर हाउस से दक्षिण–पश्चिम की इस त्रिकोणाकार गुफा की छत और दीवारों पर गेरू और घाऊ रंग के अनेक चित्र बने हैं। मानव–कुल के आवास के अन्य चिह्न तथा प्रमाण भी यहाँ उपलब्ध होते हैं। लाल वर्ण या कत्थई रंग के बने इन चित्रों को कई बार बनाया–बिगाड़ा गया है जो चित्र पहली बार बने हैं वे सबसे पुराने हैं।

चित्र–विवरण–यहाँ हरिण, हाथी, बैल, बकरी तथा सूअर के दो और बारहसिंगा के 7 चित्र बने हैं। एक और चित्र खड़ी सींग वाले जानवर का बना है। कुत्ता और गाय के चित्र भी बने हैं। एक पारिवारिक चित्र है जिसमें पति–पत्नी को वार्ता करते दिखाया गया है। यहीं पालवाली नाव का चित्र बहुत ही सुन्दर बना हैं जो अन्यत्र नहीं मिलता। इससे नाव पर हंसी–खुशी या उत्सव मनाने का भाव परिलक्षित होता है। इसी प्रकार गोचारण, वाद्ययंत्रों के साथ नृत्य करती हुई स्त्रियों और पुरुषों के चित्र, आलिंगनबद्ध मुद्रा में स्त्री–पुरुष के चित्र, शिशु से प्यार करती गृहिणी का चित्र, जानवरों में मगर, घड़ियाल, गैंड़ा आदि जानवरों के चित्र अंकित हैं। युद्ध से संबंधित चित्रों में योद्धाओं के, सिर कटे योद्धा तथा एक गिरे हुए योद्धा को दो व्यक्तियों द्वारा उठा कर ले जाते हुए दिखाया गया है। यहाँ महिष के एक मत्थे का चित्र और उसके साथ महिष के चमड़े को सुखाये जाने का दृश्य–चित्र भी मिला है। इसी गुफा में पंचमुखी गुफ़ा की तरह एक सुसज्जित राजा का चित्र बना है। उसी के साथ एक कुत्ता, एक मानव और एक गरुड़ का चित्र बना है। इस प्रकार इस गुफा में युद्ध, आखेट,

1. दे0 शैलाश्रित गुहाचित्र : डॉ0 अर्जुनदास केसरी, पृ0–42

गोचारण, नृत्य, पूजा, आराधना तथा अस्तित्व-रक्षा और आमोद-प्रमोद के चित्र भी एक साथ प्राप्त हैं।

चट्टान की बायीं ओर एक भयंकर जंगली सूअर चित्रित है। दाहिनी ओर आदमियों की कतार है जिसमें आगे के व्यक्ति को कवच की तरह कुछ पहने हुए योद्धा के वेश में सुसज्जित दिखाया गया है। उसके पीछे खड़े आदमियों के हाथों में अस्त्र भी है। फिर नीचे बायीं ओर एक झोपड़ी है जिसके आस-पास के वातावरण को गांव या बस्ती जैसा दिखाया गया है। झोपड़ी के पास बस्ती की ओर अभिमुख हरिणों की पंक्तियाँ खड़ी दिखायी गयी हैं। बस्ती से हटकर कुछ दूर जैसे एक मंदिर में देवी की मूर्ति प्रतिष्ठित की गयी है। इसके दाहिनी ओर एक गाँव है जिसके समीप कुछ पालतू पशु तथा मानवाकृतियाँ दिखायी गयी हैं। फिर आकाश की ओर सूँड़ उठाये, दांत निकाले, एक शक्तिशाली हाथी को चिग्घाड़ते हुए दिखाया गया है। इसी हाथी के पाँवों के मध्य मृत व्यक्ति पड़ा है। इससे थोड़ी दूर हाथी का एक और चित्र बना है। जो गाँव की ओर सूँड़ उठाये खड़ा है। इस हाथी के पैरों के मध्य पेट के नीचे सात स्त्रियों और पुरुषों को निर्भीक मुद्रा में पंक्तिबद्ध खड़ा दिखाया गया है। इसके बाद एक झोपड़ी, झोपड़ी के बाद धन का चिह्न बना है।

इन चित्रों को देखने से मानव-प्रगति की कहानी का जीता जागता प्रमाण प्राप्त हो जाता है। आखेट, गाँव का निर्माण, गाँव की सुरक्षित सीमा, शक्तिशाली जंगली पशु, हाथी जैसे शक्तिशाली पशुओं पर मानव की बुद्धि का अंकुश, धार्मिक आस्था और मानव-कल्याण की भावना, युद्ध, यात्रा, मानव और पशु के बीच के संबंधों का परिचय भी इन चित्रों के माध्यम से मिलता है। प्रस्तर-युग के मानव ने अपने जीवन की समस्त भावनानुभूतियों को चित्रांकित करके कालक्रम के शाश्वत् प्रवाह में अपने अमिट रहस्यात्मक, ज्ञानवर्द्धक दस्तावेज छोड़ गये हैं। खेद है कि अब इनके नष्ट होने का खतरा बढ़ गया है।

बेलनघाटी सम्भाग-प्रागैतिहासिक संस्कृति के विशिष्ट विद्वान् वाकणकर के अनुसार बेलन-घाटी की संस्कृति लगभग सवालाख वर्ष पुरानी है। इसकी घाटियों में प्रागैतिहासिक संस्कृति के अनेक अवशेष उन्होंने प्राप्त किये थे।

मुखादरी–मुख्यालय से 30 कि0मी0 दूर घोरावल नाम का एक टप्पा है, वहाँ से 5 किमी0 दक्षिण बेलन नदी बहती है। इस नदी से 7–8 किमी0 पश्चिम प्रसिद्ध मुखादरी का झरना प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत मनोरम है। इस प्रपात के नीचे लगभग एक किमी0 पश्चिम नदी की धाराओं के संग–संग चलने पर कोहबर नामक एक स्थान बाएँ हाथ पड़ता है। इसी कोहबर की चट्टानों पर लाल रंग के रेखाचित्र अंकित हैं। ये चित्र बहुत स्पष्ट हैं किन्तु कुछ पानी और प्रकाश के कारण धुँधले पड़ गये हैं।

चित्र–विवरण–इस गुफा में एकाकी हाथी, हाथियों का झुण्ड, हथेली, पाँव तथा उंगलियों के निशान, सजग हरिण, भालू, अकेला आदमी तथा आदमियों के समूह चित्रित हैं। आदमियों को पंक्तिबद्ध दिखाया गया है। उनके सामने हाथियों का झुण्ड सूँड़ उठाये खड़ा है। बगल में जंगली सूअर छोटे बड़े के क्रम से चित्रित हैं। एक आदमी को हाथी के पाँव के नीचे मरा दिखाया गया है। दो हाँथियों के बीच में हथेली दिखायी गयी है। मानों हाथियों को रोकने का कोई संकेत है। चट्टान के ऊपर बायीं ओर एक भयंकर सुअर भी चित्रित है। दाहिनी ओर आदमियों की कतार है जिसमें आगे का व्यक्ति कवच धारण किए योद्धा–वेश में सुसज्जित दिखाया गया है। उसके पीछे वाले आदमियों के हाथों में अस्त्र–शस्त्र हैं। पुनः नीचे की ओर बायीं तरफ एक झोपड़ी बनी है जिसे आस–पास के वातावरण को गाँव या बस्ती जैसे दर्शाया गया है। झोपड़ी के पास बस्ती की ओर मुख किए खड़े हरिणों की पंक्तियाँ दिखायी गयी हैं। इस बस्ती से हटकर कुछ दूर एक देवी की मूर्ति प्रतिष्ठित की गयी है। इसके दाहिनी ओर एक गाँव है। गाँव के समीप कुछ पालतू पशु तथा आदमी दिखाए गए हैं। फिर आकाश की ओर सूड़ उठाए दाँत युक्त हाथी दिखाए गये हैं। इसी हाथी के पाँव के नीचे एक मृत व्यक्ति पड़ा है। इससे थोड़ी दूर पर हाथी का एक और चित्र बना है जो गाँवों की ओर सूंड़ उठाए खड़ा है। इस हाथी के पैरों के मध्य पेट के नीचे 7 स्त्री–पुरुषों को निर्भीक मुद्रा में पंक्तिबद्ध खड़ा दिखाया गया है। इसके बाद एक झोपड़ी है। झोपड़ी के बाद धन का चिह्न बना है। इन समस्त प्रकार के चित्रों को देखने से पता चलता है कि उपर्युक्त चित्र अपने आप में मानव–विकास की लम्बी यात्रा तय करते हैं। इसी गुफा से आगे उसी ओर दो

और शैलाश्रय भी प्राप्त हुए हैं जो लगभग उसी तरह के हैं।

लेखनियाँ (अहरौरा सम्भाग)–अहरौरा वाराणसी और राबर्ट्सगंज के बीच का भूभाग है जो चारों ओर से पहाड़ियों के घिरा है। यही लेखनियां नाला पश्चिम से प्रवाहित होकर पूरब की ओर अहरौरा बंधे में आ गिरता है। यहीं एक पुल बनाया गया है। पुल के उत्तर लगभग 100 मीटर पूरब की ओर एक प्रागैतिहासिक कालीन गुफा प्राप्त हुई है जिसमें सूँड़ उठाए हाथियों, हस्ति–आरोहियों के सुन्दर चित्र पूरित शैली में बने हुए हैं। दो बड़े हाथी–युद्ध–प्रयाण की मुद्र में हैं। फिर इनके नीचे कुछ हाथी बने हैं, सभी हाथियों पर हस्ति–आरोही तीर–कमान लिये हुए प्रहार करने की मुद्रा में दिखाये गये हैं। उनके हाथ में ढाल भी है। इसी गुफा में अल्पना डिजाइनें बनायी गयी हैं। युद्ध के ये दृश्य इस बात के प्रतीक हैं कि प्राचीन काल में हाथी पर सवार होकर तीर कमान से युद्ध किया जाता था। हाथी युद्ध में बड़े सहायक होते थे। ये चित्र नवपाषाण काल के हैं।

इसी गुफा से पूरब लगभग 100 मीटर दूर एक अन्य गुफा है जिसमें मोर और हरिण पक्षियों के चित्र बने हुए हैं। ये भी पूरित और अर्द्धपूरित शैलियों में हैं। पानी के दबाव से अब ये बहुत धुंधले हो गए हैं। इस नाले के दक्षिण ऊपर की ओर लगभग 300 मीटर दूर एक किमी0 त्रिकोणकार गुफा है जिसकी छत में अनेक तरह के चित्र बने हैं।

छातुग्राम–चुनार से छातु के लिए अहरौरा होकर एक सड़क जाती है। यहाँ से दो रास्ते बनते हैं—एक राबर्ट्सगंज को चला जाता है, दूसरा पश्चिम की ओर मुड़कर महड़रिया गाँव के पास ऊपर सिंचाई विभाग के कार्यालय झोंगिया तक चला जाता है। गाँव के पास गरई नदी के किनारे गुहाचित्र प्राप्त हैं जिसका उल्लेख मनोरंजन घोस ने किया है। यहाँ से राबर्ट्सगंज के लिए सीधा मार्ग मिलता है जो अहरौरा से 37 किमी0 दक्षिण है।

यहाँ हाथी के शिकार का दृश्य, चिड़िया पकड़ने का दृश्य, घोड़े के पकड़ने का दृश्य, दौड़ते हुए दो चीतों का चित्र, तीन आदमियों द्वारा हरिणों को खींचे जाने का चित्र, अस्त्रधारी, हस्ति–आरोही का चित्र, शस्त्रधारी व अश्वारोहियों

के चित्र, शिकारियों और हाथियों के चित्र, मोर, पदयात्री, हाथी, जल्लाद, महावत द्वारा बस में किये जाते हुए हाथी का चित्र, वर्गीकृत आकृतियाँ तथा अन्य प्रतीक चिह्न भी बने हुए हैं। ऐसे चित्र मुखादरी तथा पंचमुखी की गुफा में भी बने हैं।

भल्दरिया–इन चित्रों को भी मनोरंजन घोस ने उद्धृत किया है। यह स्थान कोहबर छातुग्राम स्थित निरीक्षण भवन को जाने वाले मार्ग पर पड़ता है। यहाँ एक नाला बहता है। उसके समीप से दो रास्ते एक दूसरे को जोड़ते हैं। नदी और नाले के बीच में एक गड्ढ़ा है जिसमें प्रायः हर समय पानी रहता है। यहीं वह गुफा है जहाँ पहुँचने के लिए संकरे रास्ते से गुजरना होता है। गुफा लगभग 2x2x1.5 मी0 की है। यहाँ एक चित्र जो आदमकद है, आयुध सा प्रतीत होता है। मनोरंजन गोष के अनुसार यहाँ ''देश और जिदिश'' दो शब्द भी अंकित हैं, लेकिन यह भ्रम–सा प्रतीत होता है, क्योंकि उस समय लिपि का विकास नहीं हुआ था।

यहाँ से 3 किमी0 पहाड़ की ओर जाने पर भल्दरिया की गुफा पड़ती है जिसकी लम्बाई 15 मी0, चौ0 3 मीटर है। इसमें सारस पक्षी, हाथ में गठरी लिए हुए स्त्री–पुरुष, पुरुष द्वारा सूअर और सामर के शिकार का दृश्य, हिरण, हस्ति–आरोही, कुत्ता, अन्य पक्षी, नृत्य और संगीत की मुद्रा में, युद्ध और यात्रा के चित्र, सूअर को घेर कर मारने का दृश्यचित्र चित्रित हैं। यहाँ वृक्ष, वृक्ष के सानिध्य में उड़ते या कलोल करते सारसों की पंक्ति, वृक्ष की शाखा पर बैठे पक्षियों के चित्र बड़े मनोहारी हैं। यह सभी चित्र गाढ़े लाल रंग के हैं और प्रागैतिहासिक कालीन हैं। यहाँ का मछली मारने का दृश्य–चित्र बहुत ही आकर्षक है। नदी, नदी के किनारे मछली, मछली को मारने के लिए जाल और फिर मछली के शिकारियों का चित्र एक विभिन्न मनोभावों का द्योतक है।

महड़रिया–राबर्ट्सगंज–अहरौरा मार्ग पर सुकृत से महड़रिया जाने का मार्ग बना हुआ है। यहाँ गरई नदी के ऊपरी प्रवाह की ओर लगभग 8 किमी0 दूर जाने पर गुफाओं में उत्कीर्ण अभिलेख तथा चित्र मिलते हैं। इस क्षेत्र में अभिलेख पहली बार यहीं मिले हैं। ये चित्र गुफा की दीवारों तथा भीतरी भाग

में मिलते हैं। यहाँ जानवर तथा मानवाकृतियाँ बनी हैं। गेरू रंग के बने तीन नर्तकों के चित्र, जिनके बाल लम्बे–लम्बे हैं, चित्रित हैं, उन्हीं के साथ चार अन्य व्यक्तियों के चित्र नृत्य की ही मुद्रा में बने हैं। मिर्जापुर में ऐसे चित्र लेखनियाँ (राजपुर) तथा घोड़मांगर में भी देखे गए थे।

सामदेवी पहाड़ी–मिरजापुर जिले की चुनार तहसील में सामदेवी नामक प्रसिद्ध पहाड़ी के निकट ढोलकिया जात्ता नामक स्थान में गेरू रंग के पशु, पक्षी, सूर्य, चन्द्रमा, लहरदार सर्पाकृतियाँ, चौकोर तथा गोलाकार आकृतियाँ बनी हुई हैं। यहाँ आखेट के दृश्य तथा भागते हुए पशुओं के चित्र, तीर–कमान का निशाना बने हरिण का चित्र, जिसकी पीठ पर तीर धंसा हुआ है, देखा गया। ऐसा ही चित्र सीताकुण्ड (चिचिलीपनौरा) के पास सोनघाटी में देखने को मिला था। यहाँ कुछ चित्र नीले और कुछ काले रंग के हैं। डॉ0 आर0सी0 सिंह के अनुसार ये चित्र पुरा या मध्य पाषाण काल के हैं।

अन्य गुफाएँ–मिर्जापुर में कुछ चित्र छत्तर की नदी, सिमरिया नाला, जोगिया दरी, अदबा में भी मिलते हैं। इसी प्रकार अदलहाट से शेरवाँ जाने वाले मार्ग पर ललमनियाँ, पहाड़ी को दो गुफाओं में, जो जफरा बाद से दक्षिण की ओर हैं, युद्ध की मुद्रा में पंक्तिबद्ध मानवाकृतियाँ तथा सेना–प्रयाण का दृश्य चित्रित हैं।

लेखनियाँ : (सम्भाग राजपुर)

कंडाकोट–चनाइन से लगभग 6 किमी0 दक्षिण–पश्चिम राबर्ट्सगंज से दक्षिण–पश्चिम कोण पर लगभग 12 किमी0 दूर कंडाकोट की ऊँची पहाड़ी है। यह पहाड़ी सोन से कुछ ही दूरी पर स्थित है। पहाड़ी के ऊपर कंडेश्वर महादेव की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। इस पहाड़ी के चारों ओर खाईं है तथा पूरा भाग जंगलों से घिरा है।

इस पहाड़ी के ऊपर पूरब और दक्षिण की ओर 2 चित्रित शैलाश्रय हैं। शैलाश्रित गुफाओं के शैलखण्डों पर गेरू और घाऊ रंग के चित्र बने हुए हैं जिनका रंग गाढ़ा लाल अथवा सफेद है। कंडाकोट की गुफाओं में अधिकतर

चित्र जानवरों के बने हैं। मन्दिर से दक्षिण–पूरब की ओर जो शैलाश्रय प्राप्त हैं, उसमें पंक्तिबद्ध हाथियों के चित्र बने हैं। हर हाथी पर एक आदमी सवार है। हाथी और सवार दोनों युद्ध की मुद्रा में चित्रित हैं। हाथी पर सवार व्यक्तियों के हाथों में अस्त्र–शस्त्र हैं। ऐसे चित्र छातुग्राम, सीताकुण्ड तथा लेखनियाँ (अहरौरा) की गुफाओं में भी उपलब्ध हैं। कुछ चित्र आदमियों के हैं, एक चित्र शिकारी कुत्ते का है। कहीं भागते हुए हरिण का कोई शिकारी पीछा कर रहा है, तो कहीं बड़े–बड़े बालों वाले नर्तक गले में ढोल बाँधकर उसे बजा रहे हैं। नर्तक तथा वादक उसका साथ दे रहे हैं। इसी शैलाश्रय में आदमी का कटा हुआ एक हाथ भी दिखाया गया है जिससे खून की बूँदें चू रही हैं।

इसी प्रकार कुछ चित्र बकरियों के बने हैं। धनुष–वाण लिए दो व्यक्ति हाथी पर सवार दिखाये गये हैं। हाथी के पीछे दो अन्य आदमी हैं। उस हाथी के ऊपर तीन व्यक्ति नींद की मुद्रा में दिखाए गए हैं। वे कमर पर हाथ रखे हुए हैं। इसके बाद कुछ चित्र मिट गए हैं। बचे हुए चित्र भी रख–रखाव के अभाव में मिटते जा रहे हैं।

इस गुफा से ऊपर की ओर मन्दिर के समान एक अन्य शैलाश्रय है, जिसमें हस्ति–आरोहियों के चित्र बने हैं। यहीं एक चित्र जंगली सूअर का भी है। कंडाकोट के नीचे चिरहुली, करमडांड़ ग्राम के पास मन्दिर से दक्षिण–पश्चिम की ओर लगभग 300 मीटर दूर एक दूसरा शैलाश्रय प्राप्त हैं जिसमें गाढ़े लाल तथा कत्थई रंग के चित्र बने हैं। इस गुफा में बने कुछ प्रमुख चित्र हैं—योद्धा, हाथी का शिकार, हरिण, हाथी, हस्ति–आरोही कटे हुए सिर, काला हरिण, धनुर्धर, वाण–संधान करते शिकारी, वाण चलाते हुए तीन अन्य शिकारी, हाथी, सीढ़ी, त्रिकोणीय चिह्न, फिर चार आखेटक आदि। पीछे ये सभी चित्र पंक्तिबद्ध और कृत्रिम रूप से चित्रित हैं।

इस स्थान से लगभग 200 मीटर दूरी पर बाएँ हाथ की ओर एक अन्य शैलाश्रय मिलता है जिसमें हस्ति–आरोही शिकारी का चित्र बना है और जिसके कमर में तलवार बंधी है। इसी क्रम में तीन और शिकारी हाथी पर सवार दिखाए गए हैं। यहीं शिकारी कुत्ता, हाथी, बारहसिंगा आदि के चित्र भी बने हैं।

ये चित्र आकार में बड़े और कुछ तो 45 सेमी0 लंबे तक हैं। कंडाकोट सम्भाग के अधिकतर चित्र पूरित शैली में हैं। मिर्जापुर-सोनभद्र के चित्रों के अध्ययन से निम्नलिखित तथ्य सामने आते हैं-

1. ये उस समय के चित्र हैं, जब मानव ने शस्त्रास्त्रों के प्रयोग करने आरम्भ कर दिया था। शिकार और युद्ध का ज्ञान भी उसे थोड़ा बहुत हो गया था। उस समय युद्ध प्रायः हाथियों पर चढ़कर किए जाते थे।

2. उस समय का मानव पशुधन और जमीन के लिए युद्ध करता था और पेट पालने के लिए शिकार अनिवार्य था।

3. लोग आखेटजीवी थे तथा आखेट के समय कुत्ते उनका साथ देते थे। नुकीले पत्थर तथा धनुष-बाण के शिकार करने की परंपरा थी।

4. मनुष्य नाचने, गाने की कला भी जानते थे। तुरही तथा ढोल उस समय के प्रमुख वाद्य थे। नृत्य का आयोजन यथा अवसर किया जाता था-विशेषकर शिकार मिलने पर।

5. दुधारू जानवर पाले जाते थे, जिसमें बकरी गाय मुख्य हैं। सामर और शेर का शिकार तीर-कमान से किया जाता था। पशुओं को घेर कर मारने की परंपरा की शुरुआत संभवतः उसी समय से हुई होगी।

6. मानव प्रायः नंगा था, अर्द्धनग्न रहता था।

7. पारिवारिक जीवन अच्छा तथा परिवार छोटा था।

लेखनियाँ (राजपुर)-कंडाकोट से लगभग 4 किमी0 पश्चिमी लेखनियाँ की चित्रित गुफा है। यह गुफा राबर्ट्सगंज से लगभग 12 किमी0 दूर पश्चिम और दक्षिण दिशा में स्थित है। यह कभी शिकारगाह था और राजपुर के स्वर्गीय भूतपूर्व राजा आनन्द ब्राह्मशाह यहाँ शिकार खेलने जाया करते थे।

यहाँ लगभग 20 मी0 लंबी और 5 मी0 चौड़ी एक गुफा है। गुफा की विशाल चट्टान सोन की ओर निकली हुई है, इस चट्टान की छत तथा दीवार पर अनेक चित्र बने हुए हैं। पहाड़ियाँ और नदी-नालों, झरनों से घिरे सोन के

तट पर स्थित यह स्थान प्राकृतिक सौंदर्य की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। संभवतः पानी और शिकार की सुविधा से प्रागैतिहासिक मानव यहाँ रहता होगा और अपने अवकाश के क्षणों में अपने जीवन के अनेक चित्र सृजित किया होगा। नाट्य और नृत्य के दृश्यों के अतिरिक्त यहां कुछ ऐसे चित्र भी प्राप्त हैं जो प्रायः नहीं मिलते। जैसे गर्भवती का चित्र। इस गुफा में चित्रित गर्भवती के हाथ में कोई वस्तु है। इसी प्रकार एक अन्य चित्र प्राप्त है जिससे तत्कालीन दंड-विधान का परिचय मिलता है। एक आदमी खड़ा है। उसका एक हाथ पीछे है और दूसरे हाथ में डंडा लिए हुए हैं। उसके उस डंडे के ऊपर एक अन्य आदमी खड़ा है। उसके ठीक बगल में पाँच अन्य आदमी खड़े हैं। वे अधिक मोटे तथा जल्लाद की तरह प्रतीत होते हैं।

इस चित्र के आगे पाँच अन्य मानवाकृतियाँ बनी हैं जो नृत्य व संगीत की मुद्रा में वाद्ययंत्र भी लिए हुए हैं। एक पंक्ति में कुछ जानवर बने हुए हैं जिनमें गाय, बैल, बकरी, आदि मुख्य हैं। एक बकरी बच्चा जनती हुई चित्रित है। एक दृश्य पशु-मैथुन का है। यहाँ कुछ भागते हुए जानवरों के चित्र हैं जिन्हें कुल्हाड़ी लिए हुए कोई दौड़ा रहा है। पालकी लिए हुए व्यक्ति का चित्र बना है। उस पालकी में कोई दुल्हन बैठी हुई है। यहाँ कुछ जानवरों के चित्र हैं जिनके बीच से दो सगे आदमी दौड़ते हुए दिखाए गये हैं। फिर कुछ पंक्तिबद्ध खड़े हैं। एक आदमी लाठी लेकर जानवरों को चरा रहा है। उसके सिर पर कलंगी सुशोभित है। यहाँ एक ऐसा चित्र मिला है जिससे पशु-बलि की प्रथा का आभास मिलता है। चनाइनमान की तरह यहाँ भी एक अल्पना डिजाइन देखने को मिली। सफेद रंग के बने भेंड़ और आदमी के चित्र देखे गए। एक अप्सरा का चित्र चनाइन मान पश्चिम की तरह देखा गया। तीर से जानवर का शिकार करते हुए व्यक्ति का चित्र काफी सजीव मुद्रा में चित्रित है। इस प्रकार नाचते-गाते, युद्ध करते, भागते-दौड़ते, बकरी चराते, चमड़ा सुखाते, यात्रा करते, मानवाकृतियाँ भी प्रचुर संख्या में चित्रित हैं। इस गुफा में कुल्हाड़ीनुमा धारदार हथियार के कुछ चित्र केरवा घाट की गुफाओं जैसे भी पाए जाते हैं।

अन्य चित्रित शैलाश्रय–लेखनियाँ और कंडाकोट के आगे एक स्थान ढोकवा महरानी के नाम से जाना जाता है जिसका उल्लेख डॉ0 जगदीश

गुप्त ने किया है। यहाँ एक कछुआ का चित्र प्राप्त है। इस स्थान से थोड़ी दूर पर स्थित सोरहो घाट की गुफा है जिसमें शिकार के अनेक दृश्य बने हुए हैं। यहाँ एक घोड़ा, एक महिष और कुछ बारहसिंगों के चित्र बने हैं। हाथ फैलाए एक आदमी और हथेली का चित्र भी बनाया गया है। यहाँ के चित्र पानी और प्रकाश के कारण धुँधले पड़ते जा रहे हैं।

इसी प्रकार चुरिहर देवी के पास कंडाकोट से 9 किमी0 दक्षिण तथा मारकुण्डी से 10 किमी0 पश्चिम स्थित शिवमन्दिर से पूरब एक शिलाखण्ड पर धुंधले चित्र बने हैं। खुरैला ग्राम से लगभग 2 किमी0 उत्तर भी एक चित्रित गुफा है। खुरैला से 3 किमी0 उत्तर एक गुफा में 2 चित्र प्राप्त हुए हैं।

सुगापांख, झरियानाला, कुप्पिहदा–यह स्थान कंडाकोट और लेखनियाँ के मध्य स्थित है। झरिया के नृत्य–रत मुद्रा में नर्तकों के दृश्य–चित्र पंक्तिबद्ध शैली में चित्रित हैं, यहाँ एक परिवार का चित्रण स्त्री–पुरुष और शिशु के रूप में देवाराधना की मुद्रा में किया गया है। स्त्री–पुरुष दोनों हाथ जोड़े सामने खड़े हैं। कुप्पिहवा में सफेद काले गेरू और रक्त वर्ण के नर–नारी के चित्र परिधान धारण किए हुए हाथ में हाथ मिलाए आमोद–प्रमोद की मुद्रा में दिखाए गए हैं। इसी तरह का एक चित्र पंचमुखी सम्भाग में भी देखा गया था। पंचमुखी में एक चित्र सम्भोग–मुद्रा में देखा गया था।

कइरी दुअरा–कइरी एक पहाड़ी का नाम है जो राजपुर (शाहगंज) से दक्षिण तथा दुअरा राजपुर से रिजुल ग्राम के बीच में पड़ता है। कइरी में प्राप्त नृत्य की मुद्रा में मानवाकृतियाँ मुख्य हैं। दुअरा शैलाश्रय में अधिकतर मानवाकृतियाँ नृत्य की मुद्रा में देखी गयीं। नर–नारी दोनों एक साथ मिल कर हाथ में हाथ मिलाकर नृत्य करते देखे गये। स्त्रियाँ सजी–संवरी और पंक्तिबद्ध होकर नृत्य कर रही हैं। वृत्त बनाकर नाचते हुए नर्तकों के चित्र प्रायः कम मिलते हैं, लेकिन नृत्य की यह शैली प्रायः आज भी आदिवासियों के नृत्यों में देखी जाती है।

सीताकुण्ड–सीताकुण्ड जाने के लिए घोरावल शाहगंज–राबर्ट्सगंज, पन्नूगंज, किरहुलिया होते हुए चिचली पनौरा नामक गाँव तक जाना पड़ता है।

सोमा–सथारी के जंगलों में सोन के सुरम्य तट पर सीताकुण्ड नामक एक स्थान है जिसे 'अहिरमरवा या बघमरवा' के नाम से जाना जाता है। इस घाटी की प्राकृतिक छटा निराली है। सीताकुण्ड से 3 किमी0 पूरब अमलादर तथा खोड़इला गाँव से 2 किमी0 उत्तर–पश्चिम सीधवा घाट नामक स्थान पर शैलाश्रय प्राप्त हुए हैं। इनमें मानवाकृतियों के अलावा पशु–आकृतियाँ आकर्षक शैली में चित्रित हैं। सीताकुण्ड के पास तीन गुफाएँ हैं। विशाल चट्टानें हैं, चट्टानों के नीचे का पूरा–पूरा भाग चित्रित है। दीवारों तथा छतों पर कलात्मक चित्र बने हैं। यहाँ जो चित्र प्राप्त हैं उनमें मुख्य हैं–हाथी, घोड़ा, गैंडा, गाय, बैल, सुअर और मगर, गदहा, छिपकली, बिच्छू, सर्प आदि। मानवाकृतियाँ आखेट मुद्रा में चित्रित हैं। इस गुफा में एक व्यक्ति को धनुष–बाण लिए, प्रत्यंचा चढ़ाए, हरिण का पीछा करते हुए दिखाया गया है। वे जटा–जूटधारी हैं। हरिण बेतहासा भाग रहा है। इस दृश्यचित्र को देखने से सीताहरण की घटनाएँ हमें रोमांचित कर देती हैं। कहीं हाथियों को और कहीं घोड़ों को पंक्तिबद्ध दर्शाया गया है। मानवाकृतियाँ युद्ध और आखेट तथा नृत्य की मुद्रा में दिखायी गयी हैं। इन चित्रों की खोज के लिए इन पंक्तियों के लेखक को अपने जान जोखिम में डालने पड़े थे क्योंकि 1970 में वहाँ जाना शेर के मुख में जाना था।

विजयगढ़ सम्भाग–विजयगढ़ दुर्ग की पहाड़ियों में भी शैलाश्रय प्राप्त हुये हैं। यहाँ पहुँचने के लिए राबर्ट्सगंज से चतरा और धंधरौल होकर मऊ के रास्ते जाना पड़ता है। चुर्क से वन–मार्ग द्वारा धंधरौल बाँध और मऊ गाँव की सीमा पार करके जंगल के रास्ते भी विजयगढ़ पहुँचा जा सकता है। विजयगढ़ किला लगभग 300 मीटर की ऊँचाई पर बना है। यहाँ प्राप्त एक गुफा 6 मी0 ऊँची, 22 मीटर लंबी, और 3 मीटर गहरी है। स्वर्गीय मनोरंजन घोष ने इसमें मिट्टी के पात्रों के टूटे हुए भाग पाए थे। (देखिए मनोरंजन घोष की पांडुलिपि पृ0–158)[1] इस गुफा में गेरू रंग से बने हरिणों के दो चित्र दीवार पर बने हैं जिसे दो आदमी हाथ में कुछ लिए दौड़ा रहे हैं। किले के मुख्य द्वार से बायीं

1. यह पांडुलिपि इन पंक्तियों के लेखक के निजी संग्रहालय में उपलब्ध है।

ओर दाहिनी ओर दो गुफाएँ हैं जिनमें आखेट, यात्रा, नृत्य और पशुचारण के चित्र प्राप्त हुये हैं।

धंधरौल–धंधरौल विजयगढ़ जाते समय मऊ गाँव से 2 किमी0 पहले बाएँ हाथ पड़ता है। इस पहाड़ी के बाजू में दो–तीन शैलाश्रय हैं जिनमें रक्तवर्ण के बने हाथी, हरिण, सूअर, धनुषधारी आदि के चित्र बने हैं।

रमना पहाड़–मऊ गाँव से सटा हुआ पूरब की ओर एक पहाड़ है जिसके ऊपर उत्तर दक्षिण की ओर चार शैलाश्रय प्राप्त हुए हैं। इसमें भी धंधरौल जैसे चित्र ही बने हैं।

कउवाखोह और हथबनवाँ–ये दोनों स्थान विजयगढ़ दुर्ग से लगभग 18 किमी0 दक्षिण–पश्चिम बघनार गाँव के समीप स्थित हैं। यहाँ राबर्ट्सगंज–चोपन मार्ग पर स्थित सलखन के पास से जाने वाले वन मार्ग से पहुँचा जा सकता है। इसी ऊँची पहाड़ी को कुछ लोग खोढ़वा पहाड़ के नाम से भी जानते हैं। इसके शीर्ष भाग पर गंगेश्वरनाथ का मन्दिर है। इस पहाड़ी के चारों ओर कुछ शैलाश्रय प्राप्त हुए हैं जिनमें एक गुफा का नाम 'कउवाखोह' है। इस गुफा में सताधिक मानवाकृतियाँ पूरित शैली में नृत्य, आखेट, यात्रा की मुद्रा में चित्रित हैं। नर्तकों की टाँगें लंबी हैं। वे हाथ में कुछ लिए हुए हैं। आकृतियाँ नर–नारी दोनों की हैं और वे सभी नंगे दिखाए गये हैं। इनमें से कुछ चित्र ऐसे हैं जिनको देखने से युद्ध की विभीषिका के परिणामस्वरूप विध्वंश का आभास मिलता है। इसी गुफा में एक वीर का चित्र देखा गया, जो अपने हाथों से हाथी उठाए है।

लुरियानी, मगरदहा, गोहमनवाँ तथा मतहवा–ये स्थल विजयगढ़ किले से लगभग 3 किमी0 दक्षिण–पूरब की ओर जंगल में स्थित हैं। तुरियानी, मतहवा, मगरदहा में विशेष रूप से नर्तकों के चित्र, पूजा आराधना, पूजा–नृत्य की मुद्रा में प्राप्त हुए हैं। मतहवा में नर्तकों के साथ एक पशु–आकृति भी देखने को मिली। इनमें एक आदमी को एक टांग और एक अन्य को डेढ़ टांग का और बाकी को दो–दो टांगों वाला दिखाया गया है। मगरदहा के नर्तकों को कमर पर हाथ धरे मादल के आकार–प्रकार के वाद्ययंत्र लिए थिरकते हुए

दिखाया गया है। ऐसा ही दृश्य दतवा पहाड़ के शैलाश्रय में भी देखा गया था। तुरियानी के शैलाश्रय में 5 नर्तकों के चित्र सुसज्जित रूप में दिखाये गये हैं। गोहमनवाँ में भाव–नृत्य के दृश्य देखे गये जो बहुत आकर्षक हैं। सूगापाँख के चित्र भी इसी तरह के भावपूर्ण हैं।

हिरना–हिरनी–विजयगढ़ दुर्ग के आगे लगभग 4 किमी0 दूर घने जंगल में एक गुफा हिरना–हिरनी के नाम से ज्ञात है। यहाँ पहुँचने के रास्ते टेढ़े–मेढ़े और बीहड़ हैं। हिरना–हिरनी की गुफा इतनी विशाल है कि उसके नीचे हजारों व्यक्ति एक साथ बैठकर सभा आदि कर सकते हैं। इसकी छतें अल्पना डिजाइनों से सजा दी गयी हैं। इन अल्पना डिजाइनों के अलावा मुर्गा, पालकी, स्त्री–पुरुष, बकरी, बैल, बिच्छू, साँप, बारहसिंगा, हरिण, कुत्ता, सियार, घोड़ा, खच्चर, हाथी, धनुर्धर के सजीव और आकर्षक गेरू अथवा रक्तवर्ण के चित्र बने हैं। गुफा के शीर्ष भाग पर एक शिला के ऊपर कुछ और चित्र बने हैं। इन पंक्तियों के लेखक ने इस गुफा को देखने के लिए भी अपने जान जोखिम में डाले थे और मार्ग में अनेक हिंसक–पशु मिले थे।

घोड़मांगर–विजयगढ़, दुर्ग से लगभग 5 किमी0 दूर दो पहाड़ी नदियों के संगम पर सोन–क्षेत्र में ही घोड़मांगर या घोड़मागरा नामक गुफा में मंगर, घड़ियाल, हरिण, गैंडा और घोड़ा आदि जानवरों तथा जीव–जन्तुओं के चित्र मिले हैं। यहाँ गेरू तथा सूखे रक्तवर्ण के नर्तकों के चित्र सज्जित वेश–भूषा में बने हैं। ऐसी आकृतियों की पूजा आज भी लोक में प्रचलित है जिसके कारण भी ये चित्र बचे हुए हैं।

अन्य गुफाएँ–केरवा (घाट) पहाड़ और चोपन के आस–पास कुछ और भी चित्रित गुफाएँ मिली हैं, जिनमें मुख्य ये हैं:—

1. सोनपार कोन के निकट सोन के दक्षिण चोपन से लगभग 20 किमी0 दक्षिण–पूरब पहली गुफा।

2. चोपन से लगभग 18 किमी0 दूर कनच गांव के पास की दूसरी गुफा।

3. चोपन से लगभग 30 किमी0 पूरब गड़ाव के पास एक पहाड़ की

तीसरी गुफा।

4. चोपन के पास सिन्दुरिया गाँव के दक्षिण की गुफा। इसके चित्र अब मौके पर दिखलाई नहीं पड़ते।

चुनार सम्भाग–सक्तेशगढ़ रेलवे स्टेशन के पास लगभग 3 किमी0 दक्षिण सिद्धनाथ की दरी के आसपास शैलाश्रय देखे जा सकते हैं। यहाँ हनुमान जी के मन्दिर के समीप स्थित एक दरी के पास एक गुफा में मानव और पशु–आकृतियाँ बनी हैं। चुनार सम्भाग के अंतर्गत एक और शैलाश्रय दंतवा पहाड़ी में मिला है, जो जरगो बांध के निकट बनी मिलियाँ गाँव के समीप स्थित है।

मिर्जापुर और आसपास–मिर्जापुर से मड़िहान आते समय लगभग मध्य में विन्ढमफाल नामक स्थान पर एक गुफा प्राप्त हुई है जिसमें मानव और पशु–आकृतियाँ चित्रित हैं। इस गुफा में गेरू रंग की बनी कुत्ता–गाड़ी का जिक्र अनेक विद्वानों ने किया है। किन्तु अब यह चित्र नष्टप्राय है। इस गुफा में चीता, हरिण आदि जानवरों के चित्र बने हैं।

लखनऊ के पुरातत्व विभाग ने राजगढ़ क्षेत्र में कुछ खुदाई का कार्य कराया है। उसके अनुसार चुनार तहसील में कुछ महत्वपूर्ण शिलालेख मिले हैं जो प्रागैतिहासिक कालीन हैं। राजगढ़ से दो किमी0 दूर लेखनियाँ पहाड़ी, छुरिहरवा नाला, लूसा, दरहावा नाला, सिद्धनाथ की दरी तथा रामपुर में प्रस्तरकाल के कुछ अवशेष प्राप्त हुए हैं। इसी क्रम में प्रागैतिहासिक कालीन जो चित्र प्राप्त हुये हैं उनके अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे मध्य पाषाण काल के हैं और उस समय तक कुछ उद्योग–धंधों के प्रचलन भी उस युग में हो गये थे। इसी क्षेत्र में मानव, पशु–आकृतियाँ, शिकार के दृश्य, नृत्य, संगीत और कृषि–उद्योग, पशु–पालन के दृश्य, पूजा और आराधना के दृश्य चित्र भी प्राप्त हुए हैं।

राजापुर–मड़िहान से लगभग 2 किमी0 दक्षिण–पूरब की ओर लेखनियाँ नामक पहाड़ी में एक शैलाश्रय मिला है जिसमें गेरू रंग की मानवाकृतियाँ बनी हैं।

चिरहुली, रमडांड़–कंडाकोट पहाड़ी के नीचे चिरहुली करमडांड़ ग्राम के पास मन्दिर से दक्षिण पश्चिम की ओर लगभग 300 मीटर दूर एक शैलाश्रय में गाढ़े लाल रंग एवं गुलाबी रंग के चित्र मिले हैं जिनमें मुख्य हैं, दाहिने से क्रमशः योद्धा, हाथी के शिकार का दृश्य, हरिण, बाण चलाते हुए शिकारी, भीतर की ओर बाण चलाते हुए तीन शिकारी, हाथी, त्रिकोणीय चिह्न (पंचमुखी गुफा की तरह) और फिर 4 शिकारी चित्रित हैं। इस स्थान से 200 मी0 बायीं ओर कुछ और दृश्य–चित्र मिले हैं, जिनमें मुख्य हैं, हाथी पर सवार शिकारी, 3 अन्य शिकारी कमर में तलवार बाँधे हुए योद्धा शिकारी और शिकारी कुत्ता, हाथी बारहसिंगा आदि। ये सभी चित्र बड़े आकर्षक और औसत से अधिक लंबे हैं।

दुद्धी सम्भाग–दुद्धी तहसील उत्तर प्रदेश और बिहार की सीमा पर स्थित है और घने जंगलों और पहाड़ों से घिरी है। यहाँ प्रवाहित पाण्डुनदी के तट पर कुछ प्राकृतिक गुफाएँ प्राप्त हुई हैं जो प्रागैतिहासिक कालीन हैं और उनमें शेरों के झुण्ड एक साथ गोलाकार चक्कर लगाते हुए दिखाए गये हैं। दुद्धी को पूर्वी सिंगरौली या वीछीघाट या तौफीर सिंगरौली के नाम से भी जाना जाता था। दुद्धी दुधही (यानी दूध वाली) भी इसका एक नाम है। आरंभ में यहाँ घी–दूध की कमी न थी।[1]

बकदरा के शैलचित्र–बकदरा अभयारण्य बीछीघाट से कैमूर पार करने के बाद पड़ता है। इस घाट के दोनों किनारों पर शैलचित्र हैं जिन्हें धौलागिरि पहाड़ और गोरा पहाड़ भी कहते हैं। ऐसे शैलाश्रयों को कोहबर कहते हैं। इस गुफा में वनभैंसों, धनुर्धरों, यात्रापथ पर मानवों, जानवरों के चित्र तथा आखेट दृश्य देखे जा सकते हैं। बीछी से लगभग 15 किमी0 पूरब चलने के बाद एक अन्य चित्रित गुफा मिलती है। यहाँ मृगों के आखेट का दृश्य बड़ा ही लुभावना है। यहीं हाथ पकड़कर नाचते हुए स्त्री–पुरुष के चित्र भी उपलब्ध हैं।

---

1. और अधिक जानकारी के लिए दे0 'लोककला' : केसरी अर्जुनदास, लोकवार्ता शोध संस्थान, सोनभद्र से प्रकाशित।

कोहबरवा घाट के शैलचित्र–बगदरा का एक मार्ग है–कोसदाघाट। इसके पूरब खडारघाट, इसी को कोहबरवा घाट भी कहते हैं। यहाँ के चित्र नव पांषाण कालीन हैं। श्री देवकुमार मिश्र का दावा है कि इनकी खोज पहली बार उन्होंने ही की है। ब्लट और मथार नामक पाश्चात्य विद्वानों ने इस स्थान की भूरि–भूरि प्रशंसा की है।

इसी प्रकार कोटा के पास कुएँ की भित्तियों पर हथियार लिये हुए युद्ध की मुद्रा में वीरों के चित्र बने हैं और लोरका शिला पर लाल रंग का चौका बनाया गया है। इसके पश्चिम कोहबर नामक स्थान पर पंचमुखी की भाँति कुछ संकेत लिपियाँ मिली हैं। यहाँ की मानवाकृतियाँ अत्यंत विकराल मुद्रा में हैं। इसके अतिरिक्त मृगारानी, गोहरा राजा, चन्डेल, चन्द्रपुर, भुरगड़ी (रन्नो) कांचन ग्राम, बन मेहरी (मेतापा) ढाका, छत्तापतरी, (वनमहरा) से दक्षिण पूरब की गुफाएँ भी तत्कालीन हैं जिसमें बने चित्र अब नष्टप्राय हैं।

पुरा–उपकरण–मिर्जापुर जनपद में प्राप्त गुफाओं में या उनके आसपास बहुत से पुरावशेष अथवा पुरोपकरण प्राप्त हुए हैं। मनुष्य इन गुफाओं में जब रहा होगा तो उसने अपने उपयोग की वस्तुएँ भी रखता रहा होगा और वह जब इन्तकाल फरमा जाता होगा तो उसकी अस्ति–अवशेष भी इधर–उधर बिखर जाता होगा। वह उन दिनों पत्थर के औजार खुर्चनी आदि से बनाता था और 'स्क्रैपर' का प्रयोग भी करता था। शैलाश्रयों में या गुफाओं के आस–पास जो 'उपकरण प्राप्त हैं, उनमें मुख्य हैं कोट, फ्लक, पेबुल उपकरण, एश्युलियन, हैंडेक्स, क्लीवर, स्क्रैपर, सबस्फेराइड, फलेक, ब्लेड, भूधरे ब्लेड, खुर्चनी, छिद्रक, गली मिट्टी के टुकड़े, निहाई, हथगोले, मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े, आरी, त्रिभुज, चतुर्भुज, चौड़े धारदार हथियार, बाणाग्र, कुल्हाड़ी, बड़े औजार, तेज करने वाले पत्थर, जानवरों जीव–जन्तुओं के हड्डियों के बने औजार आदि। ये उपकरण लेल्सीडली, अग्रेट, कटनेलियन, चर्ट, अटर्ची आदि पत्थरों के प्रयोग करके बनाये जाते थे। शैलाश्रित गुफाओं में प्राप्त चित्रों तथा उपकरणों के आधार पर जो तथ्य सामने आये हैं, वे इस प्रकार हैं—

1. अब तक जो उपकरण अथवा शस्त्रास्त्र प्राप्त हुए हैं, उनके अधिकतर

चित्र इन गुफाओं में बने हैं, जिनसे निश्चित निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

2. अधिकतर उपकरण स्थानीय प्राप्त संशोधनों जैसे प्रस्तर–खण्ड, हड्डी आदि से बनाये जाते थे।

3. अधिकतर उपकरण आत्मरक्षा, जीविकोपार्जन, युद्ध, आखेट, गोचारण तथा देवाराधना से सम्बन्धित हैं जिनके चित्र अद्यावधि गुफाओं में विद्यमान हैं।

4. चित्रों और उपकरणों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि आदिम मानव में भी ज्ञान की जिज्ञासा थी और वे श्रेष्ठ कलाकार भी थे। चित्र इतने सजीव और सुन्दर हैं कि आज का फाइन आर्ट और फाइन आर्टिस्ट उनके सामने महत्वहीन हैं।

5. चित्रों के लिए गेरू रंग और बाँस की टहनी का ब्रश बनाया जाता था। रंग में चर्बी, पेड़ का दूध प्रयोग में लाया जाता था।[1]

गुहाचित्रों में व्यक्त सांस्कृतिक मूल्य–संस्कृति की दो अवस्थाएँ मानी गयी हैं—1. प्रारंभिक, 2. विकसित।

प्रारंभिक अवस्था को बर्बर तथा असभ्य भी कहा जा सकता है। इस अवस्था में आखेट, पशु–पालन, कृषि, पुरोहिती, आदि कार्य हुए हैं, किन्तु प्रशासन व्यवस्था, ग्रन्थों की भाषा, गणित, ज्योतिष अन्य व्यापार, विज्ञान, उद्योग, व्यवसाय आदि विकसित संस्कृति के प्रतीक हैं।

उस समय का मानव भी एक सामाजिक प्राणी था। गुफाओं में ही सही, वह प्रायः समूह बनाकर योजनाबद्ध बस्ती बनाकर सपरिवार जीवन यापन करता था।

दाँत वाले हाथी, जंगली भैंसे, हरिण और गैंडे आदि के चित्र तथा प्राप्त उपकरण इस बात के प्रतीक हैं कि उस समय का मानव युद्ध, आखेट, गृह–निर्माण आदि कला में भी निपुण व प्रवीण था। उस समय का मानव प्राकृतिक

---

1. इन पंक्तियों के लेखक ने पुरावशेषों, पुरोपकरणों का संग्रह अपने निजी संग्रहालय के लिए किया है।
—लेखक

जीवन जीने का अभ्यासी था और नदी, नाले, झरने, पहाड़, वन, उपवन, पशु–पक्षी, उसके जीवन के अभिन्न अंग बन गये थे। वह सामाजिक संस्कृति, पर्व–उत्सवों में भाग लेता था।

काल–निर्धारण–भूगर्भशास्त्रियों ने पृथ्वी के अक्ष के चार प्रधान काल माने हैंः—

1. अजन्तुक–जब पृत्वी पर किसी प्रकार का जीवन नहीं था। (80 करोड़ वर्ष पूर्व)

2. पुराजन्तुक—जब मेरुदंड हीन प्राणियों के रूप में जीवन का चिह्न सबसे पहले दिखलाई पड़ा। (26 करोड़ वर्ष पूर्व)।

3. मध्य जन्तुक—(14 करोड़ वर्ष पूर्व)।

4. नवीन जन्तुक—(4 करोड़ वर्ष पूर्व) इस युग में विभिन्न प्रकार के स्तनपायी जन्तु विकसित हुए, जिनसे मनुष्य भी संबंधित हुआ।[1]

मनुष्य के विकास के साथ ही इतिहास का सृजन आरंभ हुआ। इस आरंभिक इतिहास को हम प्रागैतिहासिक संस्कृति के नाम से जानते हैं। उसे पाषाण युग भी कहते हैं, क्योंकि अपनी आरंभिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य ने जिन उपकरणों का उपयोग किया था वे प्रायः पत्थर के थे। शुरु–शुरू में पत्थर के औजार बनाए गए जो बड़े टुकड़े में ढाँचे हुए और शक्ल में अनगढ़ होते थे। इस प्रकार के औजारों को पाषाण या पूर्व प्रस्तर युग माना जाता है। उसके बाद नया पाषाण युग या नव प्रस्तर युग आया जिसमें पत्थर के औजारों को तराश कर, घिसकर और उसे चिकना कर अपेक्षाकृत कुछ सुधरे रूप में बनाया जाता था। विन्ध्य की गुफाओं में मध्य या नव पाषाण के अवशेष प्राप्त हुए हैं। आधा इंच से लेकर डेढ़ इंच तक लम्बे चकमक पत्थर मिट्टी और औजार भी विविध आकार–प्रकार में वाण की नोक के समान नुकीले या गठीले प्राप्त हुए हैं। उनका उपयोग उस समय का मानव औजारों में दस्ते के रूप में या अपने हाथों लगा कर करता था। ये प्रायः विन्ध्याचल के रेतीले

1. हिन्दू सभ्यता : राधा कुमुद मुखर्जी, पृ0–8

या छिछले नदी-तटों में बघेलखंड, रीवां, मिर्जापुर, की नदियों, गुफाओं में चूल्हे के राख और कोयले के राख में मिले हैं। कला की दृष्टि से ये बड़े महत्वपूर्ण हैं। राख के दूहे (सिन्डर माउंट्स) दक्षिण भारत और मिर्जापुर में प्राप्त हुए हैं जो पशुओं की बलि का कारण बन गए थे। इस प्रकार प्यालेनुमा, घट्टे, गेरू और घाऊ के रेखाचित्र, समाधियाँ आदि भी प्राप्त हुई हैं। इस क्षेत्र से प्रागैतिहासिक काल की आदिम संस्कृति के प्रायः सभी प्रमाण प्राप्त हैं, जिनका समय 40 हजार वर्ष पूर्व से 5 हजार वर्ष पूर्व तक माना जा सकता है। काकवर्न महोदय का विचार है कि कैमूर के निवासी कुछ ही वर्ष पूर्व पाषाण युग के बाहर हैं और ये समय 10वीं सदी ई0 है।[2] डॉ0 एस0 ए0 शाली ने कार्बन डेटिन के आधार पर गुहाचित्र का समय आज से पच्चीस हजार वर्ष से 40 हजार वर्ष के बीच निश्चित किया है। वाकंणकर साहब का विचार है कि कैमूर घाटी के हाथियों के चित्र सबसे प्राचीन हैं। उसके बाद आखेट दृश्य तथा मानवकृतियाँ तीसरे स्थान पर हैं। दूसरे स्थान पर महिष का चित्र है, गैंडा का चित्र भी उन्होंने पुराना ही माना है। उनके अनुसार इन चित्रों को 2000 से 1500 ईसा पूर्व का मानना चाहिए।

मिर्जापुर जनपद में अनेक ऐसी गुफाएँ हैं जिनमें लेखोपरिलेख हुआ है। इनमें जो चित्र पहली बार बनाए गए होंगे, वे अधिक प्राचीन हैं। वनस्पतियों और जीवाकृतियों को आरंभिक युग का मान लिया जाय तो निःसंदेह सूर्य, हाथी, भालू, बन्दर, गैंडा आदि जानवरों के चित्र मानवाकृतियाँ और आखेट दृश्य उसी काल के हैं, जब मनुष्य का जन्म हुआ। संक्षेप में कह सकते हैं कि मिर्जापुर जनपद के चित्रित शैलाश्रय अत्यंत प्राचीन हैं और वे तत्कालीन मानव की कला भावना और संस्कृति के जीते-जागते प्रमाण हैं।

गढ़, दुर्ग किले और कोर्ट

दुर्ग का अर्थ है दूर-असाध्य, कठिनता अर्थात् जहाँ कठिनाई से पहुँचा जाय। ऋग्वेद, ब्राह्मणग्रंथों आदि में दुर्ग के लिए 'पुर' शब्द का प्रयोग किया

---

1. जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, खण्ड 3, खंड 2 पृ0 57, 58

गया है। वैदिक काल में पुरों का निर्माण दुर्ग सदृश बस्ती के रूप में किया जाता था। हड़प्पाकालीन संस्कृति में भी इसके अवशेष प्राप्त हुए हैं। रामायण, महाभारत काल में राज–महलों को दुर्ग का प्रतिरूप कहा जा सकता है। इसके बाद मौर्य काल, शुंग सातवाहन युग, गुप्तोत्तर काल, मध्यकाल में दुर्गों का इतना निर्माण हुआ कि उसे दुर्ग–निर्माण की दृष्टि से स्वर्णयुग कहा जा सकता है। इसी समय कौशाम्बी, उज्जैन, राजगिरि, वैशाली, बानगढ़, बलि राजगढ़, राजघाट (वाराणसी) श्रावस्ती, मथुरा, अहिछत्र (बरेली) और शिशुपाल गढ़ आदि स्थानों पर बने दुर्गों का अनेकशः उल्लेख हुआ है। इनका निर्माण–काल छठी शदी से आरंभ होकर आठवीं शताब्दी तक अविच्छिन्न रूप से चलता रहा। कौटिल्य तक इनके निर्माण की प्रक्रिया चलती रही जिसके फलस्वरूप सर्वेक्षित क्षेत्र में भी अनेक दुर्गों का निर्माण किया गया।

दुर्गों का वर्गीकरण–दुर्गों को अनेक प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है। यथा–कृत्रिम तथा अकृत्रिम दुर्ग, नादेय, पार्वत्य, वन्य तथा कृत्रिम (रामायण) धन्य दुर्ग, मंदी दुर्ग, गिरि दुर्ग, मनुष्य दुर्ग, अब्दुर्ग (महाभारत) इसी प्रकार मत्स्य पुराण और 'अग्निपुराण' में भी दुर्गों का वर्गीकरण किया गया है। श्री अमरसिंह ने दुर्गों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है—

1. गिरिदुर्ग	(क) गुहादुर्ग	(ख) प्रान्तादुर्ग।	
2. औदकदुर्ग	(क) अन्तर्द्वीप	(ख) स्थलदुर्ग।	
3. वनदुर्ग	(क) खांजन दुर्ग	(ख) स्तम्भ दुर्ग।	
4. धन्यदुर्ग	(क) निरूदक	(ख) एरिण।	
5. महीदुर्ग	(क) परिध,	(ख) पंक	(ग) मृद दुर्ग।
6. नृदुर्ग			
7. मिश्रदुर्ग			
8. देवदुर्ग			

सर्वेक्षित क्षेत्र में प्राप्त दुर्गों की अलग–अलग धारणाएँ हैं जिनका उल्लेख यथास्थान किया गया है।

अगौरी दुर्ग–(सोनभद्र) अगोरी अघोरी का विकृत रूप है, जो 'अघोर

शब्द' से बना है। यह अघोरियों का साधना–स्थल था। यह स्थान कैमूर की पहाड़ियों, नदी, नालों, झरनों और खोह–कन्दराओं से घिरा महानद सोण के तट पर अवस्थित है। किम्बदन्तियों के अनुसार अगोरी बड़ा शहर था। "लोरिकायन' नामक गाथा में यहाँ 52 खण्डों में लगने वाली बाजार का उल्लेख हुआ है। आज भी अगोरी के साथ बाजार शब्द जोड़ा जाता है। इस किले को 1734 ए0डी0 में माधो सिंह ने बनवाया था, जो अगोरी के राजा मदनशाह का भाई था। विवरण निम्नवत् है—

1. प्रवेश द्वार की दुर्गा प्रतिमा 68x36 सेमी0।

2. दरवाजा 5.4x2.5 मी0 ऊँचा मेहराबदार।

3. प्रवेश–द्वार के दरवाजे की चौड़ाई 5.4 मी0 तथा दोनों ओर पहरेदारों के लिए स्थान।

4. प्रवेश–द्वार से भीतर पहुँचने पर दूसरी छत पर जाने के लिए आंगन के द्वार से दाहिनी ओर सीढ़ियाँ बनी हुई हैं जिससे किले के दूसरी छत पर पहुँचा जा सकता है। दाहिने हाथ कक्षों का निर्माण किया गया है, जिनमें से पहला कक्ष 7.2x3 मी0, दूसरा कक्ष 3x2.7 मी0 है। इन बरामदों के चारों ओर छोटे–छोटे कमरों का निर्माण किया गया है। उन कमरों में स्थान–स्थान पर झरोखे बने हुए हैं। कमरों की दीवारें 75 सेमी0 ऊँची हैं। प्रत्येक कोठरी के दरवाजों की ऊँचाई 1.5x.8 मी0 है। प्रवेश–द्वार से आगे बढ़ने पर, जाने वाली सीढ़ियों के पार्श्वभाग में 2 युगल मूर्तियाँ लाल पत्थर के दीवार में ही जड़ दी गयी हैं, जिनका आकार क्रमशः 1.50x.38 मी0 है। भीतर के कमरों की छतें मेहराबदार हैं और चौखटों पर कला की गयी है। दाहिनी ओर एक पक्के कुएँ का निर्माण किया गया है जो सोन तट तक चला गया है। किला दो भागों में विभक्त है जिसके बीच में चौतरे बनाए गये हैं। सम्भवतः यह स्थान दरबारियों के बैठने का भी रहा होगा। इस तरह के चौतरे पलामू के किले में देखे गए थे। यह चौतरा 90सेमी0 ऊँचा और लगभग 15 मी0 के आकार का चौकोर है। इस किले में भी प्रायः हर कोण से तीरंदाजी के लिए स्थान बनाए गए हैं। ऊपरी द्वार पर द्वार–रक्षकों के बैठने के लिए या खड़ा होकर पहरा करने के लिए स्थान बनाए गए हैं। किले के पिछले भाग में परेड के लिए

सुविस्तृत पक्की छतें बनायी गयी हैं जो सब मिलाकर लगभग 50 मीटर लम्बी हैं। इन बड़े आंगन का आकार 33 मी0 x 18 मी0 मापा गया है। इनमें नौ–नौ कक्ष पूरब पश्चिम और उत्तर–पश्चिम को बने हैं जिनमें 7–7 द्वार हैं। प्रत्येक द्वार 1.80 मी0 चौड़ा 2 मी0 ऊँचा है। दो द्वारों के बीच में चौकोर झरोखे बने हैं। इस प्रकार कुल 42 झरोके दीवारों में बने हैं। इसके पश्चिमी छोर पर दोनों ओर कक्ष बनाए गए हैं और ऊपर जाने के लिए सीढ़िया बनी हैं। कमरों की छतों को घेरा नहीं गया है जिसके कारण ऊपर जाकर लम्बी छत गैलरी के रूप दिखलाई पड़ती है। इसके नीचे की दीवारें काफी मोटी हैं और यहाँ से सोन नदी का दृश्य बहुत ही सुहावना लगता है। किले के पीछे भी एक प्रवेश–द्वार खिड़की के रूप में बनाया गया है। इसके दाहिनी ओर देवी की सुन्दर कलात्मक मूर्ति प्रतिष्ठित है। इस प्रवेश–द्वार से आगे कुछ कक्षों का निर्माण कराया गया था जो अब नष्टप्राय हैं। इस विशेष प्रांगण के चारों ओर चार बुर्जों का निर्माण कराया गया था। इस आंगन के तीन ओर छोटे–छोटे कक्षों का निर्माण किया गया है, जिनमें से प्रत्येक 1.5 मी0 के हैं। चौतरे से दक्षिण 12x4.2 मी0 के आकार का एक कक्ष निर्मित है, जिसमें 7 द्वार 2.1x2.1 मी0 चौड़े बनाए गए हैं। इसी कमरें में पूरब की ओर एक दूसरा कक्ष भी बना है, जिसमें प्रवेश के लिए चौतरे से द्वार बनाया गया है। इसी द्वार से ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं। इस किले से 1 किमी0 पूरब महरा की पहाड़ी ध्वंशावशेष के रूप में पड़ी है।

अम्बिकापुर के राजा की गढ़ी–अम्बिकापुर नगर में बसअड्डा के समीप एक भव्य महल है जिसका निर्माण महाराजा रघुनाथ शरण सिंह ने कराया था। उनके पुत्र श्री रामानुज शरण सिंह थे जिनके नाम पर रामानुजगंज बसा है।

यह गढ़ी दो सौ वर्ष पूर्व की बनी है। इसका विशाल दरवाजा मजबूत लकड़ी का बना है जिसके चौखटों की नक्काशी अपने में बेजोड़ है। द्वार के तीन ओर विशाल काष्ठ स्तम्भ, नक्कासीदार रोशनदान। दीप–स्तम्भ धातु के बने, अत्यंत सुन्दर, नक्कासीदार महल का सामना भव्य है। कई दरवाजे,

दरवाजों पर नक्कासी, रंगों की कला लाल, पीले, नीले रंगों की, पच्चीकारी करके उनमें रंग भरा गया है। फूल–पत्ती, लताएँ, मछली आदि के चित्र। सामने बड़ा विस्तृत मैदान जिनमें फूल–पत्तियां, लताएँ सुशोभित हो रही होंगी।

महल का भीतर प्रांगण अनेक प्रकार से सुसज्जित। बैठका, दरबार, बरामदा, परिजनों–पुरजनों के बैठने की जगह, पुस्तकालय, सभाकक्ष, मंत्रणा–कक्ष, पूजा–कक्ष, रनिवास, राजा–निवास सभी एक से एक भव्य हैं। शस्त्रास्त्रों तथा उपहार प्राप्त वस्तुओं का संग्रह किया गया है। बैठका जानवरों के सींगों से सुसज्जित है।

मन्दिर–महल के पार्श्व भाग में तीन बड़े मन्दिर हैं जिनमें अब ताले बन्द हैं। इनमें से दो मन्दिर संगमरमर की नक्कासीदार जालियों से घेर दिये गये हैं। जालियों की कला भी अद्‌भुत है। मन्दिर में नंदी, शिवलिंग, सूर्य की प्रतिमाएँ पुरानी पत्थर की हैं। मन्दिर सामान्य आकार का है। एक मन्दिर सबसे ऊँचा है। मन्दिर में ताला बन्द है। विवरण इस प्रकार है—

1. गढ़ी का मुख्य द्वार लगभग 4.50 मी0 ऊँचा है, चौड़ाई 2 मीटर, दीवार की मोटाई 1 मीटर।

2. प्रकाशदीप–60 सेमी0 लम्बा, 80 सेमी0 वृत्ताकार। 3. चौखट 3.75 x 2.20 x .25 मी0 4. दरवाजा 3.50 x 1.12 x 20 मीटर।

अहरौरा का दुर्ग–मिर्जापुर जिले का यह वह टप्पा है, जहाँ आभीर अथवा अहीर अधिक संख्या में रहते थे, और वे वहाँ घी, दूध का व्यापार करते थे।

वाराणसी–राबर्ट्सगंज मार्ग पर अहरौरा से लगभग 6 किमी0 दक्षिण सड़क से पूरब एक भग्नावशेष प्राप्त है। इसको देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि पहले यहाँ कोई दुर्ग रहा होगा, अब इसका लगभग सम्पूर्ण भाग बंधे के अन्दर है और वर्षा के दिनों में जलमग्न हो जाता है। इस किले की विशेषता यह है कि इसके चारों ओर खाईं नहीं खोदी गयी है। अधिकतर कमरे वृत्ताकार हैं। उसकी छतें अब गिर कर नष्ट हो चुकी हैं, किन्तु सर्वेक्षण में एक पक्का

कुआं, शौचालय, जांता, चकरी आदि वस्तुएँ देखने को मिली थीं। लोगों का कहना है कि इस किले में पहले बहुत अधिक खजाना था जो कालान्तर में समाप्त हो गया। इस दुर्ग में बड़े–बड़े पत्थर लगे हुए हैं जिन पर नक्काशी की गयी है तथा कला की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण हैं। इस दुर्ग से लगभग एक किलोमीटर उत्तर दुर्गा जी का सुन्दर स्थान है।

गढ़लादी–डाल्टनगंज रेलवे स्टेशन से नदी का तट लगभग 2 किमी0 दूर पड़ता है। यहाँ से राज चैनपुर जाने के लिए टैम्पो, रिक्शे सुलभ रहते हैं। इसी चैनपुर के सीमा पर राय बहादुर अमर दयाल सिंह का एक गढ़ है, जिसे गढ़लादी के नाम से जाना जाता है। राय बहादुर अमर दयाल सिंह के बाद इस गढ़ के मालिक कुंअर अम्बिका प्रसाद सिंह हुए। वे कला–प्रेमी तथा शौकीन आदमी थे। उन्होंने इस गढ़ी को सजाने–संवारने का प्रयास किया था। किन्तु उनकी मृत्यु के उपरांत गढ़ी की रौनक समाप्त हो गयी और अब वह धीरे–धीरे ध्वंशावशेष के रूप में दिखलाई पड़ने लगी है। तब भी गढ़ी के अन्दर कई कक्ष, मन्दिर, घुड़साल, हस्तिशाला, रनिवास, राजमहल, दरबार आदि कक्षों का निर्माण किया गया है। उसमें देवी–देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित की गयी हैं।

चैनपुर का राजमहल–पलामू राजा के दीवान पूरनमल सुरवार क्षत्रिय हैं। चैनपुर में उनका एक पुराना राजमहल है। डाल्टनगंज कोयल के तट पर इस राजवंश की एक इमारत गढ़ी के रूप में खड़ी है जिसे कुछ लोग चैनपुर बंगला के नाम से भी जानते हैं। इस बंगला के निकट खेर पोशदारों की भी इमारतें बनी हैं। रंका के राजा इनके भाई थे। पक्की ईंटों से बनी हुई यह गढ़ी दो छतों में निर्मित है और कला की दृष्टि से काफी सुन्दर है। इसके अन्दर कुछ कक्षों का निर्माण किया गया है। इस गढ़ी में लगे हुए दरवाजे, आलमारियां, काष्ठ–कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

चुनारगढ़–चुनार हमारे पूर्वजों की तपोभूमि तथा बड़े–बड़े पराक्रमी राजाओं के शौर्य, साहस एवं इनकी वीरता का प्रतीक है। भगवान श्रीराम ने इसी अंचल में ताड़का और सुबाहु को मारा था। महर्षि वैतानिक विश्वामित्र का

आश्रम भी यहीं था। यहीं महर्षि अगस्त्य ने इन स्थानों का भ्रमण करते हुए शैव–धर्म का प्रचार किया था।

प्राप्त अभिलेखों के अनुसार यह किला ईसा के जन्म से 56 वर्ष पूर्व बना था। उज्जैन के राजा विक्रमादित्य ने इसे जीता था। इसके बाद पृथ्वीराज राय पिथौरा ने 1144 से 1191 तक इसे अपने अधिकार में रखा, फिर शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने 1194 में, सिकन्दर (द्वितीय) लोदी ने 1512 में, बावर ने 1539 में, शेरशाह सूरी ने 1530 में, हुमायूँ ने 1536 में, इस किले पर चढ़ाई की थी। शेरशाह सूरी ने 1530 में पुनः चढ़ाई की। 1545 से 1552 तक इस पर इस्लाम शाह का अधिकार था। 1579 में अकबर ने इस किले पर अधिकार कर लिया। मिर्जामुकीम सरनेम मंसूर अली खान रफ्दार जंग नवाब ऑफ अवध ने 1750 में इसे जीता। इसके बाद 1765 में इस पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। शुजाउद्दौला ने 1565 में इस पर चढ़ाई की। 1772 में यह फिर अंग्रेजी शासन में आया। वारेन हेस्टिंग ने 1781 में चढ़ाई कर इसे अपने अधिकार में कर लिया। किला बनने से 16 वर्ष पूर्व यहाँ भर्तृहरि की समाधि लग गयी थी। कहते हैं, तब उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य ने अपने भाई भर्तृहरि के लिए इस दुर्ग का पुनरुद्धार कराया था। यह स्थान उस समय और रम्य रहा होगा। राजर्षि भर्तृहरि ने इसी उन्मुक्त वातावरण में किले के भीतर अपनी समाधि बनाई थी और कहते हैं कि वैराग्य शतक की रचना भी उन्होंने यहीं की थी।

दुर्ग के दो प्रवेश द्वार हैं, एक पश्चिम के टेकउर के पास में किले की परिक्रमा करते हुए गंगा–तट से जाता है। यहीं किले का पृष्ठभाग पड़ता है। किले के प्रवेश–द्वार के दाहिने हाथ फारसी लिपि में एक शिलालेख प्राप्त हुआ है। प्रवेश–द्वार इतना विशाल है कि लदा–लदाया हाथी अन्दर जा सकता है। इस प्रवेश–द्वार के पूर्व किले की परिक्रमा का भी एक दूसरा मार्ग टेकउर से पूर्व की ओर मुड़कर जाता है। यह किले का उत्तरी भाग है। किले के अन्दर प्रवेश करने के लिए पत्थर की सीढ़ियां बनी हैं और क्रमशः ऊपर की ओर चढ़ना पड़ता है। ज्ञातव्य है कि यह सम्पूर्ण दुर्ग विशाल पत्थरों से ही बना है। मार्ग

में शत्रुओं से रक्षा के ख्याल से दो तोपें लगाई गयी हैं। दाहिने हाथ अत्यंत गहरा एक कुआँ बना है। इसके बाद दाहिने हाथ कई विशाल कक्ष निर्मित हैं जो अब पी0ए0सी0 के जवानों के कब्जे में हैं।

इसके बाद दाहिनी ओर सोनवाँ (आल्हा की पत्नी) का मंडप है। इस दुर्ग के दक्षिण की ओर कई विशाल कक्ष बने हुये हैं जिनके अन्दर प्रवेश–निषेध है। कहते हैं इस किले में कई गुफायें और कमरे के अन्दर कमरे इस कदर बने हैं कि वह तिलस्मी हो गया है। अन्दर प्रवेश कर लेने पर पुनः बाहर निकलना अत्यंत कठिन हो जाता है। किले की छत के ऊपर चारों ओर तिरंदाजी के लिये स्थान छोड़े गये हैं ताकि शत्रुओं को ऊपर से ही धराशायी किया जा सके।

इस किले में एक अंध–कक्ष बना है जिसके बारे में कहा जाता है कि पहले गूँगे व्यक्तियों को इसमें बंद कर दिया जाता था और वे मुखर हो उठते थे। किले से दक्षिण की ओर हनुमान जी का एक मन्दिर बना है। यहाँ अनेक अवसरों पर मेले–ठेले लगते हैं और समय–समय पर दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रही है। इस मन्दिर पर जाने के लिए लगभग 300 सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं। किले का कुल विस्तार दक्षिण से उत्तर की ओर लगभग डेढ़ किलोमीटर है। इसकी चौड़ाई लगभग पौन किलोमीटर है। किले का आकार बैठे सिंह की तरह है। सिंह–द्वार अत्यंत विशाल है। किला मजबूत काले तथा गुलाबी लाल पत्थरों से बनाया गया है।

तमोलगढ़ का किला–कोयल नदी पलामू की शोभा ही नहीं बल्कि वहाँ की संस्कृति की संवाहिका भी है। इसकी बाजुओं पर बने पुराने किले इस बात के साक्ष्य हैं कि इसने इतिहास भी गढ़े हैं।

तमोलगढ़ का किला, पलामू, शाहपुर किला, चैनपुर किला (गढ़), लादी, विश्रामपुर किला, भारहोर का किला, सोनपुरा का किला, रोहिरों का किला और नारायणपुर का किला आदि सभी इसके तट पर इसलिए भी बनाए गए थे कि उन गढ़ों के लिए भी यह नदी गढ़ का काम करती थी।

इस किले का निर्माण राजामानसिंह (रक्सेल राजा) द्वारा कराया गया था। राजा मानसिंह सरगुजा की पहाड़ियों को पार करते हुए छेछारी के रास्ते पलामू आए थे। उन्होंने मराठों के साथ कई लड़ाइयाँ लड़ीं। उसमें मराठे उनके द्वारा पराजित हुए थे। मराठों के पराजित होने के बाद मानसहिं ने कोयल के तटवर्ती इलाकों पर अपना राज्य स्थापित किया। राजा मानसिंह का संघर्ष चेरो जाति के राजा सहाबुनराज, जो दिल्ली में मुगल सम्राट् जहांगीर द्वारा कैद कर लिया गया था, से हुआ। उनके कैद होने के फलस्वरूप निष्कंटक राज्य करके राजा मानसिंह ने अपनी यश–पताका फहराने के ख्याल से वीरभूमि मातृभूमि और सिंहभूमि में भी निर्माण कार्य कराए।

एक बार राजा मानसिंह अपने एक संबंधी के विवाह में सरगुजा गए हुए थे जिसकी जानकारी चेरों सरदार भगवन्त राय को हुई। वह घबडंड के राजा देवशाही के पुत्र हुरनमल की सहायता से मानसिंह के परिवार के सभी सदस्यों की हत्या करके 1613 ई0 में पलामू का राजा बन बैठा। पलामू तथा यहाँ के अन्य किलों में उस काल के कुछ सिक्के, पात्र और शस्त्र भी प्राप्त हुए हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह किला ऐतिहासिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण था। इस समय किले में भग्नावशेष के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

नारायणपुर का किला–नारायणपुर का किला लातेहार (बिहार) तहसील से 8 किमी0 दूर दक्षिण नवागढ़ के समीप नारायणपुर के टोंगरी पहाड़ पर स्थित है। यह किला तीन हिस्सों में विभक्त है। राजागढ़, कन्नौदागढ़ और नावागढ़। राजागढ़ में सहाबुल राय के किले का ध्वंशावशेष आज भी विद्यमान है। कन्नौदागढ़ एवं नवागढ़ में उनके कर्मचारी एवं दीवान निवास करते थे। यह किला पलामू के रामा भगवन्त राय के लेखपाल जागदास का है, जो दीवान पूरनमल के साथ घबडंड से पलामू आए थे। पलामू के राजा ने उन्हें 54 गांव जागीर में दी थी। आजकल उनके वंशज नासिंगपुर, मंगलपुर खास, डंडाद और करारपुर में निवास करते हैं। चेरो राजा द्वारा उन्हें ठाकुर की उपाधि दी गयी थी।

पलामू किला–पलामू किले का शिलान्यास राजा मानसिंह ने कोयल और औरंगानदी के संगम पर अपने समय में किया था। इस किले का विस्तार राजा भगवन्त राय द्वारा किया गया और पलामू के प्रतापी राजा मेदनी राय द्वारा इसे सुदृढ़ गढ़ के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। नये किले के द्वार पर प्राप्त एक शिलालेख के अध्ययन से पता चलता है कि इस किले का निर्माण माघ बदी 5 सं0 1519 (8 जनवरी 1534 ई0) में राजा मेदनी राय द्वारा कराया गया था। किले के नागपुरी दरवाजों की सभी ने प्रशंसा की है जिस पर बेलबूटों की नक्काशी की गयी है।

कहते हैं पलामू किले के पास कोई विशाल नगर बसाया गया था, जिसके अवशेष आज भी सरईडीह, पोखरी, ओलपोल, सतंवरवा, किचली अक्शाने, चांदो आदि स्थानों पर प्राप्त हो जाते हैं। इस किले और नगर के बारे में ऐसा प्रचलित है कि यहाँ 52 गलियां और 53 बाजारें थीं। किले के आस-पास का जंगल इतना भयावह और घना था कि यहाँ शेर, हाथी, चीतें और भालू आदि जानवर रहते थे। सफेद हाथी इसी जंगल में पाए जाते थे।

पुराना किला–यह किला औरंगा नदी के तट पर प्रकृति के सुन्दर वातावरण के बीच स्थित है। इसका प्रवेश-द्वार अत्यन्त भव्य है। उसमें घुमावदार रास्ते बने हुए हैं। प्रवेश करने पर सामने विशाल मोटी दीवार दीखती है। उस दीवार से दाहिने हाथ मुड़कर फिर बाएँ हाथ मुड़ना पड़ता है। फिर क्रमशः सीढ़ियों द्वारा ऊपर चढ़ा जाता है। ऊपर जाने पर विशाल द्वार मिलता है, जिसमें प्रवेश करने के बाद एक आंगन दिखलाई पड़ता है। आंगन चारों तरफ दीवारों से घिरा है, जिसके एक किनारे के ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इन सीढ़ियों द्वारा दूसरी छत पर पहुँचा जा सकता है। वहाँ से दोनों ओर लम्बी गैलरियाँ बनी हुई हैं। किले में स्थान-स्थान पर तीरंदाजी के लिए स्थान बने हुए हैं। पहरेदारों के लिए बैठकें बनायी गयी हैं ताकि वे वहाँ से किले की सुरक्षा कर सकें। कुछ लोगों ने कहा-"यहाँ घोड़े दौड़ते थे।" ये सभी दीवारें सूर्खी, चूना से ईंट, पत्थर द्वारा चुनी गयी हैं। ईंटें पक्की हैं। गैलरी 2.1 मी0 चौड़ी है। गैलरी की दीवार 200 सेमी0 चौड़ी है। ऊपर ही ऊपर हर

जगह पहुँचने के लिए रास्ते बने हुए हैं। दो गुम्बदाकार कक्ष निर्मित हैं। इन कक्षों का निर्माण ईंटों से किया गया है। दीवार की प्रत्येक ईंट 24x23 सेमी0 आकार की है। ऊपर चढ़ने के लिए जो सीढ़ियाँ बनी हैं, उसकी चौड़ाई 105 सेमी0 है। भीतर की दीवार 3 मीटर चौड़ी है। कहीं–कहीं दीवा र की मोटाई 167 सेमी0 है। प्रवेश–द्वार का भीतरी आंगन 15x11 मी0 के आकार का है। आंगन के भीतरी भाग में 3 गुम्बदाकार कक्ष निर्मित हैं जिसके दीवार की मोटाई 15 सेमी0 है। कमरे की चौड़ाई 3.9 मी0 है। यह 5 मीटर लम्बी है। इसकी ऊँचाई 2.7 मी0 अनुमानित है। यहाँ एक कुआं 4.5 मी0 व्यास का है। इसकी गहराई लगभग 10.5 मी0 है। इस कुएँ से लगी हुई आगे एक सुरंग देखी गयी। इस सुरंग की चौड़ाई लगभग 1 मी0 है। ईंटों की चुनाई काफी मजबूत है। किले के भीतर खुले प्रांगण में कुछ कोठरियों का निर्माण किया गया है, जो अभी भी ठीक स्थिति में हैं। इन कोठरियों का निर्माण इस प्रकार किया गया है कि एक से प्रत्येक में जाया जा सकता है। इसके ठीक सामने एक लम्बे–चौड़े चबूतरे का निर्माण किया गया है। ये कक्ष 9x4.5 मी0 के हैं। इसका निर्माण बड़े कलात्मक और सुन्दर ढंग से बड़ी कारीगरी के साथ किया गया है। यहाँ एक अन्हरिया कोठरी है।

किले के इस विशाल प्रांगण में स्थान–स्थान पर कक्षों का निर्माण किया गया है। किले का पिछला प्रवेश–द्वार काफी भव्य, मजबूत और विशाल है। इसमें कुल 5 मोड़ हैं। किले में सीधे प्रवेश किया ही नहीं जा सकता। यहाँ दूसरी छत पर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। पूरा प्रांगण 4 भागों में विभक्त है। इसके प्रत्येक दीवार की ऊँचाई लगभग 9 मी0 है। सुरंग के पार्श्ववर्ती द्वार पर कई सुन्दर कलाकृतियाँ मन को मोह लेती हैं। यह किला इतना मजबूत है कि इसकी दीवार कहीं–कहीं 4.5 मी0 तक मोटी है जो शत्रुओं के लिए सर्वथा अभेद्य है। प्रवेश–द्वार की चौड़ाई 2.85 मी0 मापी गयी। इसकी ऊँचाई लगभग 6 मी0 है।

नया किला–नया किला पुराने किले से थोड़ी दूर पर स्थित है। पुराना किला तो नीचे है, किन्तु नया किला एक पहाड़ी पर बनाया गया है जिसके

ऊपर पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बना दी गयी हैं। इस किले का प्रवेश–द्वार काफी भव्य और विशाल है। इसमें लगी चौखट काफी मजबूत हैं। बाएँ हाथ से किले के अन्दर प्रवेश किया जाता है। अन्दर जाने पर एक गैलरी मिलती है, जिसके नीचे सुरंगें बनी हुई हैं। इस किले का निर्माण भी सुर्खी–चूने से ईंटों–पत्थरों को जोड़ कर किया गया है। किले में प्रवेश करने के बाद एक बड़ा कक्ष मिलता है, फिर उससे लगे हुए दोनों ओर छोटे–छोटे कई कक्षों का निर्माण किया गया है। सम्भवतः इनमें प्रहरी रहते रहे होंगे। यहाँ आने–जाने के लिए 5 फिट चौड़ा रास्ता भी बनाया गया है। प्रत्येक कक्ष 5 मीटर 10 सेमी0 का है। गैलरी दूर तक लम्बी चली गयी है। समानान्तर 2 खिड़कियाँ उत्तर, दक्षिण और पूरब पश्चिम की ओर एक ही माप की बनायी गयी हैं। खिड़की के द्वार 182 सेमी0 x 126 सेमी0 के हैं और दीवार 86 सेमी0 चौड़ी है। इसमें जोड़े गए अधिकतर पत्थर गढ़े नहीं गए हैं। सीढ़ी से होकर किले के ऊपर पहुँचा जा सकता है। इस किले को नदी घेरे हुई है और चारों ओर से पहाड़ों के कारण यह अपने आप सुरक्षित हो गया है।

बर्दीगढ़–सीधी जिले के घने जंगल में सोन से कुछ दूर एक पहाड़ी पर बर्दीगढ़ का निर्माण कराया गया था। दुर्ग के प्रवेश–द्वार से 10 मीटर की दूरी पर बायीं तरफ देवी की खण्डित मूर्ति एक वृक्ष के नीचे पड़ी हुई है। गढ़ के प्रवेश–द्वार से दाहिनी ओर कुछ कक्षों का निर्माण किया गया है। ये कक्ष पत्थर, गारा और चूना से जोड़े गए हैं। इसका एक कक्ष 4 मी0 के आकार का है। बरामदे में खम्भे पत्थर से जोड़ कर बनाए गए हैं। चौखट भी सफेद पत्थर से जोड़ कर बनाए गए हैं। किन्तु वे सभी कलात्मक हैं। प्रायः सभी द्वारों का आकार लगभग 1.2x.75 मी0 है। दीवारें 37 सेमी0 मोटी और अभेद्य हैं।

भीतर के प्रायः सभी कमरे भग्नावशेष हैं। उन सब की छतें गिर चुकी हैं। बीच में एक बड़ा आंगन है और उसके चारों ओर बरामदे, बरामदे के भीतर छोटे–बड़े कमरे बनाए गए हैं। इस पूरे क्षेत्र का आकार 18 मी0 x 3.6 मी0 है, जिसमें 6 द्वार 2.1x1.7 मी0 के बने हुए हैं। बरामदों में सामने कलात्मक पत्थर लगाए गए हैं। आंगन का आकार 3.6x2.1 मी0 अनुमानित है। गढ़

के पिछले भाग में 5 प्रवेश–द्वार बनाए गए हैं। बीच में 3.6x1.8 मी0 की गली छोड़ी गयी है। यह गली चारों ओर से इस प्रकार बनी है कि पूरी गढ़ी के अन्दर उस गली से ही जाया जा सकता है। एक गली लगभग 3 मी0 देखी गयी। सभी प्रवेश–द्वार मेहराबदार, ऊपर से त्रिकोणाकार बने हुए हैं, जो देखने में सुन्दर हैं। सुरक्षा के ख्याल से ये छोटे अवश्य हैं। इसके मुख्य–द्वार पूरब की ओर हैं जो 2.1 मी0 एवं लगभग 6 मी0 अत्यंत कलात्मक, सुन्दर, सफेद पत्थरों से निर्मित हैं। द्वार के दोनों ओर द्वारपालों के बैठने की जगह बनी हुई है जिसमें गेरू रंग के कुछ चित्र बने हैं। मुख्य–द्वार के दीवार की चौड़ाई 2.1 मी0 है। अर्गला लगाने के लिए दोनों ओर 2 मुक्के बनाए गए हैं। द्वार पर सामने लाल रंग के सुन्दर कलात्मक पत्थर भी लगाए गए हैं। मुख्य–द्वार से दोनों ओर की दीवारें भग्नावशेष अवस्था में पड़ी हुई हैं और वे गोलाकार हैं। इस गढ़ी का निर्माण बर्दी के राजा साहब ने अपने आवास के लिए लगभग 200 वर्ष पूर्व करवाया था।

महाराजा गुलाब सिंह की गढ़ी–सीधी में पहाड़ी पर महाराजा गुलाब सिंह की गढ़ी बनी है जिसमें राजा साहब तब निवास करते थे जब वे शिकार खेलने के लिए यहाँ आते थे। गढ़ी के सामने एक मचान बनाया गया है। यह कोठी जोधपुर के गुलाबी रंग के पत्थर से बनी है जिसकी जोड़ाई विशेष प्रकार से की गयी है। भैंसा–नाध कर चूने की पेराई की जाती थी और सीमेंट, गुड़, मेथी को मिलाकर एक विशेष प्रकार का मशाला तैयार किया जाता था जिससे पत्थर की जोड़ाई होती थी। गढ़ी में लगे पत्थर बड़े ही चिकने और सुन्दर हैं। भीतरी भाग तीन कक्षों में बंटा है। सामने बरामदा है। पहले यहाँ कई प्रकार की बन्दूकें, कलात्मक काष्ठोपकरण रखे थे किन्तु एक बार चोरी हो जाने के कारण वे यहाँ से हटा दिए गये। गढ़ी का रखवाला गणेश ने बताया कि राजा साहब जब शिकार करने जाते थे तो तमाम आदिवासी उनका स्वागत करते थे। वे हंकवा कराते थे। शिकार हो जाने के बाद आदिवासियों की ओर से नाचने–गाने का वृहद् आयोजन किया जाता था। सावन के महीने में झूले और झांकी का आयोजन करके यहाँ के अहीर बड़े पैमाने पर नृत्य का आयोजन करते थे। यहाँ का आदिवासी मनुआबारी बहुत ही अच्छा नृत्य करता था। गणेश बात–बात में

हुकुम शब्द का प्रयोग करता था।

मारहोर का किला–मारहोर या मारह जाति का उल्लेख अनेकशः किया गया है। इस जाति के लोगों ने 12वीं शदी में रोहतास से आकर पलामू के पश्चिमोत्तर सीमा पर सोन और कोयल नदी के तट पर अपना राज्य स्थापित किया था। दक्षिण में उनका अधिकार गढ़वा तक बताया जाता है। मारहों ने कई स्थानों पर निर्माण–कार्य किया था जिनमें से एक बेतला का कुआं भी है। इसी कुएँ के पास एक खण्डहर ध्वंशावशेष रूप में प्राप्त है, पलामू के निकट स्थानों पर इन्होंने छोटे–छोटे गढ़ों, दुर्गों का निर्माण अपनी सुविधा के लिए कराया था, जिनमें से मुख्य हैं–अमानत नदी के तट पर तरहसी, लेसलीगंज के छावनी गांव, औरंगा तट पर मुकेरी बेलोजा के अमरोरा, अमानत–तट पर मोखा तथा गढ़वा डड़ाह, लखना, मरहरिया, उटनू, करवा, पंचपड़वा आदि। इन स्थानों पर उनके द्वारा निर्मित परकोटों के अवशेष प्राप्त हैं। अमरोरा में भी भगवानपुर के समीप मारहों का एक किला है जो ईंटों का बना है। इसके किवाड़ों की नक्काशी देखने योग्य है। इसकी राजपूत–शैली है।

रोहतासगढ़–'शाहाबाद गजेटियर (1924)' में रोहतासगढ़ के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य दिया गया है। उनके अनुसार इस किले का प्राचीनतम संबंध राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व से जोड़ा गया है। इस संबंध में राजा हरिश्चन्द्र ने सत्यव्रत–पालन हेतु अपना सर्वस्व, यहाँ तक कि अपनी पत्नी और पुत्र तक को निछावर कर दिया था।

ऐसा कहा जाता है कि रोहतासगढ़ पर आरम्भ में उरावों का शासन था। रोहतासगढ़ में प्राप्त शिलालेखों से ऐसा प्रतीत होता है कि 1169 ए0डी0 में इस पर हिन्दू राज्य कायम हुआ। जपला, प्रतापधोला, जो जपीला नायक था, प्रधान था, ने सबसे पहले पहाड़ी के ऊपर एक मार्ग का निर्माण कराया था। सासाराम के समीप ताराचण्डी और तोतराही नामक (तिलौथू) से 8 किमी0 पश्चिम स्थान पर गुफा के अंदर जो अभिलेख पाया गया है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ पलामू जिला के प्रतापधौला गाँव प्रधान थे। रोहतासगढ़ के ही एक दूसरे अभिलेख से ये ख्यरवाला (खरवार) वंश के प्रमुख थे। कुछ ऐसा

ही उल्लेख 1223 ए0डी0 के लाल दरवाजा अभिलेख से भी प्राप्त हुए हैं। प्राप्त उल्लेखों के अनुसार 1539 ए0डी0 में यह दुर्ग हिन्दू राजाओं के हाथ से शेरशाह के हाथ में आया। गजेटियर के ही अनुसार जब चुनार का दुर्ग शेरशाह के हाथ से निकल गया तो उसने रोहतासगढ़ पर अपना आधिपत्य जमा लिया। उसी समय इस किले पर दूसरों का अधिकार था, लेकिन शेरशाह ने सपरिवार वहाँ रहने की उनसे अनुमति प्राप्त की। इस संबंध में एक रोचक घटना का उल्लेख भी किया जाता है। शेरशाह ने वहाँ कुछ डोलियाँ भेजी थीं जिनमें से कुछ डोलियों में कुछ बूढ़ी औरतें थीं, किन्तु बाकी में शस्त्र–सज्जित अफगान सैनिक थे। ये डोलियाँ जब किले के बाहरी दरवाजे के पास पहुँचीं तो उनका निरीक्षण किया गया। इन डोलियों का निरीक्षण करने पर जब उनमें बूढ़ी औरतें मिलीं तो सभी डोलियों को अन्दर जाने की अनुमति दे दी गयी। अन्दर पहुँचते ही अफगान सैनिकों ने किले के रक्षक पर आक्रमण कर दिया। हिन्दू राजे भाग खड़े हुए और शेरशाह ने किले पर अपना आधिपत्य जमा लिया।

मुस्लिमकाल में ही किले का निर्माण वृहद रूप में कराया गया। बड़े–बड़े कक्षों, महलों, कर्मचारियों के लिए आवासों, घुड़शालों आदि का निर्माण भी कराया गया, कुछ गाँव बसाए गए, खेती बारी आदि की व्यवस्था की गयी, पानी की समुचित व्यवस्था की गयी। मानसिंह जब बंगाल और बिहार का वायसराय नियुक्त किए गए तो उसने रोहतास को अपना मुख्य केन्द्र बना लिया। मानसिंह ने अपने समय में किले का पुनरुद्धार भी कराया। अपने रहने के लिए महल का निर्माण कराया। उसके सामने पर्सियन स्टाइल के सुन्दर बाग लगवाए। उसके मरने के बाद किले की हालत दिन पर दिन खराब होती गयी और 1644 में शाहजहाँ ने इस पर अपना प्रभाव जमा लिया। इस समय किला किलेदार के हाथ में सौंप दिया गया था। उसने किले की रक्षा के लिए चार, पाँच सौ व्यक्तियों को नियुक्त कर दिया था और उनके खर्चे के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था भी कर दी थी। इसके बाद यह किला हजारी शासकों के हाथ में आ गया।

स्थिति–रोहतासगढ़ टेहरी से लगभग 50 किमी0 दूर कैमूर की पहाड़ी

पर, जो समुद्र की सतह से 444 मीटर ऊँची है, पर स्थित है। इस पहाड़ी के एक ओर सोन और उसके आसपास की ऊँची पहाड़ियों पर जंगल हैं तो दूसरी ओर भी घने जंगलों से घिरी ऊँची–ऊँची पहाड़ियाँ हैं। इसके समीप अकबरपुर गांव स्थित है। पूरब से पश्चिम तक लगभग 6 किमी0 के विस्तार में लगभग 8 किमी0 दूर तक पहाड़ ही पहाड़ दिखलाई पड़ते हैं। करिवारी खोह गैलरियाँ खोहों से घिरी हुई यह पहाड़ी प्राकृतिक रूप से सुरक्षित हो गयी है।

अब यहाँ पहुँचने के लिए अलग–अलग कई मार्ग हो गए हैं किन्तु इनके मुख्य चार घाट हैं जिनमें एक राजाघाट तथा दूसरा कठौतिया मुख्य हैं। उत्तर की ओर मानसिंह द्वारा बनाए गए दो विशाल–द्वार हैं जिनमें कई खिड़कियाँ लगी हुई हैं। ये द्वार लगभग 9 मीटर लम्बे हैं। यह किला कई खण्डों, उपखण्डों में विभक्त है जिसके अधिकांश ध्वंश हो चुके हैं किन्तु लाल पत्थरों का बना हुआ लाल दरवाजा अभी भी अपनी विशालता का प्रतीक बना हुआ है।

महल–अकबरपुर से आगे बढ़ते ही काले रंग के चूने–पत्थर वाली पहाड़ी दिखाई पड़ती है। उसी के मध्य एक भग्नावशेष दिखाई पड़ता है। यह भू–भाग दीवारों से घिरा है और उन दीवारों में तिरंदाजी के लिए स्थान बने हुए हैं। इस चहारदीवारी के बीच काफी दूर तक विशाल भवनों का निर्माण किया गया है। सोन की ओर अकबरपुर के निचले भाग में जो भवन निर्मित हैं वे बिल्कुल अलग–थलग और महत्वपूर्ण हैं और काफी ऊँचे भी। ये महल उत्तर से दक्षिण की ओर निर्मित हैं। इनमें प्रवेश के लिए पश्चिम की ओर विशाल कोर्टयार्ड बने हुए हैं। कोर्ट–यार्ड के इस भीतरी भाग में कुछ अन्य कक्षों का निर्माण किया गया है। इसके उत्तरी–पूर्वी भाग पर महल के मुख्य द्वार का निर्माण किया गया है। इस विशाल द्वार के दोनों ओर हाथियों की आकृतिनुमा निर्माण किया गया है। इसी कारण इसे कुछ लोग 'हथिया पोल' अथवा "हाथी–द्वार" के नाम से भी पुकारते हैं। एक अभिलेख के अनुसार इसका निर्माण 1597 में मानसिंह ने कराया था। इसके दोनों ओर द्वारपालों के कक्ष बने हुए हैं जिसे 'बारहदुआरी' के नाम से जाना जाता है। कहते हैं वायसराय

इस विशाल कक्ष का उपयोग श्रोताओं के बैठने के लिए हाल के रूप में करता था। इसके सामने एक खुला बरामदा, स्तम्भों पर निर्मित है। इसके ऊपरी भाग पर भी छोटे–छोटे कुछ कक्षों का निर्माण किया गया है। महल के मध्य भाग को "आइना महल" के नाम से जाना जाता है।

अन्य निर्मित भवन–उपरोक्त महल के अतिरिक्त तख्त पातशाही नामक निर्मित भवन की भी चर्चा है। यहीं गवर्नर का आवास था। इसके दूसरी छत पर सुन्दर हाल और गलियारा बनाया गया था। यह हाल और गलियारे पत्थर के बने हुए ठोस खम्भों पर खड़े हैं। इसकी तीसरी मंजिल भी निर्मित है जिसका उपयोग बालकनी के रूप में किया जाता रहा होगा। यहाँ रोहिताश्व का मन्दिर है, जिसका निर्माण पहाड़ी के ऊपर आरम्भ में ही किया गया था। यह उत्तरी–पूर्वी पहाड़ी की चोटी पर बना हुआ है। इस पर पहुँचने के लिए 84 सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं। मन्दिर का अधिकांश नष्टप्राय है। गजेटियर तथा अन्य श्रोतों से ज्ञात हुआ कि इस मन्दिर में स्थापित रोहिताश्व की मूर्ति की पूजा वहाँ के लोग श्रद्धाभक्ति से प्रतीक के रूप में करते हैं, किन्तु यह भी कहा जाता है कि औरंगजेब ने अपने शासनकाल में इसे भी नष्टभ्रष्ट कर दिया था और उसके पीछे छोटे–छोटे ईंटों से एक मस्जिद का निर्माण भी करा दिया था।

शेरशाह का किला–जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि यह किला शेरशाह ने स्वयं अपने उपयोग के लिए बनवाया था। यह सासाराम नगर से 40 किमी० दूर चेनारी थाने के "मुहकुहा" पंचायत के अंतर्गत दुर्गावती नदी के पावन तट पर सुन्दर प्राकृतिक वातावरण के बीच अवस्थित है। पत्थर और तत्कालीन गारा चूने के मसाले से निर्मित यह अत्यंत मजबूत तथा अभेद्य है। यह 803 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। इस किले के ऊपरी भाग में 5 बुर्ज हैं जिन तक पहुँचने के लिए एक मीटर चौड़ी सीढ़ी बनी है। किले की दीवारों में चारों ओर से खिड़कियाँ बनी हैं जिनसे सैनिक आते हुए दुश्मन पर दूर से ही प्रहार कर सकते हैं।

यहाँ घोड़ा हाथी बांधने के लिए अस्तबल बने हैं जिनमें से अभी एक को छोड़कर चालिस सुरक्षित हैं। किले का मुख्य द्वार विशाल था जो अब ध्वस्त

होता जा रहा है। इसके दोनों ओर द्वारपालों के खड़ा होने के लिए स्थान बना हुआ है। वैसे इसमें अधिकारी वर्ग ही रहता था। किन्तु यदा–कदा शेरशाह भी रहते थे। किले के निचले भाग में एक पक्का कुंआ है जो आज भी काफी मजबूत है। इसमें बरसात का पानी भरा रहता है। कुएँ के स्तम्भों पर की गयी नक्काशी सुन्दर है।

सलीमशाह का मकबरा–सासाराम के तकिया मुहल्ले में सलीमशाह का मकबरा विद्यमान है। इस मकबरे तक जाने के लिए एक चौड़ा पुल बना है। वह भी पटिया और सुर्खी–चूना से बनाया गया है। इसके चारों ओर कुल 24 प्रवेश–द्वार बने हैं। ये सभी कलात्मक पत्थर द्वारा जोड़कर बनाए गए हैं और उनमें मेहराबदार चौखट पत्थर के ही बनाए गए हैं। मकबरे के ऊपर पहुँचने के लिए 10 सीढ़ियाँ बनी हैं। इसमें छोटे–छोटे कक्ष बने हुए हैं। भीतर का प्रत्येक प्रवेश–द्वार 4.25x3.60 के आकार का है। दीवार 2.8 मीटर ऊँची है। दीवार की मोटाई 5.2 सेमी0 है तथा भीतर से कुल 7 कक्ष बने हैं। बीच में एक पूजास्थल है। मकबरे के चारों ओर वृत्ताकार बरामदा बना हुआ है। बाहरी ओर के द्वार 5x2.8 मी0 के आकार के हैं और इसकी मोटाई 1.7 मी0 है। बरामदा 3.5 मी0 चौड़ा है। तालाब के अंदर तक जाने के लिए रास्ता बना हुआ है। मकबरे तक जाने के लिए बना पुल 9.50 मीटर चौड़ा है। यह मकबरा शेरशाह के प्रसिद्ध मकबरे के कुछ ही बाद का बना है। आरम्भ में यह दो छतों का बना था लेकिन अब भग्नावशेष मात्र ही रह गया है।

रोहिलों का किला–इस किले का निर्माण रोहिलों द्वारा कराया गया था। ये रोहिल अफगान के थे। अफगान से वे भारत आए थे और इन्होंने एक लम्बे अर्से तक शेर–घाटी पर अपना आधिपत्य जमाए रखा था। यहीं से उन्होंने पलामू के इलाकों में प्रवेश किया था। यह किला कोयल और सोन के संगम के निकट सोनवैली पोर्टलैण्ड सीमेंट फैक्ट्री से लगभग 11 किमी0 पूरब की ओर हरीनगर ग्राम में निर्मित है। एक उल्लेख के अनुसार इस किले को रोहिला नवाब मुजफ्फर खाँ ने बनवाया था। यह त्रिभुजाकार है। इसके तीनों कोण पर एक–एक वर्गाकार प्रांगण है। प्रांगण की दीवार भीतर से 16.8x13.8 मी0

आकार की है। बाहर प्रांगण के मध्य की दूरी 19.8 मी0 है। किले के भीतरी दीवार पर 5 अर्द्ध चन्द्राकार जालियाँ काट कर नक्काशी की गयी हैं। यहाँ एक सीढ़ी, सीढ़ी के समीप सुरंग, चौकोर कुआं आदि निर्मित हैं।

विजयगढ़ दुर्ग–विजयगढ़ का किला 24° 35" उत्तरी और 83° 11" पूरबी पर स्थित है जिस पहाड़ी पर यह बना है उसकी ऊँचाई समुद्र की सतह से 561 मीटर तथा जमीन की सतह से 240 मीटर है। यहाँ पहुँचने के लिए घाघर नदी के पुल को पार करना पड़ता है जिसका निर्माण सं0 1829 अथवा 1772 ए0डी0 में बलवन्त सिंह द्वारा कराया गया था। किले के भीतर जाने के लिए पठान शैली के निर्मित तीन विशाल प्रवेश–द्वारों को पार करना होता है। ऊपर लगभग तीन किमी0 का क्षेत्र है।

पहाड़ी के ऊपर तालाब के तट पर सै0 जेनुल आब्दीन की एक कब्र बनी है जो शेरशाह के दरबार में रहने वाले एक सन्त थे। इन्हें मिरान साहिब बाबा के नाम से भी जाना जाता है। किले के ऊपर जाने के लिए दो रास्ते बने हुए हैं। उत्तर की ओर मुख्य द्वार है, और द्वार से पूर्व एक विशाल चट्टान मिलती है, जिसके ऊपर दो वीरों का रेखांकन पत्थर खोदकर किया गया है। किले पर जाने के लिए इसी के आगे से पत्थर की सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं। इसके प्रवेश–द्वार से पूरब बायीं ओर प्रागैतिहासिक कालीन चित्र हैं। द्वार के दोनों ओर द्वारपालों को खड़ा होने और अर्गला लगाने के लिए स्थान बने हुए हैं। यहाँ तीन शिलालेख मिले हैं जिनसे ऐसा लगता है कि इस पर कभी चन्द्रवंशियों का आधिपत्य था। डॉ0 जगदीश गुप्त के अनुसार पाँचवीं शताब्दी में इस दुर्ग पर कोल जनजाति का आधिपत्य था। किले में कुछ सुरंगें मिली हैं जिन्हें तिलस्मी बताया गया है। "चन्द्रकान्ता" और "चन्द्रकान्ता संतित" में इसके तिलस्म का सविस्तार वर्णन किया गया है। किले के भीतर कुछ बड़े कक्षों का निर्माण चूना और गारा से पत्थर जोड़कर किया गया है। सम्भवतः इसी में राजा–रानी रहते रहे होंगे। इसके दूसरी ओर कुछ और कक्षों का निर्माण किया गया है जिनमें उनके सैनिक–सिपाही और नौकर–चाकर रहते रहे होंगे। किला चारों तरफ से दीवारों से घिरा है। जहाँ से तिरन्दाजी की जा सकती थी।

यहाँ सात तालाब बने हुए हैं। एक सबसे बड़े तालाब का नाम रामसागर रखा गया है जिसके बारे में किम्बदन्ती है कि उसकी गहराई का पता आज तक नहीं चल सका। तालाब के किनारे नवीं और दसवीं शताब्दी की कुछ मूर्तियाँ और कलात्मक प्रस्तर–खण्ड भी देखे गए। यहाँ प्रति वर्ष अप्रैल–मई में उर्स और मेले का आयोजन किया जाता है जिसमें हजारों व्यक्ति वहाँ पहुँचते हैं। यहाँ गणेश, हनुमान की मूर्तियाँ बनी हैं। उसके अंतिम राजा चेतसिंह थे जिन्हें अंग्रेजों ने भगाया था। विगत कुछ वर्षों से कांवर यात्री सावन में यहाँ से शिवद्वार जाकर जल चढ़ाते हैं।

विश्रामपुर का किला–पलामू के विश्रामपुर नामक स्थान में ताड़–वन में, एक पुराना किला वर्तमान है जिसे विश्रामपुर के राजा पलामू के चेरो राजवंशी ने बनवाया था। 1750 ई0 में देवगन के राजा नृपतिराय ने विश्रामपुर को बसाया था। विश्रामपुर का पूर्व नाम सागदाग था। इस किले के मुखद्वार पर चंडी का मन्दिर है। यह वह स्थान है जहाँ राजा छतरपति राय की रानी बासन्ती सती हुई थी। इस द्वार से पूरब की ओर एक अन्य सुन्दर मन्दिर है, जिसकी नक्काशी दर्शनीय हैं। मन्दिर की नक्काशी मुगल कालीन है जिसके निर्माण के सम्बन्ध में लोगों का कहना है कि 8 वर्ष पर्यन्त निर्माण के फलस्वरूप इतना भव्य मन्दिर बन सका था।

इन्हीं के वंश में भवानी बख्शराय नाम के एक राजा हुए थे, जिन्होंने 1857 के गदर में अंग्रेजी सरकार को नाकोंदम लगा दिया था। उन्होंने गेरुआरा पहाड़ पर नाकेबंदी की थी जहाँ भयंकर युद्ध हुआ था।

शाहपुर का किला–डाल्टनगंज मुख्यालय के सामने कोयल के पश्चिमी तट पर एक किला प्राप्त है, जिसे "गोपालराय का किला" के नाम से जाना जाता है। यह किला जंगल के बीच में स्थित है और इसका निर्माण पक्की ईंटों से चूना, गारा की सहायता से किया गया है, किन्तु किले की दीवारें बड़ी मजबूत हैं। किले में तीरंदाजी और बन्दूक चलाने के लिए स्थान बने हुए हैं। किले के बुर्ज की कला अच्छी है। तीन मंजिलों में निर्मित यह किला कला की दृष्टि से महत्त्व का हैं। इसका निचला भाग कर्मचारियों के आवास के लिए बनाया गया प्रतीत होता है।

तीसरी मंजिल का उपयोग सभा-कक्ष के लिए किया जाता रहा होगा। सभाकक्ष के प्रवेश-द्वार की नक्कशी कलात्मक है। दूसरी मंजिल पर रानी के आवास के लिए शीशमहल बनाए गए थे। इसके बुर्ज पर दो कोठरियों का निर्माण किया गया है। इसके निकट शाहपुर नामक घाट है जिसके ऊपर एक मंदिर निर्मित हैं। इसका निर्माण 1772 ई0 में किया गया था।

कहते हैं 24 अप्रैल, 1772 ई0 को उदयपुर घाट पर कंपनी के सेना नायक थामस स्काट और ठकुराई जयनाथ सिंह, जो पलामू के दीवान थे, के साथ घनघोर लड़ाई हुई थी। इस लड़ाई में सर्जेन्ट पिलविन मर गए थे और लेफ्टिनेंट स्काट के पैर में गोली लगने के कारण मनातुल लौट गए थे। कालान्तर में उदवन्त राम नामक कानूनगों ने अंग्रेजों की सहायता की। 1775 में राजा गोपाल राय ने उदवन्त राम की हत्या कर दी। राजा गोपाल राय और उनके भाई कर्णपाल राय अपने दुर्ग शाहपुर में ही कैद कर लिये गए। बाद में 1784 ई0 में उनकी मृत्यु पटना जिले में हो गयी। 1857 ई0 में विद्रोह में राजा रणबहादुर की विधवा रानी ने शाहपुरों में चेरी जागीरदारों की सभा बुलवाई जिसकी जानकारी येन-केन-प्रकारेण अंग्रेजों को हो गयी। अतः बाबू को अविलम्ब शाहपुर छोड़ देने का परवाना भेजा गया। बाबू भवानी बख्श राय ने सुरक्षा की दृष्टि से शाहपुर के मोर्चे को ही समाप्त कर देना उचित समझा।

शेरगढ़-सासाराम से लगभग 40 किमी0 दूर ग्रैंड ट्रैंक रोड के समीप शेरगढ़ नामक स्थान एक सुरम्य पहाड़ी के ऊपर सिंगरौली नामक गांव से लगभग डेढ़ किमी0 दूर किले के रूप में स्थित है। पहाड़ी के ऊपरी भाग से पूरे क्षेत्र सहित दुर्गावती घाटी का दृश्य अत्यंत रमणीक दिखलाई पड़ता है। "शाहाबाद गजेटियर" के एक उल्लेख के अनुसार यह किला प्रकृति और मनुष्य द्वारा निर्मित अपने ढंग का एक अनोखा किला है जो अब भग्नावशेष मात्र रह गया है। इसका मुख्य द्वार अत्यंत भव्य है जो दोनों ओर पूरब और पश्चिम के खम्भों पर टिका है, किन्तु इसके प्रांगण में इतनी जगह है कि 1000 व्यक्ति एक साथ बैठ सकते हैं। दुर्ग 9 किमी0 तक फैला हुआ है।[1]

1. दे0 शाहाबाद गजेटियर, पृ0-888

पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों के अनुसार इसका निर्माण शेरशाह द्वारा कराया गया था। शेरशाह द्वारा निर्मित अन्य स्थापत्यों की तुलना में इसके निर्माण और स्थापत्यों की कला कुछ भिन्न है। ऐसा लगता है कि किले के भीतर भूमिगत नृत्यशाला का निर्माण किया गया था। इसके अलावा इसमें एक अन्नागार, एक कुएँ का निर्माण किया गया है। इसका मुख्य द्वार नष्ट हो चुका है। कोर्टयार्ड टूट चुका है, किले का विशाल कोर्टयार्ड चारों ओर की खुली गैलरियों से घिरा हुआ है। इन्हीं में कुछ बन्द कमरे हैं। गैलरी की छतें जिन खम्भों पर टिकी हुई हैं वे बहुत ही मजबूत, सुन्दर और कलात्मक बनायी गयी हैं। ऐसा लगता है कि निर्माण–काल में इसे कई रंगों से रंग कर अत्यंत आकर्षक और भव्य बनाया गया होगा। पलामू के किले में भी ऐसे ही कलात्मक खम्भे मुख्य–द्वार पर देखे गये थे। किले के भीतरी भाग में कुछ कक्षों का निर्माण कराया गया है, जिनसे अन्दर प्रवेश करना अब कठिन हो गया है। स्थान–स्थान पर उनमें पच्चीकारी या कलाकारी की गयी है, किन्तु कहीं भी उनमें लेख आदि देखने को नहीं मिले। वर्षा होने पर चारों ओर का पानी एकत्र होकर कुण्ड का रूप धारण कर लेता है, जो टूटी हुई छत के रास्ते प्रवेश करके कहीं अन्यत्र निकल जाता है।

शेरशाह का रौज़ा–शेरशाह का रोहतास जिले से बड़ा घनिष्ठ संबंध रहा है। उसी के नाम पर यहाँ नगर में ही स्थापत्य कला का एक अनूठा उदाहरण "शेरशाह का रौजा या मकबरा" के नाम से जाना जाता है। पर्यटकों के लिए यह आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। पहाड़ियों और फिर बड़े तालाब के मध्य अवस्थित यह मकबरा पत्थर का बना है तथा लगभग 36 मी0 ऊँचा है जिसकी ऊँचाई ताज महल से भी 3.9 मी0 ऊँची है।

तालाब खोदते समय उसकी मिट्टी चारों ओर पाटी गयी थी जिसके कारण मकबरा सुरक्षित हो गया है। उसमें प्रवेश तथा बाहर जाने के लिए तालाब पर लम्बा पुल बनाया गया है। मकबरे में सफेद, भूरा, लाल रंग के पत्थर लगाये गये हैं। चुनाई, सुरखी, चूना के मजूबत मशाले से की गयी है। द्वार पर नक्काशी की गयी है। ऊपर चित्रकारी की गयी है। मकबरे के ऊपर

स्थान-स्थान पर ''अल्लाह' उर्दू लिपि में लिखा है। कमलदल चारों ओर बने हैं जो समन्वय वादी भावना के प्रतीक हैं। नीचे की फर्श छोड़कर मकबरा तीन तलों में बना है। सबसे ऊपर विशाल गुम्बद है। उसके चारों ओर तीनों छतों पर आठ-आठ बैठकें बनी हैं जहाँ से पूरा नगर तथा नगर के बाहरी दृश्य देखे जा सकते हैं। मकबरे के तीनों तलों का आकार अष्टबल है। प्रवेश-द्वार पश्चिम था, जो अब भग्नावशेष मात्र है। दक्षिण की ओर मस्जिद बनी है। पूरब अष्टबल आकार का पक्का घाट है, जहाँ स्त्री-पुरुष अलग-अलग स्नान करते थे। यह मकबरा दो भागों में विभक्त है। इसका दूसरा भाग लगभग पूरब सूखी जमीन पर है।

रौजे के दरवाजे लगभग 2.25 मी0 लम्बे तथा 2.1 मी0 चौड़े हैं। दीवार 3.9 मी0 मोटी है। दोनों ओर से मोटे पत्थर जड़कर बीच में बोल्डर भरे गए हैं। बोल्डरों में मशाला, गारा, चूना, पिला दिया गया है जिससे पूरी दीवार एक लगती है। पत्थरों को जगह-जगह खोदकर लोहे की मोटी पत्ती से करुवारी बनाकर जड़ दिया गया है। वहीं के एक मिस्त्री ने बताया कि गुम्बद बनाने में कलाकारों ने बड़ी बुद्धिमानी दिखलाई है। पहले खम्भे जोड़े गए हैं तब एक दूसरे के सहारे टिका है। सब पर जोर है। बरामदे की बाहरी दीवार से लगे खम्भे 2.1 मी0 चौड़े 1.5 मी0 ऊँचे हैं। कुल 47 सीढ़ियाँ ऊपर जाने के लिए चढ़नी पड़ती हैं। ऊपर चौतरफा 8 गुम्बद बने हैं। प्रत्येक गुम्बद छः खम्भों पर टिका है। प्रत्येक खम्भे का व्यास 1.1 मी0, ऊँचाई 2.1 मी0 है। छत की गली चौतरफा 2.4 मी0 है। ऊपर जाने वाली प्रत्येक सीढ़ी की ऊँचाई 31 सेमी0 है। ऊपर की छत के बीच के गुम्बद का एक फलक 4.85 मी0 है। कुल 16 फलकों का एक गुम्बद बना है। ऊपर के घेरे की बाहरी दीवार 80 सेमी0 मोटी है। नीचे मकबरों के चारों कोणों पर चार बड़े गुम्बद हैं और उनके दोनों ओर दो-दो छोटे गुम्बद बने हैं। मकबरे में कुल 8 द्वार हैं। उनके ऊपर कुल 16 खिड़कियाँ फिर उनके ऊपर 32 रोशनदान बने हैं। मकबरे के एक द्वार पर पत्थर खोदकर लिप्यांकन किया गया है। मकबरे के अन्दर 25 कब्रें हैं जो सभी शेरशाह के परिवार की बतायी जाती हैं। शेरशाह की कब्र सबसे बड़ी है। फिर उनकी बेगम सुलतान सलीम सूरी, सुलतान शलीम की

बेगम तथा पुत्रों–पुत्रियों की हैं। मकबरे की कुल ऊँचाई 36.6 मी0 है। उसका भीतरी क्षेत्रफल 24 मी0 x 24 मी0 मजार के रक्षक द्वारा बताया गया। ऊपर कई तरह की जालियाँ बनी हैं। पर एक के सामने दूसरी जाली उसी प्रकार बनी है। तालाब सहित मकबरे का क्षेत्रफल 22 एकड़, तालाब के बाहरी त्रिकोण को लेकर पूरा क्षेत्रफल 52 एकड़ बताया गया। तालाब में आकर स्नान करने के लिए चारों ओर सीढ़ियाँ बनी हैं।

सक्तेशगढ़–चुनार (मिर्जापुर) जंक्शन से 15 किमी0 दूर चुर्क मार्ग पर जरगो नदी के पूर्वी तट पर सक्तेशगढ़ एवं मन्दिर बने हैं। मन्दिर और गढ़ दोनों वहीं के सफेद रंग के पत्थर से सुरखी–चूना के संयोग से बने हैं। बरामदे को छोड़कर मंदिर का आकार बाहर से 3.63x3.60 मी0 बरामदे की चौड़ाई चारों ओर से 1.40 मी0, बरामदा सहित मन्दिर का बाहरी आकार 4.50x4.50 मी0 है। मन्दिर लगभग 6 मी0 ऊँचा है। मंदिर में चारों ओर दो–दो द्वार हैं, प्रत्येक द्वार मेहराबदार है। दीवार .50 सेमी0 चौड़ी है।

बैठका–दृश्य देखने के लिए गढ़ी के पश्चिमी उत्तरी–कोण पर मंदिर के समीप एक वृत्ताकार बैठका बनाया गया है जिसके नीचे सुन्दर कक्ष बना है। दूसरी छत बारहदरी है। उसके ऊपर जाने के लिए दक्षिण और पूरब से सीढ़ियाँ बनी हैं। इसके प्रत्येक द्वार का आकार 2.05x1.30x.65 मी0 है। यह कक्ष वृत्ताकार 4.50 मीटर है इसकी छत टूट गयी है। भीतरी भाग सुरखी चूने के मसाले से पच्चीकारी करके अलंकृत कर दिया गया है। फिर नीले और लाल रंग से रंग दिया गया है। इसके पहले छत की ऊँचाई 2.20 मी0 मार्ग की चौड़ाई 4.70 मी0 ऊपर से है।

कोर्टयार्ड–ऊपरी मार्ग यानी प्राचीर से पश्चिम एक कोर्टयार्ड लगभग 66.22 मी0 के आकार का है। इस कोर्टयार्ड से गढ़ी के अन्दर जाने के लिए बीच में 2.60 मी0 का एक रास्ता बना है। कोर्टयार्ड में कुछ कक्ष बने थे जो अब भग्नावशेष हैं। रास्ते से पूरब जाने के बाद दोनों ओर कक्षों का निर्माण किया गया है जिसे शीशमहल के नाम से जाना जाता है।

शीशमहल–शीशमहल पत्थर का किन्तु सुन्दर बना है। इसका आकार

8x5.5 मी0 तथा 6 मीटर ऊँचा है। ऊपर मेहराबदार बैठका बनाया गया है जहाँ उत्तर की ओर से सीढ़ियों द्वारा जाया जा सकता है। इसके प्रांगण में दक्षिण की ओर आसन, सहारा लेकर बैठने के लिए बनाया गया है। प्रांगण में फुहार बना था जिसके लिए कुएँ से पानी खींच कर निकाला जाता था। इस कुएँ के पास से ही तीसरा प्रांगण प्रारम्भ हो जाता है। इसका आकार भी पहले दूसरे प्रांगण से कम नहीं हैं। इसके ठीक सामने पूरब की ओर प्रवेश–द्वार भव्य–विशाल बना है। राजा का बैठका या शीशमहल बीच में ऐसे सुरक्षित स्थान पर बने हैं कि प्रवेश–द्वार पर आते ही कोई भी व्यक्ति राजा की नजर से बच नहीं सकता था।

प्रवेश–द्वार–इस कोर्टयार्ड (प्रांगण) से दक्षिण सुन्दर 6 कक्ष बने हैं, सम्भव है ये पहरेदारों के लिए बनाये गये हों। प्रवेश द्वार भीतर बाहर दोनों ओर से भव्य हैं। इसका आकार 3x2.25 मी0 मापा गया, किन्तु ऊपर के भव्य निर्माण के कारण और विशाल हो गया है। भीतर से अर्गला के लिए स्थान बने हैं। बाहर दोनों ओर दो पहरेदारों के लिए स्थान बने हैं। प्रवेशद्वार के भीतर कक्ष (बरामदा) की चौड़ाई 5.70 मी0, प्रवेश–द्वार की दीवार की मोटाई 2.70 मी0 है। बाहर की ओर ऊपर पलंग के दो पायों पर हाथी बनाये गये हैं। हाथी कमल पकड़े सूंड को ऊपर उठाये हुए हैं। उनके गले में जंजीर है। द्वार का मेहराब हाथी के दोनों ओर उनके दाँतों पर टिके हैं। प्रवेश द्वार के पत्थरों को तराश कर अत्यंत चिकना बनाया गया है। बीच–बीच में खड़े–खड़े पत्थर लगाये गये हैं और उन्हें बारीक मसाले से जोड़ दिया गया है। प्रवेश–द्वार की कुल ऊँचाई लगभग 7 मीटर है। प्रवेश द्वार तक जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं। सीढ़ियों के दोनों ओर चौतरा बना है जिसकी मोटाई 3.85 मीटर है।

अन्य निर्माण–प्रवेश–द्वार के सामने एक बड़ा कुआं बना है। गढ़ के पूरब–उत्तर कोण पर दो स्तम्भ बने हैं। एक सामने, दूसरा एक पहाड़ी पर। यह भी सुरक्षा गार्डों के लिए बनाये गये होंगे। गढ़ अभी भी बहुत कुछ सुरक्षित है। यहाँ की तुलसा देवी के अनुसार इस गढ़ी का निर्माण 16वीं शताब्दी में विजयपुर के किसी राजा सक्तेशगढ़ सिंह द्वारा कराया गया था अथवा उन्हें

दहेज के रूप में बनवा कर प्रदान किया गया था। विगत एक दशक से इसमें संत श्री अड़गगड़ानंद जी महाराज अपना आश्रम बनाकर रह रहे हैं जिसके चलते यह सुरक्षित हो गया है और नित्य प्रति दर्शनार्थी आते रहते हैं।

सोनपुरा का किला–यह सुन्दर, मजबूत किला कोयल और सोन के संगम के निकट सोन के पश्चिमी तट पर स्थित है। सोनपुरा के राजा के पूर्वज गोरखपुर के महुली के निवासी थे। महावीर वर्मा के अनुसार 1801 ई0 में अंग्रेजी सेना ने सरगुजा पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए आक्रमण किया था। उसी समय सोनपुरा–नरेश भूपनाथशाह ने अंग्रेजों की काफी सहायता की थी। 1803 ई0 में मार्क्वींस बेलेसली ने मराठे तथा पिण्डारियों के आक्रमण से उत्तर–पश्चिम की रक्षा के लिए सोनपुरा नरेश को दिया। मराठे तथा पिण्डारियों को इन लोगों ने बड़ी बहादुरी से लड़कर मार भगाया। हेस्टिंगज ने उनकी बड़ी तारीफ की थी। नगर के भैया साहब सोनपुरा के कनिष्ठ भाई के वंशज हैं। ये उनके भाई होने के कारण ही भैया साहब कहे जाते हैं।

सिंगरौली–सिंगरौली वैसे तो सीधी का टप्पा है जो मिर्जापुर जिले की दक्षिणी सीमा पर अवस्थित है। सिंगरौली का दुर्ग मिर्जापुर जिले की दक्षिणी सीमा पर तुर्रा (पिपरी) नामक स्थान से लगभग 3 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित था। पन्त सागर के निर्माण के फलस्वरूप सम्पूर्ण किला जल में समाहित हो गया। अब जलस्तर कम होने पर उसका ऊपरी भाग ही दिखाई पड़ता है। यह पत्थर का बना था जो अहरौरा दुर्ग की तरह चारों ओर से पहाड़ियों से घिरा था। पहाड़ियों के कारण ही वह इतना सुरक्षित था कि बाहरी शत्रु आसानी से उस पर आक्रमण नहीं कर सकते थे। किला काफी सुन्दर बना था और उसमें बड़े–बड़े कमरे थे। राजा के बैठने, कचहरी करने, रानी के रहने तथा नौकरों–चाकरों के आवास के लिए अलग–अलग स्थान बने हुए थे। इसकी दीवारें और छतें काफी मजबूत थीं। सुर्खी और चूना के सम्मिश्रण से निर्मित यह किला काफी मजबूत था।

सोढ़रीगढ़–सोनभद्र जनपद के घोरावल क्षेत्र में शतद्वारी के पास सोढ़रीगढ़ का भग्नावशेष वर्तमान है। यहाँ चहारदीवारी के बाहर चारों ओर

खाईं बनी है जिससे प्रतीत होता है कि यहाँ गढ़ी रही होगी। इसके चारों ओर सिंह–द्वार है। सिंह–द्वार के समीप चौकोर चबूतरे बने हुए हैं। यह क्षेत्र लगभग एक किलोमीटर दूर तक फैला हुआ है। दीवार की चौड़ाई 1.2 मी0 है। पत्थरों को तराश कर चौकोर बनाया गया है। कुछ सादे तथा अनगढ़ पत्थर भी लगाए गए हैं। दरवाजे के पास देवी–देवताओं की कलात्मक मूर्तियाँ जड़ दी गयी हैं। दीवारों में वैसे भी यत्र–तत्र मूर्तियाँ पड़ी हुई हैं। कुछ मूर्तियाँ मिथुन–मुद्रा में हैं। इस चहारदीवारी के मध्य एक सुरंग देखी गयी।

डॉ0 शांकलिया ने बेलन घाटी की संस्कृति का उल्लेख तो किया है, किन्तु यहाँ के मन्दिरों, मूर्तियों का उल्लेख नहीं किया है। डॉ0 दीनबन्धु पाण्डेय ने सोढ़रीगढ़ की मूर्तियों को गहड़वाल कालीन बताया है। डॉ0 काशी प्रसाद जायसवाल ने कान्तित क्षेत्र को मिलाकर इस पूरे क्षेत्र को भारशिवों के समय का बताया है।

कन्तित का किला–कन्तित शब्द कान्तार से बना है जिसका अर्थ है जंगल–पहाड़। डॉ0 काशी प्रसाद जायसवाल ने कन्तित को क्रान्तिपुरी के अर्थ में लिया है, जिसका अर्थ है एक सुन्दर नगर। मिर्जापुर, विन्ध्याचल–मार्ग पर विन्ध्याचल से लगभग दो किलोमीटर पूरब कन्तित नामक एक टप्पा है जो गंगा जी के पावन तट से लेकर लगभग 40 किलोमीटर दूर तक फैला हुआ है। इस पूरे क्षेत्र को कन्तित राज्य के नाम से जाना जाता था। इस पूरे क्षेत्र में 20–25 की संख्या में पुराने मन्दिर, उनमें सताधिक मूर्तियाँ तथा अन्य पुरातात्विक महत्व की वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं।

कंतित में ओझला पुल के समीप से विन्ध्याचल के पास यानी लगभग एक किलोमीटर तक के फैलाब में अनेक खण्डहर और भग्नावशेष प्राप्त हैं। सड़क से उत्तर का पूरा मैदान कंतित नरेश दुर्ग के नाम से जाना जाता है। डॉ0 काशी प्रसाद जायसवाल के अनुसार यहाँ भारशिवों की राजधानी थी। भारशिव राजाओं ने ही इसका निर्माण कराया था। यहाँ पत्थर के भग्नावशेष तो मिलते ही हैं, कच्ची ईंटें और कच्ची ईंटों से बची हुई मोटी दीवारें भी मिलती हैं। लोगों का कहना है कि यहाँ दुर्ग का निर्माण कच्ची ईंटों से ही किया गया था

जो अब गंगा की गोद में समाहित हो चुका है। हमें सर्वेक्षण के दौरान मिट्टी के पात्रों के टुकड़े, मिट्टी के पात्र, ईंटें, कुछ मूर्तियाँ, कच्ची मिट्टी की गोलियाँ, भवन–निर्माण के पत्थर तथा अन्य वस्तुएँ प्राप्त हुई थीं।

यहाँ के काल भैरव मन्दिर में एक शिलालेख प्राप्त हुआ था। यहाँ भैरव, शिव, दुर्गा, हनुमान की विशाल कलात्मक प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं जो कला की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं। यहीं पत्थर का बना एक पक्का तालाब है, जहाँ कजली के अवसर पर श्रावण में आस–पास की औरतें कजली–पूजा के निमित्त आती हैं। यहाँ नौका–दौड़, एक्का–दौड़ और कजली दंगल का आयोजन किया जाता है। ओझला पुल से थोड़ी दूर पश्चिम बावन की वावली है जिसमें जाने के लिए चारों ओर से 52 सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। कंतित को लोरिक की जन्मभूमि बताया गया है।[1]

हसन सूरशाह का रौज़ा–इसे "सूरवा रौजा" के नाम से जाना जाता है क्योंकि इसका निर्माण नगर के बीच में सूखी जमीन पर किया गया है, जबकि शेरशाह के रौजे का निर्माण तालाब खोदकर उसके मध्य किया गया है। इसे शेरशाह के पिता हसन खान सूरी ने बनवाया था। इसके पश्चिमी छोर पर एक बावली है जिसे अंधेरी बावली कहते हैं।

इस रौज़े का निर्माण लगभग उसी प्रकार किया गया है जिस प्रकार गीले शेरशाह के रौजे का किया गया है। यह उससे छोटा है। इसके भी चारों कोनों पर चार गुम्बद हैं। यह चौकोर है और चारों ओर से दीवारों से जोड़कर घेरे में कर दिया गया है। इसमें तीन तरफ से प्रवेश–द्वार बने हैं तथा एक तरफ मस्जिद बनी है। मस्जिद उमसें भी तालाब के अन्दर बनी है। यह भी अव्वल है और प्रत्येक में तीन द्वार हैं। दरवाजों पर कलात्मक पत्थर लगाए गए हैं। सुर्खी–चूने के ऊपर पच्चीकारी करके उसे रंग दिया गया है, जो टूटा तो है किन्तु बदरंग नहीं हुआ है। इसकी मजबूती के लिए लोहे की करुवारी से पत्थरों को खोदकर एक दूसरे में सटाकर जड़ दिया गया है, ताकि वे टस से मस न हों।

1. दे0 लोरिकायन : डॉ0 अर्जुनदास केसरी।

इस रोजे की ऊँचाई 30 मीटर बताई गयी। प्रत्येक दरवाजा 1.6 मी0 चौड़ा तथा 2.4 मी0 ऊँचा है। इसमें कुल 8 दरवाजे हैं। ऊपर कुल 8 खिड़कियाँ बिना जाली की हैं। कोण पर खम्भे खड़े करके दीवारें बनायी गयी हैं। नीचे के आठ दरवाजों के ऊपर 16 खिड़कियाँ बड़ी–बड़ी बनी हैं, जिनमें से 8 खुली और 8 बंद हैं। फिर उसके उपर 32 रोशनदान जालीदार बने हैं। गुम्बद घुमावदार होकर गोलाकार हो गया है। ऊपर क्रमशः सकरा होता गया है और अंत में गुम्बद का रूप बन गया है। ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं। रौजे के अंदर बीच में शेरशाह के पितामह हसन सूरशाह की कब्र बनी है। अन्य कुल 25 कब्रें बनी हैं, जिनका जीर्णोद्धार किया जा रहा था।

— ● —

अभिलेख, शिलालेख, प्रस्तरलेख तथा भित्तिलेख, सिक्के, जीवाश्म, टेराकोटा

मानव सदा से अपना इतिहास गढ़ने, रचने उसे अमिट करने के प्रयास करता रहा है। इसके लिए उसने प्रकृति–प्रदत्त उपकरणों का इस्तेमाल किया। जंगल–पहाड़ में आवास होने के फलस्वरूप उसने शिलापट्टों पर बांस, काठ की टहनियों का ब्रश बनाकर पत्थर को घिस कर उसमें वृक्षों के दूध, जानवरों की चर्बी का घोल मिलाकर जो आत्मकहानी उसने लिखी, वह सदा के लिए अमर–अमिट हो गयी।

अभिलेखों का वर्गीकरण–डॉ० वासुदेव उपाध्याय ने अभिलेखों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया है[1]–

1. धार्मिक अभिलेख–धार्मिक चर्चा अथवा धार्मिक कार्यों के प्रचार–प्रसार के लिए, जैसे अशोक के अभिलेख।

2. प्रशंसात्मक अभिलेख–शासकों की प्रशंसा के लिए लिखे या लिखवाए जाते थे। जैसे–मन्दसोर लेख, समुद्रगुप्त का प्रयाग स्तम्भलेख, मोखरि नरेश ईशान वर्मा, हरहा तथा पुलकेशिन का आहोल की प्रशस्तियाँ।

3. स्मारक लेख–अशोक का लुम्बिनी लेख।

4. आज्ञापत्र–दामोदरपुर (उत्तरी बंगाल तथा नालंदा का ताम्रपत्र।

5. दानपात्र–बराबर का गुहालेख।

प्रागैतिहासिक कालीन गुहा मानव ने गुहा की दीवारों पर चित्रात्मक–संकेतात्मक लेख लिखे। ईसा पूर्व सदियों में सम्राट् अशोक ने राज्य–सीमा पर स्थित चौदह शिलालेख खुदवाए थे। कालान्तर में ईसा पूर्व सदियों में ही स्तम्भों पर लेख लिखवाने की परंपरा का श्रीगणेश हुआ। सर्वेक्षित क्षेत्र में प्राप्त ऐसे लेखों का विवरण इस प्रकार है—

1. प्राचीन भारतीय अभिलेखों का अध्ययन (द्वि0सं0) पृ0–21

अगोरी दुर्ग का प्रस्तर–लेख–सोनभद्र जनपद में अगोरी किले में प्रवेश करने के साथ दाहिने हाथ की ओर कोठरियाँ दिखलाई पड़ती हैं। कोठरियों के बाद के प्रांगण में प्रवेश करते प्रवेश–द्वार के ऊपर एक शिलापट्ट परसियन भाषा में लिखा हुआ लगा है जिसका भाषानुवाद इस प्रकार किया गया है—

"सरकार चुनार के आदमी, अमल परगना अगोरी, महल माधोसिंह द्वार की महल बिकानन्द तलफ जान–ओ–दुखतर बाडन बशद। सन् हिजरी 1026 1734 ए0डी0।

माधो सिंह का शासनकाल इतिहास के साक्ष्य के अनुसार 1741 से 1781 ए0डी0 ठहरता है। ये बालन्द राजेश्वर खरवार जाति के थे जिसका उल्लेख लोक–कथाओं में किया गया है। अगोरी उस समय चुनार सरकार के अधीन था और अगोरी परगने का राजकीय कार्य वहीं से सम्पन्न कराया जाता था, माधोसिंह के लिए इस भवन का निर्माण उन्हें पत्नी और पुत्री से अलग करने के लिए किया गया, बताया जाता है।

अहरौरा का अभिलेख–अहरौरा बाजार से लगभग दो किमी0 दक्षिण स्थित बेलखरा नामक ग्राम के मैदान में एक प्रस्तर–स्तम्भ पड़ा है जिस पर प्रस्तर लिपि अंकित है। यह स्तम्भ 3.38 मी0 लम्बा तथा 38 सेमी0 चौड़ा गोलाकार है, किन्तु यह सुपाठ्य नहीं है। जनरल कनिंघम द्वारा इसका उल्लेख किया गया है। यह अभिलेख सं0 1233 या 1196 ए0डी0 का लखनदेव के नाम से अभिज्ञात है जो कन्नौज का अंतिम राजा था।[1] गजेटियर के अनुसार मु0 बख्तियार खिलजी ने भगवत और भुइली जनपदों को, पटिला और कंतिला के साथ प्राप्त किया था। कहते हैं, यह कभी जनजातीय किले के रूप में जाना जाता था।[2]

उत्तर प्रदेश के वाराणसी–सोनभद्र के बीच अहरौरा एक कस्बे का नाम है, यहाँ एक बाँध बना है, उससे लगभग 100 मीटर दूर एक पहाड़ी है,

1. कनिंघम : ए0आर0 वा0–1 पृ0–128
2. गजेटियर मिर्जापुर पृ0–259

जिसकी एक चट्टान के ऊपरी हिस्से में यह अभिलेख उत्कीर्ण है। इस अभिलेख की खोज प्रयाग विश्व विद्यालय के प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के अध्यक्ष प्रो0 गोवर्द्धन राय शर्मा तथा अन्य सहयोगियों द्वारा नवम्बर 1961 में किया गया। उत्तर प्रदेश में प्राप्त यह प्रथम लघु शिलालेख है। जिस शिलाखण्ड पर यह उत्कीर्ण है, उसका माप 1.15x.54 मी0 है। इसमें 11 पंक्तियाँ हैं, प्रत्येक पंक्ति में 26–27 अक्षर हैं। ऊपर का भाग चिपटा है पर नीचे की पाँच पंक्तियों का वाचन हो सकता है। सहसराम के अभिलेख से मिलता जुलता यह अभिलेख अनेक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें भगवान बुद्ध का उल्लेख है। इसकी भाषा मगधी है। हर पंक्ति के अंत में दीर्घ मात्राओं का प्रयोग किया गया है। इस पर कई विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं।

अहरौरा अभिलेख–(पराक्रम का फल)

1. .... य (ज) त।
2. .... धिका ....
3. .... (न) बाढं पलकंते
4. .... च पलकंते (1) एतेन।
5. .... अंतुल विस दबाकटा (1)
6. .... पल कम (स) ...... न पि सक्ये। पाणेतवे (1) खुदकेन पि।
7. पलकममीनेना विपुले पि स्वर्ग (त) क्ये
   आलाघेतेव (1) एताये अठाये
8. इयं सावने (1) खुदका च उडाला च पलकमतू
   (1) अंता पि जानंतू (1)
9. चीलठीती के पलकम हेतू (1) इयं
   च अठ वडिसति विपुलं पि च
10. वडिसति (1) दियडियं (अ) वल धिया
    वडिसति (1) एस सावने विपुथेन

11. दुब सपनालाति सति (स) म (सं)
वुधस सलीले आलादे च (1)

हिन्दी भाषान्तर–

1. .... ।
2. ....
3. (कुछ अधिक ढाई वर्ष से मैं श्रावक'हूँ किन्तु) अधिक पराक्रम नहीं किया।
4. (कुछ एक वर्ष से संघ–शासकगया (पराक्रम किया।)
5. इस बीच में (जम्बूद्वीप में जो अमिश्र देवी देवता थे वे इस समय) मिश्र देवी देवता किए गए हैं।
6. पराक्रम (का यह फल है। यह महान् से ही (नहीं प्राप्त होने शक्य है। इस प्रयोजन के लिए।
7. यह श्रावण (किया गया) (जिससे) क्षुद्र और उदार (महान) पराक्रम करें। सीमान्त के लोग भी जानें।
8. यह पराक्रम चिरस्थायी हो। यह प्रयोजन बढ़ेगा और अधिक।
9. और अधिक बढ़ेगा। कम से कम डेढ़ा बढ़ेगा। यह श्रावण (विज्ञप्ति) प्रवास (पड़ाव)।
10. दो सौ छप्पनवीं रात्रि में किया गया जब सम्यक संबुद्ध के शरीर (अवशेष) की प्रतिष्ठापना हुई थी।

गोठानी मंन्दिर के शिलालेख–गोठानी मन्दिर के समीप दो शिलालेख हैं—एक बीच के मुख्य मन्दिर से 4 मीटर उत्तर की ओर दूसरा छोटे मन्दिर से बायें जमीन में गड़ा है। सफेद रंग के पत्थर पर खुदे इस शिला के एक ओर सूर्य का रेखांकन किया हुआ है जो शिव–मन्दिर का प्रतीक है। जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर यह शिलालेख 90x23x20 सेमी0 के आकार का है। यह 27 पंक्तियों का है जिसका विवरण, जो पढ़ा जा सका, इस प्रकार है—

1. श्रीगणेशाय नमः श्रीमान.......... 2. लाल महिम्नाथ प्रवर्तमाने सनत पान 3. बढ़नीग्राम ब्रह्ममिश्र रतन रातेफन 4. पुत्र अर्जुन तस्य पुत्र प्रमेण मिश्र 5. तस्य इस्त्री फर्न्थूनस........ 6. तितेफन पिता कृष्णदास तिया 7. फर्ण

तीर्थ बसही ग्राम पर्थनाम 8. क पुत्र चिंतामणि मिश्र नोमेश्रय 9। मिश्रनदेव दतायुग्नदेवालय–निर्माण 10. मिश्रेण कृतय चिन्तामणि....... 11. शागं शिवभक्तिं जन्मः फनमा 12. न्नई लिंगत पलि 474 13. संतत 1701 साके 1566 भाद्र 14. रद्वेदि 12 सोमे पूख नक्षत्रे 15. वनि वाण योगेतिहि दिन चि 16. चिन्तामणि क देवाय पूजिहं..... 17. येत्र चिन्तामणि मिश्र...... 18. स्त्री क नाम पनमेसनीता क 19. इह संतनम युगगाती क........ 20. न पुनः रामेश्वराभ्यां कामेश्वराभ्यां 21. सहे अ नामनि छ 22. दस संख्या कानि............ 23. नयानि कृतानि महेश्वर 24. रामेश्वर कामेश्वर......... 25. प्रसादे सति शुभ मतम् 26. शुभ श्री श्री........

यह शिलालेख मुख्य मन्दिर से उत्तर है, किन्तु ठीक सामने पश्चिम की ओर 7 मी0 दूर दाहिने हाथ भी एक अन्य शिलालेख जमीन में पड़ा है। इसका आकार 125x33x18 सेमी0, जमीन में गड़े हुए भाग को छोड़कर है। पहले वाले शिलालेख के मस्तक पर शिवलिंग निर्मित है तो इससे सपाट है; किन्तु ऊपर के हिस्से पर बीच में हथेली, बायें चक्र तथा दाहिने चन्द्र की आकृति बनी हुयी है। इसकी पंक्तियाँ निम्नवत् हैं—

1. श्री गणेशाय नमः गंगाती.......... 2. ननई पुनी गांवत हाथ पंडिते मन फेकन पुत्र मणि पाण्डे से 4. क सोमनाथ क देवालय येल 5. फेकन पुत्र विश्वमन पाण्डेय 6. पुत्र पुत्र पाण्डे दोडन मल्ल ओम 7. नाम क जगमोहन क मेल रोड........ 8. गंगा तान पनाडेन भत्सल स्त्री 9. बबुहनि देवी तेत फल–पुत्र प्रतिमा 10. बगुलासन नई संवत...... 11. 170। भादव वदि वरसो...... 12. मेएड़न मन्न पांडे जगमोहन 13. बनावल श्री शोभनाथ क ।

इसके अध्ययन से लगता है कि इस मन्दिर का निर्माण तो सं0 1701 में हुआ था किन्तु अन्य मन्दिर इसके पूर्व बने होंगे। मुख्य बीच के मंदिर का निर्माण बाद का, देखने से भी लगता है। इसका निर्माण शोभनाथ पाण्डेय नामक व्यक्ति ने तथा पहले वाले मन्दिर का निर्माण चिन्तामणि मिश्र ने कराया था।

तिलाथू–सासाराम और रोहतास के मध्य तिलाथू नाम का एक स्थान

है, जिसके बारे में कहा जाता है कि औरंगजेब के समय इसे बसाया गया था। यहाँ एक पुराना महल है। रोहतासगढ़ दुर्ग के पांव तले जो शिलालेख प्राप्त हुआ है, उसमें इसका उल्लेख हुआ है। उसके अनुसार यह इख्लास खान की जागीर का एक हिस्सा था। इख्लास खान किले का किलेदार था। वह इसी महल में निवास करता था। कालान्तर में इसमें राजा शहमाल रहने लगे। यह सुपाठ्य नहीं है।

तुतराही–तिलाथू से लगभग 7 किमी० पश्चिम प्रकृति के सुरम्य वातावरण में तुतराही नामक स्थान है। तुतराही कुदरा नदी की एक सहायक नदी का नाम है, जिसके तट पर एक पहाड़ी के ऊपर शीलता देवी की स्थापना की गयी है। यहाँ लगभग 75 मी० की ऊँचाई से एक सुन्दर झरना गिरता है और नीचे आकर एक कुण्ड या तालाब का रूप बना लेता है। झरने के समीप ही एक चट्टान पर महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है जिसे 'जगधारी' के नाम से जाना जाता है। यहाँ प्राप्त एक शिलालेख के अनुसार (1158 ए०डी०) नैका प्रताप, थौला नाम का कोई स्थानीय अमुक व्यक्ति रहता था, जिसने अपने परिवार की सुख-समृद्धि की कामना से झरने के समीप इस देवी की स्थापना की थी। आज भी वर्षा के दिनों में शहर तथा आसपास के लोग यहाँ पिकनिक मनाने के लिए आते हैं।

दरगाह–चुनार में चर्च लाल दरवाजा, जामा मस्जिद का नाम पुराने स्थापत्यों में महत्व के साथ लिया जाता है, किन्तु दरगाह कला की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण निर्माण है। किले से लगभग एक किमी० दक्षिण-पश्चिम की ओर सन्त शाह कासिम सुलेमानी की एक कब्र एक लम्बे-चौड़े क्षेत्र में बनी है। इनका जन्म हिजरी सं0 956 या 1949 ए०डी० में पेशावर में हुआ बताया जाता है। (गजेटियर पृ0 309) अकबर और जहांगीर के शासनकाल में वे यहाँ आये थे। यहीं से मक्का-मदीना की यात्रा भी उन्होंने की थी। उनका देहान्त 1906 ए०डी० में हो गया था।

शिलालेख–द्वार पर एक पाँच पंक्तियों का शिलालेख अंकित है जो अरबी लिपि में है और उस पर 1016 हिजरी या 1607 ए०डी० लिखा है।

इन पंक्तियों में संत सुेलेमानी की साधुता का उल्लेख है। परिक्षेत्र में सन्त सुलेमानी के पुत्र मु0 वासीह तथा नाती मु0 अफजल और मु0 हकीम के स्मृति अवशेष भी प्राप्त हैं।

प्रस्तरलेख—चुनार में दुर्गाकुण्ड नामक स्थान पर नाले पर बने पुल के समीप पूरब की ओर एक लम्बी चट्टान पर कुछ रेखाचित्र–हाथी, घोड़ा, शेर के बने हुए हैं। इसी दीवार पर लिप्यांकन भी किया गया है जो अनेक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 'मिर्जापुर गजेटियर' के अनुसार इसमें नीचे से गुप्तकाल का उल्लेख है, लेकिन कोई विशेष बात नहीं लिखी गयी है, कुछ ऐसा ही लिप्यांकन दुर्गाखोह की गुफा में भी किया गया है। मुण्डे अक्षरों की यह लिपि साफ–साफ नहीं पढ़ी जाती, किन्तु हाथी, घोड़ा के चित्रों से युद्ध और संघर्ष का संकेत मिलता है।

रोहतास के अभिलेख—रोहतास में कई स्थानों पर पुराने अभिलेख प्राप्त हुए हैं जिनका उल्लेख इस पुस्तक में यथास्थान किया गया है। डॉ0 डी0 आर0 पाटिल (1963) ने "दी एन्टीक्वेरियन रिमेन्स इन बिहार" में कुछ महत्वपूर्ण अभिलेखों का विवरण प्रस्तुत किया है और जिनका उल्लेख "शाहाबाद गजेटियर" में भी हुआ है।[1]

शशांक धौला का शिलालेख—इस अभिलेख की सही स्थिति की जानकारी के अभाव में प्राप्त विवरणों के अनुसार यह अभिलेख गुप्तकालीन है। यह 12 सेमी0 वृत्ताकार है। इसके कुछ भाग नष्ट हो चुके हैं और कुछ भाग बचे हैं। इसकी भाषा–संस्कृत है। यह दो पंक्तियों में है। इसे ..... श्री महा सामन्त शशांक देवाता ..... के रूप में पढ़ा जाता है।

बंगाल के राजा शशांक का नाम इतिहास–प्रसिद्ध है जिन्होंने कन्नौज के राजा हर्ष के भाई राज्य वर्द्धन का बध किया था। इसे 7वीं शताब्दी ए0डी0 का बताया गया है।[2]

---

1. शाहाबाद गजेटियर पृ0–873 तथा एंटीक्विेरियन रिमेंस इन बिहार पृ0–530–505
2. वही पृ0–873

प्रतापधौला का शिलालेख—प्रतापधौला का नामोल्लेख रोहतासगढ़ के संदर्भ में किया जा चुका है। फुलवारी घाट के समीप एक शिला पर यह अभिलेख अंकित है। यह अभिलेख रोहतासगढ़ पर पहुँचने के लिए बनाए गए सड़क से संबंधित है जिसका समय 1168 ए0डी0 के आसपास ठहरता है।

राजा प्रताप का अभिलेख—यह अभिलेख रोहतासगढ़ स्थित लाल दरवाजा के ऊपर अंकित है।[1]

फुलवारी घाट का अभिलेख—यह अभिलेख रोहताश्व मन्दिर के समीप दक्षिण की ओर एक शिला पर अंकित है। यह पाँच पंक्तियों का है। इसका मसय 1338 ए0डी0 बताया गया है। इसकी जानकारी पहली बार आर0 एल0 मिश्र ने 1876 में दी थी। श्री मिश्र के अनुसार इसमें मूलदहा सिन्हा और मूलदला भिमा के जन्म का उल्लेख है।

रोहतास किले के उत्तरी दरवाजे का अभिलेख—रोहतास किले के उत्तरी दरवाजे पर एक अभिलेख प्राप्त हुआ है। इस अभिलेख की सूचना भी पहली बार आर0एल0 मिश्र ने ही दी थी। मौके पर यह अभिलेख प्राप्त नहीं हो सका।

कठौतिया द्वार का अभिलेख—रोहतासगढ़ के कठौतिया द्वार पर राजा मानसिंह से संबंधित दोनों ओर जो अभिलेख प्राप्त हुए हैं, उनका उल्लेख पूर्व प्राप्त है। इनमें से एक संस्कृत में है और दूसरा परसियन में। बाद में दरवाजे के निर्माण के समय का उल्लेख है और उसका समय 1607 ए0डी0 ठहरता है। दूसरा अभिलेख इस विशाल द्वार के निर्माता राजा मानसिंह के नामोल्लेख से संबंधित है।

सहसराम का लघु शिलालेख—दक्षिणी बिहार के शाहाबाद जनपद में सहसराम नगर से 3 किमी0 पूरब चन्दन पीर नामक कैमूर श्रृंखला की एक पहाड़ी है। उसके नीचे चिरागदान चानी पोरका चिरण नामक खोह में लघु शिलाभिलेख प्राप्त हुआ है। यह पश्चिमी द्वार जो लगभग 4 फिट ऊँचा है, के

1. दे0 रोहतास का विवरण

बीच मानव–निर्मित एक दीवार पर अंकित है। इसके बारे में कनिंघम महोदय का विचार है कि पहाड़ी के ऊपर चंदनपीर नामक एक मुसलमान फकीर रहा करते थे।[1] उनका छायांकन वेंगलर महोदय ने श्रमपूर्वक उताजोग करके किसी प्रकार किया था।[2] इस अभिलेख के बारे में ब्यूलर फ्लीट टुल्लज आदि पाश्चात्य विद्वानों ने लिखा है।

अभिलेख–(पराक्रम का फल)

(1) देवानापिये हेवं (आ).... (पानि सवछला) नि।

1. अं उपासके सुमि "2 (न चु बाहं पलकंते "3) 2. सवछले साधिके अं............ ते "4 (एतेन च अंतलेन। जंबुदीपसि। अमिस देवा। सत

3. मुनिसा मिसं देव कटा (5) पल .... इयं फले

(6) नो.......... यं महतता व चकिये पाचतवे. खुटकेन मि पल........

4. कममीनेना विपुले पि सुअग...... किये आला.... वे।

(7) ऐ सताये अठाये इधं सावाने। खुटका च उडशला चा प.......

5. लकमुतु अंता पि च जानतु। चिलठी कीत च पलाकम धोतु (8) इयं च अठे वडिसति।

6. दियाडिय अवधियेना दियाडि यं वडिसति।

(9) इयं च सवे विपुलन (10) दुवे सयनालाति.....

7. सा वियुयाति 200 506 (11) इम च अठं पवतसु लिपयाथा (12) य........... या अ.........

8. ध थि हेता सिलाथमा तत पि लिखा पयायाति (13)

---

1. आर्क0 रिपोर्ट : कनिंघम, भाग–11 पृ0–132–33
2. वही, इन्सक्रिप्सन्स ऑफ अशोक पृ0–20

हिन्दी भाषान्तर–

1. देवानां पियने ऐसा कहा–"ढाई वर्ष और कुछ अधिक व्यतीत हुए मैं उपासक रहा। अधिक पराक्रम नहीं किया। 2. एक वर्ष और कुछ अधिक व्यतीत हुए जब की मैंने संघ की शरण ली। इस काल के बीच में जम्बूद्वीपन में जो देवी–देवता (मनुष्यों से) अमिश्र थे वे सब।

3. मनुष्यों से मिश्र किया गया। परक्रम का यह फल है। केवल महान् पद वाला से ही यह प्राप्त करने के लिए शक्य नहीं।

4. क्षुद्र (छोटे) से भी पराक्रम द्वारा विपुल स्वर्ग प्राप्त करना शक्य है। इस प्रयोजन के लिए यह श्रवण (धर्मोपदेश किया गया।)

5. क्षुद्र और उदार पराक्रम में और सीमावर्ती लोग भी जाने। यह पराक्रम चिरस्थायी होवे। पहले यह अधिक आर्थिक प्रयोजन (बढ़ेगा। प्रचुर रूप में बढ़ेगा।)

6. डेढ़ा बढ़ाया जायेगा। प्रारम्भ से बढ़ेगा। यह श्रावण व्युष्ट (प्रयास यात्रा) के समय किया गया।

7. दो सौ छप्पन व्युष्ट 200 506 (–256)। इस प्रयोजन को आप पर्वतों पर लिखवाएं और जहाँ मेरे साम्राज्य में।

8. शिला स्तम्भ हों उन पर लिखवाएँ।

सीताबोंगिरा–सीताबोंगिरा और जोगीमारा नामक स्थानों पर जो गुफाएँ बनी हैं, उनकी भित्तियों पर कुछ चित्र बने हुए हैं जो अनेक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। सीताबोंगिरा की गुफा के भित्तिलेख अब धुंधले पड़ गए हैं। इन्हें कई वर्ष पूर्व वहाँ के प्रमुख लेखक श्री समर बहादुर सिंह ने पढ़कर अपनी सरगुजा का एक अध्ययन "नामक पुस्तक में उद्धृत किया है, जो इस प्रकार है—

आदि पयंति हृदयं। सभाव गुरु कवयोये रायतं.....

खुले वसंतिया। हासावानुभूते। कुदस्पीतं

एवं अलगेति।।[1]

इस लेख का उन्होंने भाषानुवा भी किया है। जो इस प्रकार है—

..... हृदय को दीप्तिमान करते हैं। स्वभाव से महान ऐसे कवि गण रात्रि में..... वासंति दूर है। हास्य और संगीत से प्रेरित चमेली के फूल की माला को ही आलिंगन करता है........। इस लेख को श्री सिंह न एक प्रणय कहानी से जोड़ा है।

जोगीमार गुफा—सीताबोंगिरा गुफा और जोगीमार गुफा बिल्कुल आस-पास हैं। यह गुफा 6x4.5 मी0 के आकार की है। इसकी सपाट दीवारों पर खुदाई की गयी हैं जो अब अभिलेख के रूप में प्रतीत होती हैं।

कुछ लोगों के अनुसार इस गुफा में वरुण देवी का एक मंदिर था जहाँ सुतुनका नाम की देवदासी निवास करती थी। इसमें बने अभिलेखों को श्री समर बहादुर सिंह ने डॉ0 सन्तलाल कटारे के अनुवाद के अनुसार इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

पंक्ति प्रथम—शुतनुक नाम, पंक्ति द्वितीयः देव दार्शक्यि पंक्ति तृतीयः- शुतनुक नाम। देव दार्शक्यि, पंक्ति चतुर्थ—तं कमयिथ तलन शेये। पंक्ति पंचम-देवदिने नम। लुपदखे।

डॉ0 सन्त लाल कटारे ने इसका अनुवाद इस प्रकार किया है—

सुतनुका नाम की देवदासी (के विषय में) सुतनुका नाम की देवदासी उसे प्रेमासक्त किया। (मूर्खतावश अथवा वाराणसी बनारस निवासी) श्रेष्ठ देवदीन नाम के रूपरक्ष ने,

श्री सिंह ने सीताबोंगिरा की भित्ति पर जो लेख मिला है, उसे देवदीन का सुतनुका के प्रति उद्‌गार होने का अनुमान किया है। उनके अनुसार सुतुनका देवदीन के प्रति प्रेमाशक्त हो गयी थी जिसे अमिट करने के लिए उन्होंने गुफा की छत पर लेखांकित कर दिए। इनके अलावा और भी शिलालेख प्राप्त हुए

1. देखिए, पृ0-88

पर वे पढ़े नहीं गये।

सिक्का–सिक्के का भी अपना एक विचित्र इतिहास है। वैदिक काल में सिक्कों के लिए विशेष रूप से गायों का उपयोग किया जाता था। धातुओं के विकास के साथ धातुओं के सिक्के भी चलन में आए। आरंभ में सोना और चाँदी कीमती धातुएँ थीं जिनके कई आकार–प्रकार के पतले–पतले सादे टुकड़े प्रयोग में लाये जाने लगे। कालान्तर में इन पर प्रतीक चिह्न भी बनने लगे। राजाओं, महाराजाओं ने अपने जातीय चिह्न या अपने पूर्वजों के प्रतीक चिह्न अनगढ़ सिक्कों पर मुहरें मार कर छापने लगे। ऐसे चिपटे सिक्कों पर सोनारों द्वारा मुहरें लगा दी जाती थीं। जहाँ तक रीवां राज्य का संबंध है, चाँदी के सिक्के इस राज्य में कभी बनाए या ढलवाए नहीं गए थे।

सन् 1838 के लगभग महाराजा विश्वनाथ जी के समय में एक ताँबे का सिक्का, जिसको बग्धाशाही कहते हैं, चलन में लाया गया। कं0 के एक कलदार रूपए के 56 बग्धाशाही सिक्के मिलते थे। इस पैसे का प्रचार इस राज्य में महाराज रघुराज के समय में रहा। परन्तु 1868 से इस राज्य में अंग्रेजी समय के सिक्के ही चलनसार माने जाते हैं। चलनसार सिक्कों में इस राज्य में जिन सिक्कों का व्यवहार हुआ उनकी एक सूची दी गयी है।[1]

सर्वेक्षित क्षेत्र में विविध प्रकार के सिक्के देखे गये। सिक्के या तो संग्रालयों में सुरक्षित हैं, या उन्हें ताबीज के रूप में पहन कर सुरक्षित रखा गया है। हैकल, हुमेल के रूप में गहनों का उपयोग करके भी उन्हें रखा गया है। रीवां संग्रहालय तथा राजाओं के यहाँ भी सिक्कों का संग्रह किया गया है। अष्टधातु, तांबा, चाँदी के सिक्कों का संग्रह अच्छा हुआ है जिनका समय मध्यकाल है।

सोनघाटी के ग्लैकोनाइटी बालुकाश्म, जीवाश्म शैल–समूह

सांस्कृतिक अध्ययन की दृष्टि से विन्ध्य पर्वत की घाटियाँ काफी समृद्ध रहीं हैं। यहाँ के गंगा तटीय मैदानों में जहाँ अनेक पुरावशेष प्राप्त होते हैं, वहीं

1. रीवां राज्य दर्पण पृ0–241

विन्ध्य–पर्वत माला के सोन–घाटी में भी प्राचीनतम संस्कृति के अवशेष प्राप्त होते हैं। राम अवधेश कुमार श्रीवास्तव (भू–विज्ञान विभाग का0हि0वि0वि0) ने विन्ध्य क्षेत्रीय शैलों के अध्ययन के लिए सोन–घाटी को एक संग्रहालय की संज्ञा दी है।[1] उनके अनुसार इस घाटी में विन्ध्य परासन्ध के सेमरी एवं कैमूर संघों की विभिन्न अस्मिय इकाइयाँ अनावरित हैं। सेमरी संघ मुख्यतया कैल्शियमीय तथा मृण्मय शैलों से निर्मित हैं। जबकि कैमेर संघ में बालूकाश्म ही प्रमुख शैल इकाइयां हैं। यह शैल–समूह फानडोलोमाइटी, चूनाश्म के साथ सम–विन्यासी हैं। आर्थोक्वार्ट्जाइट शैलों, उत्तम दृश्यांश, मदाइन तथा बरगवां गावों के समीपवर्ती क्षेत्र में हैं। मदाइन आर्थोक्वार्ट्जाइट के ऊपर ग्लोकोनाइटधारी शैल या ग्लोकोनाइटी ग्रेबेक, ग्लोकोनाइट शिल्ट प्रस्तर और ग्लोकोनाइटी सेल सम विन्यस्त हैं। इनमें आस्मिक गुण हैं। इन शैलों का रंग भूरा है। तथा इनमें पले संस्तर मिलते हैं। इनके ऊपरी भाग मिट्टी अथवा धूल की पर्त से ढके हुए हैं। अतः ये कितने मोटे हैं, इसका पता लगाना कठिन है। इन शैलों का प्रमुख अपदीं घटक क्वार्ट्ज है। इनमें तरंगित, अतरंगित क्वार्ट्ज पाए गए हैं। ग्रेवेट तथा शिल्ट प्रस्तर में अधिकांश क्वार्ट्ज गण हैं जो धुंधले हो गए हैं। तथा उनमें विदर, विभग तथा गर्त विद्यमान हैं, जो मृण्मय पदार्थों से भरे हैं। इन क्वार्ट्ज कणों पर साधारणतः मिट्टी तथा लोहमय पत्थरों के पतले विलेप दिखायी देते हैं। इनके भीतर गैसीय बुलबुले, अभ्रक, खनिज, दूर मिलिन, जर्कान तथा एपेटाइट आदि भी मिलते हैं।

क्वार्ट्ज कणों की बहुलता तथा उनके लक्षणों से प्रतीत होता है कि जिस अवसाद से ये प्राप्त हुये हैं वहाँ बालूकाश्म ग्रेनाइट तथा नाइसकेल उपस्थित रहे होंगे जिन्हें दीर्घकालीन अपक्षयन के परिणामस्वरूप सूक्ष्म तथा अतिसूक्ष्म साइज के क्वार्ट्ज कणों का आविर्भाव हुआ। इन शैलों (ग्लोकोनाइटी) में फैल्सपार खनिज प्राप्त हैं। इसके अतिरिक्त यत्र–तत्र अभ्रक खनिज भी पाया जाता है। भू–गर्भीय सर्वेक्षण के उपरान्त यहाँ और भी कीमती दुर्लभ खनिजों के प्राप्त होने की संभावनाएँ हैं।

---

1. भू विज्ञान चयनिका केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय वर्ष एक, अंक एक, पृ0–25।

जीवाश्म : अपने देश में जीवाष्म बहुत कम मिले हैं। सोनभद्र जिले के मुख्यालय से लगभग 15 किमी0 दक्षिण सलखन बाजार से 1 किमी0 पूर्व मुख्य मार्ग से लगभग एक किमी0 पश्चिम जीवाश्म देखे गए। इसकी खोज विगत लगभग 33 वर्ष पूर्व की गयी है। यहाँ एक पहाड़ी है। उस पहाड़ी के अधिकांश प्रस्तर-खण्डों को देखने से प्रतीत होता है कि ये कभी वृक्ष के रूप में रही होगी। इसकी बनावट भी वृक्ष की तरह खुरदुरी और पर्तदार देखी गयी। सड़क पर लगे पट्ट के अनुसार ये जीवाष्म एक सौ दस करोड़ वर्ष पूर्व के हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत पहले संभवतः यहाँ भी समुद्र या किसी बड़ी नदी की धारा रही हो जिससे क्षत-विक्षत होते तत्कालीन ये वृक्षावलियाँ अपना रूप बदल कर प्रस्तर के रूप में बदल गयी हों। ये जीवाश्म दुनिया के अन्य जीवाश्मों में प्रमुख हैं जिनका अध्ययन 2002 में यहाँ भू-वैज्ञानिकों ने किया था और वेशकीमती बताते हुए इनके संरक्षण पर बल दिया था, किन्तु ये नष्ट होते जा रहे हैं। इनका उल्लेख 'मिर्जापुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर' (1911) में भी किया गया है। तत्कालीन जिलाधिकारी श्री भगवान शंकर जी और हिण्डालको के प्रयास से 'सोन परिपथ' के अन्तर्गत अब इसे पार्क का रूप दे दिया गया है, जो पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र हो गया है। इसके वैज्ञानिक व्यापक अध्ययन की जरूरत है। जीवाश्मों और गुहाकलाओं के कारण सोनभद्र को विश्व के मानचित्र पर लाया जा सकता है।

टेराकोटा—सर्वेक्षित विशेष क्षेत्र में अनेक स्थलों पर टेराकोटा प्राप्त हुए, किन्तु रख-रखाव के अभाव में वे नष्ट होते गये। रीवां के संग्रहालय में इन्हें देखा गया। सोनभद्र में इन पंक्तियों के लेखक के निजी संग्रहालय में इनका संग्रह किया गया है। इस क्षेत्र में हाथी, घोड़ा, बैल, गाय आदि के टेराकोटा काफी प्राचीन प्रतीत होते हैं। ये हड़प्पा कालीन भी हो सकते हैं। इनकी कला अच्छी है। इनके पृथक अध्ययन की आवश्यकता है।

— ● —

परिशिष्ट–1

1. अमरकोश : रामस्वरूप, भोलानाथ, श्री बेंकटेश्वर प्रेस बम्बई (1899)
2. अग्निपुराण :
3. अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कालिदास
4. अशोक के अभिलेख : डॉ0 राजबली पाण्डेय
5. कादम्बरी : बाणभट्ट
6. खोज रिपोर्ट : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
7. चंदेल और उनका राजत्व काल : केशवचन्द्र मिश्र (ना0प्र0स0, काशी)
8. छत्तीसगढ़ बोली का व्याकरण : हीरालाल काव्योपाध्याय
9. प्राचीन भारतीय अभिलेखों का अध्ययन (द्वि0 सं0)
10. पाण्डुलिपि : मनोरंजन घोष
11. भारत की चित्रकला : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
12. भारतीय लोक साहित्य : श्याम परमाल
13. मध्य प्रदेश का इतिहास : डॉ0 हीरालाल
14. मानव और संस्कृति : श्यामाचरण दुबे
15. मिर्जापुर नगरपालिका के 105 वर्ष : अमर गोस्वामी
16. मेघदूत : कालिदास
17. यह सोनभद्र है : डॉ0 अर्जुनदास केसरी
18. रीवां राज्य दर्पण
19. लोककला : डॉ0 अर्जुनदास केसरी
20. लोरिकायन : डॉ0 अर्जुनदास केसरी
21. शैलाश्रित गुहाचित्र : डॉ0 अर्जुनदास केसरी
22. हिन्दी शब्द सागर : ना0प्र0स0, काशी
23. हिन्दी साहित्य कोश : धीरेन्द्र वर्मा
24. हिन्दी विश्वकोश : ना0प्र0स0, काशी

25. हिन्दू सभ्यता : राधाकुमुद मुकर्जी

अंग्रेजी

1. एंसिएन्ट इण्डिया बुलेटिन ऑफ द आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया
2. एन इण्डियन एन्टीक्विरी
3. बुद्धिस्ट इण्डिया : राई देवी
4. गजेटियर ऑफ मिर्जापुर 1911
5. गजेटियर ऑफ सरगुजा डिस्ट्रिक्ट
6. गजेटियर ऑफ शाहाबाद डिस्ट्रिक्ट
7. इन्सक्रिप्सन ऑफ अशोक
8. छत्तीसगढ़ ट्यूडेटरी स्टेट गजेटियर
9. जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल
10. लिक्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया जि0-9, भाग-1 जार्ज
11. स्टेटिकल एकाउण्ट्स ऑफ बंगाल ग्रियर्सन
12. सेंसस रिपोर्ट

पत्र-पत्रिकाएँ

1. आज : वाराणसी
2. आज, सायं समाचार : वाराणसी
3. जनपद : डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. धर्मयुग साप्ताहिक, बम्बई
5. लोकवार्ता शोध पत्रिका : लोकवार्ता शोध संस्थान, सोनभद्र।
6. जनपदों से प्रकाशित स्थानीय पत्र-पत्रिकाएँ सोनभद्र तथा अभिलेख आदि।
7. भू-विज्ञान चयनिका : केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, वर्ष-1, अंक-1

— ● —

परिशिष्ट—2

पारिभाषिक शब्दावली

अंधकारयुग—Alphabet length
अधिकृत—Authoriesed
अन्तर्राष्ट्रीय—Inernational
अन्योन्याश्रय—Interdependence
अनुक्रम—List of contents
अभियान—Drive
अलिखित—Unwritten
अवशेष—Remains
अश्वारोही—Equestrienne
अस्तित्व—Existence
अक्षर चिह्न—Syllable
अक्षर लम्बाई—Alphabet length
आकार—Siege
आखेट प्रणाली—Hunting method
आदिम—Primitive
आदिम कला—Primitive art
आदिम जीवाश्म—Primal being
आदिम मानव—Primitive man
आदिम जन—Rude people
आद्य संस्कृति—Protoculture
आदिवासी—Eboriginal
आदि युग—Primal times
आमूल परिवर्तन—Radical change
आमोद-प्रमोद—Amusement
आवास गृह—Halutade
आश्रय—Shelter
इतिवृत्त—Chronicle
उत्कीर्णन—Engraving
उन्मुक्त—Imusnne
उपकरण—Implement
औद्योगिक संस्कृति—Technoligical culture
कल्पना—Imagination
कलाकृति—Work of art
काम भावना—Emaristic sentiment
कार्बन तिथि निर्धारण—Carbon dating
काल-निर्धारण—Dated document
खानाबदोश—Nomad
खोज—Exploration
गदा—Moce
गरुड़—Eagle
गुहाचित्र—Cave art
गेरू—Red ochre
गौरव—Diginity
चाकू फलक—Knife blade
चित्र फलक—Illustration Board
जटाजूट—Matted hair
जनश्रुति—Heardsay
जीर्णशीर्ण—Delapidated
जीवाश्म विज्ञान—Palaeontology
जीविका—Subsistence
टीला—Terp
ताम्रयुग—Shield
तुरही—Paim leaf
दन्त कथा—Brushpen
पशुपालन—Herding
पांडुलिपि—Manuscript

पाषाण संस्कृति–Lithic culture
पुनरावृत्ति–Replecation
पुरा पाषाण काल–Palacolithic period
पुरा मानव–Palaeoanthropic man
पुरावशेष मंजूषा–Reliquary
पुरोहित–Officiant
पौराणिक–Mythical
प्रथम संस्करण–Original edition
प्रवास–Migration
प्रागैतिहासिक काल–Prehistoric age
प्रागैतिहासिक चित्रण–Prehostoric painting
प्राथमिक आवश्यकता–Primary need
प्रेत–पूजा–Necrolatry
फलक–Blade
बाधा–Obstruction
बिगाड़ना–Tampering
भरण–पोषण–Maintenance
भरमार–Glut
भावचित्र–Action painting
भावुकतापूर्ण–Sentimental
भेंट, बलि–Offering
भेदभाव–Discrimination
मंजूषा–Cask
मदोन्मत्त–Drinken
मनोविनोद–Recreation
मनोवैज्ञानिक–Psychological
मृत संस्कृति–Dead culture
मानव समाज–Human society
मांसाहारी–Carnivorous
यायावर–Nomad
युद्धक्षेत्र–Warzone
युद्धरत–Warring
रणव्यूह–Battle array
लोकवार्ता–Folklore
वन्य–संस्कृति–Forest culture
व्यक्तिपूजा–Personality cult
वास–Occummodation
विचार–विमर्श–Discussion
विश्लेषणात्मक–Analytical
विशिष्ट, विशेष–Distunctive
वीणा–Lyra
वेणी–Pleat
शिल्पी–Artificer
शिलाकृत–Rock cut
शूली चढ़ाना–Impaling
शोषक–Drift
शैलचित्र–Petrography
शौर्य्य–Chivalry
संकलन–Compitation collection
संकलनकर्त्ता–Organizer
संहिता–Juncture
सजावट का काम–Applique work
सजीव–Animate
स्वस्तिक–Flyfot
सर्वहारा–Proletarian
सहज प्रवृत्ति–Imborn tendency
सदय कलाकार–Sympathetic artist
सामन्त–Baron
सामूहिक शिकार–Collective hunts
सार्वभौम–Global
हांका–Battne

परिशिष्ट–3

छाया चित्रावली

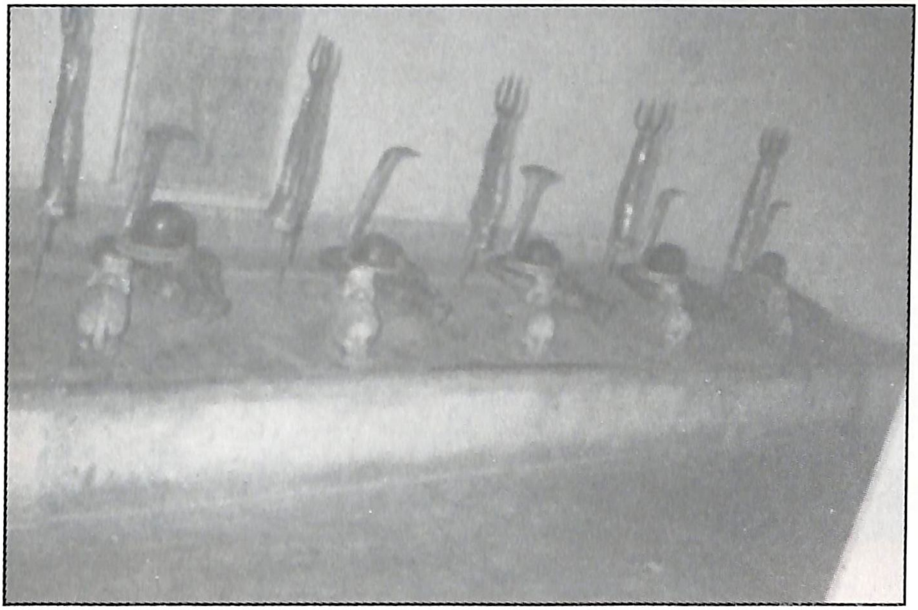

पलामू : नगर स्थित शिव मन्दिर

पलामू : नगर उंटारी : राजा की गढ़ी

पलामू : नगर उंटारी की प्रसिद्ध राधा–कृष्ण की अष्टधातु प्रतिमा

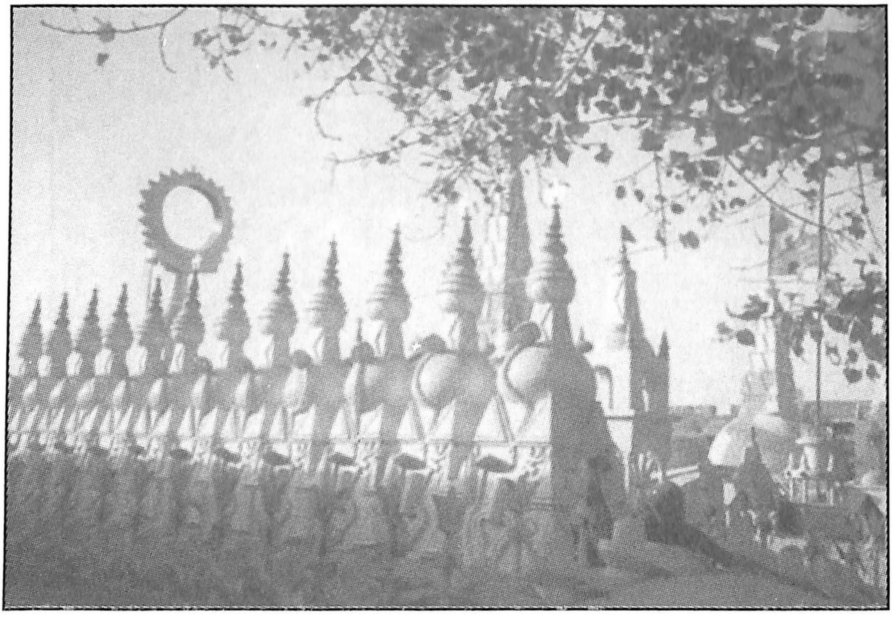

पलामू : देवी मन्दिर का ऊपरी भाग

पलामू : कोयल नदी का दृश्य

पलामू : बेतला नेशनल पार्क

सोनभद्र : पंचमुखी के प्रागैतिहासिक कालीन गुहाचित्र

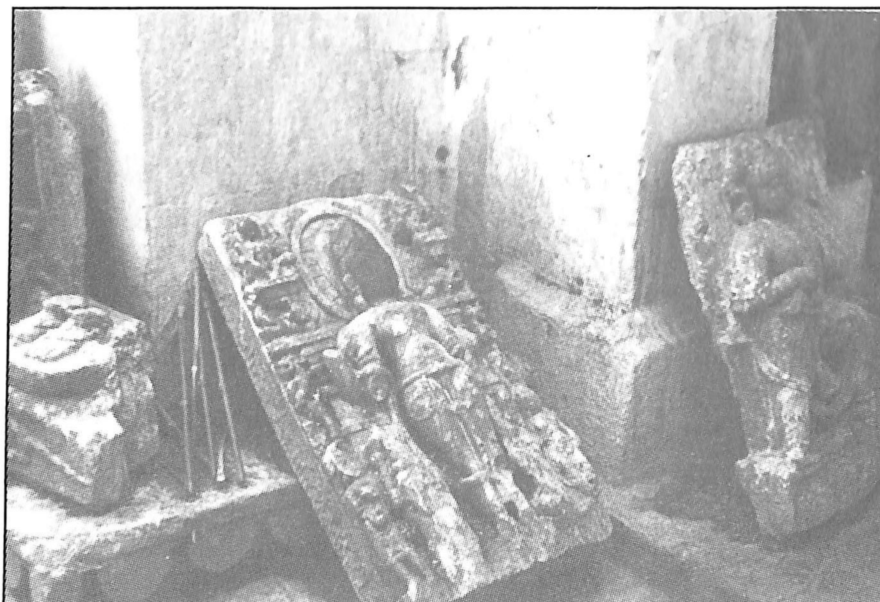

सोनभद्र : कुड़ारी देवी–मन्दिर के प्राङ्गण में

मिर्जापुर : गंगाघाट का भव्य मन्दिर

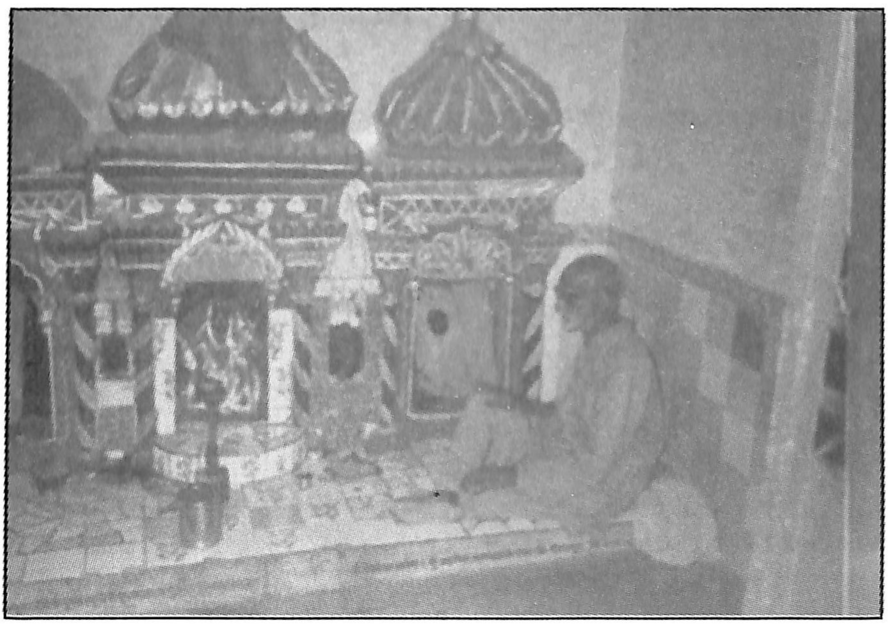

मिर्जापुर : अहरौरा, भंडारी देवी का मन्दिर

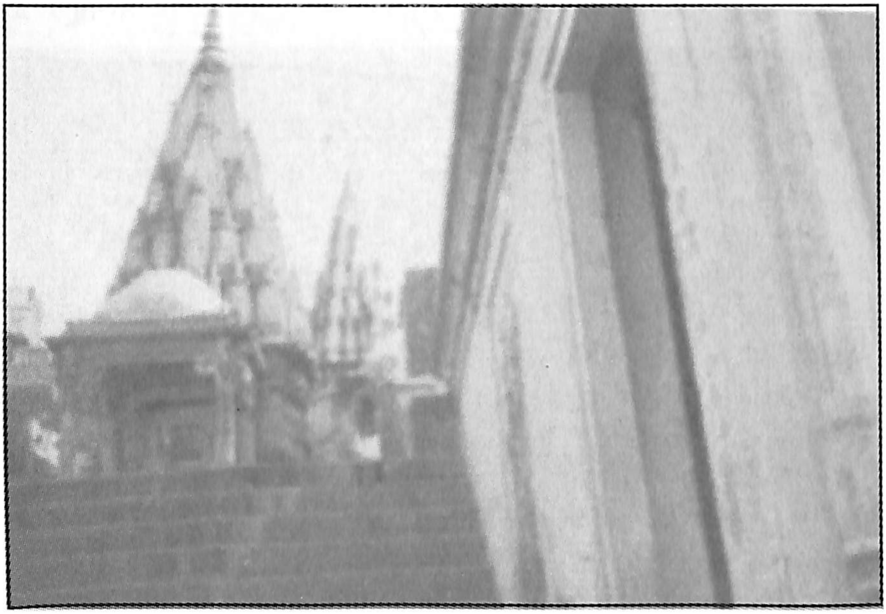

मिर्जापुर : दांऊजी घाट का मन्दिर

सोनभद्र : गोठानी स्थित बंसरा देवी की कलात्मक प्रतिमा : जिनसे वीर लोरिक ने तलवार के बल पर विजयी होने का वरदान प्राप्त किया था

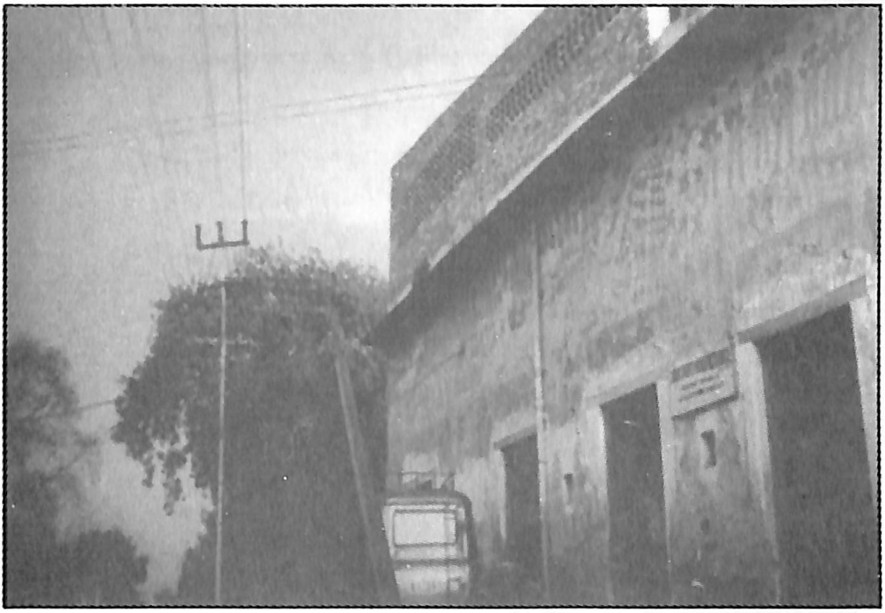

मिर्जापुर : नारघाट का भित्तिचित्र (ब्रिटिश काल)

सोनभद्र : पंचमुखी का शिलाचित्र, जिसे काकवर्न ने शंखलिपि की संज्ञा दी थी

सोनभद्र : खोढ़वा पहाड़ का शैलाश्रय (प्रागैतिहासिक काल)

मिर्जापुर : गड़बड़ा मेला का एक दृश्य

मिर्जापुर : चुनार, जरगो पार का मन्दिर

मिर्जापुर : गणेश जी की मूर्ति (नारघाट, पश्चिमी बाजू)

सोनभद्र : मऊ का सहस्र शिवलिंग : जहाँ संग्रहालय बन रहा है

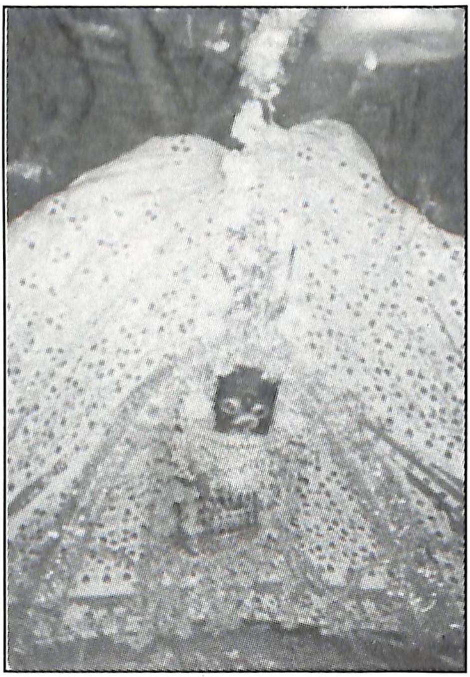

मिर्जापुर : अष्टभुजी देवी की मूर्ति

सोनभद्र : शिवद्वार (शतद्वारी) सहस्त्र शिवलिंग

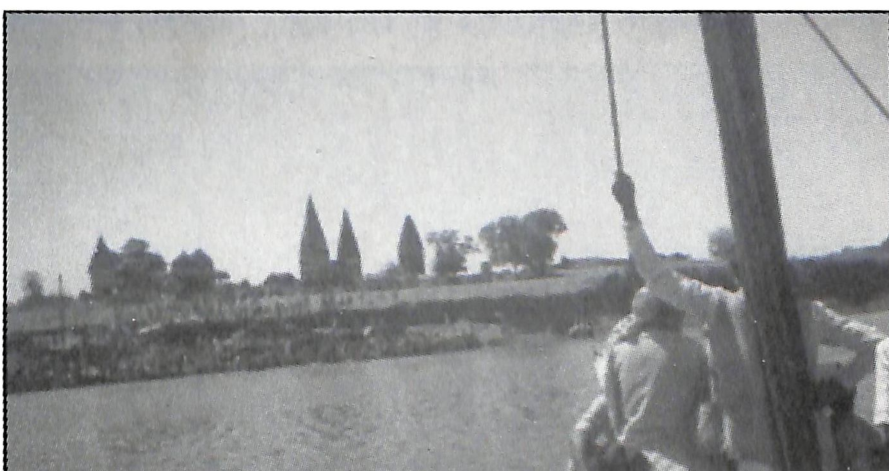

सोनभद्र : गोठानी के मन्दिर (सोन के तट पर)

मिर्जापुर : भंडारी देवी की भव्य प्रतिमा (अहरौरा)

मिर्जापुर : चुनार के मन्दिर

रोहतास : देव मारकण्डेय की कलात्मक प्रतिमा

रोहतास : देव मारकण्डेय मन्दिर के सामने की नन्दी प्रतिमा

रोहतास : लउआ देवी, भलुनी भवानी (विक्रमगढ़ के पास)

रोहतास : हर्षूब्रह्म की पिण्डी

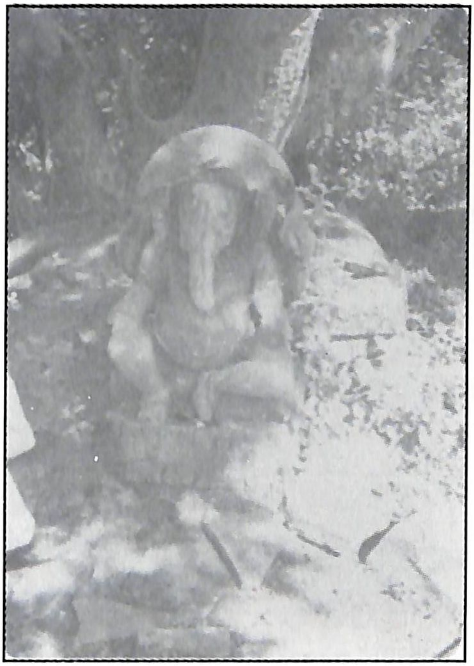

रोहतास : मुण्डेश्वरी मन्दिर के पास गणेश मूर्ति

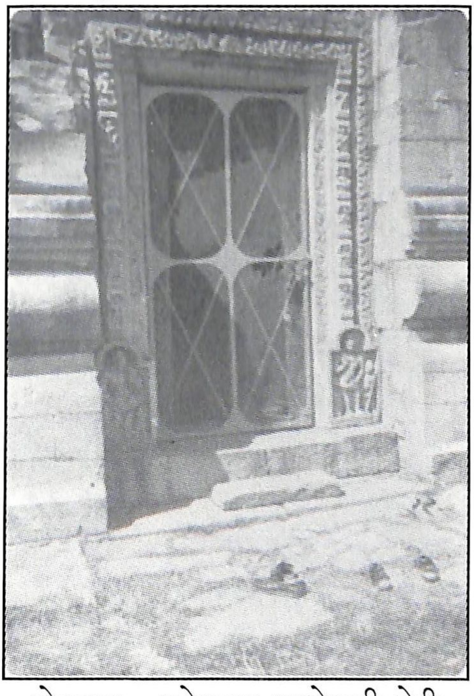

रोहतास : प्रवेशद्वार मुण्डेश्वरी देवी

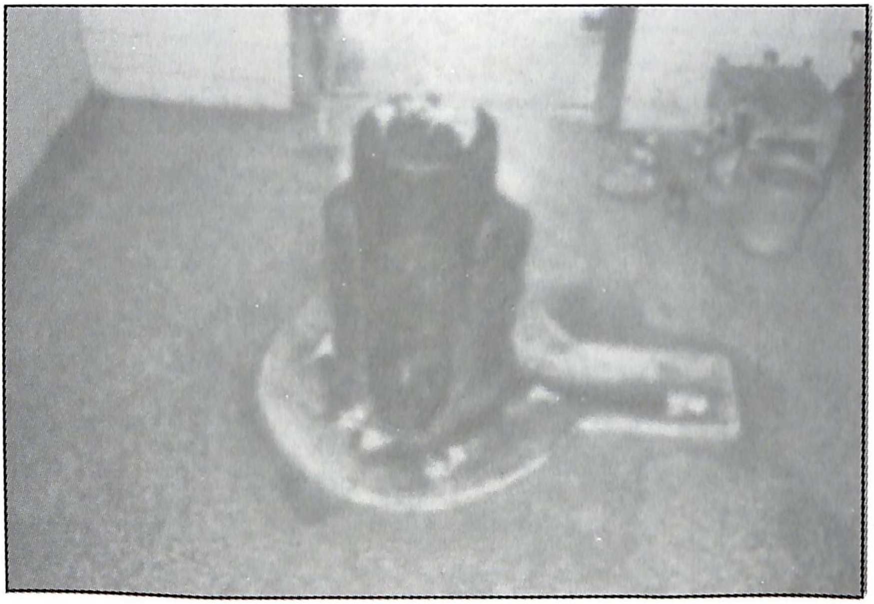

रोहतास : भभुआ, शिवलिंग-थाने के अन्दर

रोहतास : मुण्डेश्वरी देवी की भव्य प्रतिमा

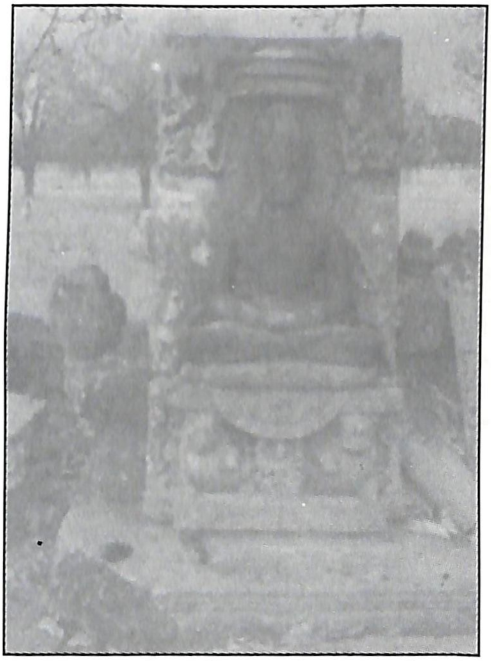

सरगुजा : महेशपुर में बुद्धमूर्ति

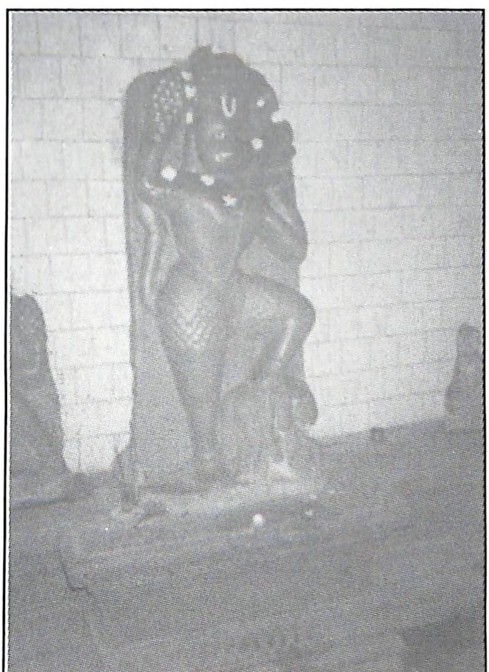

सरगुजा : हनुमान मन्दिर, अम्बिकापुर

सरगुजा : हनुमान मन्दिर, प्रतापपुर

सरगुजा : डीपाडीह की नन्दी-प्रतिमा

सरगुजा : रामगढ़–पर्वत पर मन्दिर में मूर्ति

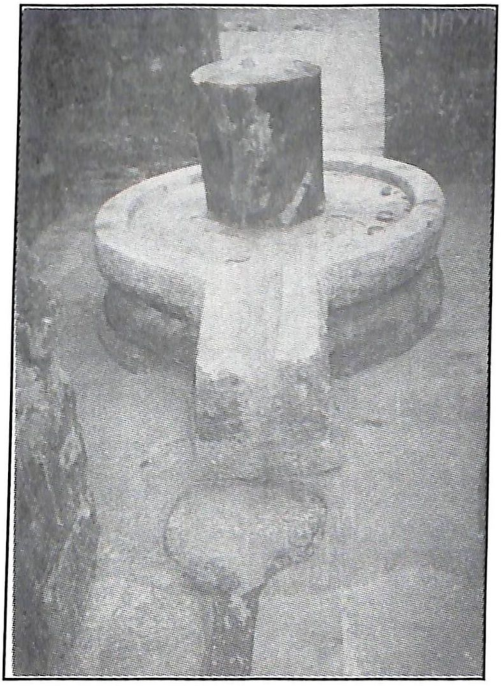

सरगुजा : रामगढ़ की शिवलिंगी प्रतिमा

सरगुजा : रामगढ़–पर्वत पर विष्णु भगवान की कलात्मक प्रतिमा

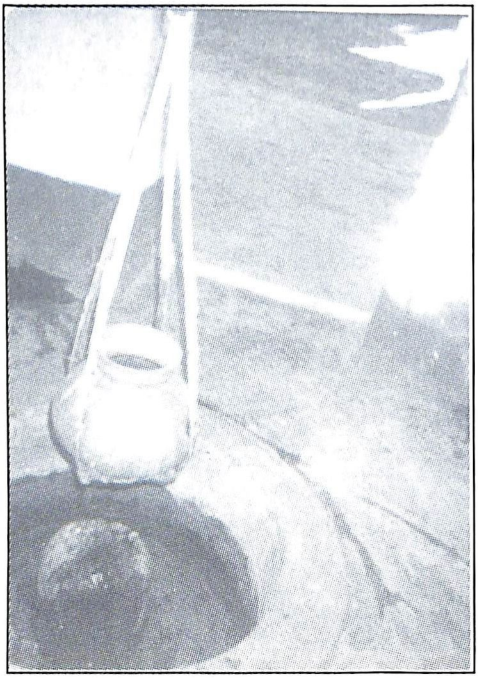

सरगुजा : शिवपुर, प्रतापपुर का शिवलिङ्ग

सरगुजा : शिवपुर, अम्बिकापुर की शंकर–प्रतिमा

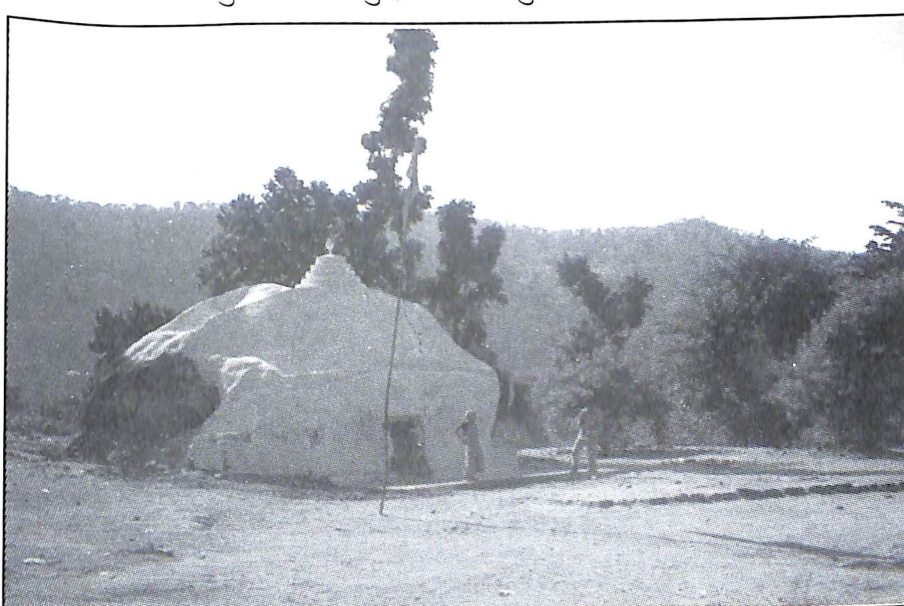

सीधी : माड़ागुफा के पास मन्दिर

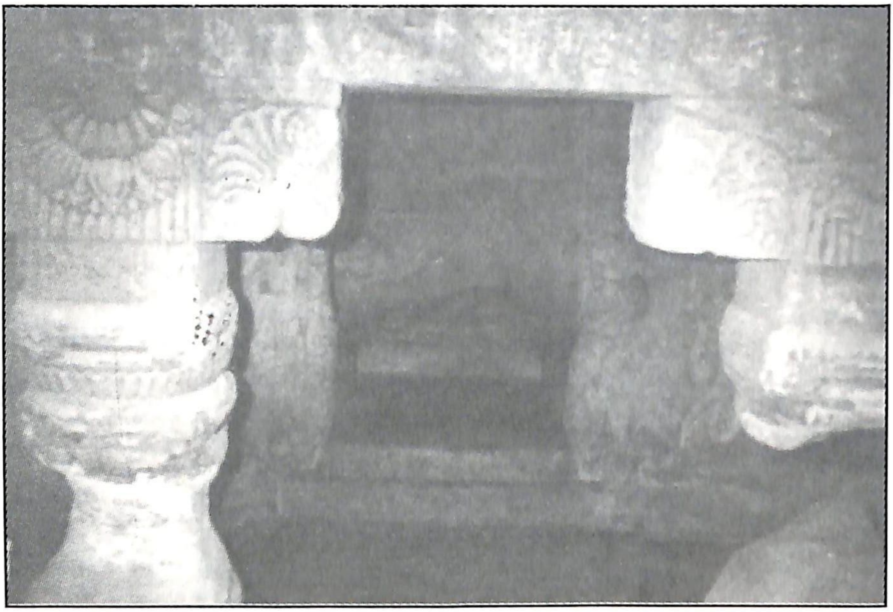

सीधी : माड़ागुफा के भीतर के दृश्य

सीधी : पास के गाँव में मूर्ति

सीधी : गाँव में कालीदेवी की मूर्ति

सीधी : शहर के पास गाँव में मूर्ति

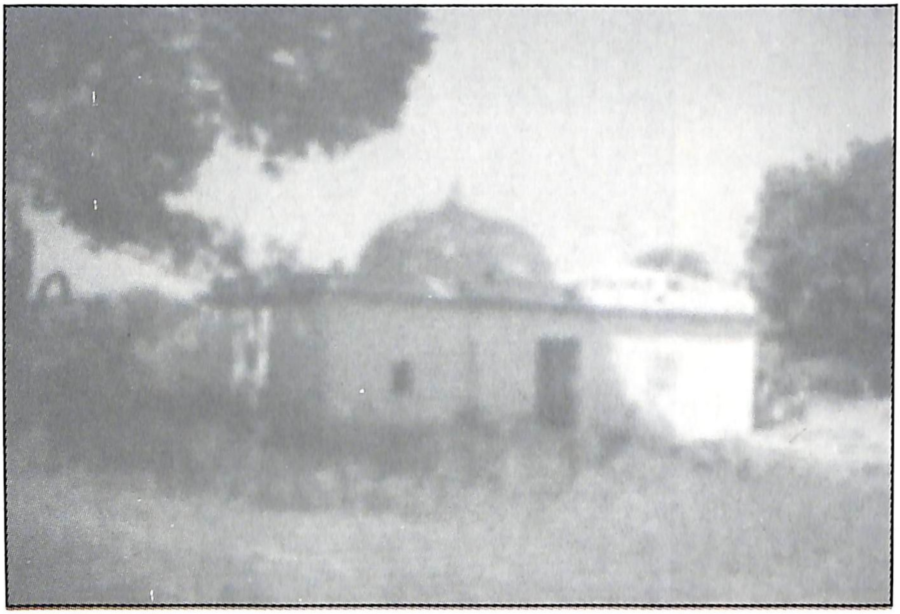

सीधी : महुआर गाँव में शिव-मन्दिर

सीधी : साप्ताहिक बाजारों का एक दृश्य

पलामू : नगर उंटारी राजा का महल

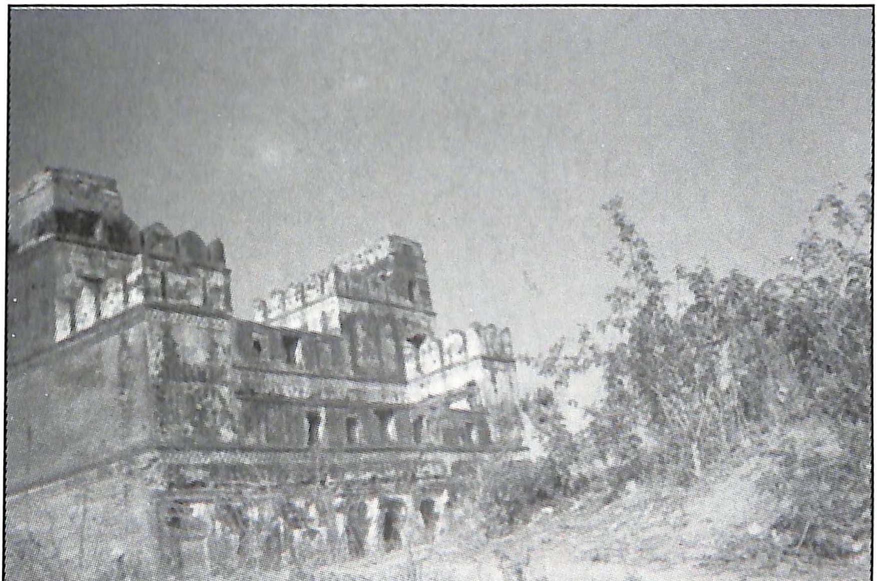

पलामू : राज चैनपुर का पुराना किला

पलामू : किले का मुखद्वार

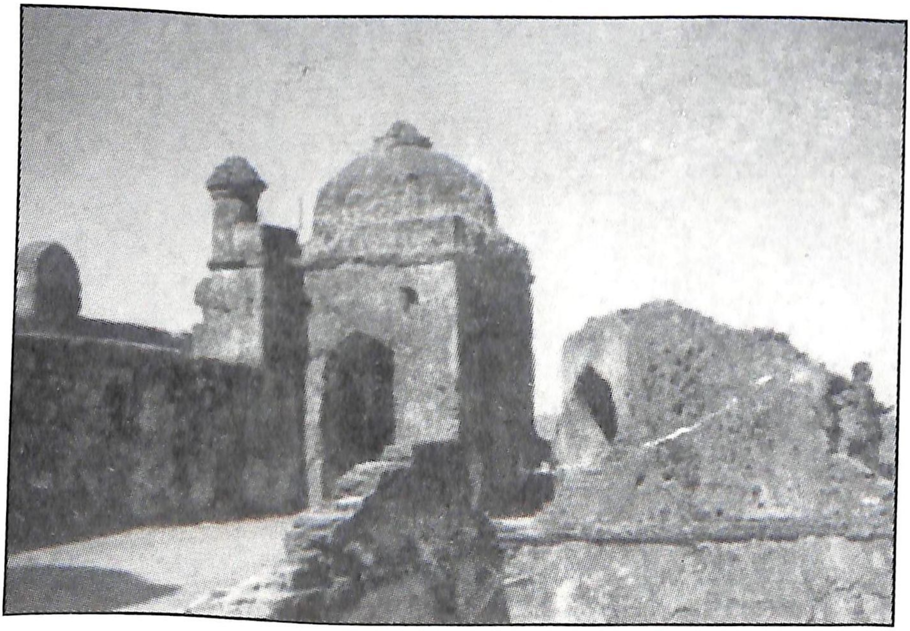

पलामू किले का ऊपरी भाग

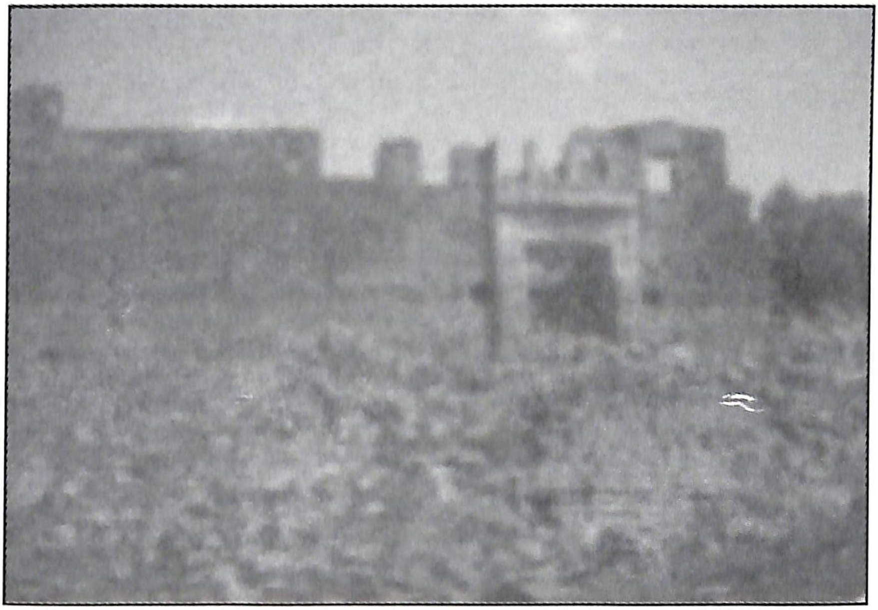

मिर्जापुर : अहरौरा–किला जो अब बाँध के भीतर डूब में है

सोनभद्र : अगोरी किले का मुख्य द्वार सोन के तट पर

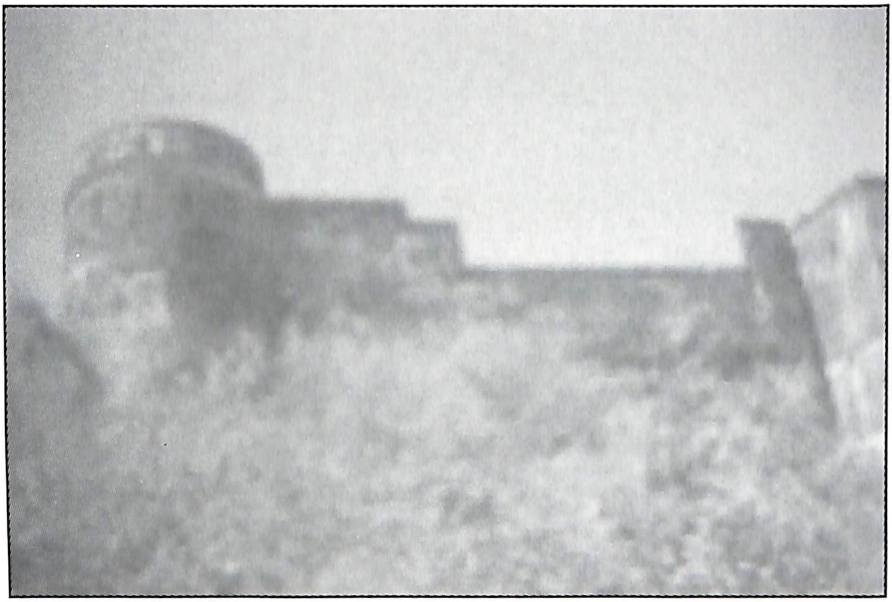

सोनभद्र : अगोरी दुर्ग का भव्य प्रासाद

सोनभद्र : विजयगढ़ किले की प्राचीर (तिलस्मी किला–'चंद्रकांता' में उल्लिखित)

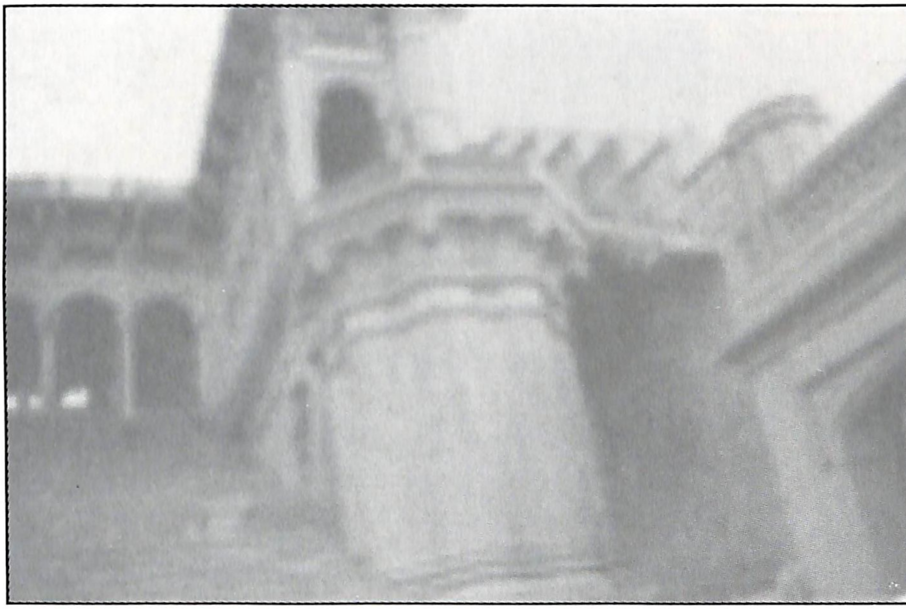

मिर्जापुर : पक्काघाट, चुनार के गुलाबी रंग के पत्थर से निर्मित

मिर्जापुर : घण्टाघर जो गंगातटवर्ती सभी नगरों के घण्टाघरों से भव्य है

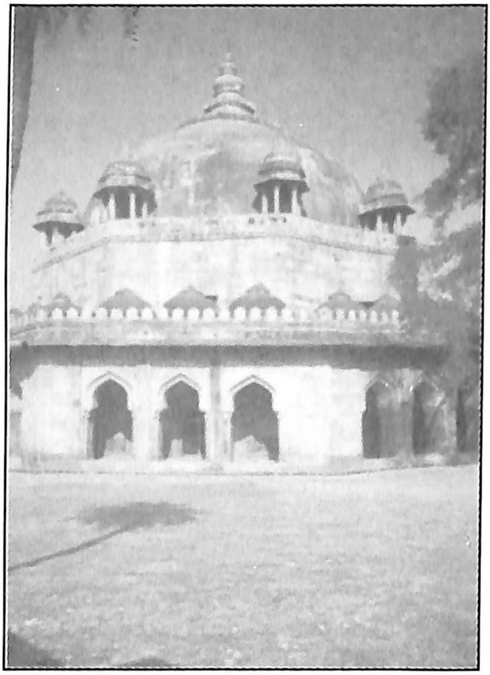

रोहतास मकबरा : सूखारोजा

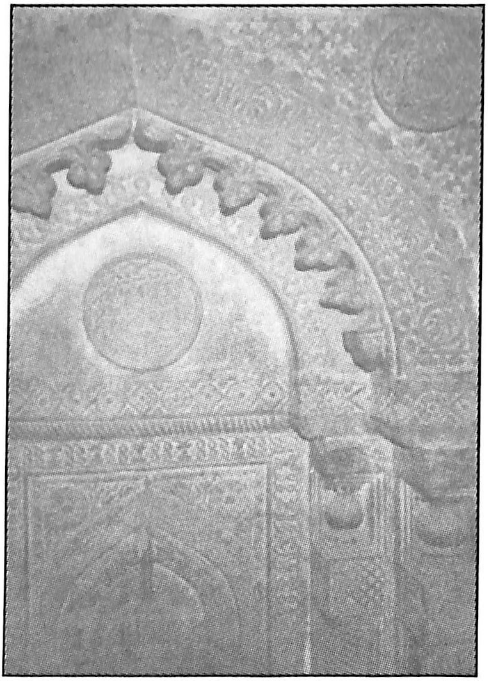

रोहतास : शेरशाह सूरी के मकबरे का भीतरी भाग : अद्‌भुत पच्चीकारी

रोहतास : गीला मकबरा शेरशाह सूरी द्वारा निर्मित

रोहतास : सूखारोजा, मुखद्वार की कला

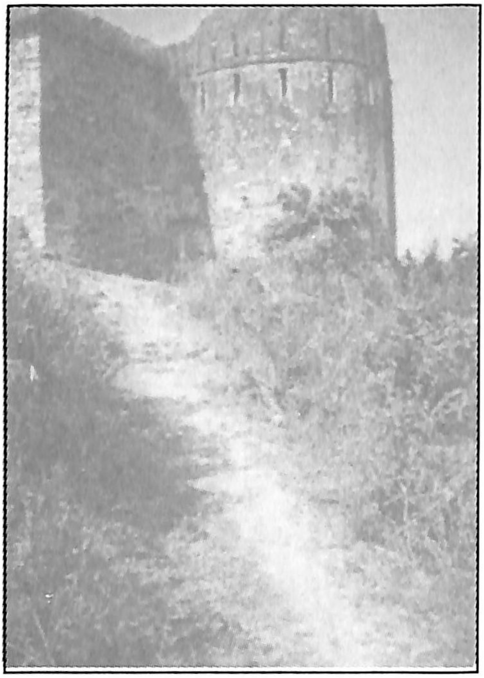

सीधी : बरदीगढ़

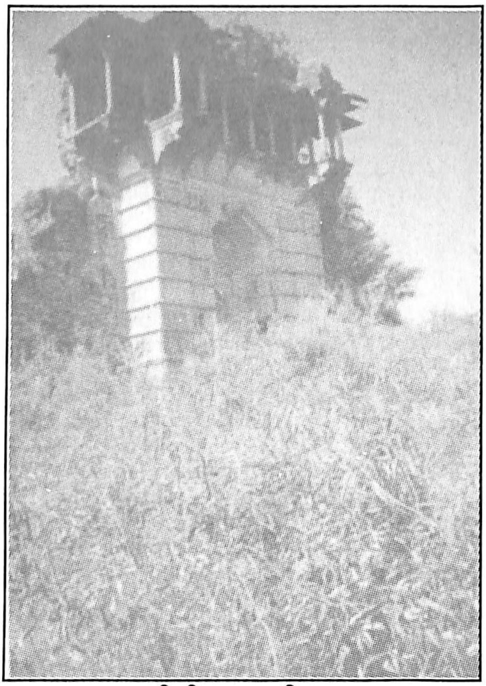

सीधी : बरदीगढ़

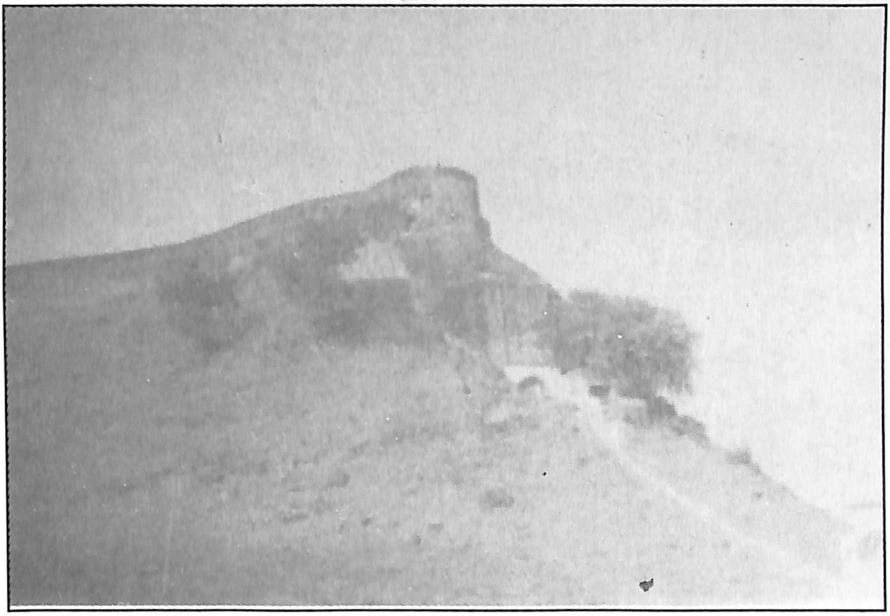

मिर्जापुर : चुनार दुर्ग का दक्षिणी भाग

सोनभद्र : गोरारी के मन्दिर का भग्नावशेष

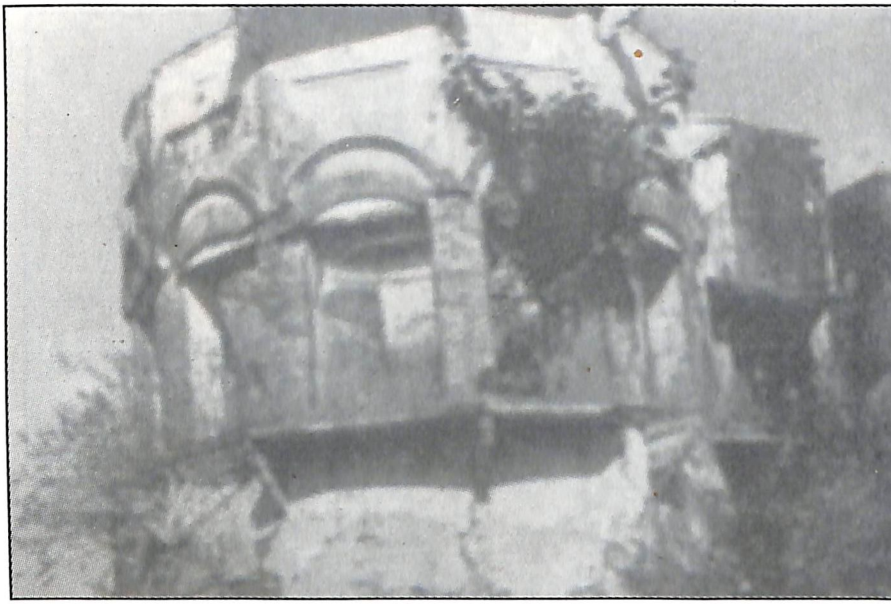

मिर्जापुर : सक्तेशगढ़ : मुख द्वार

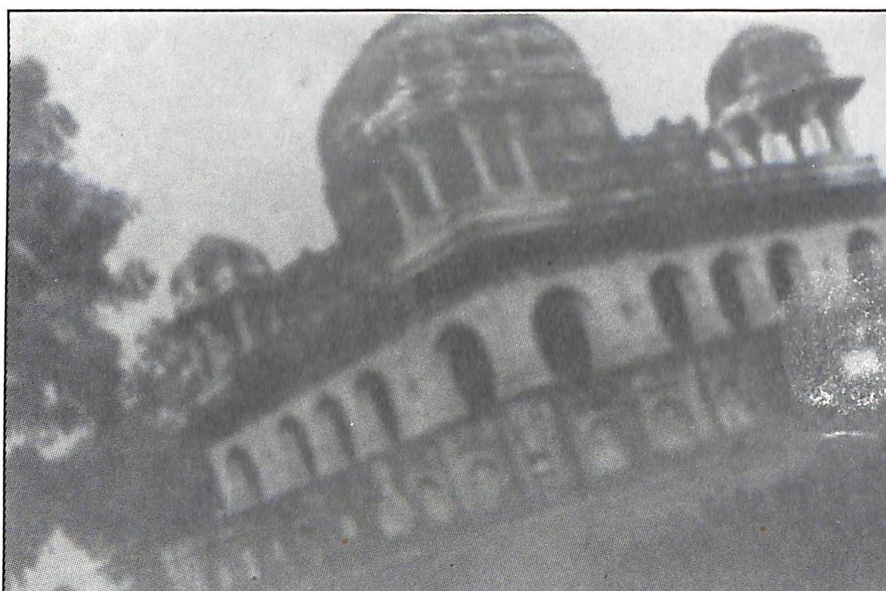

मिर्जापुर : चुनार की पुरानी तहसील

सोनभद्र : महांव गांव का पुरास्तम्भ : एक टीले पर स्थित
खजुराहो के शिल्प पर आधारित

मिर्जापुर : बदेवरानाथ का भव्य मन्दिर : जिनकी क्षेत्र में बड़ी मान्यता है

सीधी : जनकपुर के पास बौद्ध मन्दिर

सीतामढ़ी : सीधी–सरगुजा हरचौका घाट की गुहाकला

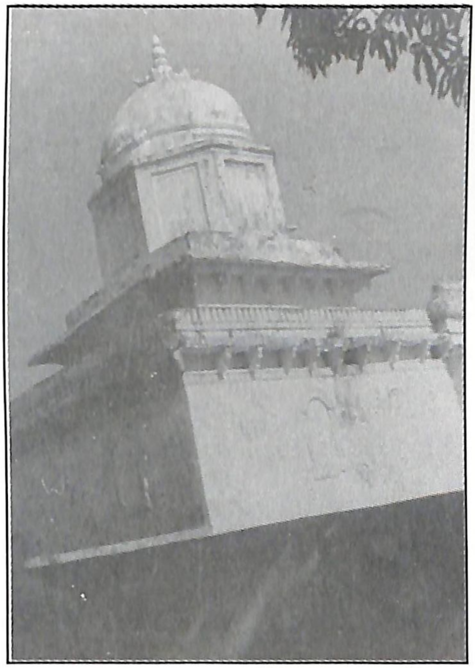

सीधी : राजगढ़ सिंहावल के पास बना शिव–मन्दिर

मिर्जापुर : सारनाथ का वास्तु–शिल्प

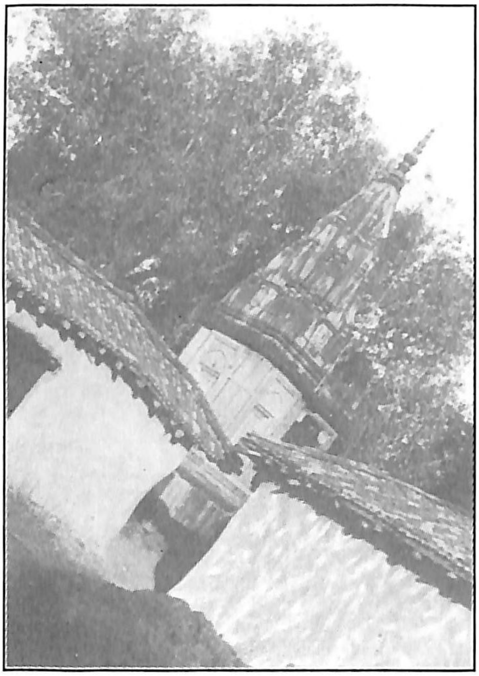

मिर्जापुर : आहीर (कछवा) के मन्दिर का शिल्प

मिर्जापुर : सक्तेशगढ़ की एक प्राचीर

मिर्जापुर : दुर्गा मन्दिर चुनार के प्रांगण के शिलालेख

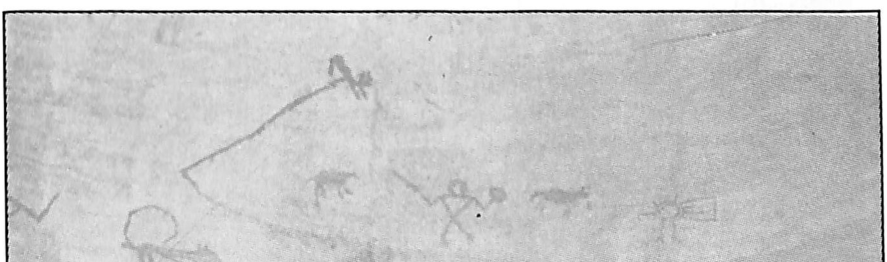

सोनभद्र : खोढ़वा पहाड़ के गुहाचित्र (प्रागैतिहासिक काल)

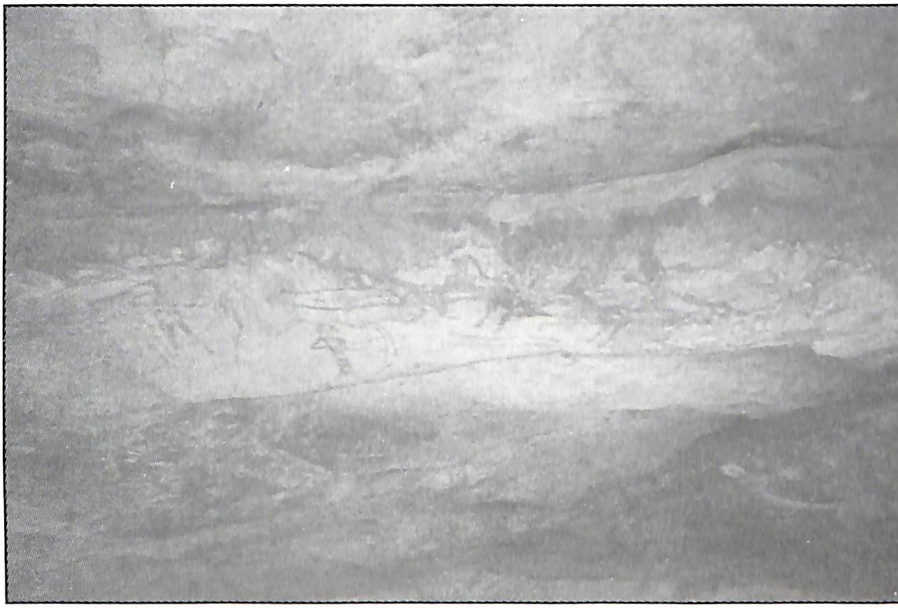

सोनभद्र की गुहाकला : शिकार का दृश्य

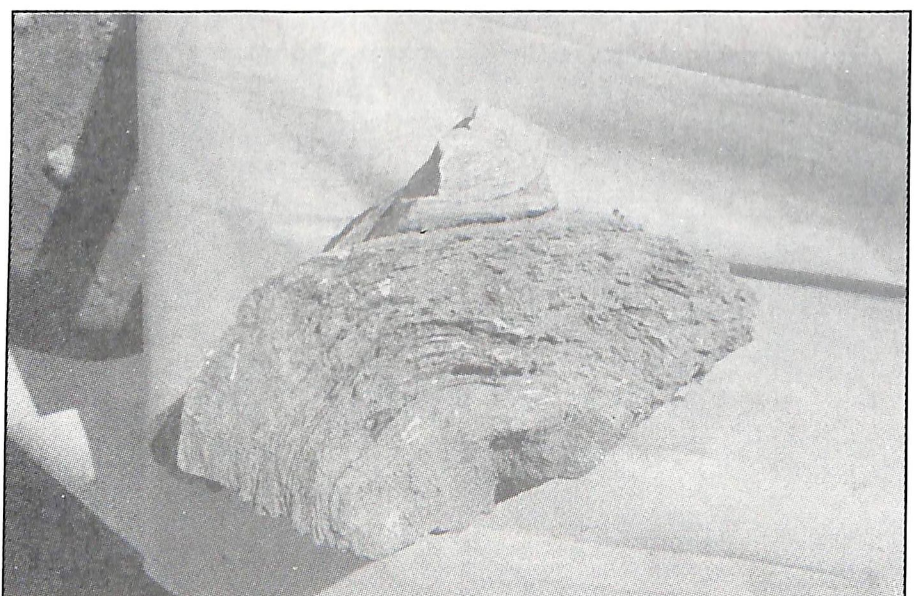

सलखन का जीवाश्म (सोनभद्र) 110 करोड़ वर्ष पूर्व :
विश्व की महत्वपूर्ण प्रकृति-रचना

विविध आकार प्रकार की ईंटें सौजन्य : डॉ0 अर्जुनदास केसरी

टेराकोटा : मोहनजोदड़ों की कला की अनुकृति (आरंभिक ईस्वी सन्)
सौजन्य : डॉ0 अर्जुनदास केसरी

नवपाषाण कालीन कुल्हाड़ियाँ सौजन्य : डॉ0 अर्जुनदास केसरी

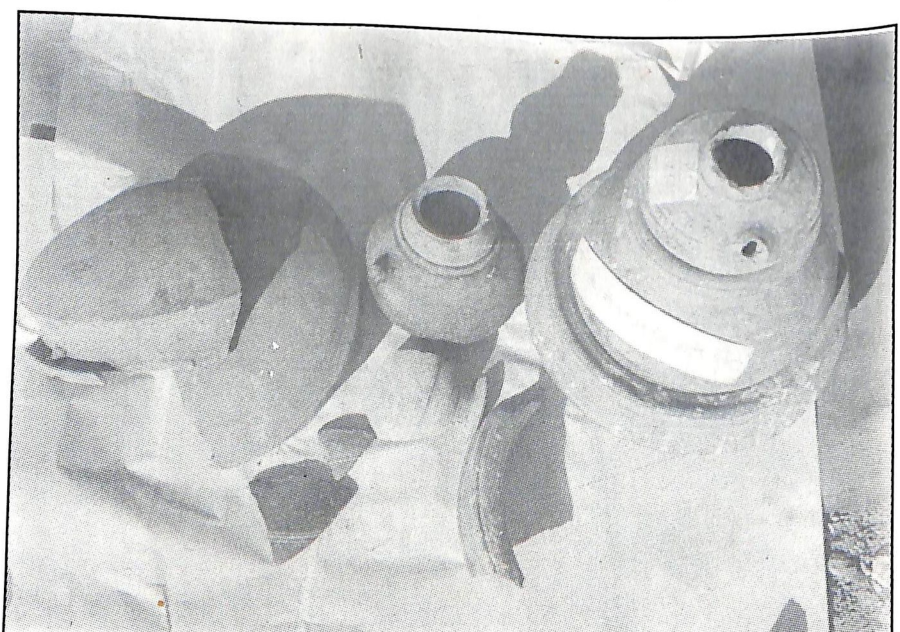

मृदभाण्ड, पात्र तथा पात्रों के टुकड़े (17वीं सदी)
सौजन्य : डॉ0 अर्जुनदास केसरी

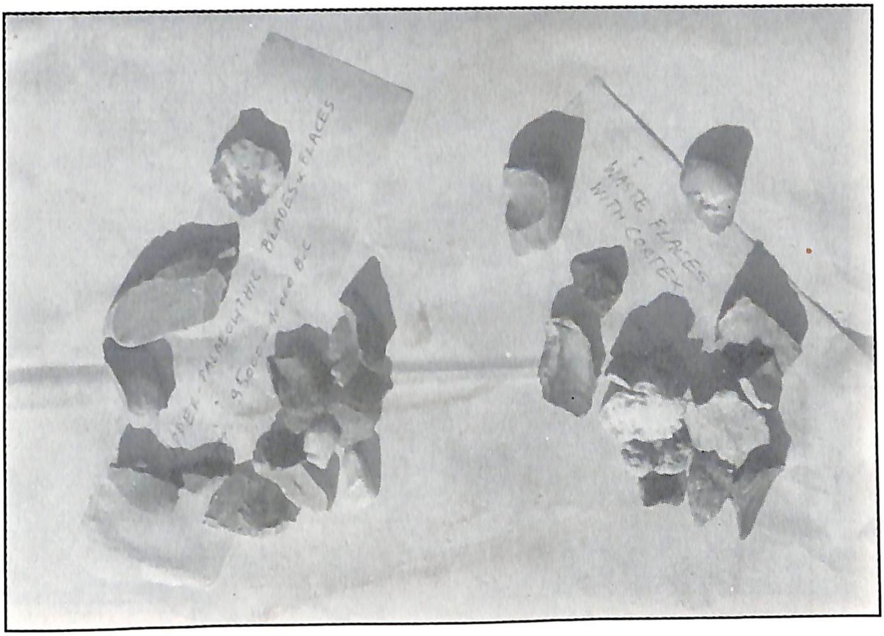

प्रागैतिहासिक कालीन औजार : सौजन्य–डॉ0 अर्जुनदास केसरी

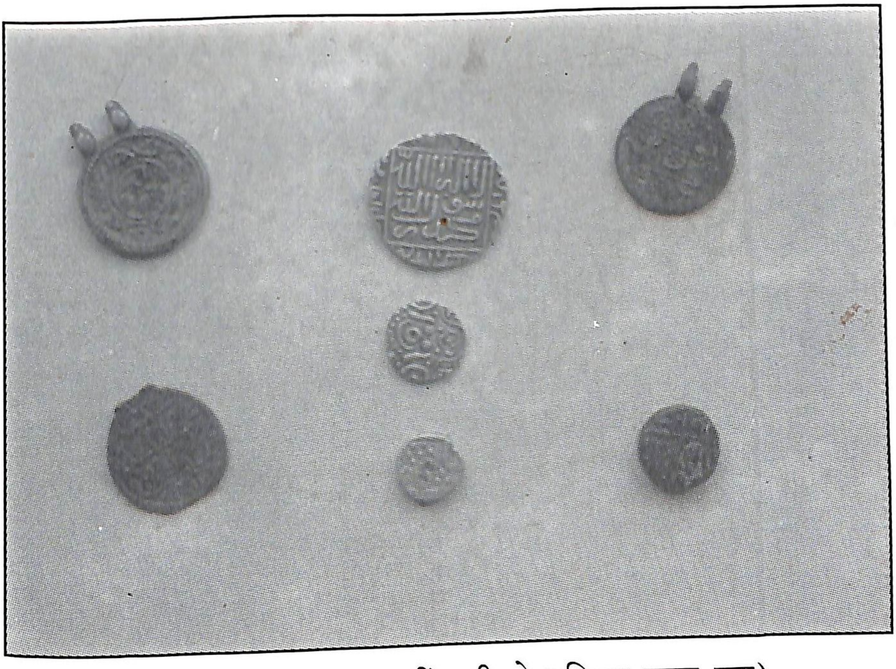

सिक्के प्रथम बल (11वीं सदी से मुस्लिम काल तक)
सौजन्य : डॉ0 अर्जुनदास केसरी

सिक्का दूसरा बल (11वीं सदी से मुस्लिम काल तक)
सौजन्य : डॉ0 अर्जुनदास केसरी

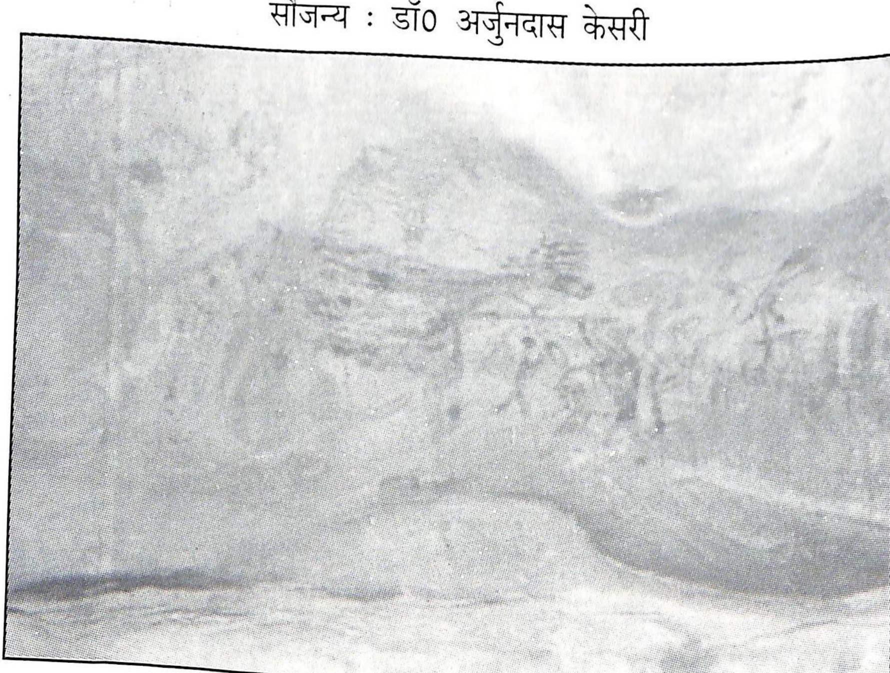

भल्दरिया (मिर्जापुर-अहरौरा) गुफा का शिकार-दृश्य (प्रागैतिहासिक काल)

सोनभद्र : वरकन्हरा की विष्णु प्रतिमा (अद्‌भुत शिल्प)

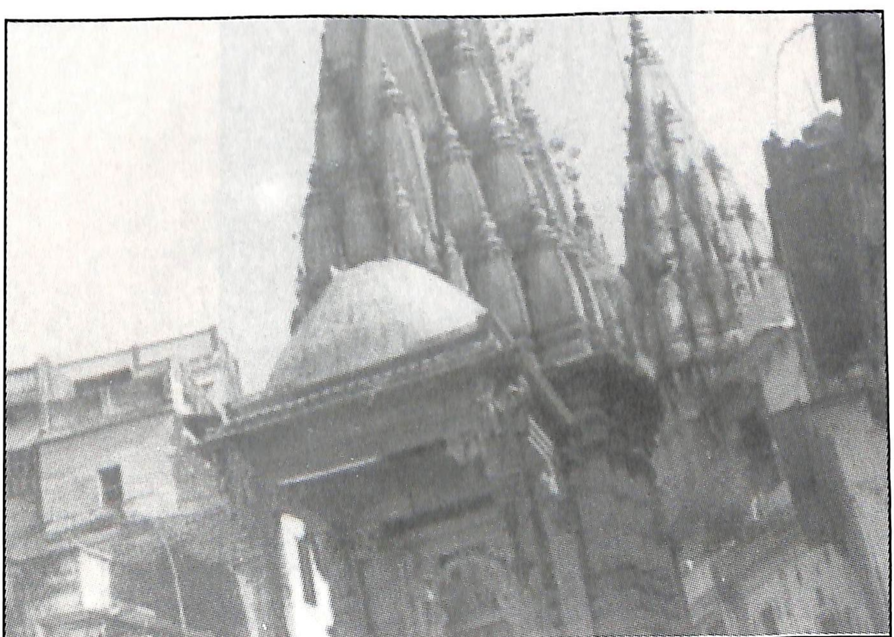

मिर्जापुर : पक्काघाट के समीप का मन्दिर

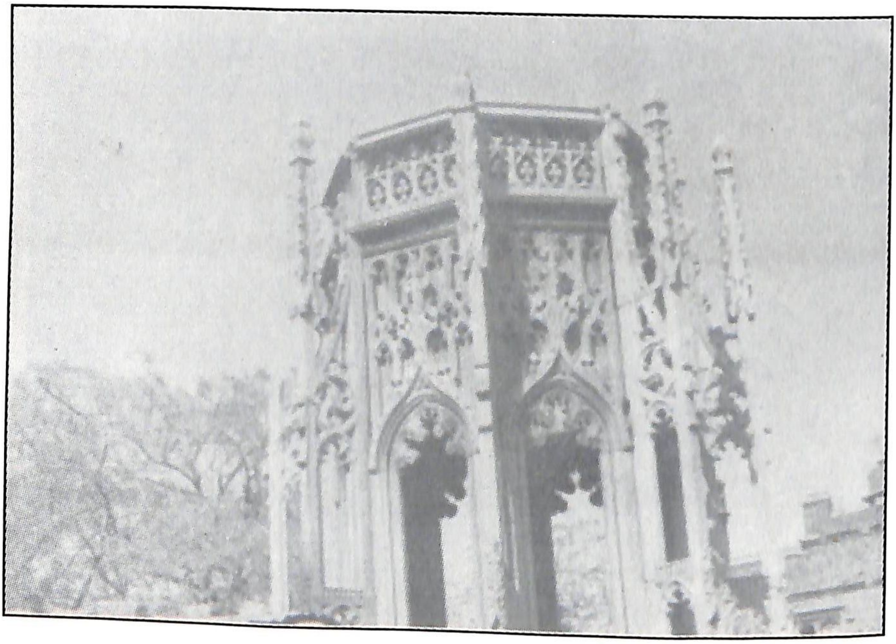

मिर्जापुर नगर–स्थित पक्की सराय की अप्रतिम नक्कासी

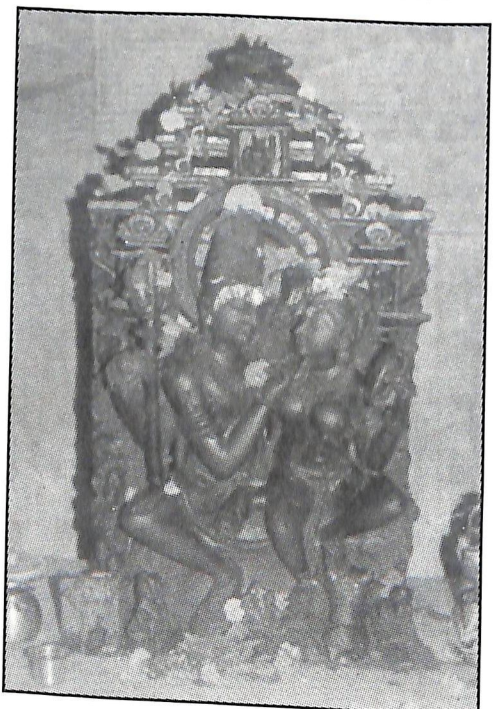

सोनभद्र : (शतद्वारी) शिव–पार्वती की संपृक्त (अद्भुत शिल्प)

मिर्जापुर : माँ विन्ध्यवासिनी देवी की प्रतिमा (शक्तिपीठ)